शिवसिंहसरोज

उन्नाव प्रदेशान्तर्गत-काँथाधीश सेंगर-
वंशावतंस रणजीतसिंहात्मज

स्वर्गीय ठाकुर शिवसिंहजी
इंस्पेक्टर पुलीस-कृत

इसमें

एक सहस्र भाषा-कवियों के जीवन-चरित्र
और उनकी कविताओं के उदाहरणों
का अति उत्तम संग्रह किया गया है।

संशोधनकर्त्ता

माधुरी-संपादक पं० रूपनारायण पाण्डेय

—:o:—

सातवीं बार

लखनऊ

केसरीदास सेठ द्वारा

नवल किशोर-प्रेस में मुद्रित और प्रकाशित

सन् १९२६ ई०

परिशिष्ट

अवधेश पृष्ठ ३७८-३७६

ये ५ और ६ नंबर के अवधेश एक ही हैं।

आलम पृष्ठ ३८०

यह १७६० के लगभग हुए हैं। मुंशी देवीप्रसाद, जो राजपूताने के एक प्रसिद्ध विद्वान् और ऐतिहासिक लेखक माने जाते थे, उनके पास आलम और शेख के ५०० के लगभग छंद मौजूद थे। ग्रंथ कोई नहीं मिलता।

उदयनाथ पृष्ठ ३८५

इनका रचना-काल १७६१ है, इसलिये जन्म-काल १७११ न होकर १७५० के लगभग होना चाहिए।

कवीन्द्र सारस्वत ब्राह्मण पृष्ठ ३८६

इनका जन्म-काल १६२२ नहीं, १६५० के लगभग होना चाहिए; क्योंकि यह शाहजहाँ के यहाँ थे। १६२२ में तो शाहजहाँ का या इनका जन्म भी न हुआ होगा। इन्होंने १६८७ में समरसार ग्रंथ बनाया है।

कवीन्द्र पृष्ठ ३८६

इनका जन्मसंवत् १७३६ के लगभग होना चाहिए, १८०४ ग़लत है।

कालिदास त्रिवेदी पृष्ठ ३८८

इनका जन्म-संवत् १७४६ अशुद्ध है। १७१० के लगभग होना चाहिए। कारण, इन्होंने १७४५ में होनेवाली गोलकुंडा की लड़ाई का वर्णन, औरंगज़ेब के साथ रहकर, प्रत्यक्षदर्शी की तरह किया है।

ग्वाल कवि पृष्ठ ४०८

खोज से इनके रसिकानंद, राधामाधव-मिलन और राधाष्टक, ये ग्रंथ और मिले हैं।

ज्ञानचन्द्र यती पृष्ठ ४१०

इनका जन्म-काल १८१३ और कविता-काल १८४० होना चाहिए।

घनश्याम कवि पृष्ठ ४११

इनका जन्म-काल १७३७ के लगभग है। १६३५ या तो अशुद्ध है, और या वह घनश्याम दूसरे होंगे।

चन्द कवि नं० १ पृष्ठ ४११

इन कवीश्वर का जन्म-संवत् ११८३ और कविता-काल १२२५ से १२४६ तक के भीतर समझना चाहिए।

चन्द कवि नं० २ व ३ व ४ पृष्ठ ४१२

मिश्रबंधुओं की राय में ये तीनों चंद एक ही हैं, और उसी एक चंद ने पठानसुलतान के नाम से सतसई पर कुंडलियां कही हैं।

चन्दनराय पृष्ठ ४१३

इन्हें बुंदेलखंडी रईस ने नहीं, अवध के बादशाहने बुलाया था।

चरणदास ब्राह्मण पृष्ठ ४१५

खोज से इनका जन्म-काल १७६० मालूम हुआ है।

चिन्तामणि त्रिपाठी पृष्ठ ४१२

भूषण के समय के अनुसार इनका जन्म-संवत् १७२६ नहीं, १६६६ के लगभग होना चाहिए; क्योंकि यह भूषण के भाई और उनके समकालीन थे। खोज से इनके रसमंजरी नामक एक और ग्रंथ का पता मिला है।

जसवन्त सिंह वघेले पृष्ठ ४२०

मुरारिदान के जसवंतजसोभूषण ग्रंथ से जान पड़ा कि भाषा-भूषण ग्रंथ इनका नहीं, मारवाड़ के महाराज जसवंतसिंह का बनाया हुआ है। इनका जन्म-संवत् १८५५ अशुद्ध है। यह इनका कविता-काल होना चाहिए।

ठाकुर प्राचीन पृष्ठ ४२५

इनका जन्म-काल १८१२ के लगभग होगा। १७०० ठीक नहीं जान पड़ता।

ताज़ कवि पृष्ठ ४३०

जोधपुर के मुंशी देवीप्रसादजी की राय में इनका समय १७०० के लगभग है।

दास भिखारीदास पृष्ठ ४३२

इनके ग्रंथ से ही जान पड़ता है कि यह अरवर, ज़िला प्रताप-गढ़ के निवासी थे। इनके विष्णुपुराण और नामप्रकाश, ये दो ग्रंथ और मिले हैं। बागबहार नाम का कोई ग्रंथ नहीं मिलता। शायद नामप्रकाश ही का दूसरा नाम बागबहार हो। इनका जन्म-काल १७५५ के लगभग होगा।

दूलह कवि पृष्ठ ४३३

इनका जन्म-संवत् १८०३ ग़लत है। क्योंकि इनके पिता कवीन्द्र के जन्म का संवत् इसी ग्रंथ में १८०४ दिया हुआ है। अनुमान से इनका जन्म-संवत् १७७७ के लगभग होना चाहिए; क्योंकि इनके पितामह कालिदास का जन्मकाल १७१० के लगभग है। और इनके पिता कवीन्द्र का जन्म-काल १७३६ के लगभग है।

देव कवि पृष्ठ ४३४

इनका जन्म-संवत् अनुमान से १७३० होना चाहिए।

देवकीनन्दन पृष्ठ ४३५

इनके सर्फ़राज़चंद्रिका नामक एक और ग्रंथ का पता लगा है।

धनीराम पृष्ठ ४३६

इनका जन्म-काल १८४० के लगभग होना चाहिए।

नागरीदास पृष्ठ ४३६

डा० ग्रियर्सन ने १५६१ और शिवसिंह ने १६४८ इनका जन्म-संवत् माना है। पर दोनों ही ठीक नहीं जान पड़ते। १७५६ होना चाहिए।

नीलकण्ठ त्रिपाठी पृष्ठ ४४२

इनका जन्म-संवत् १७३० ग़लत है, १६६२ के लगभग होना चाहिए।

पदमाकर पृष्ठ ४४५

इनका जन्म-काल १८१० होना चाहिए।

परतापसाहि पृष्ठ ४४५

यह चरखारी के राजा विक्रमसाहि के यहाँ थे, छत्रसाल के यहाँ नहीं। छत्रसाल तो इनके समय से १०० वर्ष पहले ही मर

सबलसिंह चौहान पृष्ठ ५००

इनका जन्म-काल १७०२ के पहले ही होना चाहिए; १७२७ अशुद्ध है। कारण १७१८ में इन्होंने महाभारत के भीष्मपर्व का अनुवाद किया है।

सुवंस शुक्ल पृष्ठ ५०१

खोज में इनका एक पिंगल-ग्रंथ भी मिला है।

सूरति मिश्र पृष्ठ ५०३

इनका जन्म-काल १७४० के लगभग होना चाहिए। १७६६ गलत है। इनके एक ग्रंथ रसग्राहक-चंद्रिका का भी पता लगा है।

सूरदास पृष्ठ ५०२

इनका जन्म-संवत् १६४० ठीक नहीं जान पड़ता।

सेन कवि पृष्ठ ५०१

इन रीवाँवाले सेन का जन्म-काल १४५७ के लगभग है। १५६० वाला सेन दूसरा है।

सेनापति पृष्ठ ५०२

इनका एक ग्रंथ कवित्त-रत्नाकर भी खोज में मिला है। उसमें ५ तरंग हैं। पहले तरंग में ६४, दूसरे में ७४, तीसरे में ५६, चौथे में ७६ और पाँचवें में ५७ छंद हैं। शेष २७ कवित्तों में चित्र-काव्य है। १-२ तरंगों में शृंगार-रस, ३ तरंग में षट्ऋतु, ४ में रामकथा और ५ में भक्ति का वर्णन है।

सोमनाथ पृष्ठ ५००

१८८० जन्म-काल गलत है; क्योंकि इन्हीं के रसपीयूषनिधि ग्रंथ से जान पड़ता है, कि उसकी रचना १७९४ में हुई है।

हरिकेश कवि पृष्ठ ५०७

इनके व्रजलीला और जगत्सिंह दिग्विजय, ये दो ग्रंथ और मिले हैं।

हितहरिवंश पृष्ठ ५०७

इनका जन्म-संवत् १८७० के लगभग है।

श्रीगणेशाय नमः

भूमिका
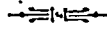
मैंने संवत् १९३३ में भाषा-कवियों के जीवनचरित्र-विषयक एक-दो ग्रंथ ऐसे देखे, जिनमें ग्रंथकर्त्ता ने मतिराम इत्यादि ब्राह्मणों को लिखा था कि वे असनी[1] के महापात्र भाट हैं। इसी तरह की बहुत-सी बातें देखकर मुझसे चुप न रहा गया। मैंने सोचा, अब कोई ग्रंथ ऐसा बनाना चाहिये, जिसमें प्राचीन और अर्वाचीन कवियों के जीवनचरित्र, सन्-संवत्, जाति, निवासस्थान आदि कविता के ग्रन्थों-समेत विस्तार-पूर्वक लिखे हों। मैंने प्रथम संस्कृत, अरबी, फ़ारसी, भाषा, और अँगरेज़ी के ग्रन्थों से पूर्ण अपने पुस्तकालय को छः महीने तक यथावत् अवलोकन किया। फिर कवियों का एक सूचीपत्र बनाकर उनके ग्रन्थ, उनके विद्यमान होने के सन्-संवत् और उनके जीवनचरित्र, जहाँतक प्रकट हुए, सब लिखे। पहले मैंने सोचा था कि एक छोटा-सा संग्रह बनाऊँगा; पर धीरे-धीरे ऐसा भारी ग्रन्थ हुआ कि १००० कवियों के नामोंसहित जीवनचरित्र इकट्ठे हो गये, जिनमें ८३६ की कविता मैंने इस ग्रन्थ में लिखी, और विस्तार के भय से केवल इतने ही कवियों की कविता लिखचुकने पर ग्रंथ को समाप्त कर दिया। मुझको इस बात के प्रकट करने में कुछ संदेह नहीं कि ऐसा संग्रह कोई आज तक नहीं रचा गया।

---

१ असनी गंगा-तटपर, ज़िला फ़तेहपूर (ई. आई. आर.) में एक बड़ा क़स्बा है। यह कान्यकुब्ज ब्राह्मणों का बहुत प्रसिद्ध स्थान है। यहाँके भाट कवि बड़े मशहूर थे।

परंतु इस बात को प्रकट करना अपने मुँह मियाँ मिट्ठू बनना है। इस कारण इस संग्रह की बुराई-भलाई देखने-पढ़नेवालों की राय पर छोड़ी जाती है। जिन कवियों के ग्रंथ मैंने पाये, उनके सन्-संवत् बहुत ठीक ठीक लिखे हैं, और जिनके ग्रंथ नहीं मिले, उनके सन्-संवत हमने अटकल से लिख दिये हैं। जो कहीं एक कवि का नाम दुबारा लिखा गया हो, अथवा एक कवि का कवित्त दूसरे कवि के नाम से लिखा हो, तो विद्वज्जन उसे सुधार लें, और मेरी भूल-चूक को क्षमा करें। क्योंकि मुझे काव्य का कुछ भी बोध नहीं है। कविलोग इस ग्रंथ में प्रशंसा के बहुत कवित्त देखकर कहेंगे कि इतने कवित्त वीर-यश के क्यों लिखे? मैंने सन्-संवत् और उस कवि के समय-निर्णय करने को ऐसा किया है; क्योंकि इस संग्रह के बनाने का कारण केवल कवियों के समय, देश, सन्-संवत् बताना है। जिन-जिन पुस्तकों से मुझको इस ग्रन्थ के बनाने में सहायता मिली है, उनके नाम नीचे लिखे जाते हैं—

१ कालिदास कवि का हज़ारा, जो संवत् १७५५ के लगभग बनाया गया, और जिसमें २१२ प्राचीन कवीश्वरों के कवित्त लिखे हैं।

२ लाला गोकुलप्रसाद कवि बलरामपुरीकृत दिग्विजयभूषण नाम संग्रह, जो संवत् १९२५ में बनाया गया, और जिसमें १९२ कवियों के कवित्त हैं।

३ तुलसीकवि-कृत कविमाला नाम संग्रह, जो संवत् १७१२ में बनाया गया, और जिसमें ७५ कवियों के कवित्त हैं।

४ ओयल के राजा सुब्बासिंह-कृत विद्वन्मोदतरंगिणी नाम संग्रह, जो संवत् १८७४ में सुवंस कवि की सम्मति से रचा गया, और जिसमें ४४ सत् कवियों के कवित्त हैं।

५ बलदेव कवि बघेलखण्डी कृत सत्कवि-गिरा-विलास नाम संग्रह, जो संवत् १८०३ में बनाया गया, और जिसमें १७ महान् कवीश्वरों के कवित हैं ।

६ बाबू हरिश्चन्द्र बनारसी कृत सुंदरीतिलक नाम संग्रह, जो संवत् १९३१ में बनाया गया, और जिसमें ६७ कवियों के शृंगाररस के सुंदर-सुंदर सवैया हैं ।

७ ठाकुरप्रसाद कवि किशुनदासपुरी का रसचंद्रोदय नाम संग्रह, जो संवत् १९२० में रचा गया, और जिसमें २४२ कवियों के ९ रस के कवित्त हैं ।

८ मातादीन मिश्र-कृत कविरत्नाकर नाम संग्रह, जो संवत् १९३३ में छापा गया, और जिसमें २० कवियों के कवित्त हैं ।

९ महेशदत्त पण्डित-कृत काव्यसंग्रह नाम संग्रह, जो संवत् १९३२ में छापा गया ।

१० कृष्णानन्द व्यासदेव स्वामी-कृत रागसागरोद्भव-रागकल्पद्रुम नाम संग्रह, जो संवत् १८०० में बनाया गया, और जिसमें प्रायः २०० महात्माओं के पद लिखे हैं ।

११ टाड साहब रज़ीडेंट राजपूताना-कृत टाड राजस्थान नाम इतिहास, जो संवत् १८८० में बनाया गया, और जिसमें प्राचीन कवीश्वर चंद इत्यादि का वर्णन है ।

१२ कल्हण, जोनराज इत्यादि-कृत संस्कृत काश्मीर-राजतरंगिणी और रघुनाथ मिश्र विद्याधर-कृत संस्कृत दिल्ली-राजतरंगिणी, राजावली ग्रंथ, जिसमें पाँचहज़ार वर्ष तक के समाचार लिखे हैं ।

१३ तुलसीदास-कृत उर्दू भक्तमाल, जो संवत् १९११ में बनाया गया, और जिसमें सूरदास इत्यादि भक्त कवीश्वरों के जीवनचरित्र लिखे हैं ।

१४ दलसिंह, किशोर, ग्वाल, निपटनिरंजन, कमंच इत्यादि के संगृहीत पाँच संग्रह, और इनके सिवा २८ और संग्रह के ग्रंथ, जिनमें सन्-संवत् नहीं लिखे।

संस्कृतसाहित्यशास्त्र का निर्णय

अथ काव्य-लक्षण। (काव्यविलासमते)

दोहा—गुन-जुत सब दूषन-रहित, सब्द-अर्थ रमनीय।
स्वल्पअलंकृत काव्य को, लच्छन कहि कमनीय॥

(काव्यप्रदीपमते)

अद्भुत वाक्यहि ते जहाँ, उपजत अद्भुत अर्थ।
लोकोत्तर रचना जहाँ, सो कहि काव्य समर्थ॥

(साहित्यदर्पणमते)

रस-जुत व्यंग्यप्रमान जहँ, सब्द अरथ सुचि होइ।
उक्ति जुक्ति-भूषनसहित, काव्य कहावै सोइ॥

(रसगंगाधरमते)

जहँ विभाव, अनुभाव पुनि, संचारी पुनि आइ।
करि विसिष्टता व्यंजना, स्वाद बढ़ावै भाइ॥

(अथकाव्यप्रयोजन)

चारि वर्ग लहि जासु ते, आवत करतल माह्नि।
सुनत सुखद, समुझत सुखद, बरनत सुखद सुमाह्नि॥

(विष्णुपुराणे)

काव्यालापाश्च ये केचिद्गीयन्तेनाखिलेन च।
शब्दमूर्तिधरस्येते विष्णोरंशामहात्मनः॥

भाषा दोहा—करत काव्य जे जगत मैं, बानी अखिल बखानि।
सब्दमूर्ति ते जानिये, विष्णुअंस पहिचानि॥

(अग्निपुराणे)

नरत्वं दुर्लभं लोके विद्या तत्र सुदुर्लभा ।
कवित्वं दुर्लभं तत्र शक्तिस्तत्र सुदुर्लभा ॥

भाषा दोहा—नरतन दुरलभ लोक मैं, ताते विद्या जानि ।
विद्या ते पुनि काव्य कहि, ताते सक्ति सुमानि ॥

(अथ काव्य को कारण)

प्रथम सक्ति व्युत्पत्ति पुनि, तीजो पुनि अभ्यास ।
कारन तीनि सुकाव्य के, वरनत सुमतिविलास ॥

प्रथम सर्वविद्या-ईशान श्रीसांब-सदाशिव हैं । उनके पीछे संस्कृतकाव्य के प्रथम आचार्य श्रीब्रह्माजी को समझना चाहिये, जिन्होंने छंदस्वरूप वेद का निर्माण किया । दूसरे आचार्य श्री वाल्मीकिजी हैं, जिन्होंने आदिकाव्य रामायण को नाना छंदों में रचा । उपरांत मनु महाराज इत्यादि और याज्ञवल्क्य इत्यादि महाऋषीश्वरों ने विंश स्मृतियों को अपने-अपने नाम से वनाया । फिर श्रीवेदव्यास महाराज ने भारत-इतिहास को अष्टादश पुराणों सहित रचा, और ऋषीश्वरों ने अष्टादश उपपुराण वनाये । इसके पीछे संस्कृत-साहित्य के तीन आचार्य हुए—भरत, भाम, मम्मट । इन्हीं तीनों आचार्यों ने काव्य के दसों अंग विस्तार-पूर्वक वर्णन करके काव्यप्रकाश नाम ग्रंथ वनाया । तदनन्तर सैकड़ों आचार्य हुए और उन्होंने सैकड़ों काव्य के ग्रंथ वनाये । कुछ व्यौरा हमारे वनाये हुए कविमाला नाम ग्रंथ से प्रकट होगा । यहाँ केवल संस्कृत-काव्य के विवरण में ३४ दोहे उसी ग्रंथ से लिखते हैं—

(कविमालानाम ग्रंथे)

दोहा—मंगल-मूरति गौरिसुत, संकर-सुवन गनेस ।
हरिवल्लभ करिवर-वदन, बानी-सदन दिनेस ॥ १ ॥

कविकुल को माला कहत, सेंगर शिव मतिमंद।
हरहु विघ्न करुनायतन, कृपासिंधु जगवंद॥ २॥
पहिले भाषत संस्कृत, साहित्यन के नाम।
सूत्र भरत ऋषि के किये, श्लोकबंध गुनधाम॥ ३॥
व्याख्या काव्यप्रकाश कवि, मम्मट कियो प्रकास।
दूजो साहितचंद है, विदरन बुद्धि-विलास॥ ४॥
दसौ अंग साहित्य के, कीन्हो दसौ उलास।
वामन सूत्रै में कियो, साहित सबै विकास॥ ५॥
साहित काव्य-प्रदीप है, छाया काव्यप्रकास।
मम्मट को व्याख्यान करि, कियो नाम निज खास॥६॥
साहित-दर्पण पुनि समुझि, रस-रत्नाकर नाम।
अलंकार-सरवस्व पुनि, चंद्रालोक ललाम॥ ७॥
अलंकार-सेखर बहुरि, रस-गंगाधर सार।
रुद्राटालंकार पुनि, वागभटालंकार॥ ८॥
सरस्वतीकण्ठाभरन, काव्यादर्स स्वछंद।
चित्रमिमांसा दीक्षितौ, कियो कुवलयानंद॥ ९॥
रुद्रप्रताप सहित्य को, काव्य-विलासहि जानि।
साहित संग्रहसार पुनि, रसतरंगिनी भानि॥ १०॥
रुद्रट तिलकसिंगार किय, रसमंजरि कवि भानु।
ग्रंथ नील उज्जल मनिहु, गीतगोविन्दहि जानु॥ ११॥
करनामृत श्रीकृष्ण को, पुनि भामिनीविलास।
गोवर्द्धन की सतसई, अनँगरंगपरकास॥ १२॥
नागराजकृत सतक पुनि, कांतासतक कटाच्छ।
ये सिंगार के ग्रंथ हैं, रसप्रमान के आच्छ॥ १३॥
कवि की कल्पलता लता, काव्यकल्प है एक।

अन्योक्तिकल्पद्रुमहु, काव्यमिमांसा नेक ॥ १४ ॥
प्रस्ताविकरतनाकरहु, वासवदत्ता जानि ।
महासेन कादंबरी, महानाटकहु मानि ॥ १५ ॥
दसरूपक को आदि दै, नाटक अपर प्रमानि ।
प्रहसन चंपू नाटिका, भेंड प्रसस्ति वखानि ॥ १६ ॥
वेद सास्त्र, रामायनों, तंत्र पुरानहु जोइ ।
वेदअंग[1] उपवेदहू[2], धर्मसास्त्रजुत होइ ॥ १७ ॥
चित्रकाव्य पुनि चित्र को, काव्य नलोदय जानि ।
है पटऋतु उपसंहृतिहु, वाकभूषनहु मानि ॥ १८ ॥
पुनि बिदग्धमुखमंडनौ, काव्य सुभापितलेखि ।
सारँगधरधरजा कहौ, दसकुमार पुनि देखि ॥ १९ ॥
सालिहोत्र गज तुरग को, वैदकजुत है सोइ ।
वीरचरित नाटक बहुरि, भारत चंपू जोइ ॥ २० ॥
रामायन चंपू तथा, अनिरुध चंपू और ।
आनँदबृंदावन सहित, चंपू है सिरमौर ॥ २१ ॥
चंपू श्रीनरसिंह को, चल चंपू सुनि लेहु ।
पद्य-गद्य-जुत काव्य को, चम्पू नाम कहेहु ॥ २२ ॥
प्रथम काव्य रघुवंस है, कालिदास कवि कीन ।
तीनि माघ कवि-कृत सुभग, माघ वैस्य धन हीन ॥२३॥
सिरीहरष मिश्रहु कियो, नैपध काव्य प्रवीन ।
भारवि कियो किरात को, अर्थ बहुत जुत पीन[3] ॥२४॥
मेघदूत संभव[4] कियो, कालिदास कवि तीनि ।
बृहत्त्रयी रघुबंस पुनि, माघ नैपधौ गीनि ॥ २५ ॥

१-छंद, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिप, निघंटु आदि । २-धनुर्वेद, गांधर्ववेद आदि । ३-गंभीर । ४-कुमारसंभव ।

काव्य किरात कुमारहू, मेघदूत हू जानि।
लघुत्त्रयी इनको सुनौ, कविजन कहत वखानि ॥ २६ ॥
हंसदूत इक काव्य है, दुर्घट[1] काव्य नवीन।
विद्वन्मोदतरंगिनी, भोजप्रवन्धहु गीन ॥ २७ ॥
रतिरहस्य सामुद्रिकहु, कोकसार हू मानि।
पँचसायक पुनि अनँगरँग, कोकमंजरी जानि ॥ २८ ॥
अमरकोस पुनि मेदिनी, हेमधनंजय लेखि।
रत्नकोस रत्नावली, विस्वकोस हू देखि ॥ २९ ॥
विस्वगुनादसकोस[2] पुनि, एकाक्षरी वखानि।
अनेकार्थध्वनिमंजरी, मानमंजरी मानि ॥ ३० ॥
और अनेकाअर्थ है, कास निघंटुहु जानि।
और मातृकाकोस है, अच्छररूप वखानि ॥ ३१ ॥
हनुमतनाटक नाटकहु, उत्तररामचरित्र।
नाटक राघववीर नृतराघव वहुत पवित्र ॥ ३२ ॥
अनरघराघव नाटकहु, प्रवुधविधूदय[3] मानि।
इतने रघुवरचरित के, नाटक उर में आनि ॥ ३३ ॥
पाकसास्त्र विद्या कला, सव मिलि कविता साक्ति।
ये पढ़िकै चित पित्त हू, अभ्यासहि करि व्यक्ति ॥ ३४ ॥

भाषा काव्य का निर्णय

महाराजा विक्रमादित्य के समय तक भाषा-काव्य का प्रचार किसी प्रबंध और तवारीख़ से नहीं पाया जाता। राजा भोज की सभा में ये नव महान् कवि थे--धन्वतरि, क्षपणक, अमरसिंह, शंकु, वेतालभट्ट, घटकर्पर, कालिदास वराहमिहर, वररुचि। वे भी संस्कृत के कवि थे, और कोई ग्रंथ भी उस समय का बनाया हुआ

१-कठिन। २-विश्वगुणादर्श। ३-प्रबोधचंद्रोदय।

भाषा म नहीं देखा गया । भाषा-काव्य का मूल खोजने के लिये मैंने बड़े-बड़े ग्रन्थ यथावत् विधिपूर्वक बहुत उलटे-पुलटे; पर कुछ भी पता नहीं चला । मैंने विचारा, कदाचित् भाषा का प्रथम आचार्य चंद कवीश्वर न हो, जिसने संवत् ११२५ में नाना छन्दों में पृथ्वीराजरासा रचा है । जब पृथ्वीराजरासा के पत्र उलटे, तो विदित हुआ कि चन्द कवि से पहले भी बहुतेरे अच्छे-अच्छे कवीश्वर हो गुजरे हैं । तब मैंने टाडसाहब की किताब राजस्थान और राजतरंगिणी इत्यादि हिन्दू राजों के प्राचीन इतिहासों को देखना-भालना शुरू किया । किताब राजस्थान में मुझको अवंतीपुरी के एक प्राचीन इतिहास में लिखा मिला कि संवत् सात सौ सत्तर में अवंतीपुरी के राजा भोज के पिता राजा मान काव्यशास्त्र में महानिपुण थे । उन्होंने संस्कृत अलंकार-विद्या पूषी नाम एक बंदीजन को पढ़ाई । पूषी कवि ने संस्कृत अलंकारों को भाषा दोहरों में वर्णन किया । उसी समय से भाषा-काव्य की जड़ पड़ी । और, कुछ आश्चर्य नहीं कि उन्हीं दिनों किसी-किसी कविने नायिकाभेद इत्यादि के भाषाग्रन्थ बनाये हों । परंतु राजा भोज के समय में संस्कृत-विद्या का अधिक प्रचार होने के कारण भाषा यथावत् उन्नति को प्राप्त न हुई हो । संवत् ८१२ में रावत खुमानसिंह गुहलौत सीसौदिया, महाराजा चित्तौड़गढ़, भाषा-काव्य के बड़े अधिकारी हुए । संवत् ६०० में खुमानरासा नाम ग्रंथ भाषा में अपने नाम से नाना छन्दों में बनाया । पीछे संवत् ११२४ में चन्द कवीश्वर ने पृथ्वीराजरासा भाषा में बनाना प्रारम्भ किया, और ६९ खंडों में एक लक्ष श्लोक ग्रंथ को रचकर पृथ्वीराज चौहान का जीवनचरित्र संवत् ११२० से संवत् ११४९ तक वर्णन किया । इन्हीं दिनों जगनिक और केदार कवीश्वरों ने चंदेलों और

गोरियों के प्रबंध भाषा में लिखे । संवत् १२२० में कुमार-पाल खींची महाराजा अनहलवारा के नाम से एक ग्रंथ भाषा में कुमारपालचरित्र नाम बनाया गया, जिसमें महाराजकुमारपाल के जीवनचरित्र और वंशावली का वर्णन है । संवत् १३५७ में चंद्र कवीश्वरवंशोद्भव सारंगधर वंदीजन ने, जो काव्य-विद्या में महान् पंडित था, हमीररासा और हमीरकाव्य, ये दो ग्रंथ भाषा में बनाये। हमीररासा में महाराजा हमीरदेव चौहान रणथम्भौरवाले का जीवनचरित्र और हमीरकाव्य में काव्यविद्या के सब अंग वर्णन किये । संवत् १४५७ में महाराना * कुंभकर्ण चित्तौरगढ़ के राणा ने गीतगोविन्द को संस्कृत से भाषा करके नाना छन्दों को प्रकट किया । उनकी रानी मीराबाई ने कवियों का ऐसा मान किया कि उस समय भाषा-काव्य बनाने की हिन्दुस्तान में बड़ी चरचा होगई । जिस स्थान में राणा कुंभकर्ण और मीराबाई अपने इष्ट-देव के सामने अपनी बनाई हुई कविता को गाते और अन्य कवीश्वरों के काव्य को श्रवण करते थे, उसकी तैयारी में ९९ लक्ष रुपये खर्च हुये थे । संवत् १५०० में भाषा-काव्य सारे हिन्दुस्तान में ऐसा फैला कि गाँव-गाँव, घर-घर कवि हो गये । इधर व्रजभूमि में वल्लभाचार्य्य, विट्ठलस्वामी और हरिदास जी महात्माओं के शिष्य ऐसे कविता में निपुण हुए, जैसे कोई न हुए थे और न कभी होंगे । सूरदासजी, कृष्णदास, परमानंद, कुंभनदास, चतुर्भुज, छीतस्वामी, नंददास, गोविन्ददास, ये आठ कवि अष्टछाप के नाम से विदित हुए । इन आठों ने शृङ्गार-रस के समुद्र व्रजभूमि में बहाये, जिन समुद्रों ने सारे हिन्दुस्तान को

* यह गलत है । मीराबाई के पति भोज राजा थे, जो राना साँगा के बेटे थे, और थोड़ी ही अवस्था में मर गए ।

आनंदरूपी लहरों में मग्न कर दिया । उधर श्री गोस्वामी तुलसी दास, केशवदास, बलभद्र, ब्रह्मराजा वीरबल, गंग, रहीम खानखाना, नरहरि, करन इत्यादि ने नव रस को दशांग-साहित्य समेत और संस्कृत साहित्य के बड़े-बड़े ग्रंथों के आशय भाषा में ऐसी विधि से प्रकट किये कि हरएक छोटे बड़े राजा-बाबू ग़नी-गरीब काव्य-शास्त्र के विनोद में काल व्यतीत करने लगे । केशव-कृत कविप्रिया ने सब संस्कृत के पंडितों को इस बात पर आरूढ़ कर दिया कि वे सब संस्कृत काव्य को छोड़ भाषा-काव्य करने लगे । इसी कारण संवत् १७०० में चिन्तामणि, मतिराम, भूषण, कालिदास, कवीन्द्र, दूलह, देव, करन, सुखदेव, श्रीपति, ठाकुर, निवाज, बिहारीलाल, वीरतन, कान्ह, बेनी, मंडन, भगवंत, भोज, नृप शंभु, सुंदर, सूरति मिश्र, देवीदास, मुबारक, रसखानि, राम कवि इत्यादि श्रेष्ठ कवियों ने भाषा-काव्य के बड़े-बड़े अद्भुत ग्रंथ बनाये । संवत् १८०० में जैसे अच्छे कवि हुए, ऐसे किसी शतक के भीतर नहीं हुए थे । भिखारीदास ने इसी शतक में संस्कृत-साहित्य को भाषा में भलीभाँति से प्रकट किया । रघुनाथ, गोकुलनाथ, मणि-देव, मुकुंदलाल, बनारसी, कुमार, किशोर, खुमान, ग्वाल राय, दत्त, पद्माकर, गुमान, मित्र, चंदन राय, नृप यशवन्त, शम्भुनाथ, विक्रम, सुखदेव (२), देवकीनंदन, जगतसिंह, शिव कवि, परतापसाहि, रूपसाहि, मृदव, सुवंश, शिवलाल, सून, बलदेव बघेलखंडी, रसलीन, बेनीप्रवीन, पजनेस इत्यादि इसी शतक में हो गये हैं । संवत् १९०० अर्थात् वर्तमान शतक में लाल त्रिपाठी, सरदार बनारसी, गणेश, द्विजदेव, क्षितिपाल, दीनदयाल गिरि, राजा रणधीरसिंह, राजा रघुराजसिंह, सेवक, बिहारीलाल, भोज इत्यादि बहुतेरे सत्कवि कैलाशवासी हो चुके और बहुतेरे विद्यमान हैं ।

अब इस समय बहुधा कविलोग नीचे लिखे हुए ग्रन्थों को पढ़ते हैं। पिंगलों में सुखदेवमिश्रकृत वृत्तविचार, छंदविचार, फ़ाज़िलअलीप्रकाश, भिखारीदास-कृत छंदोर्णव। साहित्य में काव्यविभूषण, फ़तेहप्रकाश, रसकल्लोल, काव्यकल्पद्रुम, काव्यसरोज, कविकुलकल्पतरु, कविवल्लभ, व्यंग्यपचासा, और शृंगार अलंकार में भाषाभूषण, रसरहस्य, रसिकप्रिया, कविप्रिया, सभाप्रकाश, काव्यरसायन, काव्यविलास, रूपविलास, व्यंग्यार्थकौमुदी, अलंकार भाषा इत्यादि।

ज्येष्ठशुक्ल १२, संवत् १९३४ { शिवसिंह सेंगर इन्स्पेक्टरपुलिस
मुल्क अवध, मुक़ाम काँथा,
ज़िला उन्नाव.

श्रीगणेशाय नमः
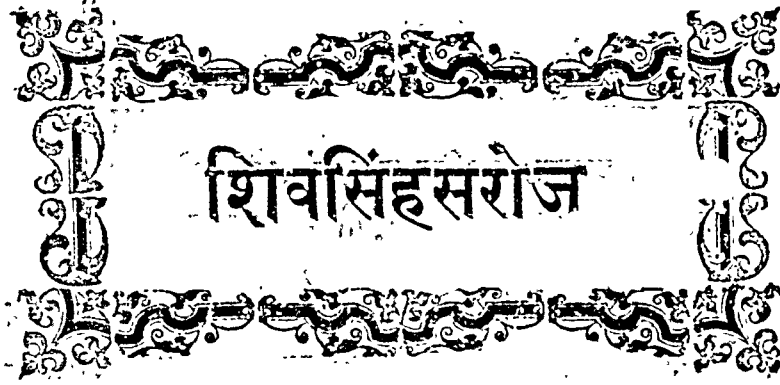
१. अकब्बर कवि (श्रीमुहम्मद जलालुद्दीन अकबर बादशाह)

शाह अकब्बर बाल की बाँह अचिंत[1] गही, चलि भीतर भौने।
सुन्दरि द्वार ही दृष्टि लगाय के भागिबे की भ्रम पावत गौने॥
चौंकत सी सब ओर बिलोकत संक-सकोच रही मुख मौने।
यों छबि नैन छबीली के छाजत मानो बिछोह परे मृगछौने॥१॥

शाह अकब्बर एक समै चले कान्ह बिनोद बिलोकन बालहिं।
आहट ते अबला निरख्यो चकि चौंकि चली करि आतुर चालहिं॥
त्यों बलि बेनी सुधारि धरी सु भई छबि यों ललना अरु लालहिं।
चम्पक चारु कमान चढ़ावत काम ज्यों हाथ लिये अहि बालहिं[2]॥२॥

केलि करै बिपरीति रमै सु अकब्बर क्यों न तिया सुख पावै।
कामिनि की कटि किंकिनि कान किधौं गनि प्रीतम के गुन गावै॥
बेंदी छुटी मनिमै[3] सु ललाट ते यों लट में लटकी लगि आवै।
साहि मनोज मनो चित में छबि चंद लिये चकडोरि खिलावै॥३॥

---

१ अचानक। २ साँप के बच्चे को। ३ मणिजटित।

२. अमरदास कवि

छप्पै

एक चरन मों पदुम, एक पग झंझन वज्जै।
एक हाथ मों डमरु, एक कर कंकन सज्जै॥
एक ओर[1] है चीर, एक उरियाँ मृगछाला।
एक कान मों वीर, कान इक मुद्रा आला॥
अधसीस अलक, अधसिर जटा, गंगा वेनी सीस धर।
अमरदास आसन भनै अरधंगी शंकर गवर[2] ॥ १ ॥

३. अजवेश (१)

बड़ी बादशाही ज्यों हीं सलिल[3] प्रलै के बढ़ै[4] राना, राव, उमरात्र सब को निपातै भो। बेगम बिचारी वही, कतहूँ न थाह लही, बाँधौ-गेढ़[5] गाढ़ो गूढ़ ताको पक्ष-पात भो॥ शेरशाह सलिल प्रलै को बढ्यो अजवेश बूड़त हुमाऊँ के बड़ोई उतपात भो। बलहीन बालक अकब्बर बचाइबे को वीरभान भूपति अछैवट को पात भो॥ १॥

४. अजवेश (२)

संगर समत्थ सज्यो बाँधो-धनी विश्वनाथ वीरता को रूप खूब आनँद लखात है। मारू बजे बाजे गाजे दुरद[6] दँतारे[7] भारे सुभट-समूह सावधान दरसात है॥ विक्रम विहद हिंदुवान हद्द अजवेश जैसिंह के नंद के अनंद अधिकात है। तरकत जात बंद, करकत जात कौच, फरकत बाहु, बाजी[8] थरकत जात है॥ १॥ जोगिन को जोग भोग भोगिन को यामैं सबै रोगिन के रोग मेटिवे को बिधि करी है। ज्ञान ध्यान दानी सनमानी सदा संभुजू की बुद्धि की निसानी बानी वेद उरवरी[9] है॥ सुख सरसावनी है पावनी परम अजवेश जी जियावनी प्रसिद्धि सिद्धि-जरी है। उमँगी उमंग ते वै तरल तरंग-भरी एक रंग हरी पै अनेक रंग भरी है॥ २॥

---

१ एक तरफ़। २ पार्वती। ३ जल। ४ गिरना, पतन। ५ रीवाँ। ६ हाथी। ७ दाँतवाले। ८ घोड़ा। ९ निकली।

५. अयोध्याप्रसाद वाजपेयी (सातनपुरवा)
साहित्यसुधासागर-ग्रंथ

उड़िगे चकोर, मोर, खंज, शिलीमुख जोर जंग लगे उरग, तुरग, मृग, द्विपनाह। झख मारि मन हारि कंज कारि बूड़े वारि ऊपर परीन कौ परीन की परी न आह॥ अवध अकल यों वहाल हर हाल लाल सौति-साल बोलचाल वाह-वाह आह-आह। लखत सखत दसखत ये तखत भाव वखतबलंद प्यारी तेरे नैन पाद-शाह॥ १॥

घनश्याम-घटा सी छटा सी दुकूल प्रकासत औध विलाजत हीं। बिन देखे छमा सी छमासी पला उपहाँसी की नासी न काजत हीं॥ मृदु हाँसी की फाँसी में फाँसी फिरै सुखमा सी उदासी न साजत हीं। विधि बाँसी ये गाँसी सिखा सी हिये लगै गाँसी विसासी के बाजत हीं २

बाटिका-विहंगन पै, वारिगा-तरंगन पै, वायु-वेग गंगन पै व-सुधा वगार है। बाँकी वेनु-तानन पै, बँगले वितानन पै, वेस औध पानन पै, वीथिन वजार है॥ बृन्दावन-वेलिन पै, वनिता नवेलिन पै, ब्रजचन्द्र-केलिन पै वंशीवट मार है। वारि के कनाकन पै, वद्दलन बाँकन पै, बीजुरी वलाकन पै बरखा-बहार है॥ ३॥

हरखे हरौल है अमरखे अनंग हेत करखे कलापी चोपि चातक-चमू चली। उमड़े घटा हैं मानि करने कटा हैं छटा फेरत पटा हैं ठटा सूर की हटाकिली॥ घेरि कै अड़े हैं, बिन बूँदन लड़े हैं, औध आनँद खड़े हैं देखि दादुर बड़े दिली। कादर वियोगी हारि चादर बलाक फेरि वादर बहादुर को नादर फते मिली॥ ४॥

---

१ दो। २ नोक। ३ पक्षी। ४ नदी। ५ चँदोवा। ६ गली। ७ कण। ८ बगले। ९ मोर।

६. अवधेश ब्राह्मण बुन्देलखण्डी चरखारी (१)

लै गई मोहिं कलिंदी के कूल दुकूल दिखाइ ठगोरी सी कै गई।
कै गई आज बिथा तन में मन ही मन मैन-मरोरनि दै गई॥
दै गई दाग दगा करिकै अवधेश कहैं तन तापन तै गई।
तै गई नेक न लाई कछू सुधि गोरी गुवारिनि सो मन लै गई॥१॥

७. अवधेश ब्राह्मण भूपा के (२)

कैसे तमे नासतो, को भ्रम को बिनासतो, पिसाच को उदासतो निसाचर को त्रासतो। कैसे बर्ष मासतो, प्रमोद को हुलासतो, पताल भू प्रकासतो बिपत्ति को निवासतो॥ अवधेश दासतो को देव बिसवासतो न नेकु हू उजासतो दुनी को कोऊ कासतो। कैसे बेद भासतो प्रकासको प्रकासतो कदाचि तेजरासि जौ न भासकर भासतो॥ १॥

मोतिन चौक पुराइ घनी गनी गायनै बारबधून बुलाइहौं।
रंग-बिरंग के लै लै कुसुम्भ उमंग सों मालिनि सों गुँथवाइहौं॥
दै अवधेस द्विजेसन को धन कंचन के घट दीप धराइहौं।
साजि कै साज समाज भली बिधि आज लला के बसंत बँधाइहौं॥२॥

८. अवधबकस

छपानाथ छवि सों छबीली छाइ छिति पर छीरनिधि बीच छुभी छुटी गंगधार सी। छेद करि तारा नभ छैर रही छोरनि लौं छोनीतल फोरि छोना जीते सीसहार सी॥ अवधबकस भूप कीरति है छंद ऐसी छाजत गिरा के मुख सुषमा अपार सी। छेदि डार्‌यो छेदन के मिसु करि दारिद को कूरके कबिंदन को मुख के अगार सी॥ १॥

---

१ तमोगुण और अंधकार। २ कदाचित्। ३ सूर्य। ४ वेश्या। ५ चन्द्रमा। ६ पृथ्वीतल।

९. अब्दुलरहिमान कवि

यमक शतक

दोहा—बानी बानी देत सुभ, जस बानी तस रीति।
रहैं मान ताको तबै, रहै सान चित प्रीति॥ १॥
साजस छत्र–पती सुपति, दिल्लीपति जु प्रवीन।
चकता आलमसाह-सुत, कुतबुद्दीन-पद-लीन॥ २॥
ताको मन सबदा जगत, कवि अब्दुलरहिमान।
कवि ईश्वर ईश्वर कियो, कियो ग्रन्थ अभिराम॥ ३॥
चुनी चुनी पहिरी सुरंग, चुनी सौतिदल कीन।
बनी बनी रस सों सरस, तनी तनी कुच पीन॥ ४॥
बारी बारी बैस में, बारी सौति सिंगार।
हारी हारी करत है, हारी हेरत हार॥ ५॥

१०. अम्बुज कवि

ह्वैकै महाराज हय हाथी पै चढ़े तो कहा जो पै बाहुबल निज प्रजनि रखायो ना। पढ़ि पढ़ि पण्डित प्रवीन हू भये तौ कहा विनयविवेकजुत जो पै ज्ञान आयो ना॥ अंबुज कहत धन धनिक भये तो कहा दान करि जो पै निज हाथ जस छायो ना। गरजि गरजि घन घोरनि किये तौ कहा चातक के चोंच में जु रंच नीर नायो ना॥ १॥

छीरधि[१] को छीर, कैधौं नीर सुरआप[२] को है, कैधौं हीरहारन की हादही सँवारी है। हंसन की पाँति, कैधौं गुन की है भाँति, भली कीरति की सौंति, कैधौं सारद की सारी है॥ अंबुज कहत बसुधा[३] में कै सुधा की धार, कैधौं हासरस की हरौल भीर भारी है। चंद उजियारी की विहारी की बसीकरन सीकरनवारी कैधौं हँसनि तिहारी है॥ २॥

११. आजम कवि

वैससंधि नवला नवोढ़ा[४] बाल स्यामा अरु कहिये किसोरी

१ क्षीर-सागर। २ गंगा। ३ पृथ्वी। ४ नई ब्याही बहू

जाको जोबन जगमगात । बरस बरस अभरन रसबस लगि अबला तरुन दूनौ रस रस सरसात ॥ विद्यागृह बाढ़ी जुवती जु मौढ़ा दूनौ कला सकल हिये में बसैं आजम सदा सुहात । जैसे मनिमंदिर[1] में छोटी बड़ी मनिन में एकै रूप प्रतिबिंब पूरो सबको लखात ॥ १ ॥

१२. अहमद कवि

दोहा—पीतम नहीं बजार में, वहै बजार उजार ।
पीतम मिलै उजार में, वहै उजार बजार ॥ १ ॥
कहा करौं वैकुंठ लै, कलपवृच्छ की छाँह ।
अहमद ढाँख सुहावने, जहँ पीतम-गल-बाँह ॥ २ ॥
गवन समय पटुका गह्यो, छाँड़हु कह्यो सुजान ।
प्रानपियारे प्रथम ही, पटुका तजौं कि प्रान ॥ ३ ॥
अहमद या मन-सदन[1] में, हरि आवैं केहि बाट ।
विकट जुरे जौलौं निपट, खुले न कपट-कपाट ॥ ४ ॥
कहि आवत सोई विथा, चुभी जु हित चित माहिं ।
अहमद घायल नरन को, वे कलार कल नाहिं ॥ ५ ॥
अहमद गति अवतार की, कहत सबै संसार ।
बिछुरे मानुष फिरि मिलैं, यहै जानि अवतार ॥ ६ ॥
सोरठा—बुंद समुद्र समान, यह अचरज कासों कहौं ।
हेरनहार हेरान, अहमद आपै आप में ॥ ७ ॥

१३. अनन्य कवि (१)

करम की नदी जामें भरम के भौंर परैं लहरैं मनोरथ की कोटिन गरत हैं । काम, शोक, मद, महामोह सो मगर तामें क्रोध सो

१ मन के मंदिर में ।

फनिंद जाको देवता डरत हैं ।। लोभ-जल-पूरन अखंडित अनन्य भनै देखैं वारपार ऐसो धीर ना धरत हैं । ज्ञानब्रह्म सत्य जाके ज्ञान को जहाज साजि ऐसे भवसागर को विरले तरत हैं ।। १ ।।

एक कहत विष्णु बसत वैकुंठ धाम शैव कहत शिव जू कैलास सुख भरे हैं । कहैं राधावल्लभी विहारी बृन्दावन ही में रामानंदी कहैं राम अवध से न टरे हैं।। ये तो सब देव एकदेसिक अनन्य भनै हम तुम सब आप ठौरन ज्यों धरे हैं । चेतन अखंड जासे कोटिन ब्रह्मांड उड़ैं ऐसो परब्रह्म कहाँ पुरनि में परे हैं ।। २ ।।

बिन भेदन भेदन में जु कछू मति के अनुसार लही सो लही ।
नहिं बेद-पुरान की रीति कछू, अनरीति की टेक गही सो गही ।।
समुझायो नहीं समुझै गुरु को, गुरु को अपमान लही सो लही ।
यह तामस ज्ञान अनन्य भनै, पुनि मूरख गाँठि गही सो गही ।। ३ ।।

१४. औध कवि

भूली किधौं ह्याँ की पीर वाढ़ी है उहाँ की भरैं नैन भरना की सुधि आये उर वाकी है । चंचला चलाकी करै नट की कला की तैसी दौर वदरा[1] की औ धुकार धुरवा[2] की है ।। है न कछु वाकी औध आसरा निसा की तामें आइ परै डाकी पै झकोर पुरवा की है । टेर पपिहा की करै सेल-समताकी दरै करै उर झाँकी ये पुकार पुरवा की है ।। १ ।।

१५. अयोध्याप्रसाद शुक्ल गोलावाले

पूरि रही है अनंद-विलास सबै विधि सों सुख सोभा विराजै ।
फ़ीक़त है दृग चंचल मीन सो खंजन की गति कौन कि राजै ।।
जोधीं भले अधरान की लाली मनो रबि प्रात उदोत विराजै ।
ह्याँ मध्याह्न[3] को साज सजै संकेत निधान में हाँसिहि राजै ।।१।।

१ मेघ । २ पुरवाई हवा । ३ दोपहर ।

१६. अग्रदास

पद

चहियतु कृपा लली सीता की। नवधा भक्ति ज्ञान कीं करतल रही न संक बेद, गीता की॥ बेद पुरान कहावत पटमत करत बाद नर बपु बीता की। झगर करत उरझो नहिं सुरझो मिटी न एक दूतभय ताकी॥ जाकी ओर तनक भरि चितवत करत सहाय राम जन ताकी। अग्रअली भजु जनकनंदिनी पाप अँडार ताप-रीता की॥ १॥

१७. अगर

कुंडलिया

अगर जीव की दया बिन धरम अंग सब धूत।
गाव बधावन का करौ पुरुषधरम नहिं पूत॥
पुरुषधरम नहिं पूत सकल तीरथ करि आये।
जज्ञ, प्रतिष्ठा, दान, जोग, तपसा मन भाये॥
कंठी, तिलक, बिराग, ज्ञान सतगुरु सों पाये।
श्रवनै बेद पुरान जगत में जसी कहाये॥ १॥

दोहा—दुष्ट न छोड़ै दुष्टता, सज्जन तजै न हेत।
कज्जल तजै न स्यामता, मोती तजै न सेत॥ १॥
गुन में औगुन खोजही, हियें न समुझै नीच।
ज्यों जूही के खेत में, सूकर खोजत कीच॥ २॥
अगर दुष्ट जे जीव हैं, सिर तजि अपजस लेहिं।
सन तन खाल कढ़ाइ कैं, पर तन बंधन देहिं॥ ३॥
सज्जन ऐसो चाहिये, जैसो आकोदुद्ध।
औगन ऊपर गन करै, तौ जानौ कुल सुद्ध॥ ४॥

१ नवतरह की। २ मदार का दूध।

१८. आनंदसिंह दिकौलियावाले

माइनि राधे गई अन्हवावन कंचुकी खोलि धरी सुघरे की।
भावै अनंद दोऊ कुच ऊपर सोभा विलोकत रूप खरे की॥
दाग लखो हिय, पूछै लगी, तहँ बोली सखी वह हास परे की।
भेंटत ही में गड़ी यहिके मुकताहल-माल गोपाल-गरे की॥१॥

१९. अमरेश कवि

मानुस कहाय हिय हिम्मति बिहाय नित करै हाय-हाय न सुहाय पनै ताका है। ऐसे बंदे बद सों सलाह न अछात मन प्रेम के नसे का कीना कब हीन साका है॥ कहैं अमरेस जे हैं साहब-सहूर नर पूरन प्रताप मता जिनकी सभा का है। एक दिन फाका एक होत है नफा का एक दिन है जफा का एक सफमसफा का है॥१॥

कसि कुच कंचुकी में बिमल बिरचि हार मालती के सुमन धरेई कुँभिलाइ गे। गोरी गाँरु चंदन, घगारु घनसार, अब दीपक उज्यारु, तम छिति पर छाइ गे॥ बार धूपि अगर अंगार धूपि बैठी कहा अमरेस तेरे अग्र भूलि से सुभाइ गे। सरद सुहाई साँझ आई सेज साजु, अस कहत सुवा के आँसु वाके नैन आइ गे॥२॥

२०. औसेरी बंदीजन अवधेश वासी

भाँड़न को भोज औ कलावतन को करन जैसे बिरवन को बेन से उरोजरस लीबे को। बेड़िनि को बिक्रम रामजनिन को जयचन्द चुगुलन को चतुरभुज भारी मौज कीबे को॥ कहै औसेरी मसखरन को मग जैसे चलै बिपरीत धिक्कार ऐसे जीबे को। सूमन के रहत दुइ बातन की तंगी एक ईस्वर के निमित्त औ कबीस्वर के दीबे को॥१॥

२१. आलम कवि

दोहा—आलम ऐसी प्रीति पर, सरबस दीजे वारि।
गुप्त, प्रकट कैसी रहै, दीजै कपट पिटारि॥१॥

---

१ छोड़कर। २ स्वभाव। ३ तोता। ४ वेश्या।

जानत औलि कितावनि को जे निसाफ के माने कहे हैं ते चीन्हे ।
पालत हौं इत आलम को उत नीके रहीम के नाम को लीन्हे ॥
मोजमशाह तुम्हैं करता करिवे को दिलीपति हैं वर दीन्हे ।
काविल हैं ते रहैं कितहूँ कहूँ काविल होत है काविल कीन्हे ॥२॥

२२. अनन्य कवि (२)

दुर्गाभाषा

वंक[1] विक्राल प्रज्वालनंदा निवासानि संघट्ट सो घट्ट घारायनी ।
नासस्वासासनी सहस फौजै उड़ैं मात ह्य्थीन ह्य्थारपारायनी ॥
फेरि त्रैसूल त्रैसूल छै कारिनी जारनी जै विजै विस्वकारायनी ।
भद्रकाली-कृपा काल भौभंजनी श्रीनमो भो नमो मातु नारायनी ॥ १ ॥

२३. अस्कन्द गिरि बाँदावाले

स्कंदविनोद

और वनवाइवे की चरचा चली है कहूँ तिनहिं दिखाइवे की आनि परी तिनको । ये तौ व्रजठाकुर न देइ तौ करौगी कहा माँगन है आरसी अँगूठा चारि दिन को ॥ भनि असकन्द यमें कछू वरजोरी नाहिं सुनियो सखी री औ सुनाइ कहौं किनको । सौंह कुलकानि की निदान वलि देहौं नाहिं निसि को, दिवस को, घरी को, एक छिन को ॥ १ ॥

दोहा—सबै देवता पूजि कै, पूरी मन की आस ।
　　अब मैं गोरख पूजिहौं, जाकी सबको त्रास ॥ २ ॥

२४. अनूपदास कवि

पासनि सों बाँधि कै अगाध जल बोरि राखे, तीर-तरवारिन सों मारि मारि हारे हैं । गिरि ते गिराय दिये, डरपे न नेक तब, मतवारे भूधर[2] से हाथी तरे डारे हैं ॥ फेरे सिर आरा लै, अगिनि

---

१ टेढ़ी । २ पहाड़ ।

माँझ जारे पुनि पूँछ मीड़ि तन सों लगाये नाग कारे हैं। पूछे ते बतायो खम्भ तहँई दिखायो रूप प्रकट अनूपदास वानि ही से प्यारे हैं ॥ १ ॥

२५. ओलीराम कवि

डरी डार दीजै उठि राह लीजै जिस राह ते राम को पाइये जी।
दुख सुक्ख ही न्यारे है रहिये नित हसिये खेलिये गाइये जी॥
मुये मुकुति की गति कहाँ जीव ते मुकति को पाइये जी।
ओलीराम मरे पर जाना जहाँ जहाँ जीवते क्यों नहिं जाइये जी॥

२६. अभयराम कवि

एक रज रेनुका पै चिंतामनि वारि डारौं, लोकन को वारौं सेवा-कुंज के विहार पै। ललन के पातन पै कल्पबृक्ष वारि डारौं, रमा हू को वारि डारौं गोपिन के द्वार पै॥ ब्रज पनिहारिन पै सची रची वारि डारौं बैकुँठ को वारि डारौं कालिंदी की धार पै। कहै अभैराम एक राधा जू को जानत हौं, देवन को वारि डारौं नंद के कुमार पै॥ १॥

२७. अमृत कवि

बानी में सारद, काठ हुतासन, तार के यंत्र में राग कलोलैं।
सिद्धि सुभावन ही जिनमें हरि साधुन संगन में निज डोलैं॥
मैन में जीव, ज्यों धेनु में अमृत, ज्यों दधि में घृत पाइये औलैं।
फूल में गंध, मही महँ कंचन, पंचन में परमेस्वर बोलैं॥ १॥

२८. आनंदघन दिल्लीवाले

आपु ही ते तन हेरि हँसे तिरछे करि नैनन नेह के चाउ मैं।
हाय दई सु बिसारि दई सुधि, कैसी करौं सु कहौ कित जाउँ मैं॥
मीत सुजान अनीति कहा यह, ऐसी न चाहिये प्रीति के भाउ मैं।
मोहनी मूरति देखिबे को तरसावत हौ बसि एकहि गाँउ मैं॥ १॥

जैहै सबै सुधि भूलि तुम्हैं फिरि भूलि न मो तन भूलि चितैहैं।
एक को आँक बनावत मेटत पोथिय काँख लिए दिन जैहैं॥
साँची हौं भाखति मोहिं कका कि सौं पीतम की गति तेरि हू ह्वैहैं।
मोसों कहा अठिलात अजासुत कैहौं ककाजी सों तो हूँ सिखैहैं॥२॥

२९. अभिमन्यु कवि

औधि बदी हरि आवन की मनभावन की उपजी जक चाकैं।
काम की पीर बढ़ी अभिमन्यु धरै नहिं धीर यहै वक वाकैं॥
दे विधि पाँख मिलौं उड़िजाय अघाय बुझाय हिये लगि वाकैं।
जो परि पाँखनि पीउ मिलैं सखी पाँख जु हैं चकई चकवाकैं॥१॥

३०. अनंत कवि

कहौं यक बात बुरो जनि मानहु कान्हहि देखि कहा मुसकानी।
मैं धौं कबै चितयौं इहि ओर पै दाऊ की सौं तुम और गुमानी॥
आपन सो जिय जानती और को तातें अनंत यहै जिय जानी।
कहौ जु कहौ अलि जो कह्यो चाहती दूध को दूध सो पानी को पानी॥१॥
मनमोहन हैं जिन ने सुख दीने इतै चितयो चित भूलि न जैये।
और सुनो सखी मीत मिताई की मीत जो बेचै तौ बेचे बिकैये॥
अनंत हँसे ते हँसै बिचच्छन[1] रूपै हँसे ते गँवारी कहैये।
मान करौ तौ करौ घरी आध लौं प्यारी बलाय ल्यौं सौंह न खैये॥२॥

३१. आदिल कवि

मुकुट की चटक, लटक बिबि कुंडल की, भौंह की मटक नेकु आँखिन दिखाउ रे। एहो बनवारी बलिहारी जाउँ तेरी मेरी गैल किनि आइ नेक गाइनि चराउ रे॥ आदिल सुजान रूप गुन के निधान कान्ह बाँसुरी बजाइ तन-तपनि बुझाउ रे। नंद के किसोर चितचोर मोर-पंखवारे बंसीवारे साँवरे पियारे इत आउ रे॥ १॥

---

१ विचक्षण-समझदार।

३२. अलीमन कवि

जैयत पीतम प्यारे विदेस को मोहिं कहा उपदेस बतैयत।
तैयत हैं छतियाँ जो कहौ बतियाँ चलिबे की सुने बिलखैयत ॥
खैयत रावरे पाँय की सौहैं अलीमन याको उपाय ना पैयत।
पैयत औधि के औसरे जो बिछुरे ते जियैं यहि लाज लजैयत ॥१॥

३३. अनीस कवि

सुनिये विटप[2] प्रभु पुहुप[3] तिहारे हम राखिहौ हमैं तौ सोभा रावरी बढ़ाइ हैं। तजिहौ हरषि कै तौ बिलग न सोचैं कछू जहाँ जहाँ जैहैं तहाँ दूनो जस गाइ हैं॥ सुरन चढ़ैंगे नर-सिरन चढ़ैंगे पर सुकवि अनीस हाथ हाथ में बिकाइ हैं। देस में रहैंगे, परदेस में रहैंगे, काहू भेस में रहैंगे, तऊ रावरे कहाइ हैं ॥ १ ॥

३४. अनुनैन कवि

द्युति देखत दंतन की हिय हारत हीरन के गन दाड़िम[5] हैं।
बसुधा बिच चारु सुधा की मिठाई सुधाधर[6] सो धरैं[7] सालिम हैं ॥
अनुनैन बनी भ्रुकुटी कुटिलै कल मैन के चाप सों आलिम हैं।
जग जाहिर जोर जनाइ सकैं अँखियाँ जमराज सों जालिम हैं ॥१॥

सुंदर सजीले परलंब सहजीले राधे परम लजीले सुभ काजन कजीले हैं। बेलिन बसीले अलि बोलिन हँसीले आदि-रस में रसीले रूप जसमें जसीले हैं॥ नेह सरसीले पर-नेह पर सीले अनुनैन चहकीले चटकीले मटकीले हैं। तेरे कच नीले छूटि छबि से छबीले मानो पन्नग[8] रँगीले मैन मंत्र पढ़ि कीले हैं ॥ २ ॥

---

१ जलती है। २ वृक्ष। ३ फूल। ४ तुम्हारी। ५ अनार। ६ चंद्रमा। ७ अधर। ८ सर्प।

३५. अनन्यदास ब्राह्मण चकेंदवावाले (अनन्ययोग)

छंद—का होत मुड़ाये मूड़ बार। का होत रखाये जटाभार ॥
का होत भामिनी तजे भोग। जौलौं न चित्त थिर जुरै जोग ॥
थिर चित्त करै सुमिरन मँझार। ऊपर साधै सब लोकचार ॥
यह राजजोग सुख को निधान। कोइ ज्ञानवंत जानत सुजान ॥
सुखमारग यह पृथिचंद राज। यहि सम न आन तम है इलाज॥

३६. अनाथदास कवि

छप्पै—चतुराननं[1] सम बुद्धि विदित जो होहिं कोटि धर।
एक एक धर प्रतिन सीस जो होहिं कोटि वर ।।
सीस सीस प्रति वदन कोटि करतार बनावहिं।
एक एक मुख माँह रसनं[2] फिरि कोटि लगावहिं ॥
रसन रसन प्रति सारदा कोटि बैठि वानी वकहिं।
नहिं जन अनाथ के नाथ की महिमा तबहूँ कहि सकहिं ॥ १ ॥

३७. अक्षरअनन्य कवि

दुखन सों दुख और सुखन सों अनुराग निंदक सों वैर फिर वंदक सों गीरी है। पूजा को भरम औ पुजायवे को दंभ[3] जौलौं पाये ते खुसी है अनपाये दिलगीरी है ॥ जीवन की आसा औ मरन की फिकिर जौलौं विना हरिभक्ति जक्त जामत की जीरी है। अक्षरअनन्य एती फाटै न फिकिरि जौलौं तौलौं फजिहति बावा फुरै ना फकीरी है ॥ १ ॥

३८. आसकरन

पद

उठो मेरे लाल गोपाल लाड़िले रजनी[4] बीती विमल भयो भोर।
घर घर में दधि मथत गोपियाँ द्विज करत वेद की शोर।
करो कलेऊ दधि अरु ओदन मिसरी बाँटि परोसों ओर।
आसकरन प्रभु मोहन तुम परवारों तन, मन, प्रान अकोर ॥ १ ॥

१ ब्रह्मा। २ जिह्वा। ३ पाखंड। ४ रात।

३९. ईश्वर कवि

आये हौ आजु भले बनि मोहन सोहति मूरति मैनमई है।
आरस सों, रस सों, उपहास सों, रूप सों, रंग सों डीठि छई है॥
रावरे ओठनि अंजन देखत ईश्वर मो मति तेह तई है।
जानति हों वहि भावती और सों बोलिबे को मुँह छाप दई है॥१॥
चारिहुँ ओर उदै मुखचंद की चाँदनी चारु निहारि ले री।
यह प्रानहिप्यारो अधीन भयो मन माँह बिचार बिचारि ले री॥
कवि ईश्वर भूलि गयो जुग पारिबो या बिगरी को सुधारि ले री।
यह तौ समयो बहुरयो न मिलै बहती नदी पाँय पखारि ले री॥२॥

४०. इन्दु कवि

ऊँचे धौल[1] मंदिर के अंदर रहनवाली ऊँचे धौलमंदिर के उदर रहाती हैं। कंदपानभोगवारीं कंद पान करैं भोग तीनि बेरखान वाली बीनि बेर खातीं हैं॥ मैननारी सी प्रमान मैननारी सी प्रमान बीजन डुलाती ते वै बीजन डुलाती हैं। कहै कवि इन्दु महाराज आज वैरीनारि नगन जडाती ते वै नगन जडाती हैं॥ १॥

४१. ईश्वरीप्रसाद त्रिपाठी पीरनगर
(रामविलास, बाल्मीकीयरामायण का उल्था)

लहत सकल रिधि-सिधि सुख-संपदा हू बिद्या-बुद्धि सुमिरि गनेस गौरीनन्दनै। सिंधुरबदन सुठि सोहत तिलक लाल चंद्र बाल भाल नैन देत हैं अनन्दनै॥ एकदंत, भुजगविभूषन, परसु-पानि, चारिभुज अभय करत दासबृन्दनै। सुन्दर विसाल तन ईश्वरी सँभारु मन दयाधन हरन बिघन दुख-द्वंदनै॥ १॥

---

१ धवल=श्वेत।

४२. इच्छाराम ब्राह्मण अवस्थी पचरुवा इलाके हैदरगढ़
(ब्रह्मविलास ग्रन्थ)

दोहा—संवत सत दस आठ गत, ऊपर पाँच पचास।
साउन सित द्युति सोम कहँ, कथा अरंभ प्रकास ॥ १ ॥
गनपति दिनपति पद सुमिरि, करिय कथा हिय हेरि।
ब्रह्मविलास प्रयास बिनु, बनत न लागै देरि ॥ २ ॥
बानी इच्छाराम कृत, विप्र बरन तन जानि।
पढ़िहैं सज्जन समुझि हिय, देवगिरा परमानि ॥ ३ ॥
विप्र सुदामहि देवता, सुचि बानी तेहि केरि।
श्रवन सुने दूषन नहीं, भूपन हरि हिय हेरि ॥ ४ ॥
नर बानी फीकी यदपि, वर्न ब्रह्ममय जानि।
साधु समुझि आदर करहिं, ज्ञान त्रयी अनुमानि ॥ ५ ॥
बड़ गरूर कवि होत हैं, बादशाह दिलदौर।
लूटि जात नर नगर पुर, छंद सैन साजि डौर ॥ ६ ॥

४३. ईश कवि

एकै करैं ओट पट ओट कर ओट करि एकै जे निथर घट चोटहि-बचावतीं। एकै निरसंक अंक लागतीं सु बंक ताकि एकै जे मयंक-मुखी लंकाहि लचावतीं ॥ ईश कहैं केसरि गुलाव नीर घोरि घोरि जोरि जोरि मुंड रंग धूमहि मचावतीं। देतीं गाल गुलचा गुलाल-हि लपेटि मुख दै दै कर ताली नंदलालहि नचावतीं ॥ १ ॥

४४. इंद्रजीत कवि

चहचही चटकीली चुनि चुनि चातुरी सों चोखी चारु चाँदनी की रँगी रंग गहरे। कंचन किनारी ता पै लागी छोर लौं हैं खुली दामिनी सी गोरे गात प्यारी सारी पहरे ॥ इंद्रजीत धनुष

१ परिश्रम।

सों कही न परत छबि आनन झलक चहुँ ओर ऐसी छहरे। गहगही पँचरंग महमही सोंधे सनी लहलही लसैं ये लहरिया की लहरे ॥ १ ॥

४५. उदयनाथ

रगमगी सेज पर जगमगी सोभा चारु मनिमय मंदिर मयूषनि[1] अथाह की। उदैनाथ तामें प्रानप्यारी अरु प्यारे लाल कोक की कलानि केलि करत सराह की ॥ किंकिनी की धुनि तैसी नूपुर निनोद[2] सुनि सौतिन के बाढ़त विषाद बाढ़ि गाह की। त्रिभुवन जीति कै उछाह की बजति मानों नौबति रसीली मनमथ बादसाह की ॥ १ ॥

४६. उदेश कवि

पंडित कविंदन की बूझि है न कूरनि के काथिक कलावंत फिरत तान गाने को। कहत उदेश देखि समर सपूतनि को घोड़े के चढ़ैयन को चना ना चबाने को ॥ आदर सों लेत ताहि जौन वाहियाति बकैं छोड़ि कै पुरान वेद धरम के बाने को। जुरिकै गँवारगट्टा बैठत चौहट्टा[3] आइ आल्हा के गवैया को रुपैया रोज खाने को ॥ १ ॥

४७. ऊधोराम कवि

बैठे दृग-आसन हौ तपत हुतासन[4] ज्यों कारे पीरे होत एजू काहे असकत हौ। दास कैसी सेवा कहूँ दासी पै न होति है जू कहै ऊधो-राम अंग-अंग नसकत हौ ॥ ऐहैं पिय नीरे धीरे कमल चहैहैं सीरे होहुगे प्रसन्न ऐसे काहे ससकत हौ। शंकर भवानीनाथ भूतनाथ भैरौंनाथ काशीनाथ काहे काज कैसे कसकत हौ ॥ १ ॥

---

१ किरणें। २ नूपुरों का शब्द। ३ चौराहा। ४ अग्नि।

४८. ऊधो कवि

चाहौ तौ तेल औ फुलेल डारौ चोटिन में चाहौ तौ बनाओ जटा कुंतल[1] लटन के। चाहौ तुम सुंदर विभूति को लगाओ अंग ओढ़ौ मृगछाला छोड़ौ ओढ़िबो पटन के॥ ऊधोजू कहत हमैं करने कहा री बाम हम तौ करत काम श्याम की रटन के। जैसी उन कही तैसी हम तौ कहोई चहैं नातरु कहावै कहा चाकर भटन के॥१॥

४९. उमेद कवि

राजत रुचिर सुमनस[2] को रहत संग पानिप-कलित मोदकर अति-सैनी की। सोहत सुरंग गुन गूँदे हैं बिसद जामें लावैहारी पद लोक हत चित चैनी की॥ जामें जलजावलि लसत नीकी भाँति बनी सुकवि उमेद रूप रसिक रिझैनी की। प्यारी प्राननाथजू की गावत चतुरमुख भूतल की बेनी कैधौं बेनी पिकबैनी की॥ १॥

५०. उमरावसिंह पवाँर

आनन में नखरेखैं लगीं भुजमूल परी हैं तरौन की छापैं।
भाल में लीक महाउर की उमराउ बिलोकि अलीक[3] न लापैं[4]॥
सोहत है गुनहीन[5] की माल हिये अवलोकि बतावत आपैं।
पीठि गड़ी बल कै उघरी सुघरी हैं भली ये मनोज की थापैं॥१॥

५१ केशवदास सनाढ्य मिश्र उड़छेवाले (१)

(कविप्रिया)

दोहा—गुरु करि माने इंद्रजित, जन मन कृपा विचार।
ग्राम दये इकईस तब, ताके पाँय पखार॥ १॥
रतनाकरलालित[6] सदा, परमानंदहि लीन।
अमलकमलकमनीय कर, रमा कि रायप्रवीन॥ २॥
सबिता जू कबिता दई, ता कहँ परम प्रकास।
ताके कारन कविप्रिया, कीन्ही केशवदास॥ ३॥

---

१ बाल। २ फूल और देवता। ३ झूठ। ४ कहैं। ५ बिना डोरे की। ६ समुद्र और रत्न-समूह द्वारा लालित।

कवित्त। प्रथम सकल सुचि मंजन अमल वास जावक सुदेस केसपासनि सुधारिवो। अंगराग भूपन विविध मुखवास राग कज्जलकलित लोल लोचन निहारिवो॥ बोलनि हँसनि मृदु चातुरी चलन चारु पलपल पतिव्रत प्रीति प्रतिपारिवो। केसौदास साविलास करहु कुँअरि राधे इहि विधि सोरहौ सिंगारन सिंगारिवो॥ १॥

(रसिकप्रिया)

दोहा—संवत सोरह सै वरस, वीते अड़तालीस।
कातिकसुदि तिथि सप्तमी, वार वरन रजनीस[1]॥ १॥
अति रति गति मति एक करि, विविध विवेक विलास।
रसिकन को रसिकप्रिया, कीन्हीं केसवदास॥ २॥

वन में वृपभानुकुमारि मुरारि रमैं रुचि सों रसरूप पिये।
कल कूजत पूजत कामकला विपरीत रची रति केलि किये॥
मनि सोहत स्याम जराइ जरी अति चौकी चलै चल चार हिये।
मखतूल के झूल झुलावत केसव भानु मनो शनि अंक लिये॥ १॥

(रामचंद्रिका)

दीनदयाल कहावत केसव हौं अतिदीन दशा गहि गाढ़ो।
रावन के अघओघ[2] में राघव वूड़त हौं वरहीं लइ काढ़ो॥
ज्यों गज की प्रहलाद की कीरति त्यों ही विभीषन को जस वाढ़ो।
आरत वात पुकार सुनौ प्रभु आरत हौं जो पुकारत ठाढ़ो॥ १॥

(विज्ञानगीता)

ओरछे तीर तरंगिनि वेतवै ताहि तरैं रिपु केसव को हैं।
अर्ज्जुनवाहुप्रवाहुप्रवोधित रेवा[3] ज्यों राजन की रज मोहैं॥
जोति जगै जमुना सी लगै जग लोचन लोलित पाप विपोहैं।
सूरसुता सुभ संगम तुंग तरंग तरंगिनि संग सी सोहैं॥ १॥

---

१ सोमवार। २ पाप-प्रवाह। ३ नर्मदा नदी।

दोहा—सोरह सै बीते बरष, विमल संत सुख पाइ ।
भई ज्ञानगीता प्रकट, सब ही को सुखदाइ ॥१॥
विदित ओरछे नगर को, राजा मधुकरसाहि ।
गहिरवार कासीस रवि, कुलमंडन जसु जाहि ॥ २ ॥
दापी बघेले को राजु सुखाइगो पाँ परि छुद्र पठान अठानी ।
केसव ताल तरंगिनि तोमर सूखि गई सेंगरी बहु बानी ॥
साहि अकब्बर अर्क उदै मिटी मेघ महीपन की रजधानी ।
उजागर सागर सी मधुसाहि की तेग चढ्यो दिन ही दिन पानी॥१॥
दोहा—बीरसिंह नृप की भुजा, जद्यपि अहि[1] के तूल[2] ।
एक साहि को फूल सम, एक साहि को सूल ॥२॥

(रामअलंकृतमंजरी पिंगल)

दोहा—जदपि सुजाति सुलच्छनी, सुबरन[3] सरस सुवृत्त ।
भूषन बिना न राजई, कविता वनिता मित्त ॥१॥
प्रकट सब्द में अर्थ जहँ, अधिक चमत्कृत होइ ।
रस अरु व्यंग्य दुहून ते, अलंकार कहि सोइ ॥२॥

फुटकर

पावक[4] पच्छी पसू नग नाग नदी नद लोक रच्यो दसचारी[5] ।
केसव देव अदेव[6] रच्यो नरदेव रच्यो रचना न निवारी ॥
रचिकै नरनाह बली वर बीर भयो कृतकृत्य महाव्रतधारी ।
दै करतापन आपन ताहि दियो करतार[7] दोउ कर तारी ॥ १ ॥
सोभति सो न सभा जहँ वृद्ध न वृद्ध न ते जु पढ़े कछु नाहीं ।
ते न पढ़े जिन साध्यो न साधन दीह दया न दिपै जिन माहीं॥
सो न दया जु न धर्म धरै धरि धर्म न सो जहँ दान बृथाहीं ।
दान न सो जहँ साँच न केसव साँच न सो जु बसै छलछाहीं ॥२॥

---

१ सर्प । २ तुल्य । ३ अच्छे वर्ण और अक्षरोंवाली । ४ अग्नि ।
५ चौदह । ६ राक्षस । ७ ब्रह्मा ।

छप्पै ।

तजहु जगत विन भवन भवन तजि तिय विन कीनो।
तिय तजि जु न सुख देय सुक्ख तजि संपति हीनो ॥
संपति तजि विन दान दान तजि जहँ न विप्रपति ।
विप्र तजहु विन धर्म धर्म तज्जिय विन भूपति ॥
तजि भूप भूमि विन भूमि तजि दीह दुर्ग विन जो वसै ।
तजि दुर्ग सु केसवदास कवि जहाँ न पूरन जल लसै ॥ ३ ॥

सीखे रसरीति सीखे प्रीति के प्रकार सबै सीखे केसौराइ मन मन को मिलाइवो । सीखे सौंहैं खान नटतान मुसक्यान सीखे सीखे सैन वैननि में हँसिवो हँसाइवो ॥ सीखे चाह चाह सों जु चाह उपजाइवे की जैसी कोऊ चाहै चाह तैसी वाहि चाहिवो । जहाँ तहाँ सीखे ऐसी वातैं घातैं तातै तव तहाँ क्यों न सीखे नेक नेह को निवाहिवो ॥४॥

भूपन सकल घनसार ही के घनस्याम कुसुमकलित केस रही छवि छाई सी । मोतिन की सरि सिर कंठ कंठमाला हार श्रौर रूप जोति जोति हेरत हिराई सी॥ चंदन चढ़ाये चारु सुंदर सरीर सब राखी सुभ सोभा सखि वसन वसाई सी। सारदा[1] सी देखियत देखौ जाइ केसौराइ ठाढ़ी सुकुमारि सो जुन्हाई[2] में जुन्हाई सी ॥ ५ ॥

५२. केशवदास (२)

आली ऐंड़दार वैठी ज्वानी के तख़त पर नैन फ़ौजदार खड़े लखैं चहूँ ओरा है । द्वादस हू भूपन के द्वादस वज़ीर खड़े सोलह सिंगार भूप लखैं दृगकोरा है ॥ रूप को गुमान सीस मुकुट है छत्र चौंर जेवर की नौवति वजति साँझभोरा है । कहै कवि केसौदास आली वरनी न जाति जोवन की जोरा मानौं वादसाही तोरा है ॥ १ ॥

---

१ सरस्वती । २ चाँदनी ।

५३. केशवराइ बाबू बुन्देलखण्डी (३)

छाती लागी उचन[1] सकोचनि सकान लागी खान लागी पान औ ओनानं[2] रसबतियाँ। कटि लागी घटन मटन चढ़ि जान लागी बैन लागी नटन जगन लागी रतियाँ॥चारु लागी चलन सुधारन अलक लागी जेबै[3] लागी जगन पगन लागी गतियाँ। नैन लागी फेरन निहोरन सखिन लागी मन लागी चोरन पढ़न लागी पतियाँ॥ १ ॥
बाँह धरै सुख नाहीं करै उठि आँसु ढरै अँग में अँग चोरै।
हाहा करै उठि भागै धरै तुतराति लरै तकि भौंह मरोरै॥
लाल करै हित बाल अरै हठि खाल लरै गहि धातु सों तोरै।
साँस भरै अति रोसै करै परि पाटी धरै फुँफुँदी जब छोरै[4]॥ २ ॥

५४. केशवराम कवि
(भ्रमरगीतग्रन्थे)

दोहा—सब सायर समरत्थ हैं, मैं सेवक लघु एक।
प्रकट करौं गोपिनकथा, जो देवी दे टेक॥ १ ॥

५५. कुमारमणिभट्ट गोकुलस्थ
(रसिकरसालग्रन्थे)

खौरि को राग छुट्यो कुच को मिटिगो अधरारस देखो प्रकासहि।
अंजन गो दृगकंजन ते तन कंपत तेरो रुमंच[5] हुलासहि॥
नेक हितूजन को हित चीन्हो न कीन्हो अरी मन मेरो निरासहि।
बावरी बावरी न्हान गई पै तहाँ न गई वहि पीय के पासहि॥ १ ॥
बैठी जहाँ गुरुनारिसमाज[6] में गेह के काज में है बस प्यारी।
देख्यो तहाँ वन ते चले आवत नंदकुमार कुमार बिहारी॥

१ ऊँची होने लगी। २ कान लगाकर सुनना। ३ सौंदर्य। ४ गिरह। ५ रोमांच। ६ बड़ी-बूढ़ी औरतों की मंडली।

लीन्हे सखी करकंज में मंजुल मंजरी वंजुल कंज चिन्हारी।
चन्दमुखी मुखचंद की कांति सों भोर के चंद सी मंद निहारी ॥ २ ॥
राम भुवमंडल-अखंडल तिहारे भुजदंड लेत कोदंड[1] अखंड वैरी कूटे जात। मंडि ना सकत रन मंडल अखंड तेज खंडे खंड खंड के मवास वास लूटे जात॥ चलत उदंड दल मंडल वितुंडे[2] झुंड खैंचे सुंडादंडनि उदग्ग दुग्ग छूटे जात। छंडे दिगमंडरीक पुंडरीक भू को भार कुंडली सकोरै[3] फन-पुंडरीक फूटे जात ॥ ३ ॥ सुखनिकुमार भोरही ते कर आरसी लै साजती सिंगार वार वासती सुवास हौ। वातैं मनभावती बतावती न सखि हू सों राति रतिरंग पति संग परिहास हौ॥ मृदु मुसक्याती प्रेमराती रिस ठानती हौ आनती हौ मिस वस जानती विलास हौ। प्रीतिमदमाती ना समाती फूलि अंगनि हौ काहे को लजाती क्यों न जाती पिय पास हौ ॥ ४ ॥
आधिक जाम करौ विसराम कुमार अराम की कुंज इतै है।
अंत वसंत के ग्रीषम की लपटैं न घटैं दिन साँझ समै है॥
छाँह घनी पियो नीरजनीर सुसीत समीर लगे सुख दैहै।
हाल लखौ फल लाल रसीली रसाललता में कहूँ मिलि जैहै ॥ ५ ॥
देखैं अटा चढ़ि दोऊ घटा दग लागे दुहूनि सों प्रीति लही है।
दै पठयो कुसुँभी रँग को पट यों पर प्रीतम प्रीति कही है॥
चूनो मिलै हरदी रँग रोचन प्यारे कुमार पठायो सही है।
वाढ़त रंग है एकंत संग ही संग भये विन रंग नहीं है ॥ ६ ॥
ज्यों वरजी तरजी गुरुनारिनि त्यों त्यों तजी कुल कानि ढिठाई।
सीख-नखी सखियान की हौं अँखियानि लखे लाखि रूप इठाई॥
हेरि हियो हरि लीन्हो कुमार कहा निठुराई अहो हरि ठाई।
वावरी हौं भई रावरी प्रीति ठई हमको ठग कैसी मिठाई ॥ ७ ॥

१ धनुष। २ हाथियों के झुंड। ३ एकत्र।

५६. करनभट्ट श्रीमद्वंशीधरात्मज

(रसकल्लोल)

दोहा—सुमनवंत सोभासदन, वारनवदन विचारि।
वितरत फल नित रत चतुर, सुरतरुवर कर चारि ॥ १ ॥
पन्हुल पाँड़े पहितिया, भारद्वाजीवंस।
गुननिधि पाँड़ निहाल के, बंदौं जगतप्रसंस ॥ २ ॥
रस धुनि गुन अरु लच्छना, कवित भेद मति लोल[1]।
बाल बोध हित-कर सदा, कीन्हो रसकल्लोल ॥ ३ ॥
खल खंडन मंडन धरनि, उद्धत उदित उदंड।
दलमंडन दारुन समर, हिन्दु-राज भुजदंड ॥ ४ ॥

कवित्त। कंटकित होत गात विपिन समाज देखे हरी हरी भूमि हेरि हियो लरजतु है। निपट चवाई भाई बंधु जे बसत गाँउ दाँउ परे जानि कै न कोऊ बरजतु है॥ एते पै करन धुनि परत मयूरन की चातक पुकारि तेह ताप सरजतु है। अरजो न मानी तू न गरजो चलति बेर एरे घन बैरी अब काहे गरजतु है ॥ १ ॥
भौंरन को कुंजराज हंसन को मानसर चन्द्रमा चकोरन को करन रितै गयो। द्विजन को कामतरु कान्ह ब्रजमंडल को जलद पपीहन को काहूने रितै गयो॥ दीपनि को दीप हीरहार दिगवालन को कोकन को वासरेस[2] देखत अथै गयो। छत्ता छितपाल छिति मंडल उदार धीर धरा को अधार जो सुमेरु धौं कितै गयो ॥ २ ॥

५७. करन ब्राह्मण पन्नावाले

(साहित्यचन्द्रिका)

दोहा—विघनहरन पातकदरन, अरिदलदलन अखंड।
सुरसिच्छक रच्छाकरन, गनपति सुंडादंड ॥ १ ॥

१ चंचल। २ सूर्य।

गौरी—हियो सिरावनो, उदित उदार उदंड ।
जगत विदित छवि छावनो, गनपति सुंडादंड ॥ २ ॥
वेद खंड गिरि चंद्र गनि, भाद्र पंचमी कृष्ण ।
गुरुवासर टीका करन, पूर्‌यो ग्रन्थ कृतष्ण ॥ ३ ॥

कवित्त । सीतल सुखद सुभ सोभा के सुभाये मढ़ी कढ़ी वाल पाइ घनी दीपति अमाप ते । छाई हिमगिरि पै जुन्हाई-सी जगमगात करन अनूप रूप जागि उठ्यो आप ते ॥ ऊजरी उदार सुधाधार सी धरनि पर पघिलि प्रवाह चल्यो तरनि के ताप ते । बरफ न होइ चारौ तरफ निहारि देखौ गिर्‌यो गरि चंद अरविंदन के साप ते ॥ १ ॥ बड़े बड़े मोतिन की लसत नथूनी नाक बड़े बड़े नैन पगे प्रेम के नसन सों । रूप ऐसी वेलिन में सुंदर नवेली वाल सखिन समूह मध्य सोहत जसन सों ॥ काँकरी चलायो तहाँ दुरि कै करन कान्ह मुरकि तिरीछी चितै ओट दै वसन सों । नेक अनखानी सतरानी मुसुकानी भौंह वदन कँपायो दावि रसना[1] दसनै[2] सों ॥ २ ॥ चंदन में वंदन में है न अरविंदन में कुरुविंद में न भानुसौरथी[3]-वरन में । मोहर मनोहर में कोहर में है न ऐसी गुंजन की पीठ में मजीठ अवरन में ॥ जैसी छवि प्यारी की निहारी मैं तिहारी सौंह लाली यह चरन करन अधरन में । है न गुलनार में गुलाव गुड़हर हू में इंद्रवधू[4] में न विंव नारँगी फरन में ॥ ३ ॥

४८. कादर पिहानीवाले

गुन को न पूछै कोऊ औगुन की बात पूछै कहा भयो दई कलिजुग यों खरानो है । पोथी औ पुरान ज्ञान ठट्ठन में डारि देत चुगुल चवाइन को मान ठहरानो है ॥ कादर कहत जासों कछू

१ जीभ । २ दांत । ३ अरुण । ४ बीरवहूटी ।

कहिबे की नाहिं जगत की रीति देखि चुप मन मानो है । खोलि देखो हियो सब भाँतिन सों भाँति भाँति गुन ना हिरानो गुन गाहक हिरानो है ॥ १ ॥ देखत के नीके परिनाम बहु आदर के देखत भलाई सदा जीव में जरे रहैं। भेद भेद पूछैं मूछैं टेवत न आवै लाज पाप के समूह सिन्धु आँखिन अरे रहैं ॥ कादर कहत जे लटीन के तलासिबे को हाटबाट हू में दरबार में खरे रहैं । निंदा को जु नेम जिन्हैं चुगली अधार परस्वारथ मिटाइबे के खोज ही परे रहैं ॥ २ ॥

५६. किशोर कवि दिल्लीवाले

(किशोरसंग्रह)

कोकिला कलापी[1] कूजैं जमुना के नीर तीर वीर ऋतुराज को समाज सरस्यो परै । भनत किसोर जोर अंबन कदंबन ते मंजु मंजरीन ते सुगंध सरस्यो परै ॥ कामविथा मेटन को सुखन समेटन को भेंटन को प्रीतम को प्रान तरस्यो परै । अवनि ते अंबर ते द्रुमन दिगंबर ते वैहरि ते बन ते वसंत बरस्यो परै ॥ १ ॥

बरसै बन कुंजन पुंज लता सुख मंजु मयूरन को सरसै ।
मधु घोर किसोर करैं घन ये चपला चल चारु कला दरसै ॥
अलि हो बलि तू चलि वेगि हहा उत तो बिन प्रानपिया तरसै ।
उमड़ै दुमड़ै घुमड़ै घन आज मिहीं बुदियाँन मड़ो बरसै ॥ २ ॥
फूलन दे अबै टेसू कदंबन अंबन बौरन छावन दे री ।
री मधुमत्त मधूकन पुंजन कुंजन सोर मचावन दे री ॥
क्यों सहि है सुकुमारि किसोर अरी कल कोकिल गावन दे री ।
आवत ही बनि है घर कंतहि वीर बसंतहि आवन दे री ॥ ३ ॥
चहुँ ओरन कौंधि[2] जगावैं किसोर जगी प्रभा जेवन जूटी परै ।
तिहि पै झरि मानौं अँगार अनी अवनी घनी इंद्रवधूटी[3] परै ॥

१ मोर । २ चमक । ३ वीरबहूटी ।

नभ नाचै नदी सी जराय जरी प्रभा सी खुटी सी नित खूटी परै ।
अरी एरी हटापटी विज्जु छटा छटी छूटी घटानि ते टूटी परै ॥४॥
भृकुटी कमान तानि फिरत अनोखी कहा कहत किसोर कोर कज्जल भरे हैं री । तेरे दृग देखे मेरो कान्हर डरात इत मघवा निगोड़ो अवै रोप पकरै हैं री ॥ कीरतिकुमारी हे दुलारी वृषभानुजू की मेरो कह्यो मान तेरो कहा बिगरै हैं री । चंचल चपल ललचौहैं चख मूँदि तौलौं जौलौं गिरिधारी गिरि नख पै धरै है री ॥५॥ देखो याते ऐसो समै फेरि ना मिलैगो कौन कौन जानै कौन से जठर भूला भूलौगे । कहत किसोर जोपै मानिहौ न मेरी कही जैसे कछू वैहौ तैसे नखन अरूलौगे ॥ फेरि आखिरी पै दुख तुमहीं सहौगे अघ-अनैल दहौगे ये कहैंगे सो कबूलौगे । ऐसे तौ न फूलौगे न ख़तियाँ वसूलौ हरिभजन जौ भूलौगे तौ हर भाँति भूलौगे ॥ ६ ॥ एक तो दियो है तोहिं मानुस को तन दूजे उत्तम वरन तीजे उत्तम वरन देह । तेहू पर परम कृपा करि कृपानिधान कैरा वैरा वौरा गुंग बावरो करो न येह ॥ कहत किसोर जोर अच्छर को आयो भयो चातुर कहायो पायो प्रेमपथ निज गेह । धिक तोको अधम अभागे कृत-हीन जोपै ऐसे मैं न ऐसे दीनबंधु से लगायो नेह ॥ ७ ॥ चलत चपल चतुरंग जव सेना साजि तब तब दिग्गज के सीस धसकत है । डग्गमग्ग चलत महीतल रसातल को कच्छप वराह पीठि सोऊ कसकत है ॥ कहत किसोर बड़े मेरु सम धूरि होत सूझत अकास है न सूर ससकत है । उथल-पुथल भयो लोक लोक लोकन में देखि रामचन्द्र-दल सत्रु मसकत है ॥ ८ ॥ प्रात उठि मज्जॅन कै मुदित महेस पूजि षोड़स प्रकार के विधान जानै वोर की । आवाहन आदि दै प्रदच्छिना करी है पाँव दोऊ कर जोरि

१ इंद्र । २ नेत्र । ३ पाप की आग । ४ स्नान ।

सीस ऊपर निहोर की ॥ आरसी अँगूठी मद्धि देखि प्रतिबिंब ता में भनत किसोर जरदाई[1] मुख भोर की । गौरीपति मेरी प्रीति होय ब्रजभूषन सों हम सों न होय प्रीति नन्द के किसोर की ॥ ६ ॥

६०. कालिदास त्रिवेदी वनपुरा अंतरवेदवाले

गढ़न गढ़ी से गढ़ि महल मढ़ी से मढ़ि बीजापुर ओप्यो दल[2]-मलि उजराई में। कालिदास कोप्यो वीर औलिया अलमगीर तीर तरवारि गह्यो पुहुमी[3] पराई में ॥ बूँद ते निकसि महिमंडल घमंड मची लोहू की लहरि हिमगिरि की तराई में । गाड़ि कै सु झंडा आड़ कीन्ही पादशाह ताते डकरी चमुण्डा गोलकुंडा की लड़ाई में ॥ १ ॥ बाग के वगर अनुरागभरी खेलैं फाग बाल अलबेली मनमोहनी गुपाल की । कालिदास ललित ललौहीं छवि झलकति नथ मुकतान की कपोल दुति भाल की ॥ चन्द करौ राज अर-बिंद आज कौन काज जाकी छवि देखन को बदन रसाल की। भृकुटी तिलक पर बरुनी पलक पर बिथुरी अलक पर गरद गुलाल की ॥ २ ॥ रतिरन बिषे जे रहे हैं पतिसनमुख तिन्हैं बक-सीस बकसी है मैं बिहँसि कै । करन को कंकन उरोजन को चन्द्रहार कटि की सु किंकिनी रही है कटि लसि कै ॥ कालिदास आनन को आदर सों दीन्हों पान नैनन को कज्जल रह्यो है नैन बसि कै । एरे बैरी बार ये रहे हैं पीठपाछे याते बार बार बाँधति हौं बार बार कासि कै ॥ ३ ॥ चूमौं करकंज मंजु अमल अनूप तेरो रूप के निधान कान्ह मो तन निहारि दे । कालिदास कहै मेरे पास हँसि हेरि हरि माथे धरि मुकुट लकुट कर डारि दे ॥ कुँवर-कन्हैया मुखचन्द्र की जुन्हैया चारु लोचन-चकोरन की प्यासनि निवारि दे । मेरे कर मेंहदी लगी है नन्दलाल प्यारे लट उरझी

---

१ ज़रदी । २ सेना । ३ पृथ्वी ।

है नकवेसरि सम्हारि दे ॥ ४ ॥ चंद्रमई चम्पक जराव जरकसमई आवत ही गैल वाके कमलमई भई । कालिदास मोद-मद-आनँद-विनोद-मई लालरंगमई भई वसुधा सुधामई ॥ ऐसी बनी बानक सों मदनछकाई रसिकाई की निकाई लखि लगन लगी नई । नेह को हितै करि गुपालै मोहितै करि सखिन दुचितै करि चितै करि चली गई ॥ ५ ॥ प्रथम समागम के औसर नवेली बाल केलि की कलान पिय प्यारे को रिझायो है । देखि चतुराई मन सोच भयो प्रीतम के लखि पर-नारि मन सम्भ्रम भुलायो है ॥ कालि-दास ताही समै निपट प्रवीन तिया काजर लै भीत हू में चित्रक वनायो है । व्यात लिखी सिंहिनी निकट गजराज लिख्यो योनि ते निकसि छौनां मस्तक पै आयो है ॥ ६ ॥

(वधूविनोद ग्रन्थे)

दोहा—नगर सु जम्बूद्वीप में, जंम्बू[2] एक अनूप ।
तरे वहै त्रिपदा नदी, त्रिपथगामिनीरूप ॥ १ ॥
तिलक जानि जा देश को, दुवनँ[3] होत भयभीत ।
जाहिर भयो जहान में, जालिम जोगाजीत ॥ २ ॥

वंशवर्णन ।

छप्पै ।

मालदेव महिपाल प्रथम पुनि रामसिंह हुव ।
जैतसिंह समरत्थ हत्थ[4] किय वहुरि सकल भुव ॥
माधवसिंह प्रसिद्ध भयो जग रामसिंह पुनि ।
पुनि प्रचण्ड गोपालसिंह सुव हरीसिंह पुनि ॥
पुनि गोकुलदास नरिंदमनि तनय सु लक्ष्मीसिंह हुवँ[5] ।
रघुवंस-अंस पूरन वखत वृत्तिसिंह जिमिध्रुव ॥

१ वच्चा । २ जामुन का पेड़ । ३ शत्रु । ४ हाथ में की । ५ हुए ।

दोहा—हृत्तिसिंह जिमि धरनिधुव, जाते अरि भय भीत।
जाहिर भयो जहान में, ताको जोगाजीत ॥ १ ॥
जोगाजीत गुनीन को, दीन्हें बहुविधि दान।
कालिदास ताते कियो, ग्रंथ पंथ अनुमान ॥ २ ॥

चौपाई।

सम्वत सत्रह सै उनचास। कालिदास किय ग्रंथ विलास ॥
हृत्तिसिंह-नंदन उद्दाम। जोगाजीत नृपति के नाम ॥१॥

६२. कवीन्द्र उदयनाथ कवि। श्रीकालिदास कवि के पुत्र वनपुरानिवासी

छाड़ा सैन आड़ा है अमीर आमखास बीच बोला बेतुवान कहूँ बात जौन बर की। जौलौं जुद्ध बिरचि कटारी निरधारी भारी भनत कविंद कारी कला ज्यों कहर की॥ पंजर समेत मंज मंजर लौं पैठि आव अरि के उमेठि आनी पीठि जाय फरकी। बाँह की बड़ाई कै बड़ाई बाँहिबे की करौं कर की बड़ाई कै बड़ाई जमधर की॥ १॥ कूरमनरिंद गजसिंहजू के चढ़े दल लंक लौं अतंक बंक संक सरसाती है। भनत कविंद बाजै दुन्दुभी धुकार भारी धरा धसमसै गिरिपाँती डगलोंती है॥ कमठ की पीठि पर सेस के सहस फन दीशा लौं दवात उमगात अधिकाती है। फनन ते वाहिर निसरि द्वै हजार जीभैं स्याह स्याह वाती सी बुझाती रहि जाती है॥ २॥ गहिरी गुराई सों प्रथम चूमि चामीकर चम्पक के ऊपर बहुरि पाँव रोप्यो है। तीसरे असल अरविंद आभा बस करि हँसि करि तड़िता को तोयँद में तोप्यो है॥ भनत कविंद तेरे मान समै सौतैं कहा सुरवनितान को गुमान जात लोप्यो है। मेरे जान आली आज ऐंड़भरो तेरो मुख भौंहैं तानि सौंहैं री कलानिधि पै कोप्यो है॥ ३॥ पौन के झकोरन कदंब झहरान

१ चलाने को। २ डगमगाती। ३ सोना। ४ बादल। ५ चन्द्रमा।

लागे तुंग फहरान लागे मेघ-मंडलीन के । भनत कविंद धरासारन भरन लागे कोस होन लागे बिकसित कंदलीन के ॥ उटज निवासिन के त्रास उपजन लागे संपुट खुलन लागे कुटज-कलीन के । माचो बरहीन[1] के अहीन सुर झिल्लिन के दीन भये वदन मलीन बिरहीन के ॥ ४ ॥ ऐसे मैन मैन के न देखे ऐन सैन के जगैया दिन रैन के जितैया सौति सीन के । कमल कुलीनन के मुकुलीकरनहार[2] कानन की कोरन लौं कोरन रँगीन के ॥ भनत कबिंद भावंती के नैन चायक से देखे मैन-पायक से नायक नवीन के । सींचे हैं अँमीन[3] के अमीन मानौ मीन के बखानै को मृगीन के खगीन पन्नगीन के ॥ ५ ॥

(विनोदचन्द्रोदय)

सम्बत सकत अठारह चारि । नाइकादि नायक निरधारि ॥
लहि कबिंद लच्छित रसपंथ । किय विनोदचन्द्रोदय ग्रंथ ॥

दोहा—कालिदास कवि के सुवन, उदयनाथ सरनाम ।
भूप अमेठी के दियो, रीझि कबिंद सुनाम ॥ १ ॥
तासु तनय दूलह भयो, ताके पढ़िबे हेतु ।
रसचन्द्रोदय तब कियो, कवि कबिंद करि चेतु ॥ २ ॥

कबित्त । चलत मरालन[4] की महिमा घटावै बैन बोलत अबैन करै प्रभुता पिकन की । मुसक्यात सुधा को सुहाग सो सकेले लेति बरनन जीते सुन्दराई सुवरन की ॥ भनत कबिंद जाकी निरखत सुन्दराई पाई है दृगन हू बड़ाई दीठिपन की । मन ते न भूलति भुलावै मन ही को वह चहचहे चखन की लहलहे तन की ॥ १ ॥ धुकत चलत अरि लुकत उलूकन[5] लौं मुकत किलान के धुकारनि दवेश के । भनत कबिंद जहाँ पेस की मवासी कौन कम्पत

१ मोर । २ मुकुलित करनेवाले । ३ अमृत । ४ हंस । ५ उल्लू, जिसे दिन को नहीं सूझता नर पक्षी ।

अवास अलकेस के लँकेस के ।। जीति कै जहूर साजै फौजनि के अग्र बाजै भारी भगवन्त के सँवारे बलवेस के । दरजैं दिली के उमराइन के उर परैं गरजैं नगारे गाजीपुर के नरेस के ।। २ ।।

कास कपास कैलास कि लाल कनी कचनार कुसुम कनोने ।
कासित कोमल कुंडल कानन कंज कदम्वनि कम्बुक रोने ।।
कुन्दकली कलहंस कपूर कनी कर कुंद कविन्द कहोने ।
काम कमान कलाकर की नर कृष्ण किसोर कि कीरति कोने ।।३ ।।

समर अमेठीके सरोसे[1] गुरुदत्तसिंह सादति की सेना समसेरन सों भानी है । भनत कविंद काली हुलसी असीसन को ईसन के सीस की जमाति सरसानी है ।। तहाँ एक जोगिनी सुभट-खोपरी लै उड़ी सोनित पियति ताकी उपमा बखानी है । प्यालो लै चिनी को छकी जोवनतरंग मानौ रंग हेत पीवति मँजीठ मुगलानी है ।। ४ ।।

६२. कविंदाचार्य्य सरस्वती काशीवासी
(कवीन्द्रकल्पलता)

मंडत घमंडि कै अखंड नवखंडन मैं चंड मारतंड जोति लौं बखानियत है । प्रलैपारावारपयपूर[2] से पसरि परे पुहमी के ऊपर यों पहिचानियत है ।। खंडव[3] के दाह समै पंडव[4] के बान जिमि मंडि महिमंडल के अरि भानियत है । साहिजहाँसाहजू की फौज को फैलाइ देखौ जंवूद्वीप सों उभरि तम्बू तानियत है ।। १ ।।

दोहा—सप्त द्वीप नव खंड में, भुवन चतुर्दस माहिं ।
साहिजहानावाद सो, नगर दूसरो नाहिं ।। १ ।।
नहिं उपमा को दूसरो, जामें छरित सु बाद ।
साहिजहानावाद सो, साहिजहानावाद ।। २ ।।

---

१ क्रोधित । २ प्रलय के सागर की जलराशि । ३ खांडव वन । ४ अर्जुन ।

६३. कृष्णलाल कवि (१)

केसरि को कंचन ने कंचन को चंपक ने चंपक को जीत्यो प्यारी रूप ने अमंद है । गजगति छीने भूप भूपगति छीने हंस हंसगति छीनिवे को तेरी गति मंद है ॥ सव हारे वानन ते वान पंचवानन ते कृष्णलाल तोहिं देखि रीझे नंदनंद है । गजमुख मूँदै कंज कंजमुख मूँदै चंद चंदमुख मूँदिवे को तेरो मुखचंद है ॥ १ ॥ चातक चिहुँक मत मुरवा कुहुक मत झींगुर झिहुक मत भेकी[1] मननाय मत । चकवा चिकार मत पपिहा पुकार मत बूँद झरि धार मत धार धहराय मत ॥ कृष्णलाल गाय मत पीर उपजाय मत वालम विदेस पाय मैन तन ताय मत । पौन फहराय मत चपला चत्राय मत धाय मत धुरवा औ घन घहराय मत ॥ २ ॥

६४. कुंभनदास कवि

पद ।

स्यामसुन्दर रैनि कहाँ जागे । देखि त्रिन गुन माल अधर अंजन भाल जावक लग्यो गाल पीक पागे ॥ चाल डगमगी अति सिथिल अँग अंग सव तोतरे वोल उर नखनि दागे । गड्यो कंकन पीठि निपट विह्वल दीठि सर्वरी लाल नहिं पलक लागे ॥ कहिये साँचि वात काहे जिय सकुचात कौन तिय जाके अनुराग रागे । दास कुंभन लाल गिरिधरन एते पर करत झूठी सौंह मेरे आगे ॥ १ ॥

६५. कृष्ण कवि (२)

वैद को वैद गुनी को गुनी ठग को ठग ठूमक को मन भावै । काग को काग मराल मराल को काँध गधा को गधा खजुवावै ॥ कृष्ण भनै वुध को वुध त्यों अरु रागी को रागी मिलै सुर गावै । ज्ञानी सों ज्ञानी करै चरचा लवरा के ढिगा लवरा सुख पावै ॥ १ ॥

---

१ मेढकी ।

९६. कृष्ण कवि (३)

जाकी प्रभा अवलोकत ही तिहुँ लोक की सुंदरता गहि वारी।
कृष्ण कहैं सरसीरुह लोचन नाम महामुद मंगलकारी॥
जा तन की झलकैं झलकैं हरिता द्युति स्यामल होत निहारी।
श्रीवृषभानु कुमारि कृपा करि राधा हरो भवबाधा हमारी॥ १॥

कूरम-कलस महाराज जयसिंह फैलो रावरो सुजस सुरलोक में अपार है। कृष्ण कवि ताके कन सुंदर जलज जानि सुरन की सुंदरीन लीन्हो भरि थार है॥ तिनही के संग को सरस तेरो गुन लैकै हार पोहिबे को उन करती विचार है। मोती जो निहारै कहूँ रंध्र[1] को न लवलेस गुन को निहारै कहूँ पावती न पार है॥ २॥

९७. करनेश कवि असनीवाले

खात हैं हराम दाम करत हराम काम धाम धाम तिन ही के अपजस छावैंगे। दोजक में जैहैं तव काटि काटि कीड़े खैहैं खोपरी को गूदा काग टोटनि उड़ावैंगे॥ कहै करनेस अबै घूसनि ते वाजि तजै रोजा औ निवाज अंत जमै कढ़िलावैंगे। कविन के मामिले में करै जौन खामी[2] तौन निमकहरामी मरे कफन न पावैंगे॥ १॥

पौन हहराई वनवेली थहराई लहराई सुभ्र सौरभ कदंबन की सान ते। झिल्ली झननाई पिक चातक चिच्याई उठै विज्जु छहराई छाई कठिन कृपान ते॥ कहै करनेस चमकत जुगुनून चाय मेरे मन आई ऐसी उक्ति अनुमान ते। विरही दुखारे तिनपर दईमारे मनो मेघ वरसत हैं अँगारे आसमान ते॥ २॥

९८. कुंजलाल कवि मऊ रानीपुरा बुंदेलखंडवासी

आई एक नारि तहाँ चारि एक नारि तहाँ पाई एक नारि तहाँ नारि हू सो धाम है। रही कौन अंग लागि रही कौन अंग लागि रही अंग लागि जौन लागि हू सो नाम है॥ कहै कवि कुंजलाल

१ छिद्र। २ कमी।

कुंज है न कुंजलाल कुंज में न कुंजलाल कुंज हू सों स्याम है। वाम को न काम इतै वाम को न काम कितै वाम को न काम जितै वाम हू सों काम है ॥ १ ॥

६९. कुंदन कवि

सपनेहु सोन तोहिं दयो निरदई दई विलपति रहैं जैसे जल विन भखियाँ। कुंदन सँदेसो आयो लाल मधुसूदन को सवै मिलि दौरीं लेन अंगन हरखियाँ ॥ वूझे समाचार न सुखागर सँदेसो कछु कागद लै करो हाथ दीन्हों हाथ सखियाँ। छतियाँ सों पतियाँ मिलाइ वैठीं वाँचिवे को जौलौं खोलौं खाम[1] तौलौं खुलि गईं अँखियाँ ॥ १ ॥

७०. कमलेश कवि

आजु वरसाइति वर साइति करिये तो ताते तिय हित पाइ तोहिं वार वार वूझिये। कहै कमलेस यों महेस को तिहारो पन ताते छन[2] भरे को री एकसंग हूजिये ॥ मैन के उमंग मैनजू की मनभावन सों वूझि मनभावन सों फेरि आनि जूझिये। पीपर के पास ते परोसिनि मो पास आव आजु वर पूजि फेरि पीपर को पूजिये ॥ १॥ रंभा से रसिक नीके चंचल तुरंगम से संख से सपेद चारु चंद से गनाइये। कहै कमलेस कामधेनु से सखीन चित्त सौतिनको चिंता-मनि चाप से गनाइये ॥ पय को पियूष श्री सुरतरु धनंतरि से काके त्रिप मद से मतवारे से गाइये। रूपनिधि मथि मनमथ ने निकासे जे रतन दस चारि प्रिया-नैनन में पाइये ॥२ ॥ सुरत करत विधि प्यारी विपरीत रची मदन महीप को रिझावत हैं साँसे से। कहै कमलेस हैं कलान में प्रवीन फेरि अंग-अंग-वासलौं विचारि गाँस गाँसे से ॥ आँसु तहीं कंकन लौं भूपन चलाइ दये नूपुर दवाइ मानौ चुगुलनि ठासे से। ज्यों-ज्यों कटि लचै मचै

१ लिफ़ाफ़ा। २ शीघ्र।

कंकन ढलाइनो त्यों नथ में को मोती करै नट लौं तमासे से ॥ ३ ॥
कवि कमलेस हैं अधीन गुन राजन के राजन को छिति के अधीन लेखियतु है। छिति के अधीन धान धान के अधीन प्रान प्रान के अधीन देह सोई पेखियतु है ॥ देह के अधीन नेह नेह के अधीन गेह गेह के अधीन नारि सो विसेपियतु है। नारि के अधीन भाव भाव के अधीन भक्ति भक्ति के अधीन कृष्णचंद्र देखियतु है ॥४॥
मिलिये उड़ि कै किमि पंख नहीं लखिये किमि नाहिं कला ससिकी।
हरि के श्रुति से श्रुति जो लहते सुनते हँसि बोलनि वा मुख की ॥
मुख सेस हू से लहते कहते कमलेस कथा गुन औ जस की।
मिलिवौ बिछुरौ बिछुरौवौ मिलौ अपने वस ना बिधना-वस की॥ ५ ॥

७१. कान्ह कवि कन्हईलाल कायस्थ राजनगर बुंदेलखण्ड (१)

सोने के सतून[1] ब्रजराज-मन-मंदिर के रचिवे को चारु चतुरानन कहाँ के हैं। कैधौं रसराज महराज के निसान खंभ कान्ह कहै कैधौं सौतिमानभंज नाके हैं ॥ कौन उपमा के अति राजै सुखमा के गजगवनविथा के राजहंसगति नाके हैं। मोहन वना के मन मोहिवे के नाके खंभ कामपलना के किधौं पग ललना के हैं ॥ १ ॥ कैधौं मरजाद विधिना की विधि ताके सखी गहव गुलाव आव राखे प्रेम गोरी के। कैधौं मनि मानिक ललाई अवरेखियतु मानो द्युति मुकुरे[2] सुहाये काम जोरी के ॥ कान्ह भनै पद जुग सागर कुसुम रंग तामें दसकमल परागनि झकोरी के। नवलकिशोरजू के नवल सनेहभरे नव नख राजैं खरे नवलकिशोरी के ॥ २ ॥

७२. कान्ह प्राचीन कवि (२)

कानन लौं अँखियाँ ये तिहारी हथेरी हमारी कहाँ लगि फैलि हैं।

---

१ खंभे। २ आईना।

मूँदे तऊ तुम देखति हौ यह कोरैं तिहारी कहाँ लौं सकेलि हैं ॥
कान्हर हू को सुभाव यहै उनको हम हाथन ही पर झेलि हैं ।
राधेजू मानो भलो कि बुरो अँखिमीचनो संग तिहारे न खेलि हैं ॥१॥
अवनि अकास के प्रकासित बनाये पला दिसन की जोति कान्ह ओज अति ऊरो भो । मारुत की दंडिका बनाई सुघराई घर चतुर सुनार चतुरानन[1] सु रूरो भो ॥ तो पै सुनु राधे या अनोखी तौल तौली गई गयो वह ऊँचे यह नीचे आनि भूरो[2] भो । तारागन जदपि चढ़ाइ समुँदाइ[3] दीन्हें तदपि न चंद मुखचंद भर पूरो भो ॥ २ ॥

७३. कमलनयन कवि

आजु कौंलनैनजू सों मोसों ऐसी होड़ परी और कहा सखिन की बातैं अवरेखिये । दरपन लै कान्ह कह्यो मेरे बड़े नैन हैं जू तो हूँ कह्यो प्यारेजू के ऐसे ही तेखिये ॥ दीरघ विसाल मेरी राधा कौरिजू के कही ल्याओ चलि देखिए जू रोप न विसेखिये । आये हैं हरावी हाहा प्यारी वलि गई तोपै एकवार आँखिन सों अँखि मापि देखिये ॥ १ ॥ मने कीजो मेरी आली जिय में न ऐसी आनैं हम तो हितू सो बात हित की बताय हैं । जानत हौ पाँयन सों मापे हैं सुतीनो लोक याही के भरम भूले भरम गँवाय हैं ॥ दई की सँवारी वृषभानु की कुमारी तासों सरवर किये हरि पाछे पछिताय हैं । राधे चंदमुखी वे कनौड़े हैं कमलनैन आँखिन सों आँखि मापि कैसे जीति जाय हैं ॥ २ ॥

७४. काशीनाथ कवि

जोरत न नैन मुख बोलत न बैन अब लागे दुख दैन ढिग हौंहि निवसत हौ । ऐसी चतुराई निठुराई कहा काशीनाथ मेरो हिय जारन को और तैं हँसत हौ ॥ हम तरस्यो करैं तुम्हैं तो है तरस नहीं

---

१ ब्रह्मा । २ भारी । ३ सब ।

एते पर बार बार मोहिं को कसत हौ। जाउ जू सिधारो लाल जहाँ लाग्यो नयो नेह बोलाचाली नाहिं एक गाउँतौ बसत हौ ॥१॥ ऊदी होति नीलमनि बरानि सकत कौन चुनी छिपि जाति नीठ नीठ डीठ ना परैं। जानि जानि जौहरी जवाहिर धरे हैं ढाँपि पीरे होत पैग सौं भगोई छवि को धरैं॥ लेत देत बनि है न घटि है हमारो माल आपनी अनोखी यह तेरहो गुना करैं। बाल हाथ मुकता प्रवाल[1] सम है है जात काशीनाथ रजत रुपैया होत मुहरैं ॥ २ ॥

७५. कन्हैयाबख़्श बैस

छप्पै।

चलत सेन महि डगत होत उच्छलित सिंधुजल।
कंप सेस फन सहस धरत अकुलाय धरा बल॥
कमठपृष्ट दलमलत परत दिगदन्तिन खलभल।
कोल दसन भरपूर धसत मसकत वच्छस्थल॥
उड़ै रेनु रवि झंपिगो भनै कान्ह सकि सप्ततल[2]।
श्रीरामचन्द्र गढ़ लंक पर चढ़्यो सज्जि कपि-ऋच्छदल॥ १ ॥

७६. कविराज कवि

कोउ अटको सुख स्वाद कला कोउ मोहन या मन को भटकाये।
कोउ अटको सुखसंपति में कोउ दंपति अंक रहे लपटाये॥
या दुनिया बहु भाँति फँसी कविराज विचारि कहैं गोहराये।
राम भजौ परिनाम यही नहिं जात हया तन लात लगाये॥ १ ॥

मेरु सकसेना श्रीवास्तव भटनागर हैं रोशन कलम रहै सबकी सवार की। गौर अशठाने जग जाहिर बखाने बहु वचन अडोल बात कहैं उपकार की॥ माथुर की महिमा कही न जाति कविराज

---

१ मूँगा। २ अतल से पाताल तक नीचे के सात लोक।

कीरति विमल जाकी सदा गुलजार की। धरमधुरंधर धरा में धरमातमा हैं कायथ कलपतरु सोभा दरबार की ॥ २ ॥

७७. कविराय कवि

दान विन दरवि निदान ठहरान कौन ज्ञान विन जस अपजस करि करिगे। कविराइ संतन सुभाइ सुने सूमन के धरम-विहूने धन धरा धरि धरिगे॥ काम आये काहू के न दाम दुहूँ दीननके धाम गाड़े गाड़े सब गथ गरि गरिगे। वोरि वोरि बिरद बड़ाई वेसहूर केते जोरि जोरि कृपन करोरि मरि मरिगे॥ १ ॥

७८. कल्याणदास

पद—सुमिरो श्रीविठलेसकुमार।
अतिअगाध अपार भवनिधि भयो चाहौ पार॥
मैं वलि रहत करुनासिंधु कोमल सदा चित्त उदार।
गोकुलेस हृदै बसो मम माल पाल निहाल॥
माल तिलक न तजी कतहूँ परी जदपि पुकार।
अन्त भक्तन दियो धीरज भये पद दातार॥
चार जुग में बिसद कीरति भक्तहित अवतार।
नवकिसोर कल्याण के प्रभु गाऊँ वारम्बार॥ १ ॥

७९. कविराम कवि

स्याम सरीर भयो कलपद्रुम मैं हूँ भई आइ प्रेमलता।
सो उरझाइ गयो कविराम पै को सुरझावन जोग हता॥
मन तो अटको मुरलीधरसों मन ब्यापि गई तनकी ममता।
हम कौन की लाज करैं सजनी मेरो कंतको कंत पिताको पिता॥ १ ॥
बंधुविरोध करो सिगरो झगरो नित होत सुधारस चाटत।
मित्र करै करनी रिपु की धरनीधर देखि न न्याउ निपाटत॥

कविराम कहैं विष होत सुधा घर नारि सती पति सों चित फाटत ।
भा बिधना प्रतिकूल जबै तब ऊँट चढ़े पर कूकुर काटत ॥ २ ॥

८०. कालीदीन कवि

देखि चंड-मुंड को प्रचंड उग्र बोली सिवा अचल अरच्छन की रच्छ पच्छ पाली हौं । कहै कालीदीन देव कौतुक विलोकौ नभ चारौ दिग दंतिबे को आजु दुराताली हौं ॥ फोरि डारौं वसुधा मरोरि डारौं मेरुगिरि कालचक्र तोरि डारौं आजु मैं वहाली हौं । काली करौं अरिदल अति विकराली करौं जंगभूमि लाली करौं तौ मैं महाकाली हौं ॥ १ ॥

८१. कल्याण कवि

नैन जग राते माते प्रेममय देखियत आनन जम्हात ठौर ठौरन खगात है । कजरा कुटिल लागे अधरनि ओर कोर सकुच सरम नहीं सोहैं सौंहैं खात है ॥ केसव कल्यान प्रानपति जानि पाये जाहु नेकु पहिचानी सब हो तिहारी बात है । छीलि छीलि बतियाँ न छैल वर बोलौ कहूँ कर के छिपाये ते छपाकर छिपात है ॥ १ ॥

८२. कमाल कवि

राम के नाम सों काम पूरन भयो लच्छिमन नाम ते लच्छ पायो ।
कृष्ण के नाम सों वारि से पार भे विष्णु के नाम विसराम आयो ॥
आइ जग बीच भगवंतकी भगति कीन्ही और सब छाँड़ि जंजाल छायो ।
कहत कम्माल कब्बीर का बालका निरखि नरसिंह पहलाद गायो॥ १॥

८३. कलानिधि कवि प्राचीन

गावत गोधन की धुनि लै सु कलानिधि मैनकलान बतावत ।
तावत है तन मो तरुनी जब भाव-भरी भृकुटीन नचावत ॥

---

१ तमाशा ।

चावत ओक सबै ब्रज लोगन में मनमोहन मो हित आवत। आवत हैं तरसावत हैं न लगावत अंक कलंक लगावत ॥ १ ॥

८४. कुलपति मिश्र

मेरे जुद्ध क्रुद्ध लखि आयुध सकै न कोऊ मानुष की कहा है गति दानव न देव की। अर्जुन गराजि जिन आइ सनमुख सूर तू न जानै गति इन बानन के भेव की॥ कुटिल बिलोकनि ते होत लोक लोक खण्ड जाको कर प्रगट धराधरन[1] टेव की। भीषम हौं आयों आज भीषम[2] मचाइ रन खग्गबल[3] पैजहि छड़ाऊँ वासुदेवकी॥१॥

८५. कारबेग फ़क़ीर

माफ़ किया मुलुक मताहदी बिभीषन को कही थी ज़बान कुरबान ये करार की। बैठिबे को ताइफ़ तख़त दै तख़त दिया दौलत बढ़ाई थी जुनारदार[4] यार की॥ तब क्या कहा था अब सर्फ़राज़ आप हुए जब की अरज सुनी चिड़ीमार ख़्वार की। कारे के करार माहँ क्यों जी दिलदार हुए एरे नंदलाल क्यों हमारी बार बेर[5] की॥ १ ॥

८६. केहरी कवि

इतै साहिज़ादे जू बनाये सार मोरचनि उतै कोट भीतर दवाये दल ह्वै रह्यो। केहरि सुकवि कहै सूर मारे सैहथीन वहाँ अवतरानि तमासे आनि ब्वै रह्यो॥ औचक गलीन मैं गनीम[6] दल गाजि उठो तुंड गजराजन के मद आगे च्वै रह्यो। समर सँहारे भट भेदैं रवि-मंडल को मंडल घरीक नटकुंडल सो ह्वै रह्यो॥ १ ॥

८७. कृष्णसिंह कवि

कानन समीर बसैं भृकुटीअपाङ्ग अङ्ग आसन अजिन मृगअजिन अनाधा के। अरुन बिभोगे कोर बिसद बिभूति अंग त्यागे नींद

---

१ पहाड़। २ भयानक। ३ तलवार के ज़ोर से। ४ यज्ञोपवीत-धारी, मित्र अर्थात् सुदामा। ५ विलंब। ६ शत्रुदल।

विषय निमेष विष बाधा के ॥ कृष्णसिंह कामकला विविध कटाच्छ ध्यान धारना समाधि मनमथसिद्धि साधा के । प्रेम के प्रयोगी सुख संपतिसँयोगी अति स्याम के वियोगी भये योगी नैन राधा के ॥ १ ॥

८८. कविदत्त कवि

हीरन के मुकतान के भूषन अंगन लै घनसार लगाये ।
सारी सपेद लसै जरतारी की सारदरूप सो रूप सोहाये ॥
पीतम पै चली यों कवि दत्त सहाय है चाँदनी याहि छपाये ।
चाँदनी सो यहि चंद्रमुखी मुख चंद की चाँदनी सों सरसाये॥१॥

८९. कालिका कवि

यह प्रीति की वेलि लगाई जु है तिहि सींचि भले सरसाइये जू।
नित साँझ-सकारे कृपा करिकै पग धारि सुधा वरसाइये जू ॥
कवि कालिका यों कर जोरि कहै मति देखिवे को तरसाइये जू ।
इन आँखैं हमारी कुमोदिनी को मुखइन्दु लला दरसाइये जू ॥१॥

९०. कविराम कवि—(नाम रामनाथ)

यह ऐसो अदाँव भयो या घरी घरहाइन के परी पुंजन में ।
मिसैं कोऊ न आय चढ़े चित पै इन की वतियान की गुंजन में ॥
कवि राम कहै भई ऐसी दसा गिरिलंघन की जिमि लुंजन में ।
किमि हौं अव जाय सकौं हे दई वजी वैरिनि वाँसुरी कुंजन में ॥१॥

९१. केवलराम कवि

पद—सरस रसरंग भीने नवल हरि रसिकवर प्रात ही जात इतरात सोहै । परम प्रीति के ऐनहित हुलसि जागै रैन चैन चित निरखि द्युति मैन मोहै ॥ मंद मृदुल हँसनि छवि लसनि मुखमाधुरी ललित कच कुटिल दृग वंक भौंहै । मदनगोपाल अवलोकि धीरज धरै कहै री सजनि ऐसी बाल को है ॥ चकित चितवत चित करत

१ वढ़ाए। २ सुवह। ३ कोकावेली। ४ बहाना।

चंचल चखनि विसरि गति विवस बावरी होहै। सोभा को सदन मुखवदन की ज्योति लखि होत है कोटि रवि ससि लजोहै॥ लपटि उदगार उर हार कंचन वसन प्रेम सिंगार तन मन लगोहै। केवलराम वृन्दावन जीवनि छकी सब सखी दगनि सों रूप जोहै॥ १॥

६२. काशिराज कवि (बलवानसिंह, महाराजा चेतसिंह काशीनरेश के पुत्र (चित्रचन्द्रिका)

छप्पै

उज्ज्वल भूषन वसन जयति वीना-पुस्तक-धर।
शुभ्र[1] हंस आरूढ़[2] कंठगत मुक्तमाल वर॥
सेस सुरेस महेस चरन पंकज वंदत नित।
मनवांछित[3] फल लहत कहत जन वानी धरि चित॥
कवि काशिराज अनुनय करै कुमति तिमिरं[4] तुम-ही हरौ।
यहि चित्रचंद्रिका ग्रंथ को जगतजननि पूरन करौ॥ १॥

६३. कृष्ण कवि प्राचीन

काँपत अमर खलभल मचै ध्रुवलोक उडुगनपति[5] अति नेक न सकात हैं। दस के दिनेस के गनेस सब काँपत हैं सेस के सहस फन फैलि फैलि जात हैं॥ आसन डिगत पाकसासन[6] सु कृष्ण कवि हालि उठे दुग्ग बड़े गंध्रव को खात हैं। चढ़े ते तुरंग नवरंगसाह बादसाह जिमी आसमान थरथरे थहरात हैं॥ १॥

६४. कोविंद कवि (श्रीत्रिपाठी पंडित उमापतिजू)
(दोहावली-रत्नावली)

दोहा—श्रीदसरथ सुत जानिये, अवतारी अति चित्र।
मित्र मयंक अनेक द्युति, श्रुति वर्णित सुपवित्र॥ १॥
ईश्वर तासु दयालुता, सुन्दरता तन और।

---

१ श्वेत। २ सवार। ३ मनचाहा। ४ अंधकार। ५ चंद्रमा। ६ इंद्र।

कोविद वनवासी ऋपी, मोहे तेहि सिरमौर॥२॥
रमा सदा उत्साह इन, छमा दया ऋतवैन[1]।
निष्किंचन[2] हू चाहिये, हिय उछाह निसिऐन॥३॥
द्विविध सिकार करत ललन, खलन मृगन जब चाह।
धर्म सर्म नरतन दरस, कोविद नितहि उछाह॥४॥
तात मात गुरु की सदा, भक्ति विसेष महेस।
मित्त प्रीति अरु चित्त की, बितरत[3] रहत हमेस॥ ५॥

६५. कलानिधि (२) (नखसिख)

सुन्दरी की बेनी हेमफूलन की सेनी-जुत अमित अपछरन की सीस छबि छरि लै। सुवर सखीन करकमलनि घोरि पाटी पारी मरकत[4] की मयूप[5] दुति हरि लै॥ कलानिधि फैलि रही सीस सीसफूल-रुचि उपमा अनूप माँग मोतिन की लरि लै। मानों बस्यो तिमिर अखिल[6] परिवार लैकै रवि की सरन सोह बीच सुरसँरि[7] लै॥ १॥

६६. कृपाराम ब्राह्मण नरैनापुरवाले
(भागवतभाषा)

दोहा—कछु धन चोरी ते गयो, कछु ज्ञातिन[8] हरि लीन।
कछु धन पावक ते जर्‍यो, भयो काल तन हीन॥ १॥
ऐसे नर जो जगत में, जो जद्यपि कछु लोभ।
तौ सब गुन अवगुन भये, तेहि पुनि कछुअ न सोभ॥ २॥

६७. कृपाराम कवि (२) जयपुरवाले
(समयबोध)

कातिक में कहत बिदेस को चलन कंत परिवारु पंचमी भली न घन छाई है। सातम अग्यारसऽरु तेरस अमावस जो गाजत सघन घन महादुखदाई है॥ करत वियोग रोग वारि बरसै न आगे ऐसो जोग

---

१ सत्य वचन। २ कोमल। ३ बाँटते। ४ पन्ना। ५ किरणें। ६ सारा ७ गंगा। ८ जातिवालोंने।

जानि बात मोको न सुहाई है। एकमत कहे यामें मेघ भलो प्राची[1] दिसि रहिये कृपाल गेह नवौ निधि पाई है ॥ १ ॥

९८. कमच कवि

दानव देव नाग नर किन्नर गन गंध्रब जोगी जड़ जंटी।
कीटपतंग पच्छि पसु जंगम स्थावर गुरु चेला अरु चंटी॥
महिमंडलमंडली कमच कहि जिहि नव खंड विस्व धर वंटी।
तिहुँ पुर तिथि तिहुँ लोक तिहूँ पुर को को मरि न भयो मिलि मंटी[2]॥१॥

९९. किशोर सूर कवि

सची[3] सिर ढोरै-चौंर उर्वसी उड़ावै भौंर सावित्री सेवै चरन मॉहिषी[4] महेस की। वरुन धनेस राजराज उडुराज कन्या गांधर्वी किन्नरी कुमारी सेवै सेस की॥ नवनि नरेसन की दमकै सु दामिनि सी ठाढ़ी आसपास पेस आइ देसदेस की। कन्या तिहुँ लोकन की तिनमें किसोर सूर अद्भुत महरानी बैठी राजमिथिलेस की॥ १॥

सुंदर रूप त्रिया मन जानकी लोक औ वेद की मेड़[5] न मेटी।
औधपुरी सुख संपति सों रजधानी सदा लछना सों लपेटी॥
सूरकिसोर बनाय विरंचि सनेह की बात न जात है मेटी।
कोटिक जो सुख है ससुरारि तौ बाप को भौन न भूलत बेटी॥२॥

१००. कान्हरदास

पद

श्रीविट्ठलनाथजू के चरन सरनं।
श्रीवल्लभनंदनं कलिकलुँष[6]खंडनं परमं पुरुषं त्रयतापहरनं॥
सकलदुखदारनं भवसिंधुतारनं जनहितलीलादेहधरनं।
कान्हरदास प्रभु सब सुखसागरं भूतले दृढ़भक्ति भावकरनं॥ १॥

१०१. काशीराम कवि

हिलिमिलि कीजै मेल दीनो है विवेक विधि कहै काशीराम याते

---

१ पूर्व दिशा। २ मिट्टी। ३ इंद्राणी। ४ रानी। ५ मर्यादा। ६ पाप।

जग चाहियतु है। जो न मिलै पौरि[1] दौरि ताके फिरि जाइ कोऊ जाको हियो बोलनि कुबोल दाहियतु है ॥ सुनो हो प्रवीन नर दीनता न भापि जानै याही ते सुदेसनि बिदेस गाहियतु है । खान चाहिये न एतो पान चाहिये न एतो दान चाहिये न जेतो मान चाहियतु है॥१॥ कुंज की गली में एक नवल अकेली बाल देखी ब्रजराज ऐसी पाइये न चाहे ते । दौरि गही बाँह उन आइबे की बाँह दीन्ही साँची करि मानिबी जू नेह के निबाहे ते॥ कहै कवि कासीराम सुता वृष-भानुजू की अति अतुराई चतुराई चित साहे ते । हा हा करि हारी पतियाने नहीं पाँय परे छाती के छुये ते कहु छाँड़ि दीन्ही काहे ते ॥ २ ॥ गाढ़े गढ़ ढाहत रहत नहिं ठाढ़े नेकु दिग्गज डुरत मद डारत सुकाइ के । कराचोली कसि झुकि निकसि निजामतखाँ आवत रकाब जब बरजोरी पाइ के ॥ धरनि के चहूँ कोन कासीराम भौन भौन भाजौ भाजौ इहै होत राना राव राइ के । लंक ते लंकेस के पताल हू ते सेस के सुमेर ते सुरेस के मिलैं वकील[2] आइ के ॥ ३ ॥

१०२. कामताप्रसाद (१)

कुंदन से झलकैं खलैक[3] बस करैं मानो पलकैं बुलाइ लेत सहित दगा से हैं । नवल नवीन मन छीन लेत मनसिज पीन जुब डारे ते पियारे खूब खासे हैं ॥ धीरधर घासे मैं नकासे ते उमंग भरे काम रंग रासे सुचि जोहत प्रभा से हैं । कामताप्रसाद उर प्यारी के उरोज सोहैं कोक कोकनद गुमटा से छनदा से हैं॥ १ ॥

आनन अनूप छवि छलक छटा सी होति ज्योति जोन्ह[4] निंदै निसिकर चंद नीको है । देखत चकोर से न मुरत मुनीसमन ममता

१ ड्योढ़ी पर । २ प्रतिनिधि । ३ दुनिया । ४ चाँदनी ।

मदादि तम करै खण्ड नीको है ।। व्यास सनकादि वेदविदित विरंचि हरि संभु से विवेकी जासु करैं वंदनीको है । कामताप्रसाद कला सोरहौ अखंड मुख चंद हू ते नीको वृषभाननंदनी को है ।। २ ।।

१०३. कामताप्रसाद (२) कान्यकुब्ज ब्राह्मण लखपुरा ज़िले फ़तेपुर वाले (संस्कृत, प्राकृत, भाषा, फ़ारसी)

या नलिनं मलिनं नयनेन अनेन करोति विभर्ति करा ।
चंदमुखी महतिज्ज गई पुनि तिक्ष कणक्कनि विज्जुहरा ।।
कीरति वाकी बरोबरि को करि ऐसे नये पिय कौन धरा ।
गारद बुर्ददिलम् हमदोश अजब शुद मस्तम कुश्तपरा ।। १ ।।

१०४. कबीर कवि

एक दो होइ तो मैं समझाऊँ जग से कहा बसाइ ।
समुझि कबीर रहै घट भीतर को बकि मरै बलाइ ।।१।।
पारस साढ़े तीनि हैं, दीपक भृङ्गी[1] साध ।
आधे पारस पारखी, कहत कबीर बिसाध ।।२।।
पथरी भीतर अगिनि है, बाँटै पीसै कोइ ।
लाख जतन करि काढ़बी, आगि न परगट होइ ।। ३ ।।
है है तौ सब कोउ कहै, नाहीं कहै न कोइ ।
कबिरा ऐसा ना मिला, यह बैठा है सोइ ।। ४ ।।
है जु कहौं तौ नाहिं है, नाहीं कहौं तौ है ।
है नाहीं के बीच में, जो कुछ है सो है ।। ५ ।।
लखत लखत जब लखि रहै, छकत छकत छकि जाइ ।
ब्रह्म टटोवै आपने, आनँद उर न समाइ ।। ६ ।।

---

१ यह एक कीड़ा होता है, जो एक दूसरे कीड़े को पकड़ कर अपने घर ले जाता है । दूसरा कीड़ा इसके आगे कुछ देर तक रह कर भयकी तन्मयता से तद्रूप हो जाता है ।

आप छके नयना छके, छके अधर मुसकाइ।
छकी दृष्टि जा पर परै, रोम रोम छकि जाइ ॥ ७ ॥

१०५. किंकरगोविंद कवि

सरि जात संचित असंचित विसरि जात करि जात भोग भव बंधन कतरि जात। तरि जात कामसरि वरि जात कोप करि कर्म, कलिकाल तीनि कंटक भभरि जात ॥ भरि जात भागि भाल किंकरगोविंद त्योंहीं ज्योंहीं तुलसी की कविताई पै नजरि जात। जरि जात दंभ दोष दुखन दरारि जात दुरि जात दरिद दुकाल हू निसरि जात ॥ १ ॥ किंकरगोविंद कलिकाल करतव देखो दीछित परीछित से ईछित छरत हैं। गो कोरे ज्ञानिन मुख तोरे वकध्यानिन के दानिन कछू ना अवदानिन करत है ॥ हँसै दिविनायकन डसै भुवि सायकन कसै मुनिनायकन डाटति फिरत है। छाँड़ि हरिपायकन रामगुनगायकन तुलसी के वायकन बाँचत डरत है ॥ २ ॥

१०६. कलीराम कवि

स्वामी सुनि श्यामहद आवैगी दया न करि तीनों लोक जाके उर माया एक छन की। ताहि छाँड़ि चोरी कै चवैना तुम चावि गये क्यों न होइ दारिद तुम्हैं सु एक कन की ॥ वै तौ गुन-औगुन न मानैं कछु कलीराम धाय करैं लाज व्रजराज लाज जन की। जौं लौं चित चिंता हती तौं लौं देखि दुख पायो चेति चित चिंतामनि चिंता जाइ मन की ॥ १ ॥

बहर बहर आछी पानी की नहर बीच अतर गुलाल फूल फूले गुललाला के। खोरखोर[2] खंजन चकोर मोर पिक धुनि त्रिविध सुगंध पौनपुंज अलिमाला के ॥ बीच फुहकारी छुटैं बुंद मुकता री फूल

---

१ इंद्र। २ गली-गली।

फूल मनि मंदिर बनायो धूम साला के । ताहि देखि कलीराम मञ्जुल अभूतसिंह लाइ कै भभूत बैठी पीठि मृगछाला के ॥ २ ॥

१०७. कृष्णदास

पद

कंचन मनि मरकत रस ओपी ।
नंदसुवन के संगम सुख वर अधिक बिराजत गोपी ॥
करत विधाता गिरिधर पिय हित सुरतध्वजा सुख रोपी ।
वदनकांति कै सुनि री भामिनि सघन चंद-श्री[1] लोपी ॥
प्राननाथ के चित चोरन को भौंह-भुजंगिनि कोपी ।
कृष्णदास स्वामी वस कीने प्रेमपुंज की चोपी ॥ १ ॥

१०८. केशवदास

पद

भोर भये आये हो ललन नीकी भतियाँ ।
जावक[2] के उर चीन्ह नीलपट प्यारी दीने नयन आलसभीने जागे सब रतियाँ ॥ छुटी ग्रीवा वनदाम नख-छत अभिराम कैसे कै दुरत श्याम डगमगी गतियाँ । केसवदास प्रभु नंदसुवन काहे लजात भलेजू साँवरे-गात जानी सब घतियाँ ॥ १ ॥

१०९. खानखाना नवाब रहीम छाप

(मदनाष्टकग्रन्थे)

कलित ललित माला वा जवाहिर जड़ा था ।
चपल चखनवाला चाँदनी में खड़ा था ॥
कटितट बिच मेला पीत सेला नवेला ।
अलि बन अलबेला यार मेरा अकेला ॥ १ ॥

दोहा—आये राम रहीम कवि, किये जती को भेस ।
जाको जो पत परति है, सो कटती तुव देस ॥ १ ॥

---

१ शोभा । २ महावर ।

जाति हुती सखि गोहन में मनमोहन को बहुतै ललचानो।
नागरि नारि नई ब्रज की उनहूँ नँदलाल को रीझिवो जानो॥
जाति भई फिरि कै चितई तब भाव रहीम यहै उर आनो।
ज्यों कमनैत कमान कसे फिरि तीर सों मारि लै जात निसानो॥१॥

सोरठा—दीपक हिये छपाय, नवलवधू घर लै चली।
करविहीन पछिताय, कुच लखि निज सीसै धुनै॥ १ ॥
तुरुक गुरुक भरपूर, डूवि डूवि सुरगुरु उठै।
चातक जातक दूर, देह दहै विन देह को॥ २ ॥

बरवै

लहरत लहर लहरिया लहर वहार।
मोतिन जरी किनरिया विथुरे वार॥ १ ॥

दोहा—साधु सराहैं साधुता, जती जोपिता जान।
रहिमन साँचे सूर को, वैरी करै वखान॥ १ ॥
नैन सलोने अधर मधु, कहि रहीम घटि कौन।
मीठो चहिये लौन पै, मीठे हू पै लौन॥ २ ॥
रहिमन ओछ प्रसंग ते, नित प्रति लाभ विकार।
नीर चुरावत संपुटी, मार सहत घरियार॥ ३ ॥
रहिमन पेटे सों कहै, क्यों न भयो तू पीठि।
भूखे मान विगार ही, भरे विगारहि दीठि॥ ४ ॥
अमी पियावै मान विन, रहिमन मोहिं न सोहाय।
मानसहित मरिवो भलो, वरु विष देइ वुलाय॥ ५ ॥
रहिमन पानी राखिये, विन पानी सव सून।
पानी गये न ऊवरै, मोती, मानुष, चून॥ ६ ॥
वड़े बड़ाई ना तजैं, लघु रहीम इतराय।
राय करौंदा होत है, कटहर होत न राय॥ ७ ॥

फरजी साह न ह्वै सकै, गति टेढ़ी तासीर।
रहिमन सीधी चाल ते, प्यादो होत वजीर ॥ ८ ॥
करत निपुनई गुन विना, रहिमन निपुन हजूर।
मानो टेरत विटप चढ़ि, यहि प्रकार हम कूर ॥ ९ ॥
रहिमन खोटे संग में, साधु बाँचते नाहिं।
नैना धैना करत हैं, उरज उमेठे जाहिं ॥ १० ॥
कहि रहीम गति दीप की, कुल कपूत की सोइ।
बारे[1] उजियारो करै, बढ़े[2] अँधेरो होइ ॥ ११ ॥

११०. खुमान भाट चरखारी के (लक्ष्मणशतक)

हनुमंत की लपेट दै लँगूर की झपेट दल दुष्ट को दपेट चर पेट पेट चाखलान। बजै नख चटाचट्ट दंत होंत खटाखट्ट गिरैं सैन घटाघट्ट फूटि फूटि पार जान ॥ कपि कूह किलकार खलजूह झिलकार परी पेट पिलकार कूटैं राकसनिदान। तहँ तेज को कुपार करि कोप वेसुमार वीर लखन कुँवर झुकि झारी किरपान ॥ १ ॥ प्यारो सीता राम को उज्यारो रघुवंस हू को अनियारो जन पैज महारूरो रन को। रघुकुलमंडल प्रचंड वरिवंड भुजदंडन उमंडन सों खंडन खलन को॥ मान कवि रघु के अपच्छ पच्छ लच्छमन अच्छ मन लच्छ मन कृच्छ दीन जनको। सिंहन को सर्भ गर्वंतन को गर्व गंजि अर्भ अवधेस को सगर्व शत्रुहन को ॥ २ ॥ भूप दसरत्थ को नवेलो अलवेलो रन रेलो रूप झेलो दल राकसनिकर को। मान कवि कीरति उमंडी खल खंडी चंडीपति सों घमंडी कुलकंडी दिनकर को॥इन्द्रगज मंजन को भंजन प्रभंजतनै ताको मनरंजन निरंजन भरन को। रामगुनज्ञाता मनबांछित को दाता हरिदासन को त्राता धन्य भ्राता रघुबरको॥३॥ हरिहय हैवर सो हंस सो हयानन

---

१ वालने से और बचपन में। २ बुझने से और बढ़ने से।

सो हरिनी हरा सो हिरन्याच्छ हंस हर सो । हिम सो हराचल सो हर सो हरीस्वर सो हृपीकेसहर्म्य सो हरो सो होमधर सो ॥ मान कवि हंस कलहंस सो सुजस हरिदासन के हिय सो हली सो हिमकर सो । हीरक सो हार सो हनूमत की हिम्मत सो हरा सो हेरंब सो हिमाचल सो हर सो ॥ ४ ॥ मित्रकुलमंडन महीप रामजू की महा कीरति मही में मढ़ी मानस मृनाल सी । मान कवि मंजुल मनी सी मल्लिका सी मार ता मनिमहीपति सी मीनकेतुपाल सी ॥ मालतीलता सी मोतिया सी जुही माधवी सी माधव महोदधि सी मुदित मयंक सी । मघवा-मतंग[1] ऐसी महिपा महीधर सी महादेव[2]मंदिर सी मोतिन की माल सी ॥ ५ ॥

(नायिकाभेद)

कंकन खनक पग नूपुर ठनक कटि किंकिनी झनक घनी घूम घहरात है । अंक की तचक परजंक की मचक लघु लंककी लचक हिये हार हहरात है ॥ भनै कवि मान विपरीत की झलक डुलै वेसरि अलक छवि छूटि छहरात है । सुंदरि के कानन में पान यों तरफरात मानों पंचबान[3] को निसान फहरात है ॥ ६ ॥

छप्पै

ऊख पुच्छ को नाम नाम विन पत्र वृच्छ को ।
जहँ गनती नहिं मिलै भच्छ को करत मच्छ को ॥
का विनती की कहत वृद्ध को नाम कहावै ।
दग सिंगार तहँ राखि नाम उज्ज्वल जस गावै ॥
भानुमित्र को गनत को मध्य अंक अभिलापही ।
कवि खुमान यहि छप्पका अर्थ सुद्ध नर भाषही ॥ १ ॥

१११· खंडन कवि

(भूषणदासग्रंथे)

दोहा— इहि विधि रस सिंगार में, सब रस रहे समाइ ।

१ इंद्र का हाथी ऐरावत । २ कैलास पर्वत । ३ कामदेव ।

जैसे निर्मल ब्रह्म में, माया रूप रमाइ ॥ १ ॥
सुचि पुनि वीर, करुन है, अद्भुत, हासहि जान ।
सु भयानक, वीभत्स है, रौद्र, शांत नव मान ॥ २ ॥

११२. खूबचंद कवि

मान दस लाख दियो दोहा हरिनाथ के पै हरिनाथ कोटि दै क़लंक कवि कैहै को । वीरवर दै छ कोटि केशव कवित्तन में शिव-राज हाथी दियो भूपन ते पैहै को ॥ छप्पै में छतीस लाख गंगै खानखाना दियो याते दीन दूनौ दान ईदर में ऐहै को । राजा श्रीगंभीरसिंह छंद खूबचन्द के में विदा में दगा दई न दीन कोऊ दैहै को ॥ १ ॥

११३. खानसुलतान कवि

चातक वजीर वीर वकसी समीर धीर पुरवाई महावीर केकिन को मान है । दादुर दरोगा इन्द्रचाप इतमाम घटा जाली वगजाल ठाढ़ो खानसुलतान है ॥ गरजन अरज कदन जिन मनसिज जिन सब जेर किये देस देस आन है । मेघ आमखास जामें दामिनी तखत यह पावस न होइ पंचबान[1] को दिवान है ॥ १ ॥

११४. खेम कवि

पद

विलुलित कर पल्लव मृदु वेनु । हर्षित हुंकृत आवत धेनु ॥
कोटि मदन द्युति स्याम सरीर । विपति कलपतरु जमुनातीर ॥
दच्छिन चरन चरन पर धरे । वाम अंस भ्रू कुंडल करे ॥
वरुहचंदवनं धातु प्रवाल । मनि मुक्ता गुंजाफल माल ॥
देखन चलहु खेम नँदलाल । ललित त्रिभंगी मदन गुपाल ॥ १ ॥

११५. खान कवि

माँगत पपीहा मुँह मैली है उरोजन के करिहाँई दूबरो दुखी न

---

१ कामदेव ।

कोऊ जानिये । दंड है जतीन के कुरंग[1] ही के वनवास मोरन की अँखियाँ सु नीके करि मानिये ॥ नाहीं एक नवलतियान मुख देखियत हाहा एक सुरतसमै ही अनुमानिये । पूछि देखे जाहि ताहि प्रेमपुंज चाहि चाहि एते खान रानाजू को राज पहिचानिये॥१॥

११६. खेम कवि (२)

भूषन सेत महा छवि सुन्दर सानि सुवास रची सब सोनै ।
गोरे से अंग गरूर भरी कवि खेम कहै जो गई तहँ गोनै ॥
चंदमुखी कटि खीन खरी दृग मीनहु ते अति चंचल दोनै ।
ऐसी जो आइ कै अंक लगै तो कलंक लगो अरु होउ सो होनै॥१॥

११७. गंगकवि

छप्पै

दलहि चलत हलहलत भूमि थलथल जिमि चलदल[2] ।
पलपल खल खलभलत विकल बाला कर कुल कल ॥
जब पटहध्वनि[3] जुद्ध धुंधु धुद्धव धुद्धव हुव ।
अरर अरर फटि दरकि गिरत धसमसति धुकन भुव ॥
भनि गंग प्रबल महि चलत दल जहँगीरसाह तुव भारतल ।
फुंफुं फनिंद फन फुंकरत सहस गाल उगिलत गरल[4] ॥ १ ॥

कवित्त । मालती सकुंतला सी को है कामकंदला सी हाजिर हजार चारु नटी नौल नागरै । ऐलफैल फिरत खवास खास आसपास चोवन की चहल गुलावन की गागरै॥ ऐसी मजिलिसि तेरी देखी राजा बीरवर गंग कहै गूँगी ह्वैकै रही है गिरा[5] गरै[6] । महि रह्यो मागधनि गीत रह्यो ग्वालियर गोरा रह्यो गोर ना अगर रह्यो आगरै ॥ २ ॥

दोहा—गंग गोछ मोछा जमुन, गिरा अधर अनुराग ।
खानखानखानान के, कामद बदन प्रयाग॥ ३ ॥

१ मृग । २ पीपल । ३ डंके की आवाज़ । ४ विष । ५ वाणी । ६ गलेमें।

कवित्त । राजे भाजे राज छोड़ि रन छोड़ि रजपूत रौतौ छोड़ि राउत रनाई छोड़ि राना जू । कहै कवि गंग हूल सागर के चहूँ कूल कियो न करै कवूल तिय खसमानाजू ॥ पच्छिम पुरतगाल कासमीर अवताल खक्खर को देस वाढ्यो भक्खर भगाना जू । रूम साम लोमसोम वलख वदखसान खैज फैल खुरासान खीभै खानखाना जू ॥ ४ ॥ कश्यप के तरनि[1] तरनि के करन जैसे उदधिके इंदु जैसे भये यों जिजाना के । दसरथ के राम और स्याम के समर जैसे ईस के गनेस औ कमलपत्र आना के ॥ सिंधुके ज्यों सुरतरु पौन के ज्यों हनुमान चंद के ज्यों वुध अनिरुद्ध सिंहवाना के । तैसेई सपूत खान वैरम के खानखाना वैसई तुरावखाँ सपूत खानखाना के ॥ ५ ॥ अधर मधुप से वदन अधिकानी छवि विधि मानो विधु कीन्हो रूप को उदधि कै । कान्ह देखि आवत अचानक मुरछि पर्‍यो वदन छपाइ सखियान लीन्हो मथि कै ॥ मारि गई गंग दृग-सर वेधि गिरिधर आधी चितवनि में अधीन कीन्हो अधिकै । वान वधि[2] वधिक वँधे[3] को खोज लेत फेरि वधिक-वधू ना खोजि लीन्हो फेरि वधि कै ॥ ६ ॥

लखि पाँयन पायल पाँय लहे पुनि लंक[4] ते दौरि निसंक गयो ।
तव रूप नदी त्रिवली तरि कै करि कै मति साहस पार भयो ॥
कुच दोऊ सुमेरु के वीच में री मन मेरो मुसाफिर लूटि लियो ।
कवि गंग कहैं वटपार[5] मनोज रुमावली ते ठग संग ठयो ॥ ७ ॥
मृगनैनी की पीठि पै वेनी लसै सुख साज सनेह[6] समोइ रही ।
सुचि चीकनी चारु चुभी चित में भरि भौनभरे खुसवोइ रही ॥
कवि गंग जू या उपमा जो कियो लखि सूरत ता श्रुति गोइ रही ।
मनो कंचन के कदलीदल पै अति साँवरी साँपिन सोइ रही॥८॥

---

१ सूर्य । २ मार कर । ३ मारे हुए को । ४ कमर । ५ लुटेरा । ६ तेल ।

चकई बिछुरि मिली तू न मिली पीतम सों गंग कबि कहै एतो क्रियो मान ठान री। अथये नखत ससि अथई न तेरी रिस तू न पर-सन पासन भयो भान री॥ तू न खोलो मुख खोलो कंज औ गुलाब मुख चली सीरी बायु तू न चली भो बिहान री। राति सब घटी नाहीं करनी ना घटी तेरी दीपक मलीन ना मलीन तेरो मान री॥ ६ ॥

११८. गंगाप्रसाद ब्राह्मण सपौलीवाले

वैरी मुरी भटको लिय तू तोहि का कहि गंगहि बारि मिस्यावौं।
कामरखी है अनारपना सुमरू सकरे लहि यादि बतावौं॥
हालिम सागो चहै हरियार ही केलिघरी सोसुखीरहि ध्यावौं।
कायथ कागदी आबिल बेत हैं लै धनियाँ तौं पिआजु लै आवौं॥१॥

११९. गंगाधर कवि

कंचनखचित भूमि पन्नन प्रकास चारु राजित अनूप ओप देखि-ये प्रभा भरै। भानुकुलकमल दिनेस सम सेस राम निमिबंस-कैरव सु सोम से सुधा झरै॥ गंगाधर जुगल किसोर बर आसन पै तेज के मरीचिन[1] के वोयम परा परै। रूप के सड़ाका मुखचंद्र से जलूस जाति छूटि कै छपाकर के ऊपर छरा परै॥ १ ॥

१२०. गदाधर भट्ट श्रीपद्माकर जू के पौत्र

राधिका के चरन विराजैं चारु मानिक से मूँगा की फली सी भली आँगुरी सुभापैं हैं। गदाधर कहै करीकर[2] से जुगुल जानु छीन कटि केसरी सो वेस अभिलाषैं हैं॥ पान सो उदर[3] हेमकुंभ से उरोज वर वाहु-लतिका सी खाँसी कामतरुसाखैं हैं। इंदु सो वदन कुरुविंद से अधर लाल कुंद से रदन[4] अरविंद सम आँखैं हैं॥१॥

जौलौं जह्नुकन्यका कलानिधि कलानिकर जटिल जटान बिच भाल छवि छंद पै। गदाधर कहै जौ लौं अश्विनीकुमार

---

१ किरण। २ हाथी की सूँड़। ३ पेट। ४ दाँत।

हनुमान नित गावैं राम सुजस अनंद पै ।। जौलौं अलकेस बेस महिमा सुरेस सुरसरितासमेत सुर भूतल फनिंद पै । बिजै नृपनंद श्रीभवानी सिंह भूपमनि बखत बलंद तौलौं राजौ मसनंद पै ।। २ ।। सारो नाम कुलटा कलंकिनी पुकारि ब्रज चाहौ लोक कुलकानि साँच बीच गारो ना । गारो ना सनेह होत सिकता[1] करोरि विधि विधि को विधान हेरो मेरो कुछ चारो[2] ना ।। चारो ना चरत घास केहरी उपास परे धरनि गदाधर सों नीकी नेक टारो ना । टारो नात नेही देह गेह को सनेह टूटै छूटै लोग सारो पै अहीर वा बिसारो ना ।। ३ ।।

१२१. गिरिधारी ब्राह्मण सातनपुर बैसवारे के (१)

जमुना नहात हरि लीन्हो हरि गोपिन के चारु रंग रंग वारे चीर रूपरासी है । कहै गिरिधारी एकै धानी धूरधानी एकै आसमानी कुसुमानी कासनी प्रकासी है ।। केसरिया काकरेजी कंजई सुनौले एकै चंपई बसंती एकै बैंजनी बिभासी है । एकै गुलेनार गुल-नारँगी गुलाबी एकै गहब अबीरी आब बासी औ गुलासी है ।। १ ।। न्यारी होहु नीर ते तौ देहिं चीर ऐसी सुनि न्यारी भई नीरहू ते तीर में कढ़े कढ़े । कहै गिरिधारी देत कसे[3] न बसन स्याम रसना पिरानी हाहा विनती पढ़े पढ़े ।। मीत जो मही के बीच नीच करि पावती तौ कौतुक[4] दिखावती विनोदन बढ़े बढ़े । छीनि लेती अंबर पितंबर समेत अब कहौ कान्ह बातैं जू कदंब पै चढ़े चढ़े ।। २ ।। कदम की डाली चढ़ि कूद्यौ बनमाली कोपि काली-दह भीतर बियोग बीज ब्वै गयो । कहै गिरिधारी धाये नगर के नारी नर भई भीर भारी नीर नैनन ते च्वै गयो ।। नंद नंदरानी अररानी परैं पानी बीच ओकंओक[5] अरर ससोर बिष ह्वै गयो । जमुना समान्यो आजु ब्रज को सथून[6] हाय जसुमतिसून बिन

१ बालू । २ वश । ३ कैसे नहीं । ४ तमाशा । ५ घर घर । ६ स्तंभ ।

सून जग कै गयो ॥ ३ ॥ कुंजन में बाँसुरी बजाई नँदनंदन जू धुनि सुनि सबके हिये को होस हरि गो। कहै गिरिधारी कुलनारिंन की भीर भई निपट अधीर पै न धीर नेक करि गो ॥ विकसी कली सी चलि निकसी निकेतन ते नहीं व्रत नेम को विचार कछू करि गो। लाज को रिसाला तजि दौरीं व्रजबाला सब आजु कुलमाला को दिवाला सो निकरि गो ॥ ४ ॥ भयो पति-भार पतिझार में उघरि गयो हुतो जौन केलिकुंज कालिंदी किनारा में। कहै गिरिधारी सो विलोकतै विहाल भई बाल थह-रानी मुकताहल ज्यों थारा में ॥ छीटदार कंचुकी कलित कुचकोरन में सुखमा बढ़ी यों ताकी उपमा विचारा मैं। डारे मेघडंबर बघंबर अनूप मानो शंभु के सरूप द्वै अन्हात छिन्न धारा मैं ॥५॥

१२२. गिरिधारी कवि (२)

वेदन के थाल्हा बीच उपज्यो है पौधा एक वारा हैं सु डारै जाकी ओंकार जर है। तीनि सै पैंतीस साखा दसहू दिसा में फैलीं ज्ञान औ विराम तोष खगन को घर है ॥ पात जे अठारह हजार छवि छाइ रहे जाकी छाँह बैठि यमदूत को न डर है। एहो वन-माली गिरिधारी कहैं वारवार भागवतरूपी सो कलपतरुवर है ॥ १ ॥

१२३. गिरिधर बंदीजन होलपुर के (१)

दाहिने चरन में विभूति भूति भूपमान बायें पग जावक जमाति काँति सों भरी। आधे अंग अंबर बघंबर विराजमान आधे अंग सारी जरतारी छवि सों जरी ॥ आधे गरे ब्याल आधे हीरन के माल लसैं आधे भाल चन्द्रमा औ आधे टीका केसरी। गिरिजा गिरीस यह रूप गिरिधर भनै मो पर महेस जू महेस्वरी कृपा करी ॥ १ ॥

---

१ खिली हुई। २ घर।

१२४. गिरिधर कविराय (२)
(कुण्डलिया)

प्रान पुत्र दोनों बड़े चारौ जुग परमान।
सो दसरथ दोनों तजे वचन न दीन्हे जान॥
वचन न दीन्हे जान बड़ेन की यही बड़ाई।
वचन रहे सो काज और सरवस छिन जाई॥
कहि गिरिधर कविराय भये दसरथ नृप ऐसे।
प्रान पुत्र परिहरे वचन परिहरे न तैसे॥ १॥
रही न रानी केकई अमर भई यह बात।
काहू पूरब जोगते वन पठये जगतात॥
वन पठये जगतात पिता परलोक सिधारे।
जेहि हित सुत के काज फेरि नहिं बदन निहारे॥
कहि गिरिधर कविराय लोक में चली कहानी।
अपकीरति रहिगई केकयी रही न रानी॥ २॥
भाषा भूसा छोड़िकै सरी संसकृत डारि।
सब जड़ तू चेतन सदा ब्रह्म यहै उर धारि॥
ब्रह्म यहै उर धारि छाँड़ि सबही सिर दर की।
पर को क़िस्सा छाँड़ि खबरि ले अपने घर की॥
कहि गिरिधर कविराय समुझि बेदन की आशा।
सब कलपित तुम माहिं देववानी नर-भाषा॥ ३॥
नायक अपनी नायका जनम पाइ देखी न।
रूप कुरूप लख्यो नहीं सेज परसपर लीन॥
सेज परसपर लीन इते पर नायक रूज्यो।
प्यारी लियो मनाइ लिख्यो मजकूर अनूज्यो॥
कहि गिरिधर कविराय हुते दोऊ सम लायक।
यह नहिं जानी जाइ कौन विधि रूठ्यो नायक॥ ४॥

१२५. गदाधर कवि (२)

ध्रुव की धरनि जैसी जैसी कीन्ही पहलाद तैसी करै कौन तहाँ बुद्धि हू धसाई कै। तारी मुनिनारी पतिरूप जो बिगारी सक्र गीध उपकारी तस्यो रावनै खँसाई कै॥ तारिवो गदाधर तिहारो तहाँ जेते नाहीं तेते तरे निज पुन्य रावरी रसाइ कै। सोहूँ अबै भाई भाई आपु की दसाई देखि पुरुप दसाई तारे सधन कसाई कै॥ १॥

१२६. गिरिधर बनारसी अर्थात् श्रीमहाधनाधीश बाबू गोपालचंद शाहकाले हर्षचंद्र के पुत्र श्रीबाबू हरिश्चन्द्र जू के पिता (३)

सोरह कला को चन्द पूरन मुखारविन्द सोरहूं सिंगार किये सोरह बरस की। आभरन बारा सजी कनकबनक बारा बारहौ चरन चुभे चोप कंजरस की॥ आठौ चौक दन्तन के आठौ अंग हार हीरा आठहू बरांगना ते बिधना सरस की। चारि खग चारि मृग चारि फल फूल चारि चारि भुज आरत निकाई या दरस की॥ १॥ रजोगुन रंगवारी जावक सुरंगवारी आनँद उमंग वारी स्वच्छ छवि छाकी है। सौतिगुन भंगवारी सखी सतरंगवारी नवल तरंगवारी अंगवारी ताकी है॥ गिरिधर कहै सोहै संपुट सरोजवारी बसीकर मंत्रवारी यंत्रवारी बाँकी है। पिय-मन-बेड़ी अच्छ लच्छननिबेड़ी बेस उपमा न छेड़ी राजै एड़ी राधिका की है॥ २॥ मानो अधगुंजका[1] से चंचुक चकोर चखै[2] चाबुक चमक चीज विद्रुम तमाल के। चेटक के चिह्न कैधौं नाटक के सुत्र कैधौं हाटक के हुन्न देस दच्छिन के चाल के॥ जटित जराय मधि नायक अमोल मोल गोल गोल मोती मानो मनि हेमपाल के। आँगुरी अनी की नीकी कनककनी की कैधौं कामिनी के नख कै

१ घुँघची आधी। २ नेत्र।

नगीना काम लाल के ॥ ३ ॥ कंचन के पल्लव में छोभ के वठीक मानो लिख्यो है उच्चाटमंत्र[1] विधिमोह सो भयो। सुधा को स्रवत मनिमानिक लसत सोहैं आँगुरी किरन ज्यों प्रभाकर उदै भयो ॥ मेहँदी रचित नख कैधौं मैन पंच वान खरसान धरे सोनो पानी तिनको दयो। आँचर के ओट ते अचानक ही डीठि पस्यो तेरो हाथ देखे मन मेरो हाथ ते गयो ॥ ४ ॥ कंज की कली सी उपमान हूँ भली के सोहैं सुखमाथली के लखि सौतिमति छरकी। कोकजुग[2] नीके पी के ही के मोहिबे को करी हेमकुम्भ काम करतूति निज कर की ॥ गिरिधर कहै कुच नीके कामिनी के इभि ता पै मुकतान माल छाजै छवि वर की। मानो सम्भु-सीस ते भगीरथ के साथ काज निकसी अपार जुग धार सुरसरि[3] की ॥ ५ ॥ आजु अलवेली अलवेले संग रंगधाम रति विपरीत पूरी प्रीति सों करति है। उझकि उझकि झुकि झुकि लचकीलो लंक[4] अतिही असंक[5] अंक[6] प्यारे को भरति है ॥ गिरिधरदास उभै[7] उरज उतंग सोहैं उपमा कहत वानी लाजहि धरति है। मानो दुइ तुंब राखि छाती के तरे तरुनि सुरत समुद्र वेप्रयास हि तरति है ॥ ६ ॥

(भारतीभूषण—अलंकारग्रन्थे)

दोहा—मोहन मन मानी सदा, वानी को करि ध्यान।
अलंकार वर्नन करत, गिरिधरदास सुजान ॥ १ ॥
सुन्दर वरनन गन रचित, भारति-भूषन एहु।
पढ़हु गुनहु सीखहु सुनहु, सतकवि सहित सनेहु ॥ २ ॥

१२७. गोपाल कवि प्राचीन

केहरी कल्यान मित्र जीत जू के तेरे डर सुत तजि पति तजि बैरिनी विहाल हैं। कटि लचकति मचकति कचभारन सों गिरे

---

१ उच्चाटन के मंत्र। २ चकई-चकवा। ३ गंगा। ४ कमर। ५ वेधड़क। ६ गोद। ७ दोनों।

बेहुसार जहाँ सघन तमाल हैं ॥ सुकवि गोपाल तहाँ खगन सतायो आनि नहगहे नैन डारें अँसुवा बिहाल हैं। मोर खैंचैं बेनी सीस-फूलन चकोर खैंचैं मुक्तन की माल गहे खैंचत मराल हैं ॥ १ ॥

१२८. गुमानजी मिश्र साँढ़ी के निवासी (६)

(काव्यकलानिधि अर्थात् भाषा नैषध)

दोहा—संवत प्रकृति पुरान सैं, सग्वत् सर निरदम्भ।
सुरगुरुसह सित सतमी, करयो ग्रंथ आरम्भ ॥ १ ॥

छप्पै

गान सरस अलि करत परस मुद मोद रंग रचि।
उचत ताल रसाल करन चल चाल चोप सचि ॥
चिन्तामनिमय जटित हेम भूषन गन बज्जत।
चलत लोल गति मृदुल अंग नव तांडव सज्जत ॥
लखि मननि समय सुख तात को बिहँसि मातु लिय लाय उर।
जयजय मतंगआनन अमल जय जय जय तिहुँलोकगुर ॥ १ ॥

कवित्त। धरधर हालै धराधर धुवकारन सों धीर न धरत जे धरैया वलवाह के। फूटत पताल ताल सागर सुखात सात जात हैं उड़ात व्योमें विहँग वलाह के ॥ झालरि रुकत झलकत झपी फीलनि पै अली अकबरखाँ के सुभट सराह के। अरिउर रोर सोर परत सँसार घोर बाजत नगारे हैं बरौरनरनाह के ॥ १ ॥

छप्पै

धर्मधुरंधर धीर बीर कलिकालविहंडन।
तपत तेज बरिबंड साधुगनमंडल-मंडन ॥
पुन्यस्लोक पवित्र चित्रमति मित्रमोहतम।
रूपमनोहर रासि बेद परकासित हरिसम ॥

---

१ पक्षियों ने। २ चंचल। ३ गजानन गणेश। ४ आकाश।

नृपवीर सेन नंदन नवल सोमवंस सब गुन सच्यो।
छिति भाग प्रजा के पुन्यफल नल राजा करता रच्यो ॥ २ ॥
संगर धरावैं जाके रंग सों सुभट निज चातुरी तुरी सौं जस-पटानि बुनतु है। करि करि वालवेस कोरि कोरि जोरिजोरि चंद ते बिसद जाके गुननि गुनतु है ॥ अमल अमोल ओल डोल झल-झल होत कबहुँ घटै न जन देवता सुनतु है। आठौ दिसि रानी राजधानी के सिंगारिबे को आठै दिगराज जानि चीरानि चुनतु है ॥ ३ ॥

तोटक

कवितानि सुमेरुन बाँटि दियो।
जलदानन सिंधुन सोकि लियो ॥
दुहुँओर बँधी जुलफै सुभली।
नृप मानत औ जस की अवली ॥ ४ ॥

आसवसार[1] सुधाधर मंडल है मद कोमल वा छवि छायो।
देववधू[2] तिहि पीवत छीव छकै सब जीव करै चितु लायो ॥
छूटत सौरभ सोभसने तिहि लोपत तारन बीच बसायो।
प्यालो लग्यो मनि नीलम को उर अंक कलंक न रंक बतायो ॥५॥

१२६. गोविन्द कवि
(कर्णाभरण)

दोहा—लहत मोद मकरंद जहँ, मुनिमन मिलित मिलिंद[3]।
वाही मूरति मंजु के, वंदौं पद अरविंद ॥ १ ॥
कीन्हो सुकवि गुविंदजू, कर्नाभरन विचारि।
साँचो कर्नाभरन कवि, करहिं कृपा उर धारि ॥ २ ॥
(७) (९) (७) (१)
नग निधि ऋषि बिधु बरस मैं, सावन सित तिथि संभु[4]।
कीन्हो सुकवि गुविंदजू, कर्नाभरन अरंभु ॥ ३ ॥

१ श्रेष्ठ अमृत। २ अप्सरा। ३ भ्रमर। ४ चौदस।

१३०. गुनदेव कवि

बैठे चटसार में कुमार हैं हजार जहाँ वेदन को भेद भाँति भाँतिन को रढ़िबो । कहैं गुनदेव कोऊ लिखत ललित अंक कोऊ करै वाद कोऊ बैन गुन गढ़िबो ॥ तहाँ हरनाकुस को पुत्र मतिधीर जाके दूजो और आखर सपथ सुख कढ़िबो । निरखि असार सब सार सुख जानि एक रामसंत्र सार प्रहलाद सीखो पढ़िबो ॥ १ ॥

१३१. गुमान कवि (२)

(कृष्णचन्द्रिका ग्रन्थे)

खग मोहे मृग मोहे नग मोहे नाग मोहे पन्नग पताल मोहे धुनि सुनि जासु[1] री । सुर मोहे नर मोहे सुरनसुरेस मोहे मोहि रहे सुनि कै असुर अरु आसुरी[2] ॥ भनत गुमान कहाँ मोहिबे की कहा बानि चर औ अचर मोहे उमँगि हुलासु री । गोपिन के वृन्द मोहे आनँद मुनिंद मोहे चंद मोहे चंद के कुरंग मोहे बाँसुरी ॥ १ ॥ फुकि रहो मुकुट रही है झूमि मोतीमाल चूमि रहे कान्ह नैननोक अनियारे री । कलित कपोल छवि छै रहे रदन[3] चारु च्वै रही अधर अरुनाई अनियारे री ॥ भनत गुमान नव बीना छहराइ रही कंध फहराइ रहे छोर पट न्यारे री । हेरि रहे मो तन गुविंद धेनु फेरि रहे कूलनि कलिंदजा[4] कदंब तरे प्यारे री ॥ २ ॥

१३२. गंगाधर कवि (२)

(उपसतसैया)

मेरी भवबाधा हरौ राधा नागरि सोइ ।
जा तन की झाँई परे स्याम हरित द्युति होइ ॥
स्याम हरित द्युति होइ हरत हिय हेरनहारहि ।
याही ते सब हरे हरे कहि नाम उचारहि ॥

---

१ जिसकी । २ असुरों की स्त्री । ३ दाँत । ४ यमुना ।

जिहि झाँई तें लह्यो हरन गुन हरि सो राधा ।
नागर नेक निहारि हरो मेरी भवबाधा ॥ १ ॥
तीरथ तजि हरि राधिका तन द्युति करि अनुराग ।
जिहि ब्रज-केलिनि कुंज-मग पग पग होत प्रयाग ॥
पग पग होत प्रयाग सितासित जावक लागे ।
गंगा जमुना सरस्वती लज्जित तिन आगे ॥
रस अनुराग सिंगार प्रेम के बरन चरन भजि ।
ब्रज निकुंजमग लोटि पर्‌यो रज सब तीरथ तजि ॥ २ ॥
तजि तीरथ सब वेदपथ, जुगल चरन-अनुराग ।
गंगाधर श्रुति घर लुटत, तिन्ह रज होत सभाग ॥ १ ॥
कर मुरली बनमाल उर, सीस चंद्रिका मोर ।
या छबि सों मो मन बसौ, निसिदिन नंदकिसोर ॥ २ ॥

१३३. गुलाल कवि

कोह महकार[1] लोहकार ससिका है कैधौं गंसिका है विषम विहंगम द्विराज की । कारीगर काम की कुदालिका[2] नवीन कैधौं पालिका प्रवीन सरनागतसमाज की ॥ कहत गुलाल स्वच्छ धारिनी सुधा की मति-हारिनी सुनी हैं सुनासीरगजराज[3] की । लोहअहिदुंब को प्रसारन प्रकुंच बंदौं देवदुखपुंच उंच तुंच खगराज[4] की ॥ १ ॥ फुरहुरु फूलन मैं फहर फहर होत लहर लहर होत हिये सुरराज के । सहज उठान पवमान[5] की झकोरै जोरै तोरै तरु फोरै गिरिदरन दराज के ॥ कहत गुलाल दीह दिग्गज दपेटे परे बखर खखेटै हैं खेटे दिनराज के । करत अपच्छ प्रतिपच्छिन तच्छ[6] प्रभु-पच्छी के सपच्छ बंदौं पच्छ पच्छिराज के ॥ २ ॥ कैसी आलि राजै अलिअवलि अवाजै आजु सुमन सुमन राजै छिन छिन छूकै ये । कहत गुलाल और सालन

---

१ महावर । २ कुदार । ३ ऐरावत । ४ गरुड़ । ५ हवा । ६ तत्क्षण ।

पै सुकजाल बोलत विसाल ते न भोगत मरूकै ये। धीर को धराती छाती कौन अवला की अब कोक के कला की कोकिला की सुनि कूकै ये। जलथलगंजन सरसरसभंजन सु मान की प्रभंजन प्रभंजन[2] की भूकै ये ॥ ३ ॥ गौन हद होन लागे सुखद सुभौन लागे पौन लागे विपद वियोगिन के हियरान। सुभग सवादिले सु भोजन लगन लागे जगन मनोज लागे जोगिन के जियरान ॥ कहत गुलाल बन फूलन पलास लागे सकल विलासन के समय सु नियरान। मान लागे मिटन अमान दिन आन लागे भान[3] लागे तपन सु पान लागे पियरान ॥ ४ ॥

१३४. गोपाल कायस्थ रीवाँवाले (१)
(गोपालपचीसी ग्रन्थे)

तूरत फूल कलीन नवीन गिरो मुँदरी को कहूँ नग मेरो।
संग की हारीं हेरिइ गोपाल गईं अलसाइ डेराइ अँधेरो ॥
साँसति सासु की जाइ सकौं न अहो छिन एक न गैयन फेरो।
कुंजविहारी तिहारी थली यह जात उज्यारी दया करि हेरो ॥ १ ॥

१३५. गोपाल कवि चरखारी के (२)

छप्पै ॥

प्रथम पढ़िव हरिचंद भूप छतसाल निवासह।
बिय पढ्ढिय पहलाद भूप जग तेल सुबासह ॥
गुन पढ़ि दानी राम भूप की कीर्ति सुहाई।
नृप खुमान ढिग भानदास बहु काव्य सुनाई ॥
विक्रम महीप कवि मान पढ़ि सुजस साखिसाखिन बढ़े।
करुनानिधान रतनेस ढिग कवि गोपाल नितप्रति पढ़े ॥ १ ॥

---

१ तोड़नेवाली। २ वायु। ३ भानु = सूर्य। ४ ढुँढ़वाकर।

१३६. गोपाललालकवि (३)

प्रेम की दुकान में विचारि मैं न पैठियतु काम की दुकान सों सयान सब हारा है । क्रोध कोतवाल जिन प्यादे को पकरि पाया दाया को दिवान जिन माया फाँस डारा है ॥ मोह के गुमासता जे मिले भले आदर सों मोह छवि गाहक जो बाँचि कै विचारा है । ऐसे ऐसे वानिज को लादि है गोपाललाल कंचन सहर पर-पंचन बिगारा है ॥ १ ॥

१३७. गोप कवि

गनेन के आगे पग गुन देखि भापत हौ जैसे होत कूच के न-गाड़े-की उघट मैं । वीरी वीच सीरी तेहि रावरे न जानत हौ जानत हौ सोड़ीं तुम जोड़ीं होत नट मैं ॥ एते पर राधिका की मा को नाम चाहत हौ देखौ नाहीं सुनौ कहूँ अघट उघट मैं । गोप चतुराई की जनावत हौ गूढ़ बात मजनू की रट मैं सु साहब के घट मैं ॥ १ ॥

१३८. ग्वालराय कवि मथुरा निवासी (१)

जाकी खूब खूबी खूब खूबन मैं खूबी खूब ताकी खूब खूबी खूबखूबी अवगाहना । जाकी बदजाती बदजाती इहाँ पंचन मैं ताकी बदजाती बदजाती ह्वाँ उराहना ॥ ग्वाल कवि ये ही परसिद्ध सिद्ध रहैं पर सिद्ध वहै जाकी इहाँ उहाँ की सराहना । जाकी इहाँ चाहना है ताकी उहाँ चाहना है जाकी इहाँ चाह ना है ताकी उहाँ चाह ना ॥ १ ॥ सोहत सजीले सिते[2] असिते[3] सुरंग अंग जीन सुचि अंजन अनूप रुचि हेरे हैं । सील-भरे लसत असील गुन साज दै कै लाज की लगाम काम कारीगर फेरे हैं ॥ घूँघुर[4] फरस ताने फिरत फवित फूले लोक कवि ग्वाल अवलोकि भये चेरे हैं । मोर-वारे मन के त्यों पन के मरोरवारे त्योरवारे तरुनी तुरंगें दृग तेरे

---

१ गण । २ श्वेत । ३ श्याम । ४ घोड़ा ।

हैं ॥ २ ॥ सोभित सँवारे हैं सनेह सुखमा समूह सुख सर सीले सरसीले सीले थोकदार । चंचल चलाँक चारु चोयन चटक भरे चहँकैं चमंकैं चलैं सलज सरोकदार ॥ ग्वाल कवि मधुप मतंग से मजेजन में मैन मतवारे मृग मीनन के सोकदार । नूरभरे नमितै नमूदन नमूद नोने नागरि नवेली के नसीले नैन नोकदार ॥ ३ ॥ फूली कुंज क्यारिन मैं मालती मयंक लसी पानि में लिये ते दुति चंपकनि लीनी क्यों । संग की सहेलिन की कटि जो निहारि देखौ मेरी दिनरात होतजात कटि छीनी क्यों ॥ ग्वाल कवि चुंबक अचानक दबाय हार माल को मिलाय पै सुवास रस भीनी क्यों । देखि नथुनी में रज राजत दुनी में बीर मेरी नथुनी में चुनी तीनि पोहि दीनी क्यों ॥ ४ ॥

(यमुनालहरी)

दोहा—संवत निधि[१] ऋषि सिद्धि ससि, कार्तिकमास सुजान ।
पूरनमासी परमप्रिय, राधा हरि को ध्यान ॥ १ ॥

कवित्त । आनभरी अधिक कृसानभरी पापिन को दानभरी दीरघ प्रमान मान कमु ना । तेजभरी मंजुल मजेजभरी रीझभरी खीझभरी दूतन को दाहै दौरि समुना ॥ ग्वाल कवि सुखद प्रतीतिभरी रीतिभरी परम पुनीतभरी मीतभरी भ्रमु ना । जंगभरी जमते उमंगभरी तारिबे को रंगभरी तरल तरंग तेरी जमुना ॥ १ ॥

दोहा—वासी बृंदा विपिन के, श्रीमथुरा सुख वास ।
श्रीजगदंब दई हमैं, कविता विमल विकास ॥ १ ॥
विदित विप्र बंदी बिसद, बरने व्यास पुरान ।
ता कुल सेवाराम को, सुत कवि ग्वाल सुजान ॥ २ ॥

कवित्त । भूरि[३]कै भुराई हिय भौन में भरत तऊ भूलत न भामिनि

---

१ शोक देनेवाले । २ झुकेहुए । ३ बहुत ।

भुलाई सुधि पान की। काम ने करेजा रेजा रेजा किये काटि काटि कासों कहौं बेदन विकलताई प्रान की॥ ग्वाल कवि पीरक[1] न कोऊ अपनो है वीर धीरज धरौं मैं विधि कौन कवितान की। हाइ परदा में चुरियान की खनक तैसी छनक छलान की भनक बिछियान की॥ १॥ कारचोब कीमति[2] के परदा चमकदार चहुँघा लुनाई फैलि रही ज्योति ज्वाला मैं। फरस गलीचन के बीच मसनंद तापै मखमली गादी गोल गुलगुली गाला मैं॥ ग्वाल कवि आला सेजबंद सेज सुंदर पै आला में मसाला धरे गरम रसाला मैं। चिपटि लला ते चित्रसाला में सु बाला आजु सौतिन हुसाला दिये लपटि दुसाला मैं॥ २॥

१३९. गुनसिंधु कवि

जमुना समीर तीर भरै गई नीर वीर मीन मन मोद मोहि दपटि दपेटि जात। फैले हैं सुकेस आसपास ते सुवेस लखि विरही भुजंग जानि आनि आनि मेटि जात॥ भनै गुनसिंधु रानै कंजन सरोज भरे सहसा समेटि माँझधार गरगेटि जात। जहाँ जहाँ कंज रहैं दिन को प्रकास भरे मेरो मुखचंद जानि संपुटी[3] समेटि जात॥ १॥

१४०. गोसाँई कवि

दोहा—सींग वड़ो डाँड़ो वड़ो, खर चरि रहे मोटाय।
गोसाँई धूरा खनै, राँभत राख उड़ाय॥ १॥
गोसाँई गहि जोतिये, नाकनि मोटी नाथ।
आगे पगही खैंचिये, पाछे पैनी हाथ॥ २॥

१४१. गणेश कवीश्वर बनारसी

चंद सम फैलो तेज प्रवल प्रचंड देखि दंड दै अरिंदबृंद[4] खंड खंड धावते। थाप उमराय देस देस के झराप आवैं ताप की तराप ड्योढ़ी नाँघन न पावते॥ भनत गनेस केते अदब दवे से

१ हमदर्द। २ बहुमूल्य। ३ बंद होजाते हैं। ४ शत्रुओं के समूह।

ठाढ़े उदितनरायन की नजरि न पावते। भूप औ उजीरन के कहू को इरादे ज्यादे जहाँ साहिजादे पाँय प्यादे चले आवते ॥ १ ॥ ऊँचे भूरि कद के समूचे बिन्दुहद के थहायत समुद्र के समुद्र के नहर के। तोरैं तरिवर के बिथोरैं गिरिवर के न जोरैं परवर के समर के सबर के ॥ भनत गनेस कासि केस के गजेस बेस खैंचैं दिनकर के सु कर के निकर के। काँपैं थरथर के न थिर के रहत थाके कुंजर कुतर के कुतर के कुतर के ॥ २ ॥ नाभी सर बीच मन बूड़त अनंद होत ऊबत न नेक यों उदोत कर खूबी है। त्रोनै[1] पलौं[3] माँह नैन बान जे सुजान मारै देखी बिन चैन है न चित गति ऊबी है ॥ भनत गनेस ब्याज आइ कै उरोज ईस कंठ स्यामताई सीस पाई हूबहूबी है। बदन तरीफ बैन कहतै न हद होत प्यारी के बदन बीच एतनी अजूबी है ॥ ३ ॥ सीसा के महल बीच कहल हिमाचल की पहल तुलाई बर्फ चहल कसाला में। चंदन सो लागत कुरंगसार[4] अंगन में आगिनि अँगीठी जिमि बारि हौजसाला में ॥ राजत गलीचा ऊन सीतल सेवारतूल[5] दीपक नछत्र से गनेस रतिथाला में। बाला उर बीच सीत माला सी जुड़ाति जाति पाला सम लागत दुसाला सीतकाला में ॥ ४ ॥ छोड़त न पच्छ स्वच्छ लपटीं लता जे बृच्छ छोड़त न पच्छी पच्छ पच्छ पच्छ दोए हैं। छोड़त न नारी नर छोड़त न नारी नर अंग अंग जोरत जुराफा साफ जोए हैं ॥ भनत गनेस कासमीर कासमीरन ते पीरन बितीत सीत भीत सबै भोए हैं। या ते संक मानिकै हेमंत में अनंत अंत प्यारी परजंक लै इकंत कंत सोए हैं ॥ ५ ॥

१४२. गोकुलनाथ कवि बनारसी

(चेतचंद्रिका ग्रन्थे)

बारिज सो मुख मीन से नैन सेवार से बारन की सखदासी।

---

१ बड़े। २ तरकस। ३ पलक। ४ कस्तूरी। ५ सेवार के तुल्य।

कंबु सो कंठ लसैं कुच कोक से भौंर सी नाभि भरी भ्रम भासी ॥
गोकुल धार सी रोमावली लहरी सी लसै त्रिवली छबिरासी ।
लाल विहार करौ रस में वह बाल बनी सुख की सरिता सी॥ १ ॥
जो तन चेतै[1] महीप चितै मन वैरिन के धरै धीरज धंधन।
गोकुल साधु रहैं सुख सों खल के कुल भागि बसे गिरिरंधन[2] ॥
सेवक फूल भरै अनुकूल भए प्रतिकूल ते कौन से अंधन ।
छूटि परैं धनु वीरन के तरुनीन के टूटि परैं कटिबंधन ॥ २ ॥

१४३. गोपीनाथ बनारसी

देखि पावती तौ उन्हैं उतही बनाइ नीके दोपहि दुरावती जु देखे दोप धारैगी। पीकलीक लेखति न कहा कहौं एरी वीर सील सील सों यें है असील रोप धारैगी ॥ बिनै बितरे हू कर जोरि गोपीनाथजू के लेखिये न सरस प्रतीक हिये वारैगी । आली मैं न जानी सुखदानी पिय प्यारे सों सयानी प्रेमसानी सो नदानी है विगारैगी ॥ १ ॥ गुलजार बाग बीच बँगला कनकमई मनिमई खंभ जागै जोति चटकीली सों । मोतिन की झालरैं झलकदार छतिपोस झिलिमिलि झाँप झमै झारि झलकीली सों॥ जटित जवाहिर सों जेवदार परजंक गोपीनाथ रमैं तामैं रमनी रसीली सों । मोद मन दपटे सनेह रस लपटे सो लपटे सुगंध सों सु छपटे छबीली सों ॥ २ ॥

१४४. गीध कवि

छप्पै

ससि कलंकि रावन बिरोध हनुमत सो वनचर ।
कामधेनु ते पसू जाय चिंतामनि पाथर ॥
अतिरूपा तिय बाँझ गुनी को निरधन कहिये ।
अति समुद्र सो खार कमल बिच कंटक लहिये ॥

---

१ महाराज चेतसिंह । २ पर्वत कंदराओं में ।

जाये जु व्यास खेवट्टिनी दुर्वासा आसन डिग्यौ ।
कवि गीध कहै सुनु रे गुनी कोउ न कृष्ण निर्मल गढ्यौ ॥ १ ॥

१४५. गड्डु कवि

छप्पै

हंसहि गज चढ़ि चल्यो, करी पर सिंह विरज्जै ।
सिंहहि सागर धर्यो, सिंधु पर गिरि द्वै सज्जै ॥
गिरिवर पर इक कमल, कमल पर कोयल बोलै ।
कोयल पर इक कीर, कीर पर मृग हू डोलै ॥
ता ऊपर सिसु नाग के सुनि सुदिन फनिय धारे रहै ।
कवि गडडु कहै गुनिजनन सों सु हंस भार केतो सहै ॥ १ ॥
मरै बैल गरियार[1], मरै वह कट्टर टट्टू ।
मरै हठीली नारि, मरै वह पुरुष निखट्टू[2] ॥
सेवक मरै सु तौन, जौन कछु समै न सुज्झै ।
स्वामी मरै जु कौन, जौन सेवा नहिं बुज्झै ॥
जजमान सूम मरि जाय तौ काहि सुमिरि दुख रोइये ।
कवि गडडु कहै मरि जाय सो, जाहि मुए सुख सोइये ॥ २ ॥

१४६. गुरदीनराय कवि पैंतेपुरवाले

फैल गुंजत कुंजन पुंज मलिंद पियैं मकरंद अनंद भरे ।
द्रुम बौरत कैलिया कूकैं करैं वहै सौरभ सौरी समीर हरे ॥
वहिं तंत वसंत को भावै नहीं गुरदीन जऊ लसै कंत गरे ।
निसिबासर नींद औ भूख हरी मुख पीरी परीं दल पीरे परे ॥ १ ॥

१४७. श्रीगुरुगोविंदसिंह शोढ़ी शिष्यमत के कर्त्ता आनंदपुर पटना निवासी

(ग्रन्थ साहब नाम ग्रन्थ)

छप्पै

चक्र चिन्ह अरु वरन जाति अरु पाँति पाप जेहिं ।

---

[1] मार खाकर भी न चलनेवाला ; हरामजादा । [2] उद्योगधंधा न करनेवाला ।

रूप रंग अरु रेखभेष कोउ कहि न सकत कहि ॥
अचलमूर्ति अनुभव प्रकास अमितो कहि सज्जै।
कोटि इन्द्र इन्द्रानि साह-साहान भनिज्जै ॥
त्रिभुवनमहीप सुर नर असुर नेति नेति वेदन कहत।
तव सर्व नाम कथये कवन करम नाम वरनत सुमत ॥ १ ॥

सवैया

स्रावग सुद्ध समूह सिधानक देखि फिर्‌यो धरि जोग जती के।
सूर सुरादन सुद्ध सुधादिक संत समूह अनेक मती के ॥
सारही देस को देखि रह्यो मत कोउ न देखत प्रानपती के।
श्रीभगवान की भाय कृपाहु ते एक रती बिन एक रती के ॥ २ ॥
माते मतंग जरे जर संग अनूप उतंग सुरंग सँवारे।
कोटि तुरंग कुरंगहु सोहत पौन के गौन को जात निवारे ॥
भारी भुजान के भूप भली विधि नावत सीसन जात विचारे।
एते भये तौ कहा भये भूपति अंत को नाँगे ही पाँय सिधारे ॥ ३ ॥

१४८. गुलामराम कवि

सोम जो कहौं तौ कलानिधि को कलंकी सुन्यो कंजसम कहौं कैसे पंक को नंदन है। कामसुख सरिस बखानिये जु रामसुख सोऊ न बनत देहरहित मदन है ॥ अमल अनूप आधिव्याधि ते विहीन सदा वानी के विलास कोटिकलुपकंदन है। वदत गुलामराम एकरस आठौजाम सोभा को सदन रामचंद्र को वदन है ॥ १ ॥
धरा धन धाम बाम[१] सोदर[२] सुहृद सखा सेवक समूह आप पुरुष प्रमाथी है। बाजी[३] वर वारन[४] है बल[५] हू हजारन है गाढ़े गढ़वासी धीर महारथी साथी है ॥ लवा[६] ज्यों अचानक सचानक गहैगो बाज प्रान की परैगी तोहिं लेत हाथी हाथी है। वदत गुलामराम कोऊ तौ न आवै काम राखा जौन हाथी तौन साँकरे को साथी है ॥ २ ॥

१ स्त्री। २ सगा भाई। ३ घोड़ा। ४ हाथी। ५ सेना। ६ बटेर।

१४६. गुलामी कवि

ठारह पुरान चारि वेद मत सास्त्रन को ग्रंथनि सहस्र मत राम जस वै गये। पाप को समूह कोटि कोटिन सिराने धर्मराज समुहान के कपाट द्वार दै गये ॥ भनत गुलामी धन्य तुलसी[1] तिहारी वानी प्रेमसानी भक्ति मुक्ति जीवन सु कै गये। जोगसुख ब्रह्मसुख लोकसुख भोगसुख एते सुख सुकृत गोसाईं लूटि लै गये ॥ १ ॥

१५०. गुरुदत्त कवि प्राचीन (१)

वाजत नगारे वीर गाजत निसान गहे गुरुदत्त तेज को अगारो लेखियतु है। कापै कोप कीन्हो रावसिंहजू को नंद आजु नैन अरु कान लाल रंग लेखियतु है ॥ सिंह सो समर पैठि सत्रुन की सेना पर राव सिवसिंह वीररूप पेखियतु है। सनमुख आई सो तिरोही की फिरोही रन भेदी जा सिरोही सो गिरो ही देखियतु है ॥ १ ॥ कवहूँ तौ सांख्य औ पतंजलि में ठिठुकत थाँभत मिमांसा की विसेष विधिवत की। कवहूँ तौ न्याय गहि द्विविधै[2] वतावै अरु कवहूँ तौ गावै एक सत्ता ततसत की ॥ कैसे करि पावैं तोहिं ऐसे तुम दुरलभ कही गुरुदत्त याते गति है मनत की। थकि थकि जात व्यास हू की पैनी मति जहाँ उतराति चढ़ति निसेनी[3] षट मत की ॥ २ ॥ वावों भौंर कठिन परोसी मच्छ कच्छन को गुरुदत्त मन वनमाली सों लहत है। नैनन के वान वैन झकन झकोरन सों तोरो सील वादवान जोरो ना रहत है ॥ कहाँ लौं छिपाऊँ आली मृदुल छमाहू तापै केवट पतिव्रत सो धीर ना धरत है। स्याम-छवि-सागर में लोभ की लहरि बीच लाज को जहाज आज वूड़न चहत है ॥ ३ ॥

---

१ तुलसीदास। २ दो तरह। ३ सीढ़ी।

१५१. गुरुदत्त कवि, मकरंदपुरवाले (२)

यह बंधु अहै बड़वानल को नथमोती यों ज्वाल से जागत है।
यह सीस के फूलहु ताप करै तन नागर मो त्रिप पागत है॥
मृदु हार हिये कसकै गुरुदत्त कठोर उरोजन लागत है।
यह दाग कपोलन में सितलान को दाग करेजे मो दागत है॥१॥

१५२. गजराज कवि उपाध्याय बनारसी
(वृत्तहारपिंगल)

सूने अवास में पाइ कै बालम बाल विनोद के वृंद बढावै।
छंद कवित्त पढ़ै बहुतै गजराज भनै सुर पंचम गावै॥
कंज बिलोकनि कोरन सों मुसकानि महा छवि छाक छकावै।
है निरसंक भरो चहै अंक मैं बालम बंक पै अंक न आवै॥१॥

१५३. ग्वाल प्राचीन (२)

कारी घटा कामरूप काम को दमामो बाज्यो गाज्यो कवि ग्वाल देखि दामिनि दफेर सी। लपकि झपकि आयो दादुर सुनायो सुर हमैं हू विरह सखि मदन की रेर सी॥ बालम विदेस बसे चातक के बोल कसे ज्यों ज्यों तन दहै त्यों त्यों औरै हरि बेर सी। बूँदन को दुन्द सुनि आँखैं मूँदि मूँदि लेत आयो सखी सावन सँवारे समसेर सी॥१॥

१५४. गोविन्द अटल (१)

छप्पै

समय मेघ बरषंत समय सिरे होइँ सवै फल।
तरुनी पावै समय समयई जाति देइ बल॥
समय सिद्धि हू मिलै समय पंडित हू चूकै।
समय प्रीति चित घटै समय सरवर हू सूकै॥
कोउ द्वार जु आवै समय सिर समय पाय गिरिवरहि गिर।
गोबिन्द अटल कवि नंद कहि जो कीजै सो समय सिर॥१॥

---

१ घर। २ अनुसार। ३ सूखता है।

१५५. गोविन्दजी कवि (२)

रँग भरि भरि भिजवत मोरि अँगिया दुइ कर लिहिसि कनक-पिचकरवा। हम सन ठेनगन[1] करत डरत नहिं मुख सन लगवत अतर अगरवा॥ अस कस वसियत सुनि ननँदी हो फगुन के दिन इहि गोकुल नगरवा। मुहि तन तकत वकत पुनि मुसिकन रसिक गोविन्द अभिराम लँगरवा[2]॥ १॥

१५६. गोपनाथ कवि

कहा लिखि पठवौं सँदेसो आली ऊधो हाथ उन के तौ मन माँझ वहै वसी खूब री। वारे के वहेवा कान्ह कारे अति अंग ही के कारी कारी वातैं सुनि होत है अजूब री॥ कहै गोपनाथ प्रान-नाथ जिय ऐसी ठानी जो पै जिय आनी ऐसी गही दाँत दूब री। कहिवे के सरमी हैं देखिवे के नरमी हैं वड़ेई सुकरमी हैं कूवरी न ऊंवरी[3]॥ १॥

१५७. गंगापति कवि

इत हरि फेरि पीठि उत करि टेढ़ी डीठि तव ही सों पंचसर वैठ्यो वाँधि वरकस। छिन छिन छीन भई विथा नित नित नई दुख माँझ नई नई कौन धरै धरकस॥ गंगापति यहै उर वढ़त अँदेसो एक पठयो सँदेस हू न ऐसे हरि करकस[4]। इतने पै घाउ करि लोन भुरकावत हौ हम को भभूति ऊधो कुविजा को जरकस[5]॥ १॥

१५८. गंगादयाल कवि निसगरवाले

हाला सी ललाई तरवान में सहज जाकी चारु चिकनाई है समान घृतनिधि के। छीर से धवल नख नीर सी विमल दुति कोमल प्रपद की गोराई सम दधि के॥ इच्छुरस हू ते है सरस चरनामृत औ लवनसमुद्र है लोनाई निरवधि के। लागे दिन रात मेरे पद जलजात तेरे वैभव दिखात मात सातऊ उदधि के॥ १॥

---

१ नख़रे। २ लंपट। ३ वची। ४ कर्कश। ५ कामदार पोशाक।

१५६. गोपालराय कवि

सजे दुरद मद के वजे निसान सद्द के भजे समुद्द हद्द के लगे तिलक दौरिया । चढ़े ति सूर सारसी बनै ति वीर साहसी विलोकि कालिका हँसी धरै न धीर गौरिया ॥ अरिंदनारि कंत सों भनै दुचैन मंत सों कहै गोपाल छंद सों गहै त्रिदेव गौरिया । मिलो तुरंत ताहि को जहान तेज जाहि कों नरिंदलाल साहि को समूह सैन दौरिया ॥ १ ॥ उठी जु रेनु रंग मों विछोह मों रथंग मों लख्यो न नीर गंग मों फुली कुमुद्द की कली । सरोज फूल संकुले उलूकनैन हैं खुले फनिंद भार सों भुले उमंडि कै चमू चली ॥ ठव्यो प्रताप भानु को जसद्द के निसान को चढ़्यो पहार खान को इदिल्ल खाँ मसन्दली । गोपालराय यों कहै न कोट वैर हू गहै ते भाजि कन्दरा रहै सम्हारि सुन्दरीन ली ॥ २ ॥

१६०. गदाधरराम कवि

वस है मुरलीसुरलीन[1] किधौं किधौं कूल कलिन्दी के टोहन गो । किधौं पीतपटा लखि या लकुटी किधौं मोरपखा छवि गोहन गो ॥ किधौं लाल कमाल के मध्य फँस्यो किधौं कामकमान सी भौंहन गो । हम का सों गदाधर जोग करैं मन तौ मनमोहन गोहन गो ॥ १ ॥

१६१. गुणाकर त्रिपाठी काँथानिवासी

फूले हैं रसाल नव पल्लव विसाल वन जूही औ पलास मल्ली आदि वहु को गनै । कूजत विहंग पिक कोकिलादि एकसंग गुंजत मलिंद वन वीथिकान में घनै ॥ वहत समीर मंद सीतल सुरभि धीर रहत न जोगजुत मुनिगन के मनै । एरे व्रजरंग ऐसे समै देहु संग नतु दहन अनंग मिसु गोपिकान के तनै ॥ १ ॥

होत प्रभाकर के से उदै दुख राति अराति[2] तमोगुन त्यागत । मीत सरोज विकासि रहे द्विजराज सबै मुद मानस भ्राजत ॥

१ मुरली के स्वरों में लीन । २ शत्रु ।

बोधित हैं[1] बुध वेद भनैं वर वारतिया[1] नित गानहिं गाजत।
श्रीरनजीत की देखि प्रभा सब भूमि को भूपन काँथा विराजत ॥ २ ॥

१६२. गोकुलविहारी कवि

झूमत झुकत मतवारो अति भारो गज गरजन गरजत महा मलै काल की। कोमल कमल उत गोकुलविहारीलाल जैसी कोऊ कुंज में फिरन कंज नाल की ॥ देखादाखी भई सूँड़ि चापि कै द्विरद दौख्यो केहरि सों सरस गरूर नंदलाल की। कंस के अखारे की सी दौर नाहिं बिसरत बारन की धावन औ आवन गुपाल की ॥ १ ॥

१६३. गंगाराम कवि

गंग सीस पै धरे अंग अरधंग भवानी।
वाहन वृष मखरेखरेख भैरव अगवानी ॥
सिध चौरासी खरे सोइ सव सीसनवावैं।
चौंसठि जोगिनि खरीं भूत ताथेइ मचावैं ॥
गंगराम कहु सिवासिव सकल सभा आनँद हिये।
सरवंगी को ध्यान धरु अरधंगी आसन किये ॥ १ ॥

१६४. गुरुदीन पाँड़े कवि
(वाक्मनोहरपिंगल)

दोहा—कहत चतुर्मुख[2] पंचपति, नाय सीस तिन तीन।
वाकमनोरथ ग्रंथ मति, प्रगटति कवि गुरुदीन ॥ १ ॥
बहु ग्रंथन को विविध मत, अति विस्तार न पार।
कहत सुकवि गुरुदीन निज, मति मन रुचि अनुसार ॥ २ ॥
सिसिर सुखद ऋतु मानिये, माह महीना जन्म।
संवत नभ रस वसु ससी, वाकमनोहर जन्म ॥ ३ ॥

---

१ वेश्या। २ ब्रह्म।

देश वर्णन, अनुष्टुप्छंद

रस खानि पससर्द्धी वस्त्र गंध नदी सुभ।
देस नग्र गादी खाई पटमाया विभूषित॥
धर्म कोट नदी दाया सुख सोभा विहंगम।
राम कृष्ण महारत्न मध्य देस मनोहर॥

सवैया

दीन सवै विधि सील सुभाव सुरूप सबै सुख ओदन दासन।
हेम पतंग परे अस नाहिं उदै रवि पंकज कोप प्रकासन॥
घाम उड़ै रजनी गुरुदीन दिया दुति धूम धरै छवि पासन।
मोहन भृंग तजे तुव अंग कहै जग चम्पकरङ्ग सुवासन॥ १॥

१६५. राजा गोपालशरण

पद

सोभित भामिनि मुकुलित केस। मानों संभु कंठ ते रिंगि कै ससि सँग मधु पीवत जनु सेस॥ भृकुटि[1] चाँप[2] मनमथ कर इहि विधि साजत प्रथम प्रवेस। ता मधि नयन विसाल चपल अति तीच्छन बान लरने पिय सेस॥ नासा कीर अधर विद्रुमछवि हँसि बोलत मानों तड़ित लसेस। कंज कपोल मृनाल भुजा कर कमलन मानों इन्द्र धनेस॥ कुच निसोत कटि छीन जंघ जुग कदलि वियत मनु उलटि धँसेस। गज गति चाल चलत मोहन दुति नृप गोपाल पिय सदा विसेस॥ १॥

१६६. गोविंददास (२)

पद

आवत ललन पिया रँग-भीने। सिथिल अंग डगमगत चरनगति मोतिनहार उर चीने॥ पारिजात-मन्दारमाल लपटात मधुप मधु पीने। गोविंद प्रभु पिय तहीं जाहु जहँ अधर दसन छत[3] कीने॥ १॥

---

१ भौंह। २ धनुष। ३ घाव।

१६७. गोपालदास

पद

मोर अंगअंग सोभा स्याम के भली । मानहुँ विकसित विचित्र नीलकमल की कली ॥ पिया उरसि[1] लग्न[2] रागसरत छुरित छवि पराग पवन परसि मन्द लै सुगन्ध को चली । करि प्रवेस घ्रान-द्वार[3] हरति जुवतिचित्तसार मरम वेधि समरवान काम ते बली ॥ पलटि वसन सुखनिधान मत्त मधुप[4] करत गान सुरतसमय सुजस सुनो स्रवन दै अली । गोपालदास मदनमोहन कुञ्जभवन वलित रंग मुदित अवनि भावनी सुमानि के रली ॥ १ ॥

१६८. गदाधरदास

पद

जयति श्रीराधिके सकल सुखसाधिके तरुनिमनि नित्य नव तन किसोरी । कृष्णतन नीलघन रूप की चातकी कृष्णमुख हिमकिरन की चकोरी ॥ कृष्णदृग भृंग विसरामहित पद्मिनी कृष्णदृग मृगज बन्धन सु डोरी । कृष्णअनुराग मकरंद की मधुकरी कृष्णगुनगानरससिंधु बोरी ॥ परमअद्भुत अलौकिक मेरी गति लखि मन सु साँवरे रंग अंग गोरी । और आश्चर्य कहुँ मैं न देख्यो सुन्यो चतुर चौंसठि कला तदपि भोरी ॥ विमुख परचित्त ते चित्त जाको सदा करत निजनाह की चित्तचोरी । प्रकृति यह गदाधर कहत कैसे बनै अमित महिमा इतै बुद्धि थोरी ॥ १ ॥

१६९. घनश्याम कवि असनीवाले ब्राह्मण

अटै औनि अम्बर छुटै सुमेरु मन्दर से घटै मरजादा बीर बारिधि के वेला की । कहै घनश्याम घोर घन की घमंडै गज मंडै ध्वज मंडै उमड़े जे रविरेला की ॥ धारा वरछीन की बिदारैं तन दैत्यन के मन्द सी कुठारैं परैं संकर के चेला की । दब्बै दिगपीलबल

---

१ प्रिया की छाती में । २ लगे । ३ नाक के द्वार से । ४ भ्रमर ।

फन्वै ना सुरेससेन जा दिन जुनव्वैं कहैं बाँधवी बघेला की॥ १॥

बाजैं जीति सुजस बिभाजैं दल बैरिन के रैयति को रंजै गरु गंजै अलकेस के। कहै घनस्याम रस दूसरो[1] सुरू कै गर्जि गुरु गार्जै तोकै कैधौं डमरू महेस के॥ इड़ावान हारैं तड़ितान को गरब गारैं आसमान फारैं मन मारैं अमरेस[2] के। पारावार धार में धसी है गंगधार कैधौं झुकत नगारे बारानसी के नरेस के॥ २॥

आजु राधे रावरे को आनन बिलोक्यो घनस्याम तुव प्रेम की घुमारी सी धरा धरै। रति की रमा की उरबसी की तिलोत्तमा की दीपति दमा की धाम राखी है धरा धरै॥ दीप को दबाइ कै सरोज सकुचाइ कै सु आरसी निकाई ताकी बाँधी है बराबरै। छाइ रतनाकर छपाइ कै प्रभाकर को छूटि कै छपाकर[3] के ऊपर हरा परै॥ ३॥

बैठी चढ़ि चाँदनी में चन्द्रमा बिलोकन को उन्नत उरोजन ते उछरे हरा परै। दमा छमा केतक तिलोत्तमा है घनस्याम रमा रति रूप देखि धसके धरा परै॥ जेवर जड़ाऊ मौर जगमगे अंगन ते नेवर जड़ाऊ तेज तरुन तरा परै। राधे-मुखमंडलमयूखन[4] ते महाराज छूटि कै छपाकर के ऊपर छरा परै॥ ४॥

उमड़ि घुमड़ि घन आवत अटान चोट छनघनजोतिछटा छटकि छटकि जात। सोर करैं चातक चकोर पिक चहूँ ओर मोर ग्रीव मोरि मोरि मटकि मटकि जात॥ सावन लौं आवन सुनो है घनस्याम-जू को आँगन लौं आय पाँय पटकि पटकि जात। हिये बिरहानल की तपनि अपार उर हार गजमोतिन को चटकि चटकि जात॥ ५॥

चंद अरबिंद बिंब बिद्रुम फनिन्द सुक कुन्दन गयन्द कुन्दकली निदरति है। चम्पा सम्पा सम्पुट कदलि घनस्याम कहाँ कुंकुम को अंगराग अंग ना करति है॥ केहरी कपोत पिक पल्लव क-

---

१ दूसरा रस=वीररस। २ इन्द्र। ३ चंद्रमा। ४ किरणों से।

लिन्दी घन दरके निरखि दाख्यो छतियाँ वरति है। मेरे इन अंगन की नकल बनाई विधि नकल विलोके मोहिं न कल परति है।।६।।

१७०. घनआनन्द कवि

गाइहौं देवी गनेस महेस दिनेसहि पूजत ही फल पाइहौं।
पाइहौं पावन तीरथनीर सु नेकु जहीं हरि को चित लाइहौं।।
लाइहौं आछे द्विजातिन को अरु गोधन दान करौं चरचाइहौं।
चाइ अनेकन सों सजनी घनआनँद मीतहि कंठ लगाइहौं।। १ ।।

१७१. घासीराम कवि

कीधौं उन वन घन घेरि न घुमंड आवैं कीधौं कीच भूतल में मगरी नहीं नई। कीधौं दबि दादुर रहे दुराइ व्यालनै सों कीधौं पापी पपिहा पिया की टेर ना रई।। घासीराम कीधौं वक वाजन की आन मान्यो कीधौं वहि देस वीर पावस नहीं ठई। कीधौं काम स्यामजू के तन से निकसि गयो कीधौं मेघ जूझे कीधौं बीजुरी सती भई।। १ ।। विच्छू साँप वेमटा छिछूंदा गिरगिटौ ताकि दिपेड़ो गुहेरो गोहछौना निर धारिये। दुरकुच्छी दुर्मुही दिनाई हरतार विष सुंमल अफीम निरवसी भौर भारिये।। घासीराम करइ कनैर किरकिचया हू ताके मुख ऊपर सो धरजर डारिये। कालकूट कुटकी स मेत जेजहर होत चुगुल की जीभ पर एते विष वारिये।। २ ।। सुख की नदी में किधौं परत गँभीर भौंर धरा को तखत पिय लोचन अरथ की। कैधौं वारषा में रोमराजी रहे पन्नग की कैधौं खान खुली है जवाहिर के गथ की।। घासीराम कैधौं सौति सुखन की भाकैसी सी मान भई खिरकी उरज-गढ़-पथ की। एरी मेरी वीर तेरी नाभि रसभरी कैधौं दोतै करतां की कै मथानी मनमथ की।। ३ ।।

---

१ अनार। २ साँप। ३ समूह। ४ भट्टी। ५ दावात।

१७२ चन्द कवि प्राचीन (१)

मंडन मही के अरि खंडे पृथीराज वीर तेरे डर वैरीवधू डग-डग डगे हैं। देस देस के नरेस सेवत सुरेस जिमि काँपत फनेस सुनि वीररस पगे हैं ॥ तेरे स्रुति-मंडलन[1] कुंडल विराजत हैं कहै कवि चन्द यहि भाँति जेव जगे हैं। सिन्ध के वकील संग मेरु के वकीलहि लै मानहुँ कहत कछु कान आनि लगे हैं ॥ १ ॥ महा-राज तेरी सव कीरति वखानैं कवि चन्द यह केवल अकीरति वखाने हैं। आँधरे ने देखी देखि हमको बताइ दई वहिरे ने सुनी जैसी हमहूँ पिछाने हैं ॥ कच्छपी[2] के दूध ही के सागर पै ताकी गीत वाँभसुत गूँगे मिलि गावत यों जाने हैं। तामें केते वड़े सस-सींग के धनुपवारे रीभि रीभि तिन्हैं मौज दै कै सनमाने हैं ॥ २ ॥

दोहा—सींक वान पृथिराज की, तीन वाँस गज चारि।
लगत चोट चौहान की, उड़त तीस मन गारि॥ १ ॥
धर पलट्यो पलटी धरा, पलट्यो हाथ कमान।
चन्द कहै पृथिराज सों, जिन पलटै चौहान ॥ २ ॥
वारह वाँस वतीस गज, अंगुल चारि प्रमान।
इतने धर पर साह है, मति चूकौ चौहान ॥ ३ ॥
फेरि न जननी जनमिहै, फेरि न खैंचि कमान।
सात वार तुम चूकियो, अब न चूक चौहान ॥ ४ ॥

(पृथ्वीराजरायसा पद्मावतीखंड)

छप्पै

पिय पृथिराज नरेस जोग लिखि कागद दिन्नेउ[3]।
लगन वार गुरु चौथि चैन वदि दरस सु तिन्नेउ[4] ॥
हरि हंसै दस वीर मांवि ग्यवत मामानह।

---

१ कानों में। २ कछुई के दूध नहीं होता। ३ दिया। ४ उन्होंने।

जो छत्री कुल सुद्ध बरनि वर राखेहु प्रानह ॥
देखत दिखिवत धरिव पलछनक बिलंब न अब करिय ।
पल गारि रैनि दिन पंच महँ ज्यों रुकुमिनि कान्हर वरिय ॥

दोहा—ग्यारह सै चालीस यक, जुद्ध अतुल भरि रोह ।
कातिक सुदि बुध त्रयोदसि, समर सामिजी लोह ॥ १ ॥

छप्पै

समुद सिखर गढ़ परनि राउ डिल्ली दिसि चल्लिव ।
बादसाह सुनि खबरि धाय बीचहि रन झिल्लिव ॥
सकल सिमिटि सामंत चंद कैमास बुद्धिवर ।
लहेउ जुद्ध चौहान गह्यो पृथिराज साहु कर ॥
रजपूत टूटि पचास रन लूटि जब्बर सैना हनिय ।
पट्ठान सात हज्जार पर जीति चल्यो संभरि-धनिय ॥ १ ॥

(आल्हखंड)

छप्पै

हाँकि पील[1] पृथिराज चल्यो चंदेल सनम्मुख ।
इस मंत्र उच्चारि बीरबर धारि जंत्र-रुख ॥
नरपति आपु सँभारि बान सन्धानि[2] पानि किय ।
खैंचि राज कोदंड[3] कान लगि बान पिंड दिय ॥
बेधंत हीक छेदंत तन फुटि सनाह[4] हैवर मिल्यो ।
सायक वाहि संभरि धनी-खरग खोलि डीलन पिल्यो ॥ १ ॥
हनि तालन पट्ठान कन्ह काढे सु प्रान रन ।
सेंगर सो निगराय भान चंदेल परे तन ॥
जालन्ह केसवदास पास परिहाँस हाँस भव ।
और गिरे बहु बीर धीर आये जे पुंगव ॥

---

१ फ़ील=हाथी । २ चढ़ाया । ३ धनुष । ४ जिरहबक्तर ।

वारह हजार रजपूत कटि हाथी तीस सुवेस दल ।
जैचंद फौज मुरकी चली परी फौज सामंततल ।। २ ।।

(दिल्लीखण्ड दिल्ली की प्रशंसा)

भर हट्ट सुलक्खनयं भरयं । धरि वस्तु अमोल नयं नरयं ।।
तिन वीच महल्ल सुतक्खनयं । लख कोटि धजी सुकवी गनयं ।।
नरसागर तागर सुद्ध परै । परि राति सुरायन वाद खरै ।।
मचिकीच उगौलन हट्ट मझे । दिखिदेव कलासन दाव दझे ।।
रचि तारवितारन मंति नवी । परि जानि हुतासन लत्तछवी ।।
मनु सावक पावक मद्द कियं । विन तार अतारन भार लियं ।।
इन रूपटगं मग चाहनयं । मनु सूर सवै ग्रह राहनयं ।।
तिन तट्ट कलिंदयतट्ट सजं । धरमज्झन तार अनेक सजं ।।
तिन अग्ग सुमंतसुमग्गनयं । लखि लक्खचौरासिय उद्धनयं ।।
पचि चल्लिय नीलियमानिकयं । रतनं जतनं मनितेजकयं ।।
सभ दिल्लिय हट्ट सुनेर सुझे । करिदंत मिलंत गिरंत सुझे ।।
द्वै सामंतदाभित रूपकला । वर वीर उठै घटि मत्तकला ।।

१७३. चंद कवि (२)

लोचन मैन के वान वने धनुही[1] भृकुटी[2] मुख चंद चही ।
ओठनि में उपमा प्रतिबिंव की दंत कि पंगति कुंद सही ।।
चंद कहै नव नीरद से कच[3] अंग सु हेमकी गौरि गही ।
नाजुक हीन नई मुख की उपमा नहिं एकहु जाति कही ।। १ ।।

आसपास पुहमी प्रकास के पगारें[4] सूझै वनन अगार डीठि है रही निवरते । पारावार पारद[5] अपार दसौ दिसि बूड़ी चंद ब्रहमंड उतरात विधुवर ते ।। सरद जुन्हाई जन्हुधार सहसा सुधाई सोभासिंधु नव सुभ्र नव गिरिवर ते । उमड़ो परत जोतिमंडल अखंड सुधामंडल मही ते विधुमंडल-विवर[6] ते ।। २ ।।

---

१ लौटी । २ भौंह । ३ वाल । ४ दीवार । ५ पारे का समुद्र ।
६ चंद्रके छिद्र से ।

१७४. चंद कवि (३)

मद के भिखारी मीनमांस के अहारी रहैं सदा अनाचारी चारी लिखते लिखावते। नारी•कुल धाम कीं न प्यारी परनारी आगे विद्या पढ़ि पढ़ि हू कुविद्या मति धावते॥ आँखिन को काजर कलम से चोराय लेत ऐसे काम करैं नेक संकहु न लावते। जोपै सिंह-वाहनी निबाहनी न होती चंद कायथ कलंकी काके द्वारे गति पावते॥ १॥

१७५ चंद कवि (४)

सोरठा—सुलतान महम्मदसाह नाम नवाब बखानिये।
कविताई अति चाह करत रहत गढ़ नगर में॥ १॥
देस मालवा माहिं कुंडलिया करि सतसई।
हरिगुन अधिक सराहि चंद कवीसुर तेहि सभा॥ २॥

१७६. चोखे कवि

अमिली[1] रहति काहे बरै[2] सों हमेस आली पीपर की डार गहे जोत नेम तेरो री। साजनो वताऊँ साख जा की आमनामा घनी एते पर करत करार जो घनेरो री॥ चोखे कहै बारबार जा मुनि न पावै पार महुवा सों रिसात आली ऊमर तरु हेरो री। एरी कच-नार तू बारबार कहर करै माहुली लगाय जात आँवरी बहेरो री॥ १॥

१७७. चतुरविहारी कवि

पद

उनींदी आँखैं रंगभरी दुरत नहीं पट ओट।
मीन खंजन मगहीन भये हैं और कमलदल वारि डारौं लख कोट॥
ढुरत मुरत झपकत अनियारी चंचल करति हैं चोट।
चतुरविहारी प्यारी की छवि निरखत बाँधत सुख की पोट॥१॥

---

१ न मिली, पक्षांतर में इसी नामका वृक्ष। २ बरगद और वर।

१७८. चैन कवि

आपु को वाहन बैल बली बनिता हू को वाहन सिंहहि पोखि कै।
मूषक वाहन है सुत एक सु दूजो मयूर के पच्छ बिसेखि कै ॥
भूषन हैं कवि चैन फनिंद के बैर परे सब ते सब लेखि कै।
तीनिहु लोक के ईस गिरीस सुजोगी भये घर की गति देखि कै ॥ १॥

१७९. चैनसिंह खत्री लखनऊ। उपनाम हरचरण।

(भारतदीपिका ग्रन्थ)

स्वेत रथ स्वेत वस्त्र स्वेत ध्वजा स्वेत छत्र स्वेत ही तुरंग लखि भूप लागे लरजन। ज्ञान में गनेस अस्त्र सस्त्र में महेससम पौरुष में राम कोऊ कहि न सकत तन॥ कहैं हरचर्न मारतंड के समान तेज जाकी हाँक सुनै मुख फेरि लेत अरिजन। रोद्रा के बजत सूरवीर संगराम तजैं गंगा के तनै की सुनि सिंह की सी गरजन ॥ १ ॥

(श्रृंगारसारावली ग्रन्थ)

लसी उर वसी सी गरे पहिरे उरवसी सी पिया उर वसी सी छवि देखे दुख सरकि जात। कंचुकी कसीसी बहु उपमा लसी सी रूप सुन्दर धसी सी परजंक पै थरकि जात॥ कहै हरचर्न रही चमकि ग्नीसी प्यारी जामें लगी मीसी हिये सौतिन दरकि जात। भुज में कसी सी सिन्धु गंग ज्यों धसी सी जाके सीसी करिबे में सुधासीसी सी ढरकि जात ॥ २ ॥

१८०. चिन्तामणि त्रिपाठी, टिकमापुर अंतर्वेद के (१)

(छंदविचारपिंगल)

दोहा—सूरजवंसी भोसला, लसत साह मकरंद।
महाराज दिगपाल जिमि, भाल समुद सुभ चंद ॥ १ ॥

छप्पै

मुकुतमाल उत माँग इतहि सो मंग गंग गनि।

---

१ पत्नी=पार्वती। २ काँपने।

उत सित[1] चन्दन अंग इतहि सितकर[2] लिलार भनि ॥
उतहि भाल मनि लाल इतहि दृग अनल विराजत ।
उत कपूर तन लेप भसम इत अति छवि छाजत ॥
कहि चिन्तामनि सम वेष धरि अति अनूप सोभा सहित ।
जय साजहिं सरजा साहि कहँ गिरिजा हर अरधंग नित॥२॥

सिर ससिधर धर गौरि अरधंगधर जटाजूट गंगधर नर-मुंडमालधर ।
विपनिनिरासकर दीह दिसावासकर खलउरसूलकर डमरुत्रिसूलकर॥
सेवत अमरवर पग-सुरतरुवर देत हरवर चिन्तामनि को अभय वर ।
देह लसै विषहर मदनगरवहर त्रिपुर के मदहर जय जय देव हर॥३॥

(काव्यविवेक)

इक आजु मैं कुन्दनवेलि लखी मनमन्दिर को सुचि वृन्द भरै ।
कुरविंद के पल्लव इंदु तहाँ अरविंदन ते मकरंद झरै ॥
उन बुन्दन ते मुकतागन ह्वै फल सुंदर द्वै पर आनि परै ।
लखि यों करुनाद्युति कंदकला नँदनंद सिलाद्रव[3] रूप धरै ॥१॥

चिंतामनि कच कुच भार लंक लचकति सोहै तन तनक वनक छविखान की । चपल विलास मद आलसवलित नैन ललित विलोकनि लसति मृदु वान की ॥ नाक मुकताहल अधर रंग संग लीन्हीं रुचि संध्याराग नखतन के प्रभान की । वदनकमल पर अलि ज्यों अलक लोल अमल कपोलन झलक मुसकान की॥२॥

सूधी चितौनि चितै न सकै औ सकै न तिरीछी चितौनि चितै ।
गुड़ियान को खेलिवो फीको लगै अरु कामकला को विलास कितै ॥
लरिकापन जोवन संधि भई दुहुँ वैस[4] को भाव मिलै न हितै ।
विवि चुंबक बीच को लोहो भयो मन जाइ सकै न इतै न उतै॥ ३ ॥

राति रहे मनिलाल कहूँ रमि ह्याँ दुख बाल वियोग लहे हैं ।

---

१ श्वेत । २ चंद्रमा । ३ चंद्रकांत मणि । ४ अवस्था ।

आये घरै अरुनोदय होत सरोषं तिया इमि बैन कहे हैं ॥
लाल भये दृग कोरन आनि कै यों अँसुवा नव बूँद रहे हैं।
चोंचन चापि मनों सिथिलै बिबि खंजन दाड़िमवीज गहे हैं ॥ ४ ॥

(रामायणग्रन्थे)

जा के हेत जोगी जोग जुगुति अनेक करैं जाकी महिमा न मन वचन के पथ की। औरन की कहा जाहि हेरि हर हारे जाहि जानिबे को कहा बिधि हू की बुधि न थकी ॥ ताहि लै खेलावै गोद अवधनरेसनारी अवधि कहा है ताके आनँद अकथ की। जाके मायागुनन झुलायो सब जग ताहि पलना मैं ललना झुलावै दसरथ की ॥ १ ॥ हंसन के छौनों स्वच्छ सोहत बिछौना बीच होत गति मोतिन की जोति जोन्ह जामिनी। सत्य कैसी ताग सीता पूरन सुहाग भरी चली जयमाल लै मरालमंदगामिनी ॥ जोई उरवसी सोई मूरति प्रतच्छ लसी चिंतामनि देखि हँसी संकर की भामिनी। मानौ सर्दचन्द चन्द मध्य अरविन्द अरविन्द मध्य विद्रुम विदारि कढ़ी दामिनी ॥ २ ॥

(कविकुलकल्पतरुग्रन्थे)

स्वामि दरसन चंद सिंधु ते निकारि बुन्द मीन हम तपत महीतल में डारी हैं। पल पल वीतत कलप कोटि हरि विन हहरि हहरि हाइ हाइ करि हारी हैं ॥ चिन्तामनि विहँसि विलोकि चितचोर की वै चलनि चितौनि बिसरत ना बिसारी हैं। सदाई अनंद अरविन्द नैन इन्दु मुख कवहीं गोविन्द सुधि करत हमारी हैं ॥ १ ॥ साहेब सुलंकी सिरताज बाबू रुद्रसाह तोसों रन रचत बचत खल कत हैं। काढ़ी करवाल काढ़ी कटत दुवन दल सोनित समुद्र छीर पर छलकत हैं ॥ चिन्तामनि भनत भखत भूतगन मांस मेद गूद

---

१ क्रोध से युक्त। २ बच्चे। ३ हंस के समान मंदगतिवाली।

गीदर औ गीध गलकत हैं। फारे करि-कुंभन में मोती दमकत मानों कारे लाल बादर में तारे झलकत हैं ॥ २ ॥

१८१. चिन्तामणि (२)

आसा बाँधि मन में तमासा यह देखा हम कीजिये भरोसा ज्यों ज्यों त्यों त्यों तन छीजिये। चिन्तामनि मन में विचारि करि देखा हम आपने दिनन की जवूनी मानि लीजिये ॥ मंत्री जानि पूरो अब पूछिहै सुजान तुम्हैं जाई किधौं रहैं कहाँ सोऊ हम कीजिये। दीबे अन-दीबे की फिकिरि मति कीजै आप और जौ न दीजै तौ सिखापन तौ दीजिये ॥ १ ॥

१८२. चूड़ामणि कवि

कैयो भाँति नजरि अजीतसिंह भूपति की चूड़ामनि कहै पाप पुंज को अभाव सी। आनँद को कंद ऐसी तापहर चंद ऐसी तेज में तरनि ऐसी प्रभुता उपाव सी ॥ संभ्रम को संभु ऐसी करम कसौटी ऐसी सरम को सिंधु ऐसी धरम को नाव सी। दीन दया-वारिधि सी दानबेलि-वारिद सी बैरिन को दारिद सी दारिद को दाव सी ॥ १ ॥
भगत के काज करै मेटि मरजाद हू को भीषम-प्रतिज्ञा राखी ऐसो समरथ को। पारथ के सारथ है आपु महाभारथ में ता पै लाज तजि कै सजैया गजरथ को ॥ चूड़ामनि कहै लहै सुख को समूह महा जाको नाम कहे ते कटैया अनरथ को। नील छबिवारो जग-सिंधु को नेवारो सोई मेरो देनवारो है दुलारो दसरथ को ॥ २ ॥
सधना कसाई ब्याध केवट कबीरदास इन के समीप प्रेमरस भीजियतु है। सेना नाऊ नामदेव नानक अजामिल से रैदास चमार सो गनाइ दीजियतु है ॥ चूड़ामनि ऐसे ऐसे पावत परम-धाम जिन ही सो तेरो नाम नाम लीजियतु है। मेरी नहीं लाज तोहिं धरमजहाज कहा राज नीच जाति ही के काज

१ हाथी का मस्तक। २ सूर्य। ३ नाव। ४ रैदास भक्त।

कीजियतु है ॥ ३ ॥ भूपति गुमानसिंह रावरे समान आप गुरुपग ध्यान में न हरिगुनगान में । रन के सयान में न वीरताभिमान में सु जाके जसथान हैं दिसान विदिसान में ॥ चूड़ामनि जान ज्ञान कहाँ लौं बखान करै कान रहैं जाके सदा पुन्यकथा-पान में । गुनपहिचान में न राखो है जहान में न दान में कृपान में न साधु-सनमान में ॥ ४ ॥

१८३. चंदनराय कवि माहिलवासी

(पथिकबोधग्रन्थे)

नाराच छंद

लसै ससोभ एक दंत दंतितुंड[1] सोभई ।
विचित्र चारु चंदभाल देखि चित्त लोभई ॥
मनोसवाचकाय[2] ते समोद कै जपै जदा ।
अनेक भाँति भाँति के गनेशवेस सिद्धिदा ॥ १ ॥

(काव्याभरणग्रन्थे)

दोहा—भ्रमरी गुंजरीकृत[3] तदा, भ्रमरी कवरी भार ।
गौरीपदपंकज दुरित, दूरीकरन विचार ॥ १ ॥

(चंदनसतसईग्रन्थे)

दोहा—सुरी आसुरी किन्नरी, नगी पन्नगी देखि[4] ।
व्रजवनितन के सँग नचे, मनमाना सु विसेखि ॥ १ ॥
वेसरिमोती में झलक, वरन चतुष्ट[5] प्रकार ।
मनु सुरगुरु भृगु भूमिसुत, सनिसमेत नृपद्वार ॥ २ ॥
ललित लाल मालागरे, सखियन दई सँवारि ।
निर्धूमागिनि मंडले, साधैं तप त्रिपुरारि ॥ ३ ॥
गुही ललितगुन लाल लट, मोतिन लर सुखदेनि ।

१ हाथी का मुख । २ मन, वाणी और काया से । ३ गूँजरहा । ४ देवतों की स्त्रियाँ । ५ चार प्रकार ।

सविता दुजपति मधि मनौ, धसी सुआइ त्रिवेनि ॥ ४ ॥
ताहि विलोकति मुकुर लै, आरस सारस नैन ।
हरिसोभा दरसै दुरै, कहि न सकै मुख बैन ॥ ५ ॥
बाल कालिह को आजु लौं, नहिं सम्हरत तन देह ।
तुम्हरी बंक बिलोक में, बिधु है बीस बिसेह ॥ ६ ॥

(केशरीप्रकाश)

कवित्त । अमल कमल आगौं चंदन सुकवि आगे कमलाकी पाँइन की मृदु अरुनई के । छीनी भई कटि अति निकसि नितंब आये छपि गई छाती बड़े कुच तरुनई के ॥ आनन प्रकास सोम-सूनो सो निहारियत सौतिन को जोम गयो भई करुनई के । गई लरिकई दबि घुमड़े मनोजओज उमड़े परत अंग अंग तरुनई के॥ १॥
आजु गई हुती हौं जमुनाजल लेन धरे सिर गागरि खाली ।
देख्यो जु कौतुक[1] मैं तट जाइ कै सो अब तोसों कहौं सुनु आली॥
गुंफित पल्लव फूलन की बनमाल हिये यों लसै बनमाली ।
नील पहार के मध्य बिहार करै मिलि कै मनौ हंस सु ब्याली[2]॥२॥
जाको देखि दोखि करि बाढ़ै चित चाउ हरि आओ नेकु पाँइ धरि देखौ बाल भाग सी । कोमल कमल अरु चरन बिराजत हैं लचकै लचन लोनी लंक सोने-ताग सी ॥ श्रीफलौं[3] से सुंदर करेरे कुच चंदन हैं खंजन त्यों नैन ऐन बेनी सीस नाग सी । कौन कौन बात की बड़ाई सुखदौन करौं दीपति अँधेरे भौन चमकै चिराग सी ॥ ३ ॥

(कल्लोलतरंगिणी)

दोहा—क्वाँर सुदी दसमी सु तिथि, बिजै चंद सुभ बार ।
संवत ठारह सौ जहाँ, छालिस ग्रंथवतार ॥ १ ॥
अंबुज अंकैं[4] प्रफुल्लित जुग्म निसंक महातम को तट धारै ।

१ तमाशा । २ नागिन । ३ बेल के फल । ४ गोद में ।

काम सरासन सोभित ता महँ हीन कलंक कला सब सारै॥
तारासमूह लसै तिहिं संगन भोग कहूँ मन मोद सँचारै।
को यह चंद बिना निसि चन्दन जोन्ह सो जोति के जाल बगारै॥१॥

(शृंगारसार)

छिति परजंक में निसंक अंक सोभित है अम्बर[1]ई अम्बर[2] बिराजत अनूपा को। बलयौ[3] जलधिजाल कज्जल जलदमाल बिपिन बिसाल चै बिलास थल रूपा को॥ कलाधर तरनि तरौना पौन बीजन है पावक को जावक जरबदार दूँवा[4] को। चंदन नखतभार मोतिन के हार सब विस्वतत्त्वसार है सिंगार विस्वरूपा को॥ १॥

यह सरवरी[5] सरवरी न निठुर नेकु गई अरवरी सी उगरि भानु भीत मैं। नखत बखत बदछीन भये छिन छिन मोतीमाल चन्दन दुराय जात सीत मैं॥ चंद्र कै कपाट छलछन्द सों अँधेरे भौन गौन को दुरायो जब गायो काम-गीत मैं। रोवौं कहा क्रूर कुकुरा के दुखरा को तौलौं कूकि कै निगोड़े ने जगायो प्रानपीतमै॥ २॥

सुघर छबीले छकि सुरत छबीली साथ करत हरत दुन्द आनँद के नद मैं। हँसि हँसि बिहँसि बिहँसि कसि कसि कोरे कोरे कोरे गातन को धरत बिलद मैं॥ चुम्बन चतुर चारु तारन हजारन के चन्दन किये हैं रद छद रदछद मैं। हद हद मदन मचत कद कद सद गदगद बचन रचत मोद मद मैं॥ ३॥

१८४ चन्द्रसखी

पद

मोरमुकुट कुण्डल झलकन अलकन उर मन मेरो जु हरो।
मुरलीधुनि स्रवनन सुनि सजनी कामधाम सब को बिसरो॥
काहे को लोकलाज आवै सखि काहू को काहू से काज सरो।
चंदसखी सोई बड़भागिनि बालकृष्ण प्रभु बारो बरो॥ १॥

---

१ अंबरी रंग का। २ वस्त्र। ३ करधनी। ४ दोनों पैरों का। ५ रात।

१८५. चिरंजीवगोसाईं
(भारत भाषा)

छप्पै

बैसवार सुभ देस मनो रतनाकर सागर।
सुरगुरुसम कैवि लसैं जहाँ बहु गुन के आगर॥
तहाँ गोसाईंखेर सबै गोस्वामिन को घर।
रामनाथ तहँ वैद्य जाहि जाहिर सब भू पर॥
तिनके सुबंस प्रकट्यो सुकवि नाम चिरंजूलाल कहि।
सुभ भारत को भाषा करत सब पुरान को सार लहि॥ १॥

१८६. चेतनचन्द कवि
(अश्वविनोदी)

दोहा—सम्बत सोरह सौ अधिक, चार चौगुने जान।
ग्रन्थ कह्यो कुसलेस हित, रच्छक श्रीभगवान॥ १॥
श्रीमहराजधिराज गुरु, सेंगर बंस नरेस।
गुनगाँहक गुनिजनन के, जगत विदित कुसलेस॥ २॥
जाके नाम प्रताप को, चाहत जगत उदोत।
नर नारी सुख मुख कहैं, कुसल कुसल कुसगोत॥ ३॥
बाजी सों राजी रहै, ताजी सुभट समर्थ।
रन सूरे पूरे पुरुष, लहै कामना अर्थ॥ ४॥

१८७. चतुरसिंह राना

काहे को तू घर छोड़ा काहे को घरनि छोड़ी काहे को तू इज्जति खोई दरवेस बाने की। काहे को तू नंगा हुआ काहे को बिभूति लाई किन रे सीख दई तुझे जंगल के जाने की॥ आदति को छोड़ि देता परेसान मति होता लिखि सुनि लेता एक चतुरसिंह

---

१ बृहस्पति २ शुक्र और कवि।

राने की। गोसा जाइ एक लेता खाने को खुदाइ देता जो पै फिकिर ना मिटी रे फकीर खाने-दाने की ॥ १ ॥

१८८. चैनराय कवि

साजि कै सिंगार हार जाल गजमोतिन के सुन्दरि छबीली छवि जैसे कछु रति है न। मन के मनोरथ के रथ पै गमन करि पहुँची निकुंज जहाँ है न नन्दनन्द ऐन ॥ चैनराय वाके उर मैन के मरोरा उठे मीन ज्यों बिना ही नीर लाज ते न बोलै बैन। फूलत गुलाब सी गई थीं पिय पास अब लागो चमकावन[1] गुलाब चुटकी सी दैन ॥ १ ॥

१८९. चतुर कवि

कैधौं मित्रे मित्र मैं बसाई है किरन ताते फूल्योई रहत अनुमान यह पायो है। कैधौं ससिमण्डल में झाँई उडुमण्डल[3] की कैधौं हासरस निज नगर बसायो है ॥ दसन की पाँति कुन्दकलिन की भाँति आछी सोहत है गति गन कोविदन गायो है। मानहुँ विरंचि तेरी बानी को चतुर रागी दोलर कै मोतिन को हार पहिरायो है ॥ १ ॥

१९०. चतुरविहारी कवि

चतुरविहारी पै मिलन आई बाला साथ माँगत है आजु कछु हम पै देवाइये। गोद लेहु फूल देहु नीके पहिराय मोती पानन की पातरी हुतासन[4] लै आइये ॥ ऊँचे से अवास कै झरोखे चढ़ि बैठिये जू सेज स्याम चलिये सु रतिपति ध्याइये। ग्वाल समुझाइबे को उत्तर जु दीन्हे एक उकुति विसेष भाँति वारी नहिं पाइये ॥ १ ॥

१९१. चतुरभुज कवि

कबहूँ सुचि दीपकली सी लगै कबहूँ बर चम्पकमाल नवीनी।
भौंहन में सब सौंह करै पुनि नैनन खंजन की छवि छीनी ॥

---

१ विद्रूप करने। २ सूर्य। ३ नक्षत्रमंडल। ४ आग।

ओठ निछावर विद्रुम है री चतुर्भुज या उपमा लखि लीनी।
केसर की रुचि कंचन रंग सिंगार के रूप की मंजरी कीनी ॥ १ ॥

१६२. चंडीदत्त कवि

विरह बिहारी के विकल बिलखत बाल बौरी सी लगति दुख अतिसै मलान की। चंडीदत्त आहि कै धरै है पग इत उत झूमिकै गिरी है ज्यों धरी है देह आन की ॥ साँस ना भरत पै सिथिल सी दिखाई देत होनी ना मिटाये मिटै विधि बलवान की। अलर-लपेटी कालिंद कुंजन में भेटी आजु धूरि में धुरेटी लेटी बेटी वृषभान की ॥ १ ॥

१६३. चरणदास ब्राह्मण पण्डितपुरवाले
(ज्ञानस्वरोदय)

दोहा—चारि वेद को भेद है, गीता को है जीव।
चरनदास लखु आप में, तोमें तेरा पीव ॥ १ ॥
सब जोगन को जोग है, सर्व ज्ञान को ज्ञान ॥
सर्व सिद्धि की सिद्धि है, तत्त्व स्वरन को ध्यान ॥ २ ॥

१६४. चतुरभुजदास

पद

प्रानपति विहरत जमुना कूले।
लुब्ध मकरंद के बस भये भ्रमर जे रवि उदय देखि मानो कमल फूले ॥
करत गुंजार मुरली लैकै साँवरो ब्रजबधू सुनत तन-सुधि जु भूले।
चतुर्भुजदास जमुना प्रेमसिंधु में लाल गिरिधरन अब हरषि झूले ॥ १ ॥

१६५. चोवा कवि (हरिप्रसाद बंदीजन डलमऊवाले)

पालत ये निगमागम[१] सेतु अनीत कै पीतन दंडन हारे।
धर्मधुरंधर दानिसिरोमनि वैरिन के मद खंडनहारे ॥

---

१ वेद और शास्त्र।

सुद्ध मनोकुल कीरति मंजु दसौ दिसि देसन मंडन हारे।
धीर वली सिवसिंह नरेस उदंड दोऊ भुज दंड तिहारे॥ १॥

१६६. छत्तन कवि

छप्पै

मधु पताल मोती मराल मृगराज व्याल मृग।
भृकुटि उरज रद चलन लंक वेनी विसाल दृग॥
गुंजत कंचन विमल तरुन सिसु स्याम विभुंकिय।
नलिन न विय गजगौन छुधित क्रुद्धित विछोह तिय॥
नरवर अछिद्र अनवेध सर चकित मलै चहुँधा फिरै।
कहि छत्तन छवि स्यामा निरखि क्यों न लाल पाँयन परै॥१॥

१६७. छत्रसाल राजा पन्ना के

सुदामा तन हेर्‍यो तव रंकहू तें राव कीन्हो विदुर तन हेर्‍यो तव राजा कियो चेरे ते। कूवरी तन हेर्‍यो तव सुन्दर स्वरूप दीन्हो द्रौपदी तन हेर्‍यो तव चीर वढ़्यो टेरे ते॥ कहै छत्रसाल प्रहलाद की प्रतिज्ञा राखी हरनाकसिपु मार्‍यो है नेक नजरि फेरे ते। एरे अभिमानी गुरु ज्ञानी भये कहा होत नामी नर होत गरुड़गामी के हेरे ते॥ १॥

१६८. छत्रपति कवि

मोरपखा ससि सीस धरे स्रुति[2] में मकराकृत-कुंडल-धारी।
काछ कछे पट पीत मनोहर कोटि मनोजन की छवि वारी॥
छत्रपती भनि लै मुरली कर आइ गये तहँ कुंजविहारी।
देखतही चखलाल के वाल प्रवाल की माल गरे विच डारी॥ १॥

१६६. छितिपाल राजा माधवसिंह अमेठी

(मनोजलतिकाग्रन्थे)

कूकि उठीं कोकिलान गूँजि उठीं भौंरभीर डोलि उठे सौरभ[3]

---

१ झुके। २ कान। ३ सुगंधित।

समीर सरसावने । फूलि उठीं लतिका लवंगन की लोनी लोनीं झूलि उठीं डालियाँ कदंब सुख पावने ॥ चहकि चकोर उठे कीर[1] करि सोर उठे टेरि उठीं सारिका विनोद उपजावने । चटकि गुलाब उठे लटकि सरोजपुंज खटकि मराल ऋतुराज सुनि आवने ॥ १ ॥

(देवीचरित्रसरोजग्रन्थे)

दनुज[2] दराज बल सुनि सुनि हालै छलबल की नकल होत नकल न कल भौन । सोई सुनि सु रन सुरन कैसी जाति लागै कसर न एक अंग आवत अनोखी तौन ॥ याते छितिपाल कविताई की न चाल चलैं भूलि जात बुद्धि बल कैसो सब जाल जौन । अकथ कहानी जानी जानी जुगयो न याते मति बिलखानी बानी बानी की बखानै कौन ॥ १ ॥

(त्रिदीपग्रन्थे)

दोहा—बिधि नारद सारद हरी, भृंगी ऋषिवर धाम ।
वामदेव मन खाम करि, वाम वाम के काम ॥ १ ॥

कवित्त । ग्रन्थ ज्ञान ध्यान बानी मधुर उचार दान विद्या के बिधान मान चहत घनो वरी । सुजस बढ़ावै भूरि भावते महीपन में तप की लता से बेलि सुकृत महा फरी ॥ ऐसे छितिपाल कबि कोविद बिपति सहै राजा न प्रवीन जानो काहू मति कै छरी । रतनलरी को मोल घटि करि भाखै ताको छोहरी बिचारि कहैं जौहरीन सौ हरी ॥ २ ॥

बरवै

कटि कुस उच कुच मृग दग करि तिय गान ।
धन्य पुरुष जा उर अस लगत न बान ॥ ३ ॥
कमल बिबेक बिकासत तब लौं मंद ।
जब लौं नयनन देखत तिय मुख चंद ॥ ४ ॥

---

१ तोते । २ दैत्य ।

कवित्त। छितिपाल न कौन तके जिन को कुचकुंभन घोर घटा न करै। विधि वेद वखानत कौन जिन्है सुनि तानत भाम रटा न करै॥ सुर सेवक को फुर है जिनके उर काम कृसान मटा न करै। अस को जुत अच्छर है जिनको तिय मारि कटाच्छ कटा न करै॥ ५॥

जाहि कहैं सब वेद पुकारि ऋषीसुर होहि धरे मद ऊरन।
जा करनी मन माहिं विचारि सदासिव आपु चवात धतूरन॥
वंदत है छितिपाल तिन्हैं सब काल सबै दिसि ते दुरि दूरन।
पावक में जल में महि में ससि में रवि में सबमें परिपूरन॥ ६॥

बरवै

पके केस मुख रद[1] विन सिकुरे अंग।
गये अनंग न तृष्णा तजी तरंग॥ ७॥
भूमि सयन फल भोजन वलकल चीर।
को धनपति के आगे रहै अधीर॥ ८॥

२००. छेम कवि (१)

ऊँचो कर करै ताहि ऊँचो करतार करै ऊनी[2] मन आनै दूनी होत हरकति है। ज्यों ज्यों धन धरै सैंतै त्यों त्यों विधि खरो खर्चै लाख भाँति धरै कोटि भाँति सरकति है॥ दौलति दुनी में थिर काहू के न रही छेम पाछे नेकनामी वदनामी खरकति है। राजा होइ राइ होइ साह उमराइ होइ जैसी होति नेति[3] तैसी होति बरकति है॥ १॥

रंग है आनँद को सहजै निहचै करि जानौ कि खात न भंग है।
भंग है दारिद को तेहि के छन में जिन काम को कीन्हों अनंग है॥
नंग है अंग विभूति सों हेतु औ जोग सों नेतु कँपर्द[4] पिसंग[5] है।
संग है अंबिका छेम सदा औ जटा में विराजत गंग-तरंग है॥ २॥

१ दाँत। २ कमी। ३ नियत। ४ जटाजूट। ५ मटमैले रंग का।

२०१. छेमकरण ब्राह्मण (२)

ज्ञानी उपासक ध्यानी बड़े नित नेम निबाहि सुदान दये हैं।
जानै सुनै गुन ज्ञानै गुनै गुनगाहक साधक सिद्ध भये हैं॥
जोग विचार विराग हैं छेम सु केतिक तीरथ पंथ गये हैं।
संत पुरातन हैं तो भले पर जौलौं नये नहिं तौलौं नये हैं॥ १॥
अंबुज कंज से सोहत हैं अरु कंचन कुंभ थपे से थये हैं।
गोरे खरे गदकारे महा बटपारे लसे अरु मैन छये हैं॥
ऊँचे उजागर नागर हैं अरु पीय के चित्त के मित्त भये हैं।
हैं तो नये कुच ये सजनी पर जौलौं नये नहिं तौलौं नये हैं॥ २॥

२०२. छबीले कवि

पद

मुकुट माथे धरे खौर चंदन करे माल-मुक्ता गरे कृष्ण हेरे।
पीतपट कटि कसे कान कुंडल लसे निसि दिना उर बसे प्रान मेरे॥
मुरलिका मोहनी कर कमल सोहनी लै कनक दोहनी खरिक नेरे।
लाल लोचन बने ललित रस में सने मैन से अनगने ग्वाल टेरे॥
किंकिनी काछनी देत सोभा घनी देखि कौस्तुभ मनी सुर बकेरे।
प्रभु छबीलो रँगीलो रसीलो अली सो लगन की मगन में बसेरे॥ १॥

२०३. छैल कवि

जमुना के तीर कौन पावत नहान चीर चुप ही चोराइ लेइ रूखनि धरत हौ। कहै कबि छैल केते जानत हौ छंदबंद संद कहा कहौ नंदहू को निदरत हौ॥ हम वै न होहिं एती बात की सहनवारी बिना फल पाये तुम कैसे गुदरत हौ। पाइ खोरि भीरी चद छोरि लेहिं बीरी अब इहाँ कारी-पीरी आँखैं कौन पै करत हौ॥ १॥

२०४. छीत कवि (१)

तारे भये कारे तेरे नैना भये रतनारे मोती भये सीरे तू न सीरी[१]

---

१ लाल। २ ठंडी।

अजहूँ भई। छीत कहै पीतमै चकैया मिली तू न मिली मैया तरु छूटीं तेरी टेंव ना छुटी दई॥ अरुनई नई तेरी अरुनई नई भई चहचही बोली आली तू न बोली एवई। मंद-छवि भये चंद फूले अरविंदवृंद गई री विभावरी[१] न रिस रावरी गई॥ १॥

२०५. छीत स्वामी (२) गोकुलस्थ

पद

रूपस्वरूप श्रीविट्ठलराय।
बेदविदित पूरन पुरुषोत्तम श्रीवल्लभ गृह प्रकटे आय॥
लटपटी पाग महारस भीने अंति सुंदर मन सहज सुभाय।
छीतस्वामि गिरिधरन श्रीविट्ठल अगनित महिमा कही न जाय॥ १॥

२०६. छेमकरन कवि ब्राह्मण धनौलीवाले

नरिन्द छन्द

भै जिवनार तयार तरह ते रघुवर करत वियारी।
अनुज समेत मनुजपति-मन्दिर सुर-नर-मुनि-मन-हारी॥
बैठि बरासन[२] आसन पासन बासन की अधिकारी।
गेंडुआ थार कटोर कटोरी पंचपात्र अरु झारी॥ १॥

२०७. छेदीराम कवि

(कविनेह पिंगल)

दोहा—कमलज कमलज[३] कमलजा, जाये तिय तिय[४] वंद।
गोज गोज कह गोज भव, करु भव करु भव छंद॥ १॥
पद हिय सिय पिय पिय पिया, मंगल मंगलगेह।
तामें रत छेदी रहत, कविहित कृत कविनेह॥ २॥
मकर महीना पच्छ सित, संवत सर हर केह।
जुग ग्रह वसुजिव कुज दिवस, जन्म लियो कविनेह॥ ३॥

२०८. छेम कवि बंदीजन डलमऊवाले

थरनि थरनि थरहरत डरनि रथ तरनि पलट्टेहु।

---

१ रात्रि। २ श्रेष्ठ आसन। ३ कमल से पैदा। ४ ब्रह्मा। ५ लक्ष्मी।

धूमधाम भुवलोक सोक सुरपति अतिपट्टेहु ॥
गवन रहित सम्मीर नीर नदनदी निघट्टेहु ।
करिनिकर डिकरि चिकरि कहरि खेचर पर चट्टेहु ॥
हिमगिरि सुमेर कैलास डिगि जब हहरि हहरि संकरहस्यो ।
छेम कोपि हजरतअली जब जुल्फकार कम्मर कस्यो ॥ १ ॥

२०६. जगतसिंह बिसेन देउतवाले
(पिंगल)

मोरपखानि बनो सिर मौर लसै अति केसरि भाल अनूप ।
छुटे झलकैं स्रुति कुंडल मोतिन माल गरे लखिये सुरभूप ॥
पीतपटौ तन अंगद बाहु कलानिधि सों मुख है अनुरूप ।
सुबेनु बजावत आवत साँझ गये गड़ि नैनन लीन न रूप ॥ १ ॥
सीस लसै ससि सी नखरेख खरी उपटी उर पै नगमालै ।
पेंच खुले पगरी के बने जनु गंग-तरंग बनी छविजालै ॥
जागत रैनिहु के अलसाय कियो विषपान रहे दृग लालै ।
देखहु अंग सखी हरि को हेर को धरि आवत रूप रसालै ॥ २ ॥
तन सोहत नील दुकूल गरे अरु त्यों मनिमाल विराजत सुंदर ।
बिबि कुंडल कानन हीरा जरे अरु फैलि रहे कच आनन ऊपर ॥
नवरत्न भुजान भरी छविपुंज बने कल कंकन कंचन के कर ।
बिन अंजन रंजन कंजन-भंजन खंजन-गंजन नैन मनोहर ॥ ३ ॥

(साहित्यसुधानिधिग्रन्थे)

बरवै

श्री सरजू के उत्तर गोंड़ा ग्राम ।
तेहि पुर बसत कबिनगन आठौ जाम ॥ १ ॥
तिन महँ एक अल्प कवि अतिमतिमंद ।
जगतसिंह सो बरनत बरवै छंद ॥ २ ॥

---

१ उभरी । २ शिव । ३ वस्त्र।

सासु एक सो आँधरि पिय परदेस ।
बिन कपाट घर सूनो रैनि अँदेस ॥ ३ ॥
गरजत सिंह सखि इहि बन में आय ।
रेवाकूल सुन्यो है स्रवन बनाय ॥ ४ ॥
स्वस्थ अचल पुरइनि पै बक ठहरात ।
जनु पन्नाभाजन में दर दरसात ॥ ५ ॥
बिद्या विविध विराजत सील न हीन ।
नृप तुव सभा बढ़त छवि खल बिन कीन ॥ ६ ॥
बिरति जहाँ द्वादस पै पुनि मुनि अंत ।
रीति यहै बरवै की कहै अनंत ॥ ७ ॥

कवित्त । हालि हालि हुलसि हुलसि हँसि हँसि देखै बदन बतीसी मीसी दीसी दिनराति है । जामा पायजामा सब सामा की चलावै कौन जगत जनानन की सीखी सब घात है ॥ लोक की न लाज परलोक को करै न काज ठाकुर कहाइ कहा चोरी उतपात है । गनिका ज्यों डोली पर बैठत खटोली पर चालु पर चोली पर बोली पर मात है ॥ ८ ॥

२१०. जवाहिर भाट (१) बिलग्रामी

गोपी अन्हाइ चलीं ग्रह को रहे गोप सबै तकि श्रीनँदनंदहि ।
मारग में चलि राधे कह्यो गिरी बेसरि मेरी कियो छलछंदहि ॥
ढूँढ़न को गई लौटि जवाहिर जानै नहीं कछु या फरफंदहि ।
सीस नवाइ कै हेरै जले तले हेरै लगी हँसि श्रीब्रजचंदहि ॥ १ ॥

२११. जवाहिर भाट (२) श्रीनगर बुंदेलखण्डी

चंचल तुरंग मन रथ अभिलाष चढ़ि चलहु सधीर गज सजि

१ विश्राम । २ सात पर ।

सब साज सों। कहत जवाहिर सनेह की कवच कसि सोच पोच नाखि हठ रोपै पग लाज सों॥ नूपुर नगारे आनि पहरैं निसान भान उदै लौं भिरौंही कुच भटन दराज सों। धारि पल ढाल करवाल कै कटाच्छन को रतिरन जीतौ आजु वीर ब्रजराज सों॥ १॥
कंचन भूमि के बीच विराजत मानौ अभूत जराय जरो है। स्याम समूल कलिंदजाकूल सु पत्र सुपेद जु फूल हरो है॥ आजुलौं ऐसो न देख्यो सुन्यो ब्रज में जिहि आनि प्रकास करो है। कौतुक एक बिलोकिये आनि कै अंब कदंब की डार फरो है॥ २॥

२१२. जगन कवि

अंग अंग औघट न घाट है बनाइबे को लालन को तृषा है अधर-रस-पान की।भौंह की मरोरनि में भौंर से परत जात त्यौरी की तरंग से निठुरता निदान की॥ जगन गहत सौं न उतरन थाह किहूँ ऐसी गरबीली है हठीली बृषभान की। रिस के प्रवाह रस-कूलन बिदारे जात नदी सी उमड़ि चली मानिनी के मान की॥ १॥

२१३. जनकेश भाट मऊ बुन्देलखण्डी

सरद के इंदु सम आनन अमंद अति वपु अरबिंद पै मलिंद मन नाह को। दृगन दराज छबि छाज छकि रहौ छैल छाजत छटान छेम छिति पर छाह को॥ कहै जनकेस कवि जाहिर जहान बीच जालिम जरूर जौन गहत गुनाह को। मनमथमंदिर पुरंदर तिया ते सुचि सुंदर सरूप सो न करै गलबाँह को॥ १॥ राजत विभूतिमान गंगाजल-प्रिय सदा सोहत नगन भाव भावत गनेस को। राखै द्विजराज सान दान में प्रसिद्ध बड़े जाँचिबे को तामें मन चाहै सब देस को॥ आनन के आगे आनि गावत अलीसगन पावत दरस सबै बरनौ सुदेस को। कीनो है कवित्त हम राजा रतनेसजू को करि को कहत कोऊ कहत गनेस को॥ २॥

२१४. युगुलकिशोर कवि (१)

राधा ठकुरानी पास बानी लिये पानी खरी आस पास चेरी चौंर ढारैं देवदार सी। अंगराग अंगन लगाइबे को ल्याई रति अंबर अमल लिये फूलन के हार सी॥ जुगुलकिसोर कहै नन्द के किसोर जहाँ जोरे कर जोहै जोति जोबन की चार सी। मोद के बढ़ाइबे को हर को हरा है लिये एक हाथ फूल-गेंद एक हाथ आरसी॥ १॥

२१५. राजा युगुलकिशोर भट्ट (२) कैथलवासी
(अलंकारनिधिग्रंथे)

दोहा—ब्रह्मभट्ट हौं जाति मैं, निपट अधीन निदान।
राजा-पद मोको दियो, महमदसाह सुजान॥ १॥

तेरो मुख चन्दसम जोति सों उजागर है तेरे नैन सम तेरे नैन लहियतु है। कमल से कर लाल कर से कमल सोहैं भौंह-सी कमान नैन बान कहियतु है॥ देखत नखन कंज लोचन सरोज अलि मृगन उरंग काम हय चहियतु है। मुकता सहित बैन नखतनजुत चन्द मानौं ससि देखि मुख-सुधि गहियतु है॥ १॥
नैन नहीं कमल हैं जानि कै चकैं चकोर चन्द चाहि रहै तेरो मुख है कि चन्द है। सोहत बिराजमान माँग टीको ससि सम राति माँह रवि लखे बाढ़त अनन्द है॥ ओसभरे कंज पर अलि मँड़रात देखु चाहत मिलन लोभि सुख रसकन्द है। फूलत कमलनैन कंजनैनी कुंजन में फूले देखु तरु जहाँ भस्यो मकरन्द है॥ २॥
चाँदनी के राजै चन्दमुख छवि करि छाजै सोहत है स्याम और स्यामघन साँझ मैं। धन्य है भ्रमर जो सरोजरस लीबो करै ओठ-रस जोई सोई सुधा इन्दुमाँझ में॥ नैन तौ कमल से पै सरस

१ आनन्द। २ चकित होते हैं।

कटाच्छन सों तीखी चितवनि संग प्यारे लगैं झाँझ में । रूप गुन सुन्दर औ चातुर अनेक भाँति बिनु कोखि, सीरी कब लागै मन बाँझ में ॥ ३ ॥

२१६. जनार्द्दन कवि

जेते छन्द जानत हौ तेते सब जानत हौं नये नये छन्द-बन्द कहाँ लौं बनाइहौ । सुकवि जनारदन बाहिर ना कढ़ौंगी तौ जोरावरी दौरि कहा घर ही में आइहौ ॥ हारि मानि लेहौ तौ बनैगी बात मोहनजू चतुरन आगे चतुराई का चलाइहौ । छल सों छली है तैसे मोहूँ को छलन चाहौ छलन छबीले छाँह छुवन न पाइहौ ॥ १ ॥

२१७. जैनुद्दीनअहमद कवि

ऐसी निसि औसर के बीच में जु आवै कोई तासों को दुरावै दीठि ऐसो को कठोर है । हाथऊ धरैंगे अंक मालऊ भरैंगे हमैं भावै सो करैंगे तुम्हैं यामें का मरोर है ॥ जैनदीन अहमद पीठि है तिहारी तो पै राखो यहि डर जो चलै न कछु जोर है । पीठि है तिहारी पै हमारी है हमारे जान काहे ते कि रूठे में हमारी होत ओर है ॥ १ ॥

२१८. जयदेव (१)कम्पिलानिवासी

कौन बुधि दई निरदई ऐसे दई उन्हैं फाजिलअली सों जाइ जंग जुरो रन में । केहरि के सनमुख जयदेव करी कहा करी तैसी पाई पिय खोइ गये खन में ॥ साँपन सकाती पग डाढ़े भुव ताती वै तो पीटि पीटि छाती पछिताती सो वे मन में । रह्यो नाहिं गोती मिलि बैरिबधू ओती करि कन्दर करोती ऐसी रोती जाती बन में ॥१॥

२१९. जयदेव कवि (२)

विद्या बिन द्विज औ बगीचा बिन आमन को पानी बिन सा-

---

१ गुस्से में । २ हाथी ।

बन सुहावन न जानी है। राजा बिन राजकाज राजनीति सोचे बिन पुन्य की बसीठी कहौ कैसे धौं बखानी है॥ कहै जयदेव बिन हित को हितू है जैसे साधु बिन संगति कलंक की निसानी है। पानी बिन सर जैसे दान बिन कर जैसे सील बिन नर जैसे मोती बिन पानी है॥ १॥

२२०. जैतराम कवि

रहे राम रौना न श्रीकृष्ण बौना सबै जन्म लै लै कहाँ धौं सिराने। रहे पंडवा कौरवा जादवा ना कहाँ धौं गये ते नहीं जात जाने॥ कहै जैतरामै अनेकै गनै को लखौ रे सबै ये जिमी काल साने। धरा के किनारे यहै जो सुनो रे फरे ते झरे औ बरे ते बुताने॥ १॥

२२१. जानकीप्रसाद पँवार (१)

(नीतिविलास)

बन्दऊँ अनन्दकन्द कीरति अमन्द चन्द दरन कुफंद दुन्द घायक कुमति के। सिद्धि-बुद्धिदायक विनायक सकल लोक सोहैं सब लायक औ नायक सुमति के॥ कोमल अमल अति अरुन सरोज ओज लज्जित मनोज लखि दानी सुभ गति के। विघ्नहरन मुदमंगलकरन बारे असरन सरन चरन गनपति के॥

२२२. जानकीप्रसाद (२) कवि

दुसह दराज सीत जोर कै समाज करै अंग को कसाला ताकी बिपति बिदारिये। साहसी समर दानी दया-धर्म-बीर चारो नाम प्रतिपाल जानि पाँचो चित्त धारिये॥ लायक लवनि है न जानकीप्रसाद दूजो बिद्या के निधान जाकी जुगुति बिचारिये। राजा सिरताजसिंह राज-मौज माँगत है तीनौ तुकै आदि एक बरन सँभारिये॥ १॥

१ कवि तीनों चरणों के प्रथम अक्षर बतलाकर दुशाला माँगता है।

२२३. जानकीप्रसाद कवि बनारसी (३)

(रामचन्द्रिकातिलक)

जिन को अवलोकत ही मनरंजन कंजन की रुचि दूरि बहैये ।
मधुपालिन मालिन की दुति सालिन आलिन दासन के मन ठैये ॥
निधि सिद्धि असेस के धाम सदा सुख पूरन पूरन पुन्यन पैये ।
पग बंदन कै गिरिजापति के रघुनंदन राम की कीरति गैये ॥ १ ॥

२२४. जयकृष्ण कवि

(छंदसारपिंगल ग्रन्थे)

संकर छन्द

सारंग दोधक छंद कहिये और मोतीदाम ।
तोटकौ तारलनैन जानहु फिरि भुजंगी नाम ॥
कामिनी मोहन जानिये मैनावली सुन राज ।
परम.निका मीलका सोहै संखनारी थाज ॥
मालती तिलका विमोहा दोहरा गनि आन ।
सोरठा गाहा उगाहा भनि चुल्लिका पहिचान ॥
चौपई और अरिल्ल तोमर देखिये मधुभार ।
अनुकूल हाकलि चित्रपादै औ पवंगम धार ॥
आसावरी पद्धरी कहिये फिरि झुलैया जान ।
संकर त्रिभंगी द्विपदठा मरहठा फेरि बखान ॥
लीलावती उपमावली गीया सु पंडी होय ।
रोला कुँडलिया कुंडली भनि रंगिका गनि सोय ॥
रंगी घनाक्षर दूमला यो मत्तगयंद गनेव ।
करखा बखानौ झूलना जैसे सवैया लेव ॥
छप्पै बतायो फेरि तोटक छंद बावन पाय ।
सबै रूप बखानि ग्रंथन दियो दिव्य दिखाय ॥ ५२ ॥

२२५. जमाल कवि

दोहा—वायस[1] राहु भुजंग हर[2], लिखति बाल ततकाल।
फिरि फिरि मेटत फिरि लिखत, कारन कौन जमाल॥ १॥
आजु अमावस सर्वव्रट, ससि भीतर नँदलाल।
बीचहि परिवा ह्वै रह्यो, कारन कौन जमाल॥ २॥
तृषावन्त भइ कामिनी, गई सरोवर बाल।
सर सूख्यो आनँद भयो, कारन कौन जमाल॥ ३॥
सजि सोरह[3] बारह पहिरि, चढ़ी अटा यक बाल।
उतरी कोयल बोल सुनि, कारन कौन जमाल॥ ४॥
मालिनि बेंचत कमलको, काहे वदन छपाइ।
या को अचरज कौन है, कहु जमाल समुझाइ॥ ५॥
नयन किलकिला पंखपल, थिरकि तरुनि तन ताल।
निरखि परे बिबि मीन तकि, फिरि निकसे न जमाल॥ ६॥
मन के मनसूवा सबै, मनहीं माहिं बिलाहिं।
ज्यों पानी के बुलबुला, उठि उठि बुझि बुझि जाहिं॥ ७॥

२२६. राजा यशवन्तसिंह बघेले राजा तिरवा

(शृंगारशिरोमणिग्रन्थे)

लै सपने अपने मन की दुलही उलही छवि भाग-भरी सी।
अंक निसंक सो लै परयंक लला मुख चूमि सु चारु धरी सी॥
यों लपटी चपटी हिय सों जसवंत बिसाल प्रसून[4]-छरी सी।
नैनन के खुलतै वह मूरति पास परी उड़ि जात परी सी॥ १॥
छूटी लटैं लटकैं मुख पै जलबिंदु लसैं मनो पोहत मोती।
बोलत बोल तमोल बिराजत राजत हैं नथ में ससि-गोती॥
ओज सरोज उरोज कली सु भली त्रिबली-तट आनँद ओती।

१. कौआ। २. शिव। ३. सोलह शृंगार। ४. फूलों की छड़ी।

जोरति नेह मरोरति भौंह सु चोरति चित्त निचोरति धोती ॥ २॥
हेरो तौ हेरो न जात भट्ट हरि हेरे बिना नहिं लागत नीको।
नैन जुरैं न मुरैं न भली विधि कौतुक का सों कहौं यह जी को॥
को समुझाइ कहै जसवंत हौं ताको करौं बलि पाँरि जनी को।
जीव कली कहे लाज तुरंग कहौं कहिबो करौ लाज कै जी को ॥ ३॥

लाँबी लाँबी लटैं लोनी लटकत लंक लौं लौं लोक लागि लोचन उड़त झकझोरि झोरि। छूटि गये सकल सिंगार हार टूटि गये लूटि गये लपटि भुअंग अंग कोरि कोरि ॥ सकुचि सयानी अँगरानी प्रानप्यारी बाल प्यारे जसवंत के निकट तन तोरि तोरि। तोरि तोरि चित हित जोरि जोरि लाड़िले सों छोरि छोरि कंचुकी जम्हात मुख मोरि मोरि ॥ ४ ॥

(शालिहोत्रग्रन्थे)

जंघे जमाय दुवौ घुटुवान लौं पींडुरी ढीली दुहूँ दिसि चालै।
कानन मध्य में दीठि रहै थिरता करि कै कटि नेकु न हालै॥
जानै तुरंगम के मन की गति चाहिये ता विधि चाबुक घालै।
सोई सवार कहै जसवंत बचाये चलै जो तमाल दिवालै ॥ १ ॥

(भाषाभूषणग्रन्थे)

दोहा—विघनहरन तुम हौ सदा, गनपति होहु सहाइ।
विनती कर जोरे करौं, दीजै ग्रन्थ बनाइ॥

२२७. जीवनाथ भाट नवलगंजवासी

(वसंतपचीसी)

दोहा—अली मान तजि सेइये, हिलिमिलि प्यारे कंत।
सब जग मनभायो भयो, हाकिम नयो बसंत ॥ १ ॥

कवित्त—मैन महराज करि दीन्हो है बिहाल हाल तेई तरु नाथ कुलदल जैतवार है। कोकिल है कानोगोह चौधरी चवाई चंदा भौंरन बिसंदा केते पैयत न पार है ॥ टेसू कोतवाल जाको

रूप है अराल काजी पौन इनसाफ़ है सुगन्ध को अधार है । आली मिलु वालम अजौं न तोहिं मालम सु आयो जंग जालम बसंत फौजदार है ॥ १ ॥

२२८. जीवन कवि (१)

छैल ब्रजचंद एतो छल करि रहे गैल राधिका नवेली बनी चंपे की कली नई । वाही खोरि[1] आवै हरि हरखि निरखि फूले आजु भेंट ह्वै है कवि जीवन भली भई ॥ ताही मग आवत अचानक ही परी दीठि मुरि मुसक्याइ उन दाहिनी गली लई । कहि रहे कान्ह नेक ठाढ़ी होहु सुने जाहु सुनी है जू सूनी है जू कहति चली गई ॥ १ ॥

२२९. जय कवि भाट लखनऊ के

जब तक है परदा ख़्वाब ग़फ़लत का आँखों पर तभी तक लज़्ज़त बादशाही औ वज़ीरी है । किसी वक़्त चौंक जावै भूलि परदे को उठावै रंग लाल नजर आवै होत रोशन दिल भँभीरी है ॥ जय कहत जहान बीच निगह सान फीकी कछु भावै नहिं नीकी धुनि नौबत नफीरी है । तब आप हुआ मीरी क्या पश्म है अमीरी जिन्हैं मुसाहबी न भावै तिन्हैं साहिबी फ़क़ीरी है ॥ १ ॥

२३०. युगराज कवि

सरस लगाई लाख लाइ लाइ पीरन सों ताइ ताइ नेह सों जतन करि जोरा मैं । एक एक चूरी चतुराई की बनाइ करि भली भाँति बहुरि गहीरे रंग बोरा मैं ॥ लीजिये पहिरि आपु चोप सों बलाइ लेउँ लागिहै निपट जुगराज अंग गोरा मैं । जाहि मनभाई सब चाहती लुगाई सोई लाई हौं तिहारे हेतु आछे लाल जोरा मैं ॥ १ ॥

---

[1] गली ।

२३१. जगदेव कवि

बैस तरुनाई रूप राजै अरुनाई तैसी सुन्दरता पाई सोभा सची सम सचकी। रति तो रती सी रंभा लंक को न संक जाके कहै जगदेवजू रहै सो देखि भँचकी[1] ॥ सावन सुहाए मनभावन के संग पटपटुली[2] पै पग दै कै लेन लागी मचकी। झूला को झुकाय दई झोंक एकवारन सो वारन के भार कैयो बार लंक लचकी ॥ १ ॥

२३२. जगन्नाथ कवि (१)

भव-भय-खेदन की बेदन मिटाइबे को हरि चारो वेदन को सार काढ़ि लीता है। महामोहभीता भये त्रिगुनअतीता जाके सुनत ही होत ब्रह्मभान को उजीता है ॥ कहै जगन्नाथ पाइ निजरूपभीता होत भूत-भ्रम रीता लागै ज्ञान को पलीता है। वहै जग जीता करै कुलन पुनीता मोख प्रीति उपजीता ते अधीता जिन गीता है ॥ १ ॥

२३३. जगन्नाथ (२) अवस्थी सुमेरपुरवाले

तार्‌यो है निषाद पहलाद को उबार्‌यो सुद्ध सादर अहल्या करी पादरज लायकै। कहै जगन्नाथ हाथ धरि गिरि ब्रजनाथ पाल्यो ब्रज पथ तैं पुरंदरै लजाय कै ॥ बार न करी है नेक वारनै[3] के तारन मैं कारन कहा है जगतारन कहाय कै। जोवँत[4] इतै हौ नहीं सोवत किते हौ प्रभु ऐसही वितैहौ की चितैहौ चित्त लाय कै ॥ १ ॥

२३४. जगनन्द कवि

जौ लौं तेरी आवै[5] तौ लौं हरि की शरन आव करि ले उपाव कृष्णनाम में अटकि जा। बन्यो तेरो दाँव चितचाव अति भाव ही सों गोबर्धननाथ-रूप-माधुरी गटकि जा ॥ ममता बहायँ[6] काम क्रोध को

१ भौचक्की। २ पढ़ी। ३ हाथी। ४ देखते। ५ आयु। ६ दूर कर।

दहाँय प्रेमपंथ ही में आय दुखदुन्द को पटकि जा । कहै जगनन्द काहे होत मतिमंद अब छाँड़ि सब फंद ब्रजभूमि को सटकि जा ॥ १ ॥

२३५ जोइसी कवि

रुचि पाँइ झवाँइ दई मिहँदी जिहि को रँग होत मनो नग है ।
अब ऐसे में स्याम बुलावैं सखी कहि क्यों चलौं पंके भयो मग है ॥
अधराति अँधेरी न सूझै कछू भनि जोइसी दूतिन को सँग है ।
अब जाउँ तौ जात धुयो रँग है रँग राखौं तौ जात सबै रँग है ॥ १ ॥

२३६. जीवन कवि (२)

सटकी सभा की मति लटकी कुल की गति हटकी न काहू सब ही की जीह-हटकी । झटकी दुसासन सु सत्रकी कटा सी भई चटकी सी है कै तिय देखिये सुभट की ॥ तू ही तू ही रट की सु तू ही जानै घट की पै मटकी सी है कै आस चरननतट की । जीवन निपट कीनी पट की न दीनानाथ पति लाज पटैकी तौ तुम्हैं लाज पट की ॥ १ ॥

२३७. जसवन्त (२) कवि प्राचीन

भादौं मास सघन अकास के प्रकासन को घोक-निरैघोकनि को झंझापौन झोंक को । पुरुष पुरान आन प्रगट्यो निदान कान्ह सोखन कलेस तात-मात-उर सोक को ॥ बेदन बखान्यो जसवंत उर आन्यो जग दुखन घटान्यो नरदेवन के थोके को । जनसुख-दायक भो भूतल को नायक भो घायैक भो कंस को सहायक त्रिलोक को ॥ १ ॥

२३८. जगजीवन कवि

बैठी हुती सविलास विलास में हास ही सों हलँरावत जी को ।
ईस के सीस में डीठि परी सु सखी है डरी मनो देखत पी को ॥

---

१ जलाकर । २ चहला । ३ त्यागी । ४ घोष (व्रज) में निर्घोष यानी शब्द । ५ समूह । ६ मारनेवाला । ७ बहलाती ।

श्रीजगजीवन गंगहि जानि मिली अरधंग हिली हर ही को।
सौति को संग विचारि मनों पिय की परतीति न पारवती को ॥१॥
खेलत एक समै ब्रजबाल सों नन्दलला रस माहँ रुसाई।
गे थकि आवत जात सखी पर एकहु भाँति न जात मनाई॥
आपुनही पिय आतुर ह्वै हँसि कै जगजीवन कंठ लगाई।
आधिक बात कही तुतरात पै आधिक में अँखियाँ भरि आई॥ २॥

२३९. जदुनाथ कवि

बेर बेर गये ते अधिक गहराति जाति राति तौ सिराति नाहीं भारी भये रहौ जू। पल के वियोग पिघलाने जात मोम के ज्यों धीरे धीरे पीर परे पीर नेक सहौ जू॥ जो न पतियाउ जदुनाथ मेरे साथ चलौ बोलत न बनि ऐहै ओझिल ह्वै रहौ जू। पाँय ना गहन देति पास ना रहन देति बात ना कहन देति कहा करौं कहौ जू॥ १॥

२४०. जगदीश कवि

कुंडलरूप सरूप विराजत औ विच मोती की जोति प्रकासी।
श्रीजगदीस विलोकत आपु गड़ी हिय में नहिं जाति निकासी।
जाके लखे ते फँसे सनकादिक एक बच्यो सबमें अविनासी।
छाजत प्यारी की नासिका में अली नत्थ किधौं मनमत्थ की फाँसी॥१॥

२४१. जलालुद्दीन कवि

आदि के अंक बिना जग जीवत मध्य बिना जग हीन कहावै।
अंत बिना सगरो जग है बस जाहिर जोति सु यों छबि छावै॥
अंक जिते जग लोक जलालदी जो मनसा तिय को अति भावै।
स्याम के अंग में रंग प्रसिद्ध है पण्डित होय सो अर्थ बतावै*॥१॥

२४२. जयसिंह कवि

कीधौं मोर-सोर-तजि-गये री अनेक भाँति कीधौं उत दादुर

---

१ कम होता है। २ आदि में छिपकर। * यह पहेली है—काजल।
३ मेढ़क।

न बोलत नये दई। कीधौं पिक[1] चातक चकोर कोऊ मारि डारे कीधौं बकपाँति कहूँ अंतगत ह्वै गई ॥ झींगुर झिंगारैं नाहिं कोकिला उचारैं[2] नाहिं बैन कहै जयसिंह दसौं दिसा स्वै गई। जारि डारे मदन[3] मरोरि डारे मोर सब जूझि गये मेघ कीधौं दामिनी सती भई ॥ १ ॥

२४३. जुगुल कवि

पद

दोऊ गल बहियाँ धरे हैं ॥
रति रतिपति[3] गति मोह-दलित करि ललित कदंब तरे हैं।
घन दामिनि जामिनिकर[4] की दुति तन महँ मंजु अरे हैं ॥
कमल मीन मद अंजन खंजन छवि चख चारु भरे हैं।
नील पीत पट मीत अलौकिक सकल सिंगार करे हैं ॥
मंद मंद मुसक्यात परसपर प्रेम के फंद परे हैं।
छतियाँ जुगुल[5] जुगुल सियरावत[6] बतियाँ करत खरे[7] हैं ॥ १ ॥

२४४. जगन्नाथदास

पद

पिय औचक मूँदेरी पाछे ते नैन।
हौं जु निभरमी[8] बैठी अछन[9] अछन पग धरत धरनि पर आवत जाने मैं न ॥ हौं इतने ही चौंकि परी आली छतियाँ धीर धरै न।
जगन्नाथ कविराय के प्रभु रीझि हँसे तब हौं हूँ हँसी वह सुख कहत बनै न ॥ १ ॥

२४५. जैत कवि

तीर कमान गही बलमंडक मार मची घमसान मचायो।
जोगिनी रज्जकै भारी भई सिव संकर मुंड की माल लै आयो ॥

१. कोयल। २. उच्चारण करती। ३. कामदेव। ४. चंद्र। ५. दोनों। ६. ठंडी करते। ७. खड़े। ८. बेभरम। ९. धीरे-धीरे।

भीम समान को जुद्ध कियो कवि जैत कहै जग में जस पायो।
साह के काज पै सूर लर्‌यो सिर टूटि पर्‌यो धड़ धाँरु को धायो॥ १॥

२४६. जलील (सैयद अब्दुलजलील बिलग्रामी)

बरवै

अधमउधारन नमवा सुनि करि तोर।
अधम काम की बटियाँ गहि मन मोर॥ १॥
मन वच कायक निसिदिन अधमी काज।
करत करत मनु भरिगा हो महराज॥ २॥
बिलगराम कर बासी मीर जलील।
तुम्हरि सरन गहि गाढ़े ए निधिसील॥ ३॥

२४७. जशोदानंदन कवि

(बरवै-नायिका-भेद)

मैं लिखि लीनो चैतहि तेरसि पाइ।
संवत हय विवि कर कै ब्रह्म मिलाइ॥
बरवै छंदहि बरनन नवला-भेद।
कृत जसोदानंदन कवि को सवद अभेद॥
बालमु हेरि हियरवा उपजै लाज।
पाख मास मों जानि न परि है गाज॥
तुरुकिनि जाति हुरुकिनी अति इतराय।
छुवन न देइ इजरवा मुरि मुरि जाइ॥
पिय से अस मन मिलयो जस पँय पानि।
हंसिनि भई सवतिया लै बिलगानि॥
पीतम तुम कचलोहिया हम गजबेलि।
सारस कै अस जोरिया फिरहुँ अकेलि॥

---

१ रण को। २ राह। ३ हज़ार बंद। ४ दूध।

२४८. जुगुलप्रसाद चौबे

(दोहावली)

पट भूषन अनुराग सहज सिंगार जुगुल वर ।
रसनिधि रूप अनूप वैस ऐस्वर्य्य गुनन गुर ॥
लीला पटऋतु दान मान मंजुल मनमोदी ।
भोजन सयन विहार करै ललिता की गोदी ॥ १ ॥

२४९. जनार्दन भट्ट

(वैद्यरत्न)

दोहा—नारदादि सेवत जिन्हैं, पारद[1] विसद प्रकास ।
नारद बुध बंदन करैं, हिये सारदा वास ॥ १ ॥

२५०. टोडर कवि

(राजा टोडरमल खत्री)

गुन विन कमान जैसे गुरु विन ज्ञान जैसे मान विन दान जैसे जल विन सर है । कंठ विन गीत जैसे हेत विन प्रीति जैसे वेस्या रस-रीति जैसे फल विन तरु[2] है ॥ तार विन जंत्र जैसे स्याने विन मंत्र जैसे पुरुष विन नारि जैसे पुत्र विन घर है । टोडर सुकवि जैसे मन में विचारि देखौ धर्म विन धन, जैसे पंछी विन पर है ॥ १ ॥ जार को विचार कहा गनिका को लाज कहा गदहा को पान[4] कहा आँधरे को आरसी । निर्गुनी को गुन कहा दान कहा दालिद्री को सेवा कहा सूम की अरंड की सी डार सी ॥ मद्यपी[5] को सुचा[6] कहा साँचु कहा लंपट को नीच को वचन कहा स्यार की पुकार सी । टोडर सुकवि ऐसे हठी तें न टारयो टरै भावै कहौ सूधी बात भावै कहौ पारसी ॥ २ ॥

२५१. ठाकुर प्राचीन—असनीवाले अथवा बुंदेलखंड

बरुनीन[7] में नैन झुकैं उझकैं मनौं खंजन मीन के जाले परे ।

---

१ भारी । २ पारे के समान । ३ वृक्ष । ४ बीड़ा । ५ शराबी । ६ पवित्रता । ७ पलकें ।

दिन औधि के कैसे गिनौं सजनी अँगुरीन के पोरन छाले परे ॥
कबि ठाकुर कासों बिथा कहिये हमैं प्रीति किये के कसाले परे ।
जिन लाल की चाह करी इतनी तिन्हैं देखन को अब लाले परे ॥१॥
एक ही सों चित चाहिये और लौं बीच दगा को परै नहिं टाँको ।
मानिक सो चित बेंचि कै जू अब फेरि कहा परखावनो ताको ॥
ठाकुर काम नहीं सबको इक लाखन में परबीन[१] है जाको ।
प्रीति कहा करिबे में लगै करि कै इक और निबाहनो वाको ॥ २ ॥
वह कंज सो कोमल अंग गुपाल को सोऊ सबै तुम जानती हौ ।
बलि नेकु रुखाई धरे कुम्हिलात इतौऊ नहीं पहिचानती हौ ॥
कबि ठाकुर या कर जोरि कहै इतने पै बिनै नहीं मानती हौ ।
दृग बान औ भौंहैं कमान कहौ अजू कान लौं कौन पै तानती हौ ॥३॥
सजि सूहे[२] दुकूलन[३] बिज्जुछटा-सी अटान चढ़ी घटा जोवती हैं ।
सुचती हैं सुनै धुनि मोरन की रसमाते सँजोग सँजोवती हैं ॥
कबि ठाकुर वे पिय दूरि बसैं अँसुवान सों ह्याँ तन धोवती हैं ।
धनि वै धनि पावस की रतियाँ पति की छतियाँ लगि सोवती हैं ॥ ४ ॥

सामिल में पीर में सरीर में न भेद राखि हिंमति कपाट जो उघारै तौ उघरि जाइ । ऐसो ठान ठानै तौ बिना हू जंत्र मंत्र किये साँप को जहर जो उतारै तौ उतरि जाइ ॥ ठाकुर कहत कछू कठिन न जानौ अब हिंमति किये ते कहौ कहा ना सुधरि जाइ । चारि जने चारिहू दिसा ते चारौ कोने गहि मेरु को हलाय कै उखारैं तौ उखरि जाइ ॥ ५ ॥ बैर प्रीति करिबे की मन में न संक राखै राजा रंक देखि कै न छाती धकधकरी । आपनी उमंग की निबाह की है चाह जिन्हैं एक सो दिखात तिन्हैं बाघ और बकरी ॥ ठाकुर कहत मैं बिचारि कै बिचार देख्यो यहै मरदानन की टेक बात

---

१ चतुर । २ एक रंग । ३ वस्त्र ।

अकरी। गही तौन गही फेरि छोड़ी तौन छोड़ि दई करी तौन करी जौन ना करी सो न करी ॥ ६ ॥

कहिबे सुनिबे की कछू न हियाँ न कही सुनी को दुख पावनो है।
इनकी सबकी मरजी करिकै अपने जिय को समुझावनो है॥
कहि ठाकुर लाल के देखिबे को निज मंत्र यही ठहरावनो है।
इन चौचँदहाइन में परि कै समयो यह बीर बरावनो है॥ ७ ॥

कैसे सुचित्त भये निकसे विहँसो-है हँसैं सबसे गलबाहीं।
ये छलछिद्रन की अलिता छलि कै जो चलीं छलता अवगाहीं॥
ठाकुर ते जुरि एक भई परपंच कछू रचि हैं व्रज माहीं।
हाल चबाइन के दहचोल सो लाल तुम्हैं ये दिखात हैं नाहीं॥ ८ ॥

कोमलता कंज ते सुगन्ध लै गुलाबन ते चन्द ते अकास कीनो उदित उजेरो है। रूप रति-आनन ते चातुरी सुजानन ते नीर नीवानन ते कौतुक निबेरो है॥ ठाकुर कहत यों मसाला विधि कारीगर रचना निहारि क्यों न होत चित चेरो है। कंचन को रंग लै सवाद लै सुधा को बसुधा को सुख लूटि कै बनायो मुख तेरो है॥ ६ ।'

२५२. ठाकुरप्रसाद त्रिपाठी किशुनदासपुरवाले (१)

अरिदल दलिबे को फरकि फरकि उठैं करकि करकि कैरी करकैं सनाहैं हैं। थरकि थरकि थिर थाँभे ना रहत केहूँ किरवान गहिबे का आत हा उमाहैं हैं॥ ठाकुरप्रसाद भनै महाबलसिन्धु दोऊ उठती तरंगैं भरी जुद्ध की उछाहैं हैं। कलपलता हैं कवि पंडित को छाँहैं करैं जगतपनाहैं भूप माधौसिंह-बाँहैं हैं॥ १ ॥

२५३. ठाकुरराम कवि

ज्यों घनदामिनी कौंधै अचानक त्यों हरि संकर-चाप उठायो।

---

१ प्रपंच करनेवाली। २ हलचल। ३ कड़ियाँ। ४ तलवार।

ज्यों सुनि रीखि सरासन कानहि पूछन दाहिन हाथ पठायो ॥
बाम कहै कस भागि चल्यो तब दाहिने उत्तर देत सुहायो।
ठाकुरराम कहै यह बूझहुँ तोरहिं की धरि देहिं चढ़ायो ॥१॥

२५४. ठाकुरप्रसाद त्रिवेदी अलीगंज (२)

कला करवाल बिभूषित माल बिभूषित भूति मनोहर अंग।
अनङ्गअपाकृत व्याकृत बेष लसै छबि सों सिर गङ्गतरंग ॥
तरङ्ग न रूप न रेख असेख बिलोकत होत महामद भंग।
भले हित लागि तमोगुन त्यागि रमौ मन पारवतीपति संग ॥ १॥

२५५. ढाखन कवि

ऊधो चले कहँ जोग को आँखन कान्हहि आँखन जी दुखिया हैं।
छूटे सबै दधि माखन चाखन दाखन खात सुने सुखिया हैं ॥
सोवत सो धरले मनिताखन भूलिगे ढाखन की रुखियाँ हैं।
खोंसत जे सिर मोर के पाँखन ते अब लाखन के मुखिया हैं ॥१॥

बोलि गयो काग बड़े भोर आजु आँगन में अंगन उमँगि अनुराग सरसत है। बाँहन बहाली बड़े बाजूबंद टूटि जात फूटि जात जोरा सिर सारी सरकत है ॥ नीवी निबुकाइ अधिकाइ सुख ढाखन त्यों आतुर अनङ्ग के उरोज थरकत है। आनन अनंद की ललाई आनि छाई चाही आवै आजु साई आँखि बाई फरकत है ॥ २ ॥

२५६. श्रीगोस्वामी तुलसीदासजी

(रामायण)

चौपाई

बन्दौं गुरु-पद-पदुम-परागा। सुरुचि सुबास सरस अनुरागा ॥
अमिय़मूरिमय चूरन चारू। समन सकल भवरुज-परिवारू ॥

---

१ ऐश्वर्य। २ कामनाशक। ३ विकृत। ४ अंगूर। ५ श्वेत। ६ रूखे।

(दोहावली रामायण)

दोहा—रामनाम मनिदीप धरु, जीह-देहरी-द्वार ।
तुलसी भीतर बाहरहु, जो चाहसि उजियार ॥ १ ॥
रामनाम अवलंब बिन, परमारथ की आस ।
बरषत बारिदबूँद गहि, चाहत चढ़न अकास ॥ २ ॥

(छंदावलीरामायण)

सुंदरी छंद

राजत मेचक[1] अंग महाछवि । गावत हैं स्रुति सेस सबै कवि ॥
बालविनोदक देव करैं कल । जो सुनतै जरि जाहि महामल ॥

(बरवैरामायण)

बरवै

वंदे चरणसरोजं तव रघुवीर ।
मुनिललना इव नावं मा कुरु धीर ॥
सियमुख सरदकमल जिमि किमि कहि जाय ।
निसि मलीन वह निसिदिन यह बिकसाय[2] ॥

(गीतावलीरामायण)

रघुवर सेतु बँधायो सागर ।
बालि सपूत दूत पठयो लखि बल-बुधि-नीति-उजागर ।
को कहि अंगद क्यों आयो हितु पितु तव ही को नागर ॥
सुनत हँस्यो न सह्यो पग रोप्यो टर्‍यो न गो लघुतागर ।
रावनसभा तेज लै तुलसी आइ जुहार्‍यो नागर ॥

(कवितावलीरामायण)

करकंजन मंजु वनी पहुँची धनुही सर पंकज-पानि लिये ।
लरिका सँग खेलत डोलत हैं सरजूतट चौहट्ट हार हिये ॥
तुलसी अस बालक सों नहिं नेह कहा जप जोग समाधि लिये ।

---

१ श्याम । २ प्रफुल्लित होता है ।

नर सो खर सूकर स्वान समान कहो जग में फल कौन जिये ॥ १ ॥

(सतसैया)

दोहा—अहि रस नाथन धेनु रस, गनपति द्विज गुरु बार।
माधव सित सियजनम-निसि, सतसैया अवतार ॥१॥
भरन हरन अति अमित बिधि, तत्वअर्थ कबिरीति।
संकेतिक सिद्धांतमत, तुलसी बदन बिनीति ॥२॥
बिमल बोध कारन सुमति, सतसैया सुखधाम।
गुरुमुख पढ़ि गति पाइ हैं, बिरति भक्ति अभिराम ॥३॥

(हनुमद्बाहुक)

भूलना

जयति हनुमान बलवान पिंगाच्छ[1] सुचि कनकगिरिसरिस तनु रुचिरधीरं। अंजनीसुवन सियरामप्रिय कीसपति दलन निसिचर-कटक बिकट बीरं॥ दहन सक्कारिबन[2] महाबुध ज्ञानघन सुजस कहि निगम[3] सब सुमति थीरं। समुझि भुजजोर कर जोरि तुलसी कहै हरहु दुख दुसह भवबिषमपीरं ॥ १ ॥

(रामशलाका)

दोहा—राम-राज राजत सकल, धर्मनिरत नर नारि।
राग न रोष न दोष दुख, सुलभ पदारथ[4] चारि ॥ १ ॥

(विनयपत्रिका)

राग बिलावल

माता लै उछंग गोविंद-मुख बार बार निरखै।
पुलकित तन आनँदघन छमछन मन हरखै॥
पूछत तुतरात बात मातहि जदुराई।
अतिसय[5] सुख जाते तोहिं मोहिं कहु समुझाई॥
देखत तव बदन-कमल मन अनंद होई।

---

१ पिंगलनेत्र। २ रावण का बाग। ३ वेद। ४ धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष। ५ अत्यंत।

कहै कौन सुर नर मुनि जानै कोइ कोई ॥
सुंदर मुख मोहिं देखाउ इच्छा अति मोरे ।
मम समान पुन्यपुंज बालक नहिं तोरे ॥
तुलसी प्रभु प्रेम-बिबस मनुजरूपधारी ।
बालकेलि लीलारस ब्रजजन हितकारी ॥ १ ॥

दीनदयाल दिवाकर देवा । कर मुनि मनुज सुरासुर सेवा ।
हिम-तम-करि-केहरि कर-माली । दहन दोष दुख दुरित रुजाली[1] ॥
कोक-कोकनद-लोक-प्रकासी । तेज-प्रताप-रूप-रस-रासी ।
सारथि पंगु[2] दिव्यरथ गामी । हरि-संकर-बिधि-मूरतिस्वामी ॥
बेद पुरान प्रगट जस गावैं । तुलसी राम भक्ति बर पावैं ॥ २ ॥

२५७. तुलसी (२)

खायो कालकूट भयो अजर अमर तन भवन मसान ग्रंथि गाडरी गरद[3] की । डमरू कपाल कर भूषन कराल व्याल बावरे बड़े की रीझि बाहन बरद की ॥ तुलसी बिसाल गोरे गात बिलसत भूँति मानो हिमगिरि चारु चाँदनी सरद की । धर्म अर्थ काम मोच्छ बसत बिलोकनि में ऐसी करामाति जोगी जागता मरद की ॥ १ ॥

२५८. तुलसी (३) श्रीओझाजी जोधपुरवाले

नेकहु मानै न सीख अली भली भाँति सिखावति धाय सुजान री । खेलति है गुड़ियान को खेल लिए सँग मैं सजनी सुखदान री ॥ पै तुलसी तिय के अँग मैं झलकी तरुनाई इतै उतै आन री । नैन लगे कछु पैने से होन गही अधरान कछू मुसकान री ॥ १ ॥

---

१ पाप का समूह २ गतिहीन । ३ भस्म ।

२५६. तुलसी (४) तुलसीदास कवि यदुराय के पु-
(संग्रहमाला)

दोहा—सत्रह सौ बारह बरस, सुदि असाढ़ बुध वार
तिथि अनंग को सिद्ध यह, भई जु सुख को सार

कवित्त—एक समै लाल बाल बृन्दावन माँझ ग
सरूप जो बनायो है नबेली को। फूलन के हार जे उ.
गोपिन को सबै पहिराइ जस गायो है सहेली को॥ तु
खानै कुंज कुंज के फिरत साँझ बदन मलीन एक देख्यो
केली को। औसर के चूके अब हार देत मोतिन को जब
दीन्हो लाल चौलरा चमेली को॥ १॥

२६०. तारापति कवि

इंदिरा[1] के मंदिर अमंद दुति कंदुक[2] से बंधुर[3] बिनोद-
धौं बिरद के। तारापति ललित लता के स्वच्छ गुच्छ की
फल सुफल भये आनि अनहद के॥ कीधौं चक्रवाक आ
ऊँची भूमि पर तुम्ब के परन तीर बासी नाभि-नद के।
सरोज से उरोज तेरे ओज भरे कीधौं मीरफरस मनोज-
के॥ १॥

२६१. तारा कवि

गुंजों[4] गिले खंजन की भौंर भये कंजन की बारि बिधु
औ अंजन समेत हैं। नेहभरे सागर सनेह[5]भरे दीपक से
बादर सलोने लखि खेत हैं॥ तरल त्रिवेनी के तरंगन मैं
कवि मानों सालिग्राम असनान के निकेत हैं। मृगमद लागे
मृग दृग दागे मैन छाजन में पागे नैन ऐसे सोभा देत हैं॥

---

१ लक्ष्मी। २ गेंद। ३ कठिन। ४ घुँघची। ५ तेल।

२६२. तत्त्ववेत्ता कवि

छप्पै

प्रथम द्वितिय दोउ चरन तृतिय चातुर्थ दोउ उर।
पंचम नाभि गँभीर षष्ठहै हृदय सुगनपुर॥
सप्तम अष्टम दोऊ भुजा नव कंठ विराजै।
दसम वदन सुखसदन भाल एकादस राजै॥
द्वादस सिर सोभित सदा भगवतरूपी सुमिरि मनं।
तत्ववेत्ता तिहुँ लोक मैं कीरतिरूपी कृष्ण-तन॥ १॥

२६३. तेगपाणि कवि

मेरी पीछे ते बेनी मरोरि लई उर हार खसोटि लियो गरका।
पुनि हौं हँसि कै मुख चाहि रही मुँदरी मनि तोरि तनी तरका॥
भनि तेगपानि मटुकी दइ डारि लई भरि अंक अली दरका।
सु उराहनो देति जसोमति पास लड़ाइते लोगन के लरका॥ १॥

२६४. तोख कवि

(सुधानिधिग्रन्थे)

भूषन-भूषित दूषन-हीन प्रवीन महारस मैं छवि छाई।
पूरी अनेक पदारथ ते जिहि मैं परमारथ स्वारथ पाई॥
औ उकतैं[1] जुकतैं[2] उलही कवि तोख अनोख भरी चतुराई।
होति सबै सुख की जनितौ[3] बनि आवत जो बनिता कविताई॥ १॥

सुमन अनन्त फूले विपिन लसन्त पौन सौरभ वहन्त भौंर गुंजै रसमन्त है। सुतरु फलन्त कूक कोकिल कलन्त तजैं ध्यान मुनि-सन्त जहँ केलि को अगन्त है॥ सबै रसवन्त औ बियोगिन को गन्त जहँ रति ही को तन्त तोख सुकवि भनन्त है। बेधे रतिकन्त पाइ तरुनी इकन्त अब जाहु कित कन्त ऋतु-भूपति वसन्त है॥ २॥

---

१ उक्ति। २ युक्ति। ३ उत्पन्न करनेवाली।

आगे बीच दै कै कहा दारु गल दिये जात बारि बी कहा मीन छीजियतु है। भोग आदि दै कै कहूँ बाम सों बिर जोग आदि दै कै कहूँ भोग लीजियतु है॥ कहै कवि तो मान हू न करै जान्यो या बिधि को यान कहौ कैसे कीजि पीठि दै दै पौढ़ती हौ पीठि पै है बेनी तेरी बेनी बीच दै पीठि दीजियतु है॥ ३॥

आवत मेरे लजात कहा अलि जान्यो न जात महा भय-भी मो पति सों कहि तोख कहूँ न लह्यो प्रेमदै पति काहू प्रवी मेरी न देखि सक्यो घटती तब तौ उनकी बढ़ती हमैं दी एक तौ मोहिं करी तिय तीसरी तीसरी ते उन्हैं दूसरी कीनी। सीस धुन्यो निज अंत गुन्यो जु सुन्यो चलिबो नँदनंदनजू कै मिलु आवत जात अटा चढ़ि झाँकि झरोखनि लावत दूक सैन करै रहिबे की किती कवि तोख चितै बिथकै चित ॱ ज्यों ज्यों पटूको कसै निरदै हिरदै तकि होत भटू को छटूको।

सुथरी सुसीली सुजसीली सु रसीली अति लंक लचकी मधलुपहलाका सी। कहै कवि तोख होती सारी ते नियारी जब बदरी ते बढ़ै चन्द की कलाका सी॥ लोने लोने लोयन पै झमक वारौं दन्तनचमक चारु चंचला चलाका सी। साँवरे कान्ह तुम से छिपाऊँ कहा सेज पै सोवाऊँ आनि सो सलाका सी॥ ६॥

अरुन अनार ऐसे नारंगी सुढार ऐसे उलटे नगार ऐसे के तार से। त्रिपुरारिवार ऐसे चकवा जुरार ऐसे श्रीफल ऐसे मार-प्रतिहार से॥ कंज के कुमार हार सरि के करार कवि

१ स्त्री। २ पटका। ३ छुः टुकड़े।

को उदार अति सुखद अपार से । भूधर-अकार तेरे उरज गरार मेरे मोहन के यार खरबूजा टोपीदार से ॥ ७ ॥

ऊख उखरत दुख-रत अभुआनी बाल चित्त अनुमानी हाय होत हितहानि है । कहै कवि तोख घनितान आनि पानि गही मुरि मुसक्याय पान दीन्हो गहि पानि है ॥ ऊख अरहरि सन-वन ऐसो राखि है जो ताहि हम राखि हैं सकलसुखदानि है । भानि है जो कोऊ ताहि हेरि हेरि भानि हौं री हुकुम भवानी को न मानि है सो जानि है ॥ ८ ॥

२६५. तोखनिधि कवि कम्पिलावासी

अरी जाको लगी तन सों सोइ भोगै, न जानै प्रसूति विथा[1] बझरी[2] ।
हरनी होइ भूमि में क्यों न गिरी सर सादर सार भई मझरी ॥
निधि-तोख तू क्यों सगुहे भई री न बचाई कटाच्छन की नजरी ।
बरजोरी बिहारी के नैनन सों करवाई करे कहिकै झगरी ॥ १ ॥

(व्यंग्यशतकग्रन्थे)

दोहा—कितिक दूरि ते सुनि लई, द्रुपदसुता की टेर ।
कानन कान्ह रुई दई, दैया मेरी बेर ॥ १ ॥
भरुही[3] भारथभीर मैं, राखी घंटा तोरि ।
तेई तुम अब क्यों रहे, मोहीं सों मुख मोरि ॥ २ ॥
विस्वंभर नामै नहीं, कि मैं विस्व मैं नाहिं ।
इन द्वै मैं झूठी कवन, यह संसय मन माहिं ॥ ३ ॥
ऊसर तजि बरखै न घन, लख्यो न पावस माहिं ।
मंगन के गुन-अवगुनन, दाता निरखत नाहिं ॥ ४ ॥

(नखशिख)

देखे अरुनाई करुनाई लगै कंजन को मृगन गुमान तजि लाज गहिवे परी । तोखनिधि कहै अलिछौननहू दीनताई मीनन

१ जच्चा की पीड़ा । २ बाँझ । ३ एक पक्षी—भारत युद्ध में रणभूमि में भरुही के अंडों पर घंटा टूट पड़ा, जिससे उनकी रक्षा हुई ।

अधीन ह्वैकै हारि सहिवे परी ॥ चरचा चकोरन की कोरि डारी कोरन सों कविन कबीसन गरीबी गहिबे परी । आई बीर चंचलाई राधिका के नैनन में खाँसे खंजरीटन खराबी सहिबे परी ॥ १ ॥

२६६. तीखी कवि

सिंह पै खवाओ चाहौ जल में डुबाओ चाहौ सूली पै चढ़ाओ घोरि गरल[1] पियाइबी । बीछी सों डसाओ चाहौ साँप पै लिटाओ हाथी-आगे डरवाओ एती भीति उपजाइबी ॥ आगि में जराओ चाहौ भूमि में गड़ाओ तीखी अनी बेधवाओ मोहिं दुख नहीं पाइबी । ब्रजजन-प्यारे कान्ह कान्ह यह बात करौ तुमसों बिमुख ताको मुख ना दिखाइबी ॥ १ ॥

२६७. तेही कवि

कोऊ कहै पिता और कोऊ कहै सुत कोऊ कहै नाना बाबा तन तीनों ताप तयो है । कोऊ प्रभु कहै जन कोऊ कहै मोल लयो तुम अब कहौ मोहिं काहि काहि दयो है ॥ तेही भनै जित तित चालि चालि होइ रही सुख नहीं कहूँ वह हाथ गेंद भयो है । कियो हू तिहारो अरु पालो हू तिहारो ही हौं बीच के लोगन इन बाँटो बाँटि लयो है ॥ १ ॥

२६८. तानसेन कलावंत ग्वालियरवासी

पद

तेरे नैन लोने री जिन मोहे स्याम सलोने ।

अति ही दीर्घ विसाल बिलोकि कारे भारे पिय रस रिझए कोने ॥

बदन-ज्योति चंदहु ते निर्मल कुच कठोर अति होने बोने ।

तानसेन प्रभु सों रति मानी कंचन क़सोटी कसोने ॥ १ ॥

२६९. तीर्थराज कवि बैसवारेके

(भाषासमरसार)

बीर बलवान बालेपन ते अरिन्दन[2] को पठये पताल पाय तम

---

१ विष । २ शत्रुओं को ।

को न लेस है । जाको राज राजत सुमन सब साधु जन सुमन सरोज कैसे सरस सुवेस है ॥ सुन्दर बलंद भाल पूरन प्रताप जाको जाकी ओर देखे और सूझत न बेस है । फूल्यो चहुँ ओर देस-देसन में तेज पुंज अचल नरेस मानों दूसरो दिनेस है ॥ १ ॥

२७०. ताज कवि

बलबीर कहा बल एतो कियो अबला ते कियो बल हौं बलिहारी ।
ताज कहै चलि केलि के कुंजन आवत ही बृषभानदुलारी ॥
करि केलि जो एतिक मैन के जोर परी बेसँभार न साँस सँभारी ।
मनों काढि बाल-कुमोदिनी ताल सों नाल सों मंजुल मीड़ि कै डारी॥१॥

२७१. तालिबशाह कवि

सहबूब बागे सुहागे बने हैं सु मोहन-गरे माल फूलों हिये हैं ।
महा रंग माने अमाते मदन के बिलोकत बदन खौर चंदन दिये हैं ॥
यही भेष हरिदेव भृकुटी तुम्हारे सु लकुटी भवँर लेख या लख लिये हैं ।
दिवाना हुआ है निमाना दरस का सु तालिब वही श्याम गिरिवर लिये हैं १

२७२. द्विजदेव, महाराज मानसिंह बहादुर, शाकद्वीपी, अवधनरेश
(शृंगारलतिका)

प्रथमै बिकसे बन बैरी बसंत के बातन ते मुरझाई हुती ।
द्विजदेवजू ताहू पै देह सबै बिरहानल-ज्वाल जराई हुती ॥
यह साँवरे रावरे नेह सों अंगन प्यारी न जो सरसाई हुती ।
तो पै दीपसिखा सी नई दुलही अब लौं कब की न बुझाई हुती ॥ १ ॥
चाहि है चित्त-चकोर दबा सुनि आपनो दोष परोसिनै लैहैं ।
ये दृग अंबुज से अकुलाइ कला बिधुबंधु की हाइ अचैहैं ॥
ऐसी कसामसी में द्विजदेव अली अलि के गन गाइ सुनैहैं ।
ह्वैहै सु कौन दसा तन की जुपै भौन बसंत लौं कंत न ऐहैं ॥ २ ॥

---

१ चंद्रमा ।

चाले सु आई नई दुलही लखिवे को जवै कोउ चाव बढ़ा
सूही सजी सिर सारी जवै तव नाइन आपने हाथ ओढ़ा
भीतर भौन ते बाहर लौं द्विजदेव जुन्हाई कि धार सी धा
साँझ समै ससि की सी कला उदयाचल ते मनों घेरत आवा।
लहि जीवनमूरि को लाहु अली वे भली जुग चारि लौं जीवे
द्विजदेवजू त्यों हरपाय हिये वर वैन-सुधा-मधु पीवो
कछु घूँघुट खोलि चितै हरि ओरन चौथि-ससी-दुति लीवो
हम तौ व्रज को बसिवोई तजो अब चाउ चवाइनै कीवो करैं

(फुटकर)

आवत चली है यह विषम वयारि देखु दवे दवे पाँयन लरजि दे। कैलिया कसाइनि को दे री समुझाय म मधुपालिनि कुचालिनि तरजि दे॥ आजु व्रजरानी के विये दिवस ताते हरे हरे कीर बकवादिन वरजि दे। पी-पी कै पु की खोलैं ज्यों न जीहैं ये पपीहन के जूहन त्यों वावरी दे॥ ५॥ अब मति दे री कान कान्ह की वसीठिन पै भू प्रेम-पतियान हू को फेरि दे। उरझि रही री जो अनेक ते तौन नाते की गिरह सूँदि नैनन निवेरि[2] दे॥ मरन चह छैल पै छवीली कोऊ हाथन उचाय व्रजवीथिन में टेरि दे री कहाँ को जारि खेह री भई तौ मेरी देह री उठाय वाकी पै गेरि दे॥ ६॥

२७३. द्विज कवि, पण्डित मन्नालाल बनारसी

मदमाती रसाल की डारन पै चढ़ि आनँद सों यों विराज
कुल जान की कानि करैं न कछू मन हाथ परायेहि पारती
कोउ कैसी करै द्विज तू ही कहै नहिं नेकु दया उर धारत
घरी कैलिया कूकि करेजन की किरचैं किरचैं किये डारती हैं।

१ चाँदनी। २ खोलदे।

२७४. दयादेव कवि

कौंल की सी बेली ये सहेली कुँभिलाय गई फूली सी फिरत ते चलावैं दाम चाम के। कहै दयादेव अन अनमाने अंचल त्रे अंग कोरे लगि रहे चित्र से हैं धाम के॥ इतै तू अनोखी अनखाइल तो अनखात जोन्ह ह्वै जनावत है कहे घट धाम के। हा-हा हँसि बोलै बलि छाँड़ि दे अनोखो मान मान अरु बान बिनु छूटे कौन काम के॥ १॥

२७५. दामोदर कवि

पंकज चंपक बेलि गुलाब की माल बनावति आनँद पावै
आछे अँगोछे से अंग अँगोछि गुलाब फुलेलऽरु सोंधो लावै।
भूपन बास सँवारि दमोदर आछे से केस मैं दिखावै॥
यों पिय को मग जोवति है हठि द्वार त्यों चित्र

२७६. दिलदार कबौं फिरि हित चितए

दया करि चितै चित हित कै परवस में जे बसे तिन्हैं नैन यहै सोच नित है। दिलदार कत है॥ देखे टक लागै अनदेखे सुक न चाव निसि चख नैना निमिपरहित है। सुखी हौ जू पलकौ न लागै देखे न चिंता वह देखे हू दुखित अनदेखे हू कान्ह तुम्हैं क॥
दुखित है

२७७. दास कवि वेणीमाधवदास पसकावाले
(गोसाईंचरित्र)

तोटक छंद

यहि भाँति कछू दिन बीति गये। अपने अपने रसरंग रये॥
मुखिया इक जूथप माँझ रहै। हरिदासन को अपमान गहै॥

---

१ अच्छे। २ ज़रा।

२७८. दीनानाथ कवि

जानत हौं जोतिस पुरान और बैदक को जोरि जोरि अच्छर कबित्तनको उच्चरौं। बैठि जानौं सभा माँझ राजा को रिझाइ जानौं सस्त्र बाँधि खेत माँझ सत्रुन सों हौं लरौं॥ राग धरि गाऊँ औ कुदाऊँ घोरे बाग धरि कूप ताल बावरी नेवारन में हौं तरौं। दीनबन्धु दीनानाथ एते गुन लिये फिरौं करम न यारी देत ताको मैं कहा करौं॥ १॥

२७९. राजा दलसिंह कवि

दोऊ तिरभंगी दोऊ मुरली अधर धरे दोऊ तन एक से निरंजन निरंजनी। दोऊ बनमाली दोऊ मोर के मुकुट दीन्हे दोऊ दृग आँजे मानौ खंजन औ खंजनी॥ दोऊ प्रेम पढ़े दोऊ मन ही के साँचे गढ़े दोऊ काम रति मदभंजन औ भंजनी। भनै दलसिंह बृंदाबन के बिनोदी दोऊ दुहुँन के दोऊ मनरंजन औ रंजनी॥ १॥ मेरो तन मन स्याम रंग ही सों रँगि रह्यो और रंग देखे होत नैन मन साल है। नील पट नील मनि भूषन सुखद लागै नील जल जमुना के अति सुखपाल है॥ भनै दलसिंह नृप नील बन सहज ही तामें मुठि प्रिय लागै बिपिनै तमाल है। नील तरु नील फूल नील गिरि नीलकंठ नील घन देखे दृग मानत निहाल है॥ २॥

२८०. दास, भिखारीदास कायस्थ, प्रतापगढ़वाले

आनन है अरबिंद न फूले अलीगनै[4] भूले कहा मड़रात हौ।
कीर[5] कहा तोहिं बाइ[6] भई भ्रम बिंब के ओठन को ललचात हौ॥
दासजू ब्याली न बेनी बनी यह पापी कलापी[8] कहा इतरात हौ।

---

१ रण के मैदान। २ निपट। ३ बन। ४ भौंरे। ५ तोता। ६ पागलपन। ७ कुँदुरू। ८ मोर।

बाजत बीन न बोलत बाल कहा सिगरे मृग घेरत जात हौ ॥ १ ॥
पाँय विहीन के पाँय पलोट्यों अकेले है जाइ घने वन रोयो ।
आरसी अंध के आगे धस्यो बहिरे सों मतो करि उत्तर जोयो ॥
ऊसर में बरस्यो बहु बारि पखान के ऊपर पंकज बोयो ।
दास वृथा जिन साहेब सूम के सेवन में अपने दिन खोयो ॥ २ ॥

कैसी कामधेनु कामना की देन ऐन जैसी चिंतामनि चारु चित्त चैन को सुकर है । कैसी चारु चिन्तामनि चैन की सुकर जैसी कामतरु-साखा कामना की विधि वर है ॥ कैसी कामसाखा कामना की विधि वर जैसी दास पै महेस की हमेस दानभर है । कैसी है महेस की हमेस दानभर जैसी बैस वीरविक्रम नरेस की नजर है ॥ ३ ॥

कंज सकोच रहे गड़ि कीच में मीनन बोरि दियो दह-नीरन ।
दास कहै मृग हू को उदास कै बास दियो है अरन्य गँभीरन ॥
आपस में उपमा-उपमेय है नैन ये निंदत हैं कवि धीरन ।
खंजन हू को उड़ाय दियो हलुके करि दीन्हे अनंग के तीरन॥ ४॥

(छन्दार्णवपिंगल)

करि बदन विमंडित ओज अखंडित पूरन पण्डित ज्ञानपरं ।
गिरिनन्दिनिनंदन असुरनिकंदन सुरउरचंदन कीर्त्तिकरं ॥
भूपन मृगलच्छन वीर विचच्छन जनमनरच्छन पासधरं ।
जय जय गननायक खलगनघायक दास सहायक विघ्नहरं ॥ १ ॥

दोहा—सत्रह सौ निन्नानवे, मधुवदि नव इक बिन्दु ।
दास कियो छन्दोर्नव, सुमिरि साँवरो इन्दु ॥ १ ॥

(काव्यनिर्णय)

आजु चंद्रभागा वहि चंद्रवदनी के तीर निरत करत आई महेस के परन को । तब वै कहा धौं कह्यो बेनी गहि रही तब वोहू दर-

सायो री बँधूक के दरन को ॥ तब वै कहा धौं परस्यो धौं उरजात इहि परस्यो कहा धौं कहा आपने करन को। नागरि गुनागरि चलत भई ताही छन गागरि लै रीती जमुनाजल भरन को ॥ १ ॥

(शृंगारनिर्णय)

कैसी अनियारी एरी अजब निकाई भरी छामोदरी पातरी उदर तेरो पान सो। सकल सुदस्य अंग विरह थकित ह्वै कै पीवे को त्रिमल तेरे मन की कमान सो ॥ उरज सुमेरु आगे त्रिवली बिमल सीढ़ी सोभा-सर नाभि-सिंधु तीरथ समान सो। हारन की पाँति आवागवन की बँधी है ही मुकुत सुमन बृंद करत अन्हान सो ॥ १ ॥

(रससारांश)

भूल्यो खान पान भूल्यो पट-परिधान सबै लोगन को भूलि गयो बासु औ निवासु री। चकि रहीं गैयाँ चारो चौंचन चिरैयाँ दाबि चितवनि चल चख चेत चितु नासु री ॥ द्वै घरी मरी सी है परी सी बृषभानु जाई जीवत जनावै ट्वैक आवै दग आँसु री। कान्हर सों कैसे कै छड़ाय ले री मेरी बीर कब की बिसासिनि बगारै विष बाँसुरी ॥ १ ॥

(प्रेमरत्नाकरग्रन्थे)

दोहा—संवत सत्रह सौ बरस, बयालीस निरधार।
आस्विन सुदि तेरसि कियो, सुभ दिन ग्रंथ-विचार ॥ १ ॥
को रजपूतानी जन्यो, ऐसो और सपूत।
ना ऐसो दाता कहूँ, ना ऐसो रजपूत ॥ २ ॥
ऐसे अगनित गुनन करि, जगमगात रतनेस।
जाके दावन सों लग्यो, जदुमंडल को देस ॥ ३ ॥
रजधानी जदुपतिन की, नगर करौरी राज।
जहँ पंडित अरु कविन को, राजत बड़ो समाज ॥ ४ ॥

२८९. देवीदास कवि बुंदेलखण्डी

दीबे को करन दुख आपदाहरन असरन को सरन मन मानहुँ सुरेस है । उदित उदार साहिदल को सिंगार कैयो जंग जितवार लग्यो दावन सों देस है ।। गुनन को भारो जदुवंस में उजारो और रूठत अकारो यह दूसरो महेस है । गाजी गंज-बकस गरीवन निवाजन को देवीदास ऐसो आजु भैया रतनेस है ।। १ ।। वासी वर उर के उदासी भये मोरगते पाली गति अनंत ही पीतम पियार में । परनाम लीजे मो सुहागपुर देवीदास काविल के दिली हो गुनागरे विचार में ।। विजैपुर कीन्हे भाग नागर हमारे आजु कासमीर तिलक दै ललित लिलार में । असनींके लागे लाल औध में मिले हौ मोहिं पन्ना समात उर उमँगि विहार में ।। २ ।। छोटे छोटे पेड़न को सूरन कियारी करौ पतरे से पौधा तिन्हैं पानी प्रतिपारिवो । नीचे गिरि गये तिन्हें दै दै टेक ऊँचे करौ ऊँचे वढ़ि गये ते जरूर काटि डारिवो ।। फूले फूले फूल सब बीनि एक ठौरी करौ घने घने रूख एक ठौर ते उखारिवो । राजन को मालिन को नित प्रति देवीदास चारि घरी राति रहे इतनो विचारिवो ।। ३ ।। नट के न धाम ना नपुंसक के काम नाहीं ऋनी के अराम वाम विरवा ना सहेलरी । जुआ के न सोच मांसहारी के न दया होत कामी के न नातो गोत छाया न सहेलरी ।। देवीदास वसुधा में वनिक न सुनो साधु कूकर के धीरज न माया है सहेलरी । चोर के न यार वटपार के न भीति होत लावर न मीत होत सौति ना सहेलरी ।। ४ ।। एरे गुनी गुन पाइ चातुरी निपुन पाइ कीजिये न मैलो मन काहू जो कछू करी । वीरन विराने द्वार गये को यही सुभाव मान अपमान काहू रे करी कि जू करी ।। कूर और कवि चले जात हैं सभा के मध्य तोसों तौ हटकि देवी-

दास पलटू करी । दरवाजे गज ठाढे कूकरी सभा के मध्य कूकरी सो कूकरी औ तू करी सो तू करी ॥ ५ ॥ एकै पाँय दाबैं एकै हाथ सहरावैं एकै अंगन अँगोछि कै सुगंध सिर नाखे हैं । एकै नहवावैं एकै भोजन करावैं एकै बीरी सरसावैं सैन बैन अभिलाखे हैं ॥ देवीदास एकै कर जोरे दिन-रैनि जब जैसो रुख पावैं तब तैसोई सुभाखे हैं । ताही के सु तन ते तनक स्वास कढे तेई घर ही के घर में घरी भरि न राखे हैं ॥ ६ ॥

२८२. दलपतिराय-वंशीधर श्रीमाली ब्राह्मण, अमदाबादवासी
(अलंकार-रत्नाकर)

दोहा—नवत सुरासुर मुकुट महि, प्रतिबिम्बित अलिमाल ।
किये रतन सब नीलमनि, सो गनेस रछपाल ॥ १ ॥
भाषाभूषन अलंकृत, कहुँ यक लच्छन हीन ।
स्रम करि ताहि सुधारि सो, दलपतिराय प्रबीन ॥ २ ॥
अर्थ कुबलयानंद को, बाँध्यो दलपतिराय ।
बंसीधर कबि ने धरे, कहूँ कबित्त बनाय ॥ ३ ॥
मेदपाट श्रीमाल कुल, विप्र महाजन काइ ।
बासी अमदाबाद के, बंसीदलपतिराइ ॥ ४ ॥
भौंहैं कुटिल कमान सी, सर से पैने नैन ।
बेधत ब्रज-अबलान हिय, बंसीधर दिन-रैन ॥ ५ ॥

२८३. दुर्गा कवि

एक कर खड्ग विराजै सूल एक कर एक में धनुष एक कर में कृपानी है । तीन्हें सर एक कर उग्र सेल एक कर अंकुस कर एक चर्म एक में प्रमानी है ॥ दुरगा भनत ऐसी उग्रता प्रसिद्ध जाहि राति लोक-सुख देनि भक्त बरदानी है । कीजै ना बिलम्ब जगदम्ब अवलम्ब तुही रच्छा करु मात अष्टभुजा सम्मुखानी है ॥ १ ॥

२८४. देवीदत्त कवि

बड़े बड़े गुनी पुरुषारथी अपार फिरैं केते द्वार द्वार कवि पंडित सिपाही हैं। ब जे मतिमंद सबै जानत धजिंद तीन बखत बलंद हू अमंद उतसाही हैं॥ देवीदत्त होत कहा कीन्हें करतूति दई-दई की बिभूति सो न मानत थराही हैं। सेंतिमेंति आपनी बनाई गुमराई मूढ़ मद के उदोत होत हरि के गुनाही हैं॥ १॥ दाया दिल राखैं सब ही सों मृदु भाखैं नित काम क्रोध लोभ मोह मति सों दबावैं जू। काहू मैं न तेखैं ब्रह्म सबही में देखैं आपु ही को लघु लेखैं करि नेम तन तावैं जू॥ देवीदत्त जानैं हरि ही को एक मीत और जगत की रीति में न प्रीति सरसावैं जू। दुखित ह्वै आपु दुख और को मिटावैं ऐसो सांत पद पावैं तब भगत कहावैं जू॥ २॥

२८५. देवी कवि

मोहन से हम से हित है घर सासु ननंद बँधी फरजी री।
बैठि कहे गुरुलोग दुवार पुछी तब से कुल की सबरी री॥
डाटने लागी परोसिनि दंडिनि देवी कहा करिये जु सखी री।
यों कहि कै पलकै दबकै पल मा बजमा गल मा लपटी री॥ १॥

कीजै नाहिं देरी तुम एरी सुनु मेरी बात जामिनी अँधेरी मग हेरी लाल तेरी री। चलिये री हेरी रसना कौ घेरी जाइ कुंजन मग लेरी छर तेरी दर्स देरी री॥ देवी कहत जुरी जेरी रंधी सब संग के री करते मजे री तुम देरी इत एरी री। ह्वै है उजेरी रैनि छिपि है री न मेरी नैन करि कहै चैन तू कुचैन गेह मेरी री॥ २॥

२८६. देवी दास भाट कवि अंतर्वेदवाले (१)

गोबरु को गूजरु गरेहु गोवरौरन को गोहन को गोंड़ा गोसा गंजु गुजरीन को। छपकी छछूँदरी छराये जहाँ छाई रहैं ब्याली ब्याल बैरैं झुंड झावर झरीन को॥ माछिन को मुलुक मिलिक मूते मच्छन को भूतल को भौर तहाँ भैको मकरीन को।

ऐसो डेरा दीन्हों देवीदास जयदेव जू को छानी चुवै पानी चामु चलनीन को ॥ १ ॥

२८७. दान कवि

नए नए खसन सों खासे खसखाने छाय चंदन लिपा जमाय जल ढारती। घोरि घोरि घने घनसारन सों सींं गुलाबन उलीचै कीचै अतर की पारतीं ॥ दान कवि छूटत जल-जंत तऊ ताप को न अंत कंत सखी सब हारती। भला कै सुनि लीजै अभिलाषै जाकी कोटिन कला कै ये कै जारि डारती ॥ १ ॥

२८८. दिनेस कवि

(नखशिख)

राधे की ठोढ़ी को बिंदु दिनेस किधौं बिसराम गोबिंद के जी चारु चुभ्यो कनको मनि नील को कैधौं जमाव जम्यो रजनी कैधौं अनंग सिंगार के रंग लख्यो बर बीच बस्यो कर पी फूले सरोज में भौंरी बसी किधौं फूल समी में लग्यो अरसी को ॥

२८९. दयाराम (१)

(अनेकार्थ)

दोहा—बार बार प्रतिवार री, आवत हैं मो वार।
बार बार सुख देत हैं, धरे सीस सिखिवार ॥ १
गोधर गो गो काम के, बिकल होति गो हेरि।
गो तें गो स्रम बहत है, गो गो सुनत न फेरि ॥ २
जलज रूप कुण्डल स्रवन, कण्ठ जलज की माल।
जलजबदन बाजत जलज, जलज लये नँदलाल ॥ ३

२९०. दिलाराम कवि

कंचनसम्पुट गोल उरोज सुधाकर सो मुख जोति लही कंचुकि लाल बनात मढ़े जनु दुंदुभि मैन महीप सही। भौंह-कमान हनै दृग बान गिरैं नर घूमि हवास नहीं कान हिये लहरैं मुकता दिलराम सदा-सिव पूजि रही ॥

२६१. दयाराम कवि त्रिपाठी (२)

हाथी के दाँत के खिलौना बने भाँति भाँति बाघन की खाल तपी सिन मन भाई है । मृगन की खालन को ओढ़त हैं जोगी जती छेरी[1] की खाल थोरा पानी भरि लाई है ॥ साबर की खालन को बाँधत सिपाही लोग गैंड़न की खाल राजा रायन सुहाई है । कहै कवि दयाराम राम के भजन बिन मानुस की खाल कछू काम नहिं आई है ॥ १ ॥

२६२. दयानिधि कवि बैसवारे के (१)

(शालिहोत्र)

दोहा—सुकवि दयानिधि सों कह्यो, अचलसिंह सुख मानि ।
सालिहोत्र को ग्रंथ यह, भाषा करहु बखानि ॥ १ ॥
अचलसिंह के हुकुम ते, जानि संसकृत-पंथ ।
भाषा-भूषित करत हौं, सालिहोत्र को ग्रंथ ॥ २ ॥

२६३. दयानिधिकवि (२)

सहज बनाइबो न ये है कविताई कभू सुकविन मारग की दीठ की दसाले सों । रस धुनि अलंकार जुत जतिभंग बिन अरथ प्रगट कोऊ दूषन न साले सों ॥ बरनत दयानिधि बिधि बिधि तापन सों सरस्वती कृपा छाप हिय में धसाले सों । करि कै कसाले हित बरन गसाले कवितन के मसाले लावै रस के रसाले सों ॥ १ ॥ नखअग्रभाग स्यामताई जमुना है सोई मध्य सुपेदाई दरसाई गंग तन में । अंत अरुनाई मेंहदी की कहि दी है अति उपमा सरसुती की परसत तन में ॥ अँगुरी अँगूठा स्रिंगे[2] मेरु से दिखात ताते कढ़ी बढ़ी मढ़ी दयानिधि उकतेन[3] में । बसुधा ते न्यारी रसधारा बहै जामें ऐसी दसधा[4] त्रिबेनी प्रियापदपदमन में ॥ २ ॥

---

१ बकरी । २ शिखर, चोटी । ३ उक्ति । ४ दश तरह की ।

२६४. दयानिधि (३) ब्राह्मण पटनानिवासी

कुंद की कली सी दंत-पँनि कौमुदी सी दीसी विच बिच मीसी रेख अमी सी गरकि जात। बीरी त्यों रची सी विरची सी लखैं तिरछी सी रीसी अँखियाँ वै सफरी सी फरकिजात॥ रस की नदी सी दयानिधि को न दीसी थाह चकित अरी सी रति डरी सी सरकिजात। फन्द में फसी सी भरि भुज में कसी सी जा के सीसी करिबे में सुधासीसी सी ढरकि जात॥ १॥

२६५. द्विजराम कवि

जस को सवाद जो पै सुनो कवि-आनन सों रस को सवाद जो पै और को पियाइये। जीभ को सवाद बुरो बोलिये न काहू कहूँ देह को सवाद जो निरोग देह पाइये॥ घर को सवाद घरनी को मन लिये रहै धन को सवाद सीस नीचे को नवाइये। कहै द्विजराम नर जानि कै अजान होत खैबे को सवाद जो पै और को खवाइये॥ १॥

२६६. द्विज नंद कवि

गौन की नवेली तू भवन ते न वाहिर हो कुच तेरे कंचन मनोजद्युति हरिहै। फूल ऐसी माल औ दुकूल ऐसी चपला सी लालितन देखे चिलकैन सी नजरि है॥ कहै द्विज नन्द प्यारी पूतरी छपाये चलौ अब तौ ये तेरे नैन री पखान फरि है। ऐसी कसैवाती तू तौ नेक ना डराती काहू छाती ना दिखाउ कोऊ छाती फारि मरि है॥ १॥

२६७ दीनदयालगिरि काशीवाले

बीर कालिंदी के तीर नीर बीच निरख्यो मैं नीरद नवल एक करत कलोल री। करत बिहाल चित्त चोरि लेत दीनद्याल चमकै

---

१ क्रोध से भरी। २ मछली। ३ चमक। ४ बेहया। ५ मेघ।

चहूँघा चारु चपला[1] अडोल[2] री ।। जागि रही चहूँ ओर चन्द की अमन्द कला तामें चलैं खंजन द्वै नाचत अमोल री । रही ना निचोल[2] सुधि जब ते वे सुने बोल सोभा बरसाय मति कीनी अति लोल[3] री ।। १ ।। चपला अडोलैं पै अमोल पिक बोलैं बोल राजति भुजंगन में कंजन की लाली री । सरसी गँभीर भीर हंसन की जासु तीर तहाँ उदै द्वै रही विचित्र नखताली री ।। कुहूरैनि[5] राकापति संग सजै दीनदयाल तामें उभैभानु लोल नचैं चारु चाली री । एक ही तमाल पर मिले एक काल आजु अजब तमासा लख्यौं कुंज बीच आली री ।। २ ।।

(अन्योक्ति-कल्पद्रुम)

दोहा—कैर छिति निधि ससि साल में, माघ मास सित पच्छ ।
तिथि वसंत जुत पंचमी, रवि वासर सुभ स्वच्छ ।। १ ।।
सोभित तेहि अवसर विषे, वसि कासी सुखधाम ।
विरच्यो दीनदयालगिरि, कल्पद्रुम अभिराम ।। २ ।।

२९८. देवा कवि

छप्पै

विधि गयन्द जहँ लगे लोह लागो तिहि ठाहर ।
कमठ पीठि दै चक्कह करन कीन्हे तहँ बाहर ।।
सीत हरन के काज राज द्वै जुद्धन कीन्ही ।
मैं मैं जुरि जुरि लरैं पीठि काहू नहिं दीन्ही ।।
झगो सार अंतर परो रन जीते दोनों सही ।
देवा कहत विचारि कै न भारत न रामायन कही ।। १ ।।

नोट -यह कूट है अँगरखे का ।

२९९. देवकीनंदन शुक्ल मकरंदपुरवाले

प्रेम हंस लीने छाँह चित्तऊ हरष पायो जाग्यो पंचबान जिहिं

---

१ चंचल । २ कपड़े की सुध । ३ चंचल । ४ स्थिर । ५ अमावस ।

लगि छवि छाई है। देवकीनँदन कहै सारँग गुनीन गायो पाहरू पुकार्‌यो धुनि चटक लगाई है॥ दृग मुख अधर बिलोकिहौ तौ रीझो लाल ऐसी एक बाल देखि कुंजन में आई है। दुपहर कैसो कंज इंदु अधराति कैसो प्रात जैसो रबिबिंब तैसी अरुनाई है॥ १॥ वै छगुनी के छुये ससकैं कर बार सी पातरी जो मैं चढ़ावों। दंतन दाबतीं जीभ इतै उतै लाल की आँखिरुखाई बचावों॥ देवकीनंदन मोको महा दुख कासों कहौं इत काहि लखावों। छोड़िहौं गाँव बबा कि सौं कान्ह चुरी पहिरावन मैं नहिं आवों॥ २॥

सासु मेरी राधिका की सौति सो न जानै कछू पाँचै ज्ञानइन्द्रिन सों ज्ञान ना बताई है। देवकीनँदन कहै सुनौ हो बिहारीलाल पथिक तिहारे भाग ही ते रैनि आई है॥ तीनि मेरी दूती ते प्रबीन परमेस्वर ने रची बिधि एकै करि हमैं कठिनाई है। एक सुरदास दासी एक जगन्नाथदासी एक भृगुदासदासी ताकी एक आई है॥३॥ नखत से मोती नथ बेंदिया जराइ जरी तरल तरौनन की आभा मुख फूटी है। देवकीनँदन कहै तैसी चारु चंपकली पँचलरी मंत्र मोहनी की गति लूटी है॥ चूनरी कुसुंभी रंग ऊनरी परत तन कलित किनारी सों ललित रस लूटी है। बाल तेरी छाती में हमेल छवि छूटी मानों लाल दरियाई बीच बेलदार बूटी है॥ ४॥ कुंजन ते आवत नवेली अलबेली चली सोभा अंग-अंगन की जागत उदै भई। देवकीनँदन मुख-छबि की निकाई लसै चारो ओर चाँदनी प्रकास करि ह्वै गई॥ स्याम मुख भाखी तुम को हौ कित जैहौ सुनि बैन मग थाकी फिरि वाही ठौर ठै गई। लालन की ओर दृग जोरि कासि कोरि तन तोरि झकझोरि चित चोरि करि लै गई॥ ५॥ कैधौं स्याम बरनी सिंगार रस रूप धारे ललित कपोल पर जागो सुख मूल है। कैधौं काम खेह है कै ऊगो छवि नेह

बीन देवकीनँदन कैधौं सौतिन को सूल है ॥ कैधौं चंदमंडल में भीम कै गयंदन को वाल मत भ्रमर रहोई भ्रम भूल है। प्यारी तेरे सरबसुहाग भरे मुखपर वारियत तीनों लोक तिल के न तूल है ॥ ६ ॥ चाँदी के चबूतरा पै बैठी चारु चंदमुखी जोतिन के जाल छबिजाल में जुरे परैं। देवकीनँदन तैसी चाँदनी सुहात रूगी आनँद बढ़त कोटि दुख हू दुरे परैं ॥ राजत चँदोवा स्वेत हीरा पुहे आसपास झुकि झुकि झवा सोने रूपे के सुरे परैं। होती जोति विमल उज्यारे जल भरे छूटैं चारो ओर मोती से फुहारे बिथुरे परैं ॥ ७ ॥ गुड़हर गेंदा गुलसब्बो सी बिसाल छवि लाल कचनार सी अनार सम मानी है। सूरजमुखी सी गुलपेंचा सी जपा सी सोहै देवकीनँदन गुलेलाला सम जानी है ॥ चंपा सी चमेली सी जुही सी सोनजूहीसम सेवती गुलाब गुलदाउदी प्रमानी है। कलपतरोवर से फूल लसैं नंदलाल चारो ओर ललना लता सी लपटानी है ॥ ८ ॥ ल्याई गूँथि हार चारु चंपककली के चारि दीबे को बिचारि गई लालन निहारई। देवकीनँदन पहिरावत मगन भई ठगन ठगी सी ठाढ़ी वाही ठौर ही ठई ॥ स्याम कर गही सोई वाके सुधि रही भई मूरछा नई सी हेरि फेरि उर में लई। कीनी केलि जौलौं भरि अंक वनमाली तौलौं छाड़ौ कर कर कर मालिनि कहै गई ॥ ९ ॥

३००. देव कवि काष्ठजिह्वा स्वामी बनारसी

(विनयामृत)

पद

जग मंगल सिय जू के पद हैं।
जस तिरकोन जंत्र मंगल के अस तरवन के कद हैं ॥
मलहिं गलावहिं जे तन मन के जिन की अटक बिरद हैं।
मंगल हू के मंगल हरि जहँ सदा बसे ये हद हैं ॥

ऊपर गौर राजहंसन से मोती नखर अदद हैं।
पदुम मनहुँ जागी मानस के मधुलिह विगलित मद हैं॥
काल-सरप के डसे जीव ये विषय निरत बड़ बद हैं।
देव सुधा सम विनय अमृत की संजीवन औषद हैं॥ १॥

२०१. दूलह त्रिवेदी बनपुरावाले
(कविकुलकंठाभरण)

आये री पीव परोसिनि के सु भई सुनि मो मन मोदमई है।
हौं कवि दूलह वाकी दसा लखि जाति जरी तन तापतई है॥
मोहिं बकावैं सबै घर की ये कहौ बहू वेदन कौन भई है।
और के आनँद आनँद होत जरै जिय की यह रीति नई है॥ १॥

आली फूलबाग में अरेखा अनुराग भरी देखे तहाँ ऐसी भाँति चरित विहारी के। कहै कवि दूलह कहे न बनै मो पै कछू लहलहे लोचन ललित सुकुमारी के॥ फूले अंग-अंग बाढ़े उरज उतंग फैले छबि के तरंग मुख चंद उजियारी के। ज्यों ज्यों लेत पिय परनारी भरि गोद त्यों त्यों हिये होत आनँद प्रमोद प्रानप्यारी के॥ २॥ सुन्दर सुबेस मध्य मूठी में समात जाको प्रगटो न गात बेस बंदन सँवारी है। कहै कवि दूलह सु रमनी निवाज औ छटाँक भरी तौल मानों साँचे कीसी ढारी है॥ पेटी है नरम कर लीजिये गुविंद गहि निपट नवेली पै समर सरवारी है। रीझै गुन मान गोसे गोसे सों मिलैगी मुलतान की कमान के समान प्रानप्यारी है॥ ३॥ पौढ़ी परजंक पर कोमल कनकलता लागे द्वै कनक गिरि बनक बिसाल है। कहै कवि दूलह सु अंगन सहित तामें तरुन तमाल छबि झलकत जाल है॥ कमल के नाल पर राजत जुगल रंभा रंभा पै कमल जुग सोभित सनाल है। कमल पै कुरबिंद कुरबिंद पर चंद चंद पर चढ़े चारु बोलत मराल है॥ ४॥

३०२. देव कवि प्राचीन समाना ज़िला मैनपुरीवाले

बनि साहब आजम साह के साथ छकी वनिता छवि छावति है।
अँगिरात उठी रति मन्दिर ते मुसक्याय जम्हाय रिझावति है॥
चख जोरि कै देव मरोरि यहै उपमा हिय मैं उमँगावति है।
रस-रंग अनंग अथाह भरो सु मनो सुख सिंधु थहावति है॥ १॥

(काव्यरसायन ग्रन्थे अद्भुत रस को उदाहरण)

आई बरसाने ते बुलाई बृषभानसुता निरखि प्रभान प्रभा भान की अथै गई। चकि चकवान के चुकाये चकचोटन सों चकृत चकोर चकचौंधी सी चकै गई॥ देव नंदनंदन के नैनन अनंदमई नंदजू के मंदिरन चंदमई है गई। कंजन कलिनमई कुंजन अलिनमई गोकुल की गलिन नलिनमई कै गई॥ २॥

(अष्टयामग्रन्थे)

सूरजमुखी सो चंदमुखी को विराजै मुख कुंदकली दंत नासा किंसुक सुधारी सी। मधुर से लोचन बँधूकदल ऐसे ओठ श्रीफल से कुच कचबेलि तिमिरारी सी॥ मोती बेल कैसी फूली मोतिनमै भूषन सु चीर गुलचाँदनी सी चंपक की डारी सी। केलि के महल फूलि रही फुलवारी देव ताही में उज्यारी प्यारी फूली फुलवारी सी॥ ३॥

(षट्ऋतु)

डार द्रुम पालन बिछौना नव पल्लव के सुमन झँगूला सोहै तन छवि भारी दै। पवन झुलावै केकी कीर बतरावै देव कोकिल हलावै हुलसावै करतारी दै॥ पूरित पराग सो उतारा करै राई-नोन कंजकली नाइका लतानि सिर सारी दै। मदन महीपजू को बालक बसंत ताहि प्रात हलरावत गुलाब चटकारी दै॥ ४॥

(फुटकर)

नील पट तन पै घटान सी घुमाइ राखौ दन्त की चमक सों

छया सी बिचरति हौं । हीरन की किरनैं लगाइ राखौं जुगनू सी कोकिला पपीहा पिक बानी सों ठरति हौं ॥ कीच अँसुवान की मचाऊँ कबि देव कहै पीतम बिदेस को सिधारिबो हरति हौं। इन्द्र कैसो धनु साजि बेसरि कसति आजु रहु रे बसन्त तोहिं पावस करति हौं ॥ ५ ॥

बसि वर्ष हजार पयोनिधि में बहु भाँतिन सीत की भीति सही।
कबि देवजू त्यों चित चाह घनी सतसंगति मुक्तन हू की लही ॥
इन भाँतिन कीनो सबै तप जाल सुरीति कछूक न बाकी रही।
अजहूँ लौं इते पर सीप सबै उन कानन की समता न लही ॥ ६ ॥

गोरे मुख गोल हरे हँसत कपोल लोने लोचन बिलोल लोभ लीन्हें लोक-लाज पर। लोभा लखि लाल मन सोभा कबि देव कहै गोभा से उठत रूप सोभा की समाज पर ॥ बादले की सारी जगमग जरतारीदार कंचन किनारी भीनी झालरि के साज पर। मोती गुहे छोरन चमक चहुँ ओरन ज्यों तोरन तरैयन की तानी द्विजराज पर ॥ ७ ॥ घूँघुट खुलत अधै उलट ह्वै जैहै देव उद्धत मनोज जग जुद्ध लूटि परैगो। को कहै अलीक बात सोकहै अलोक तिय लोक लिहूँ लोक की लुनाई लूटि परैगो ॥ दैयन दुरात्र मुख नतरु तरैयन ते मंडल औ मटक चटाक टूटि परैगो। तो चितै सकोचि सोचि मोह मद मूरछा है छोर सों छपाकर छता सो छूटि परैगो ॥ ८ ॥

चोट लगी इन नैनन की दिनहू इन खोरिन सों कढ़ती हौ।
देखत में मन मोहि लियो छिपि ओट झरोखन के झँकती हौ ॥
देव कहै तुम हौ कपटी तिरछी अँखियाँ करि कै तकती हौ।
जानि परै न कछू मन की मिलिहौ कबहूँ कि हमैं ठगती हौ ॥ ९ ॥
देस बिदेस के देखे नरेस न रीझि कै कोऊ जु बूझि करैगो।

तातें तिन्हैं तामें जाति गिनें गुने औगुन सौगुनो गाँठि परैगो ॥ पाँडुरीवारो बड़ो रिझवार हैं देवजू नेक सुढार ढरैगो । छोहरा छैल वही जो अहीर को पीर हमारे हिये की हरैगो ॥ १० ॥

का सों करौं मोह मोहिं मोही की परी है देव मोहन से मोह महामाया में मिलाइगे । मनु से मनुस मन मन से मुनीस मन मानी मानधाता मानों मैन पघिलाइगे ॥ वावन से रावन से रामजू से खेलि खेलि खलन की खालनि खेलौना ज्यों खेलाइगे । काटे काल ब्याल ऐसे वली वलभद्र ऐसे वलि ऐसे वालि से ववूला से विलाइगे ॥ ११ ॥ वैठी सीसामन्दिर में सुन्दरि सवार ही ते मूँदि कै किंवार देव छवि सों छकति हैं । पीतपट लकुट मुकुट वनमाल धरि करि वेप पी कौ प्रतिविम्व में तकति है ॥ है कै निरसंक अति अंक भरि भेंटिवे को भुजन पसारति समेटति जकति हैं । चौंकति चकति चितवति उझकति उर भूमि लचकति मुख चूमि ना सकति है ॥ १२ ॥

३०२. दत्त कवि देवदत्त ब्राह्मण साढ़ि ज़िले कानपुरवाले

अंवर अतर तर चँदक चहल तन चंदमुखी चन्दन महल मैन साला से । खासे खसखाने तहखाने तर ताने तने ऊजरे विनौन छुये लागत हैं पाला से ॥ दत्त कहै ग्रीषम गरम की भरम कौन जिनके गुलाव आव हौज भरे ताला से । झाला सों झरत झर झांपन सों नारा वाँधि धारा वाँधि छूटत फुहारा मेघमाला से ॥ १ ॥ डोलै पौन परसि परसि जल वूँदन सों वोलैं मोर चातक चकित उठीं डरि मैं । कहाँ लौं वराऊँ दईमारे मैन वानन सों थकि रही केतिकौ उपाइ करि करि मैं ॥ दत्त कवि प्यारे मनमोहन न पाऊँ कहौ मन समुझाऊँ री कहाँ लौं धीर धरि मैं । छाये मेघ मगन सुहाये

१ एक राजा । २ कालरूपी सर्प । ३ चँदोवा । ४ डर ।

नभमण्डल में आये मनभावन न सावन की झरि मैं ॥ २ ॥
कीन्हे द्विज-द्रोह गये सकुल सहस्रबाहु नहुष भुजंग[2] भये सिविका[3] धराये ते । भूपति परीछित को तच्छक प्रसिद्ध डस्यो जूझि गये जादव कुमति उर आये ते ॥ सगर की संतति अनेक जरि छार भई इंद्र के सहस भग मुनि सॉप[4] पाये ते । कहै कवि दत्त कोऊ भूलि हू न बैर करौ पाला से बिलाइ जात विप्रन सताये ते ॥ ३ ॥
जटाके जमाये कहा नदी नद न्हाये कहा कंद मूल खाये कहा बनोबास के किये । मूड़ के मुड़ाये कहा द्वारका के जाये कहा छाप के लगाये कहा माला तुलसी लिये ॥ तिलक चढ़ाये कहा माला कें फिराये कहा तीरथनि न्हाये कहा दान दत्त के दिये । एतो सब किये कहा कोटि नाम लिये कहा जानकीजीवन जो पै केवल नहीं हिये ॥ ४ ॥ ल्याई हौं ललन कोटि कोटि छलबलन सों जाकी जोति देखे मैनका[5] न मन भाइये । सुखमा की सींव सुकुमारता की कहा कहौं दत्त कबि पूरे पुन्नि ऐसी बाल पाइये ॥ दूरि ह्वैहै दृगन को दाग याके देखत ही कलानिधि कांति कामकला सरसाइये । उर ते उतारि उरबसी[6] को मुरारि उरबसी के समान उरबसी सी लगाइये ॥ ५ ॥ चन्दन चढ़ावै ना लगावै अंगराग कछू चौसरा चँबेली को नवेली भार क्यों सहै । पैन्है ना जवाहिर जवाहिर से अंग दत्त भौरन के भय भाजि भौन भीतरै गहै ॥ रातिहू दिवस छबि छटा छहराती चारु अंगना अनंगी[7] की न ऐसी छबि का लहै । कैसे वह चंदमुखी आवै नंदनंद बंधु बधुन चकोरन के नैनन घिरी रहै ॥ ६ ॥
लाऊँ कहा कछु हाथ लिये ही हौं भोर ते लाल वहै जक लागी ।

---

१ मय खानदानके । २ सर्प । ३ पालकी । ४ गौतम ऋषि का शाप । ५ एक अप्सरा । ६ एक गहना । ७ कामदेव ।

छप्पै

पुहुमी पवन अकास बारि पावक ससि दिनमनि ।
अरु कपोत अजगर समुद्र मृग ते मतंग गनि ॥
लखि पतंग अरु मीन भ्रमर जुग विधि मधुमाछी ।
कै पिंगला निरास बाल लीला रुचि आछी ॥
द्विजकुमार कार्मुक विरंचि मनिधर गुन लीन्हो ।
मकरी भृङ्गी जोग जान अपनो तनु चीन्हो ॥
चौबिस गुरु सिच्छा प्रगट भेदु-बाद सब परिहरौ ।
मध्य सच्चिदानन्द-घन देवदत्त हरि पगु धरौ ॥ १ ॥

३०७. द्विजचन्द्र कवि

कोपि करबर गह्यो खग्गु लै खरगमानि भूतल खसाई मीर जेते सरदार हैं । कहै द्विजचन्द्र रुण्डमुण्डन पटित महि मुण्डन चमुण्डा लेत आमिष अहार है ॥ सोनित सलिल तीर गौरा को गोसाईं टेरै धौरा बहि चल्यो तहाँ पाउँ थिर ना रहै । काहे रे कुमार करै हाहे रे हिरंब करै होहो कहै जती पारबती कहै पार है ॥ १ ॥

३०८. दामोदरदास

पद

नागरि नव लाल संग रंगभरी राजै । स्याम-अंसे बाहु दिये कुँवरि पुलकि पुलकि हिये मंद मंद हँसनि पिया कोटि मदन लाजै ॥ तरु तमाल स्याम लाल लपटी अँगअँग बेलि निरखि सखी छबि सकेलि नूपुर कल बाजै । दामोदर हित सुबेस सोभित सखि सुख सुदेस नव निकुंज भँवर गुंज कोकिल कल गाजै ॥ १ ॥

३०९. देवीराम कवि

जोग अरु जज्ञ जप तप सबै आप में उलटि कैं पौन की राह छेकै ।
ज्ञान दरम्यान में ध्यान पैदा हुआ दान सन्मान की टेक टेकै ॥
ऋद्धि औ सिद्धि नौ निद्धि बीचारि कै दुःख औ सुःख को दूरि फेंकै ।

१ छोड़ दो । २ कंधे ।

देवीराम माशूक को हिंदै में डारिकै गिर्दे कै देखु चौगिर्दै एकै॥ १॥

३१०. दयाल कवि, दीनदयाल बंदीजन बैंती के महापात्र भौनजूके पुत्र

गोरे गात गेंद से गँसे हैं गदकारे गोल गजब गुजारत वै गोरी के उरोज द्वै। सफरी सुमेर-सिंग सीफर सरीफा कैधौं संपुट सरोज रोज दूनी दुति रहे छ्वै॥ भनत दयाल की गुरिंद गोला गालिब हैं कनककलस नीलमनि ते जड़े हैं कै। कामचकवै कै कसे कंचुकी नगारे की कुँदेरे के सिंधौरा की सुघर नट बटा वै॥ १॥

३११. धनसिंह कवि

तोही सों बनारस विहार करा जौन पुर तेरोई सुहाग पुर पुरखा बखानिये। अवधि तिहारी करि दिजै पुर आवत है तेरो परनामै जैति-पुर अनुमानिये॥ आवै बिजनौर बातैं भावै तू दिल्ली के बीच आगरे गुनिन धनसिंह जग जानिये। कासमीर डोलै बर उर पट नाहिं खोलै मानिये सलोनी मति मैनपुरी ठानिये॥ १॥ भोर ही चलत परदेस प्रानप्यारे सुनि मेरे दुख धाइ कै गगन घन छाये हैं। बूँदऊ न छूटै लाल चलिबे को ऊटै त्यों त्यों मेरो प्रान छूटै अब क्यों न झरि लाये हैं॥ कहै धनसिंह महा वारिद से देखियत बारि तन देत तौ क्यों वारिद कहाये हैं। संकट सहाये काम एकऊ न आये हाइ गरजन आये मेरी गरज न आये हैं॥ २॥

३१२. धीरजनरिंद, श्रीराजा इंद्रजीतसिंह गहरवार उड़छा बुंदेलखंडी

कुकुर-कुटुंबिनी को कोठरी में डारि राखो चिक दै चिरैयन की रोकि राखी गलियो। सारँगी में सारँग सुनाइ कै प्रवीन बीना सारँग दै सारँग की ज्योति करी मलियो॥ बैठी परजंक में निसंक ह्वै कै अंक भरैं करौंगी अधरपान मैनमद मिलियो। मोहिं मिले प्रानप्यारे धीरजनरिंद आजु हो बलि चंद नेकु मंद गति चलियो॥१॥

२१३. धनीराम कवि

एक पग ठाढ़े कै कै जल अधिकारे बीच सकुल ठिहारे गति भागै ताप घन की। बदन उघारि सूर ओर ही निहारै अनसन व्रत धारै ना विचारै रीति पन की॥ आजु लौं न ऐसी भई कैसी करौं धनीराम औसर बिचारि साध पूरी भई मन की। संग की बधूटी रहीं सिंग मैं जूटी आजु कमलन लूटी छबि बाल के बदन की॥ १॥ बदन बिसूरै सुधारस अवलोकै कंज बिकच निहारै नैन चारु समता ठये। चाँदनी की तेरी हाँसी सम कहि गानै बिंब ओठन बखानै बैन कहत नये नये॥ धनीराम अंग उपमान यों बिलोकि लाल होत है निहाल बाल बावरे से ह्वै गये। दूती के बचन सुनि चातुरी सों साने कछू मरम न जाने नैना अरुन कहा भये॥ २॥

२१४. धुरंधर कवि

मदन महीप के बिचच्छन नजरबाज पीछे लगे आवत छपद करै सोर हैं। सुकबि धुरंधर भनत अरविंदवन चौकी भरै चंपक चमेली चहुँओर हैं॥ सब ही के स्वारथ के सकल सुगंध सियराई सरवस के हरैया बरजोर हैं। कहाँ के समीर ये जु कंजन लगाये चले जात मलयाचल ते चंदन के चोर हैं॥ १॥

२१५. धीर कवि

कढ्यो सेल गाहि साहि आलम समत्थ साहि पत्थ से सुभट्ट ठट्ट औरै भारी भर को। धौंसा की धुकार धसकत धराधर धरै धीर धराधीस को धरकि तजै धर को॥ ब्रह्मंडमंडल में दंड दै अदंड बचै खंडन के मंडलीक मिलैं तजि घर को। छीरनिधि छलकि उछलि छीटैं छिति छाई मानो तापहीन तारागन टूटैं तर को॥ १॥

प्रबल प्रचण्ड मारतण्ड ते उदण्ड तेज चंडता बरिवण्ड साहि

आलम महाबलै । धोरे मुख होत धराधीसन के धाक सुनि ध्रुव-धाम धूरि सों धुरैटैं सुरलोक लै ॥ दिव्य दल चलैं दलैं दिग्गज दिगंतन में दौरे दरबरक करेरे दरिया हलैं । फनी फन फूटैं फुंकरत यों रुधिर-फुही रंग ज्यों फुहार जावकानि उरथै चलैं ॥ २ ॥

३१६. धौंकलसिंह बैस न्यावाँवाले

(रमलप्रश्न)

दोहा—गुरु गनपति रघुपति सिया, चरन-कमल उर आनि ।
रमलप्रश्न निज मति जथा, धौंकलसिंह बखानि ॥१॥
प्रश्न चतुर पट उमा सों, बरने सम्भु सप्रीति ।
सो अब भाषा मैं कहौं, करि दोहा की रीति ॥ २ ॥

३१७. धोंधे कवि ब्रजवासी

पद

तेरे मुख की निकाई मोपै बरनि न जाई अंग अंग छवि छाई । नयनन लगत सुहाई ऐसी रचि पचि विधि बिधि कै बनाई ॥ भौंहन की कुटिलाई नैनन अरुनताई नासिका सुवन बनी अधर सुधाई । धोंधे प्रभु के मन ऐसी भाई कहत न कछु बनि आई और सोहैं की सोहैं तेरिये दुहाई ॥ १ ॥

३१८. नरहरि कवि असनीवाले

नाम नरहरि है प्रसंसा सब लोग करैं हंस हू से उज्ज्वल सकल जग व्यापे हैं । गंगा के तीर ग्राम असनी गोपालपुर मन्दिर गोपालजी को करत मंत्र जापे हैं ॥ कवि बादसाही मौज पावै बादसाही ओज गावै बादसाही जाते अरिगन काँपे हैं । जब्बर गनीमन के तोरिबे को गब्बर हैं हुमायूँ के बब्बर अकब्बर के थापे हैं ॥ १ ॥

छप्पै

सर सर हंस न होत बाजि गजराज न घर घर ।
तरु तरु सुफर न होत नारि पतिब्रता न नर नर ॥

तन तन सुमति न होत मलयगिरि होत न बन बन ।
फनि फनि मनि नहिं होत मुक्त जल होत न घन घन ॥
रन रन सूर न होत हैं जन जन होत न भक्त हरि ।
नरहरि निरखि कबित्त कहि सब नर होइँ न एकसरि ॥ २ ॥

३१९. निहाल ब्राह्मण निगोहाँवाले

दोष करि पात्रक प्रदोष ते करत सोर चातक चकोर मोर चोर अहि चोटी के । सिलीमिली भींगुर भरोखे के नगीच नीच बीच बीच सारससतावैं जोर जोटी के ॥ सुकबि निहाल ताप तड़िता तड़पि ताप अंग अंग अखिल अनंग अंग गोटी के । रैनि रही छोटी नींद आँखिन अगोटी तामें लागे करै खोटी ये परेवा लाल चोटी के ॥ १ ॥

३२०. नोने कवि हरिलाल कवि बाँदावाले के पुत्र

तारागन तापै तापै छौना कलहंसन के मुरवा सु तापै तापै कदली जुगवि है । केहरि सु तापै तापै कुन्दन को कुंड तापै लसत त्रिवेनी मनौ छबि ही की छबि है ॥ नोने कवि कहै नेही नागर छबीले स्याम दरस निहारे देत चारौ फल सबि है । कनकलता पै तापै श्रीफल सु तापै कम्बु कंज जुग तापै चंद तापै लसो रबि है ॥ १ ॥ पाँयन ते पींडुरी मँझावत गो जंघन में जंघन नितम्ब कटि खीन में थिरानो है । त्रिवली तरंगिनी को तरि फेरि चढ़त भो कुच गिरि-संधि में न तनक डेरानो है ॥ नोने कवि कहै ग्रीव तरल तरौनन के चिबुक कपोल केसपास में घिरानो[1] है । फेरि ना लखा री जरतारी की किनारिन ते प्यारी स्याम सारी की सरौटें[2] में हेरानो[3] है ॥ २ ॥ छूटी रतिरंग में अनंग की उमंगभरी आनि मुखचंद पै अनन्दित परै दिये । कछू सटकारी कछू अधिक गरूरवारी

---

१ घिरगया । २ शिकन=चुन्नट । ३ खोगया ।

कछू अनियारी स्याम सारी सों लरै दिये ।। नोने कवि कहैं बाल लाल मदमाती कछू आनि करि छाती जो सुहाइ सो भरै दिये । सौरभ बलकवारी झलकैं कपोलन पै अलकैं तिहारी प्यारी जुलुम करै दिये ॥३॥ सरसिज-सेज पै विराजै सरसिजनैनी देखि छवि ऐनी मैनका-सी लजि जाती हैं । लचकत लंक लचकीली भार वारन के मोतिन के हारन की सोभा अधिकाती हैं ।। नोने कवि कहै सारी जरद किनारीदार ढीली ढीली चाहनि लजीली मुसकाती हैं । अवला अलीगन की आती चली जाती हाल कहै लाल लाती पै न नेक मन लाती हैं ।। ४ ।।

३२१. नरायनराइ कवि बनारसी

नायक नवल नीको नेह ते सु आयो गेह ताहि तकि तेहँ[1] कियो मो मति उतावरी । हाहा कै नरायन निहोरि कर जोरि हारे तऊ मो कठोर हिये दरद न आव री ।। हाय अब मोते गयो हितू जो हमारो वह सोचन मरति नैन आँसू बहि आव री । कौन सुनै कासों कहों अब न हमारो कोऊ मेरी भटू मोहिं घनस्यामहि मिलाव री ।। १ ।।

इन आई कहाँ ते न पायो पिया अरी हाय हिये में दुसाले भरे ।
मन-मोहन मो मन काढ़ि लियो भई चाहति व्याकुल लागे गरे ।।
किहि कारन आये नरायन ना किन गायन गोल हवाले करे ।
घरबार विलोकि बिलोकत ही छन ही छन पाँयन छाले परे ।।२।।

३२२. निवाज कवि जोलाहा बिलग्रामवासी (१)

तोको तौ चाहती वै चित में अरु तू तो उन्हीं को हियो ललचावै ।
मैं ही अकेली न जानति हौं यह भेद सबै ब्रजमंडली गावै ।।
कौन सकोच रह्यो री निवाज जो तू तरसै औ उन्हैं तरसावै ।

[1] क्रोध ।

बांवरी जो पै कलंक लग्यो तौ निसंक है काहे न अंक लगावै ॥१॥
पीठि दै पौढी दुराय कपोल को मानै न कोटि पिया जऊ जोटत।
बाँहन बीच दिए कुच दोऊ गहे रसना मनही मन ओटत ॥
सोवत जानि निवाज पिया कर सों कर दै निज ओर करोटत।
नीबी[1] बिमोचत चौंकि परी मृगछौना सी बाल बिछौना पै लोटत ॥२॥

३२३. गुरु नानकसाहजी पंजाबवाले

दोहा—गुन गोबिंद गायो नहीं, जन्म अकारथ कीन।
नानक भजु रे हरि मना, जेहि विधि जल को मीन ॥१॥
बिषयन सों काहे रच्यो, निमिष न होइ उदास।
कहि नानक भजु हरि मना, परै न जम की फाँस ॥२॥

चौपाई

सुमिरो सुमिरि सुमिरि सुख पावो। कलिकलेस छन माहिं मिटावो ॥
सुमिरौ जासु विसंभर एकै। नाम जपत अगनित हि अनेकै ॥
वेद पुरान समृति सुचि आखर। कीन्हे राम नाम एकाखर ॥
किन कायक जिस जिया बसावै। ताही महिमा गनि नहिं आवै ॥
का पी एकै दरस तिहारो। नानक उन सँग मोहिं उधारो ॥
सुखमनी सुख अमृत प्रभु नाम। भक्तजना के मन बिसराम ॥

३२४. नवनिधि कवि

मुख सूखि गये रसना घर मंजुल कंज से लोचन चारु चितै।
कहै नौनिधि कन्त तुरन्त कहो कितो दूरि महावन भूरि अबै ॥
सरसीरुहलोचन नीर चितै रघुनाथ कही सिय सों जु तबै।
अब ही बन भामिनि पूछति हौ तजि कोसलराजपुरी दिन द्वै ॥ १ ॥

३२५. नेवाज कवि ब्राह्मण प्राचीन (२)

दाढ़ी के रखैयन की दाढ़ी[2]-सी रहति छाती बाढ़ी मरजाद

---

१ नारे की गाँठ। २ जलती।

अब हद हिन्दुआने की। मिटि गई रैयति के मन की कसक अरु कढ़ि गई ठसक तमाम तुरकाने की॥ भनत नेवाज दिल्लीपति दल धकधक हाँक सुनि राजा छत्रसाल मरदाने की। मोटी भई चण्डी बिन चोटी के सिरन खाय खोटी भई सम्पति चकत्ता के घराने की॥ १॥

३२६. नेवाज ब्राह्मण (३)

पारथ समान कीन्हो भारथ मही में आनि बानि सिर बाना ठान्यो समर सपूती को। कोर कटि गयो हटि कै न पग पाछे दयो लयो रन जीति करि मान मजबूती को॥ भनत नेवाज दिल्लीपति सों सआदतखाँ करत बखान एती मान मजबूती को। कतल मरद नद सोनित सों भरि गयो करि गयो हद भगवन्त रजपूती को॥ १॥

३२७. नरवाहन कवि भोगाँववाले

पद

मंजुल कल कुंज देस राधा हरि बिसद बेस राका नभ कुमुद-बंधु सरदजामिनी। साँवल दुति कनक अंग बिहरत लखि एक-संग नीरद मनि नील मध्य लसत दामिनी॥ अरुन पीत नव दुकूल अनुपम अनुराग-मूल सौरभजुत सीस अनिल मंदगामिनी। किसलय दल चित्त सैन बोलत पिय चाटु बैन मान-सहित गति पद अनुकूल कामिनी॥ मोहन मन मथत मार परसत कुच नीवि हार वेपथुजुत नेति नेति कहत भामिनी। नरवाहन प्रभु सु केलि बहुविधि भरभरति झेलि सुरतिरसरूपनदी जगत जामिनी॥ १॥ चलहि राधिके सुजान तेरे हित सुखनिधान रास रच्यो स्याम तट कलिन्दनन्दिनी। निरतत जुवतीसमूह रागरंग अति कुतूह बाजत रस-

१ मुगलों की अस्ल। २ अर्जुन। ३ हवा। ४ कामदेव।

मूल मुरलिका अनन्दिनी ॥ बंसीवट निकट जहाँ परिरंभन भूमि तहाँ सकल सुखद बहै मलयवायु मन्दिनी। जाती ईषद्विकास कानन अतिसै सुबास राका निसि सरद मास बिमल चन्दिनी ॥ नरवाहन प्रभु निहारि लोचन भरि घोपनारि नखसिख सौंदर्य कान्त दुखनिकन्दिनी। किसलय भुज ग्रीव मेलि भामिनि सुखसिंधु झेलि नव निकुंज स्याम-केलि जगतवन्दिनी ॥ २ ॥

३२८. नन्दलाल कवि

कैसी खुली अलकैं पियूपभरी पलकैं सरस नैन झलकैं कमल छबि तूलि गे। तेरी देखि बानी सुनि कोकिला लजानी तैं सुगंध अंध पुष्पगंध भौंर भीर भूलि गे ॥ तैं तौ चली बाहर बिहार संग मोहन के मोहिं पच्छिं पौन पट जोगिन के खूलि गे। सौतिन के सूलैं नंदलाल रूप फूलैं आजु तोहिं देखे राधा अनफूले बन फूलि गे ॥ १ ॥

३२९. नारायणदास कवि

पद

आइये जू भले आये कत सकुचत हो। सुरत-संग्राम करि सौतिन को सुख दीने याही रस भीने होय मोको तो रुचत हो ॥ तुम देखे रिस गई उपजी है प्रीति नई भई सो तो भई अब काहे धौं सुचत हो। नारायन मोहिं जानो वहै चेरी करि मानो कही जीय एती अभिलाप जू सुचत हो ॥ १ ॥

३३०. नीलसखी जैतपुर बुंदेल खंडी

पद

जय जय विसद व्यास की बानी।
मूलाधार इष्ट रसमय उतकर्ष भक्ति रससानी ॥
लोक वेद भेदन ते न्यारी प्यारी मधुर कहानी।

स्वादिल सुचि रुचि उपजै पावत मृदु मनसा न अघानी ॥
सकति अमोघ विमुखभंजन की प्रगट प्रभाव बखानी ।
मत्त मधुर रसिकन के मन की रसरंजित रजधानी ॥
सखी रूप नवनीत उपासन अमृत निकास्यो आनी ।
नीलसखी मनमामि नित्यमह अद्भुत कथन मथानी ॥ १ ॥

३३१. नेही कवि

टूटे फूटे घन गज घेरि घेरि रोकैं बाट उडुगन संग सैना अनगन लीनी है । जोगिनी लुटेरे दिया बारि घर घर पैठे घट घट माँझ आगि फूँकि फूँकि दीनी है ॥ झिल्लीगन चातक बिरह झनकार नेही तुम बिन गोपिन की सुधि-बुधि छीनी है । सूनो जानि सदन सिधारे स्याम द्वारका को ससि आनि ब्रज पर रतिवाह कीनी है ॥ १ ॥

छप्पै

लघु मध्यम गुरु कहौ कहा तन बंधन कहिये ।
चाह तृषित को कहा कहा अलि को भख चहिये ॥
सुमति न बोवत कहा कहा विन जनक कहावत ।
उत्तम तन कहि कौन कौन पट रसहि बतावत ॥
कहु कहा सिंह भोजन करत का सुनि कायर प्रान डर।
कहि नेही हंस बसत कहाँ चतुर कह्यौ की मानसर ॥ २ ॥

उड़नि गुलाल की घमंडि घन छाइ रह्यो पिचकी चलत धार रस बरसाई है । चाँदनी सरद बुक्का चंद मुख छवि फबी काँपत हिमंत भीजे दोऊ सुखदाई है ॥ धाइकै धरत पिय सिसकै सिसिर चीर केसरि सरीर ते बसंत दरसाई है । ग्रीषम गरूर बोल पिय सों कहत नेही फागु की समाज कै धौं छओ ऋतु छाई है ॥ ३ ॥

३३२. नैन कवि

प्रबल प्रचंड चंडकर की किरनै देखो वैहर उदंड नव खंड घुमि-

लत है। अवनि कराही को-सो तेल रतनाकर सो ज्वाल की जहर उगिलत है ॥ ग्रीषम की ज्वाल ज कराल यह काल ज्वालामुखि हू की देह पघिलत है। आसमान भूधर भभूका भयो भभकि भभकि भूमि द लत है ॥ १ ॥

३३३. निधान कवि (१)

लागी सु लगाइ लंक खेहनि खराब करौं मारि अहार मारजारे को। सुकवि निधान कान आँगुरीन सुनिहौं न घोर सोर झिल्ली झनकारे को ॥ भेकन की सानन मिटाइ डारौं मेटि डारौं गरब गरूर घन कारे जो पकरि कहूँ जाल सों जकरि तन फीहा फीहा करौं दईमारे को ॥ १ ॥

३३४. निधान कवि (२)

(शालिहोत्र)

छप्पै

सदर जहाँ जगजनित सुजस भुव बीज समप्प
बली मुरतजाखान दान करि थालर थप्यो
फिरि सैयद महमूद सींचि तरवारि वरी का
मुकुत अरिन के घाव पत्र कीन्हे सवाव धरि
खुर्रम सुसैद साखा सघन वादुल्लाखाँ सुमन हु
देत सकल मनकामना अलि अकबर फल प्रगट तु

३३५. निपटनिरंजन कवि

(शान्तिसरसी वेदान्त)

है जग मूत औ आपहू मूत है मूत ही के सँग मूतन सेज में मूत खटोली में मूत है मूत के संग में मूत ही एक अमूत निपट्टनिरंजन मूत के वास में मूत ही

तात को मूत औ मात को मूत औ नारि को मूत लै चूँवनलागा ॥ १ ॥

मरन न मन मनोरथ कौन उतपत मन गत नाहीं उन मन मनसा दुरी । वाचा को न लेस वाच्यारथ को न परवेस वचन को कोऊ महामुनि नाहिं की पुरी ॥ चित्रित विचित्र चतुरा न कोऊ महामुनि नाहिंन मुनीसुर अनीसुर को ता पुरी । चित्रित चतुर चतुरातमा न मानियत तुरिया-अतीत ताहि कहत तुरी-तुरी ॥ २ ॥

जागत है कि न सोइवो लोक सु सोवत है जग जोवन सोहै । आपनी हारि बिसारि कै आपु सु आपु बिसारि न खोवन सोहै ॥ सो निपटानिरअंजन जैसे को तैसो हुओ नहीं होवन सोहै । काहे को रोवत है विन काज सो तेरो सरूप न रोवन सोहै ॥ ३ ॥

३३६. नंदन कवि

वीर विरदैत बाँके वेदन विदित सुने सोभा-सुखसिंधु सींव वानक बनक को । कैसे तुम ताड़का सँहारी सुत-सेना-जुत-छूटत न डोरा गाँठि कंकन-कनक को ॥ नंदन यों रावल के भीतर नवेली अली करती विनोद अंग धरि कै जनक को । छोरौ कै निहोरौ कर जोरौ कहौ हारे हम, यह तौ न होय लाल तोरिबो धनक को ॥ १ ॥

३३७. नंद कवि

बोरी है पिचक झकझोरी है झटकि पट फोरी है कलस इहाँ बसै कोऊ कोरी है । जानौ जनि भोरी है कहूँ की कोऊ छोरी है न थोरी है ढिठाई जाकी बहियाँ मरोरी है ॥ नंदजू कहत कवि गोरी है तौ काको कहा जानत हौ कछू काके कुल की किशोरी है । गोपगन[१]धोरी है ज[२]नक जाको एहो कान्ह, प्यारे हरि होरी है तौ कहा बरजोरी है ॥ १ ॥ निपट अ[३]सित गात याही मग आवै प्रात कौन कहौ बात जात गौवन के पाछै री । कोटिन अनंग के अनंग[४]

---

१ गोपों में श्रेष्ठ । २ पिता । ३ काला । ४ अंग-रहित ।

होत देखे अंग बालक प्रसंग स्वच्छ काछनी को काछै री ॥ कहैं कवि नंद देखि आनँद को कंद रूप को न फँसि जात मंद हास-फंद आछै री। मोहतीं ततच्छन जगी सी जंत्रलच्छन वै आछीं आछी आछन की कुटिल कटाछै री ॥ २ ॥

३२८. नंदलाल कवि

हीरा मोती लाल नीले हरित जरद मनि मूँगा हेम बैडुरज रूप गाय छीर की। भूषन बसन धाम हाथी हय रथ भूमि दासी दास रानी दान करैं घनी पीर की ॥ नैन-बान मारि रूप-फाँसी करि बाँधि गरो नंदलाल मन चोरै तहाँ बिना सीर की। जमुना के तीर महाबारुनी परब माहिं ऐसी महा चोरटी तैं गोरटी अहीर की ॥ १ ॥
चारि फल चारि फूल चारि घन घूमि रहे चारि फल जाचत पियत बुंद माला के। चारि सुत अंबुज के दाबे कीर चंगुल सों सोहै चारि चंद पाति मूरति बिसाला के॥ चारि अलि गुंजत सरोवर के फूलन में अरथ करो कबीस सोभा बिंदुसाला के। चारि ओर कहरै चकोर और नंदलाल लोचन अघाने छवि देखि नंदलाला के ॥ २ ॥ अमित सिखंडिन की मंडी[1] धुनि मंडल में भींगुर भकोर भिल्ली भरप भरापै री। चंचल ह्वै चपला चमंकै चंड चारों ओर चातक चुनौती पीव-पीवहि अलापै री ॥ कहै नंदलाल गाढ़ अगम असाढ़ आयो दादुर दरेरन की दरत दरापै री। एरी उर काँपै प्राननाथ कुबिजा पै अब कौन सहै दापै धुरवान की धरा पै री ॥३॥

३२९ नंदराम कवि

त्यागि इतमामै नर जामै[3] पाइ रामै भजु मूढ़ धन धामै है बेकामै सब सामै रे। लोभ रसरा में मैन पस्यो फसरा में जमराज खसरा[4] मैं लिखि जैहै तू नकामै[5] रे ॥ और बसुधा मैं कहूँ पैहै न अरामै

---

१ मोरों की। २ छाई ३ मनुष्य का शरीर। ४लामान। ५ नाकाम=असफल।

नंदरामै कामदामैं मिलौ संतन सभा मैं रे। दामै जोरि चामै चिक-नामै नारि जामै धौं न जानै को कहा मैं फिरि जैहौं धौं कहाँ मैं रे ॥ १ ॥

३४० नाथ कवि (१)

मदनतुका-सी किधौं राधे कुंदका-सी मनों कंजकलिका-सी कुच जोरी ही विकासी है। गाँसी भरी हाँसी मुख भासी मोह-फाँसी मद जोवन उजासी नेह दिया की सिखा-सी है ॥ जाकी रति दासी रसरासी है रमा-सी कौन है तिलोतमा-सी रूपसदन विकासी है। काम की कला-सी चपला-सी कवि नाथ कि धौं चंपकलता-सी चारु चंद्रिका प्रकासी है ॥ १ ॥

३४१ नाथ कवि (२)

दीरघ दँतारे भारे जासों जलधर वारे काजर-से कारे जग जैतवार जंग हैं। घंटा घननाते झूल-झंपित सुहाते भौंरभीर भन-नाते और तजत न संग हैं ॥ नवल नवाव श्रीफजलअलीखान वली कवि नाथ भली भाँति करैं बहुरंग हैं। विंध्य सों वलंदवारे इंद्र के गयंद ऐसे हिम्मति के कंद मोहिं दीजिये मतंग हैं ॥ १ ॥

३४२. नाथ कवि (३)

समर के सागर उजागर धरम ही में नागर रसीले चितचोर वनितान के। चतुर चकोर मृग खंजन सरोजन के नाथ हैं जसीले ये वखाने कवितान के ॥ सूवन को मान महाराजन को सान वैरी-वृंदन विराजै ऐसो मान मघवान के। दवि जात देखत दवकि जात हहरात ईछन नरेसचंद मानिक सुजान के ॥ १ ॥ जस दस दिसन मैं छाइ रह्यो महाराज मानिक प्रचंड रिपुदल के दलन ते। वड़े वलवत्ता जे मवासी कलकत्ता भरे लीने लूटि मत्ता सवै

° चिकनाता है। २ जीतनेवाले। ३ इंद्र। ४ गढ़।

कर्त्ता के बलन ते ॥ प्रबल फिरंगी ऐसो तोप रामचंगी करैं घातैं बहुरंगी भरे हिम्मति छलन ते। फौज चतुरंगी तव चढ़त अभंगी नेक लागी नारिरंगी छोड़ि संगी के चलन ते ॥ २ ॥

३४३. नाथ कवि (४)

दिल्ली के अमीर दिल्लीपति सों कहत बीर दक्खिन सों दंड लैकै सिंहल दबाइहैं। जगती जलेसर की जोर लै सुमेर हू लौं संपति कुबेर के घराने की कढ़ाइहैं ॥ कहै कबि नाथ लंकपति हू के भौन जाइ जम हू सों जंग जुरे लोह को चबाइहैं। आगि में जरैंगे कूदि कूप में परैंगे एक रूपभगवंत की मुहीमै को न जाइहैं ॥ १ ॥

३४४. नाथ (५) हरिनाथ गुजराती ब्राह्मण काशीवासी
(अलंकारदर्पण)

दोहा—रस भुज वसु अरु रूपदे, सम्वत कियो प्रकास।
चंदवार सुभ सत्तमी, माधव पच्छ-उजास ॥
चंद सो आनन पूरो प्रकासऽरु नैन से. नैन कहावत तेरे।
देखी सुधा तुव बैन-सी भामिनि हैं परतच्छ रती रति मेरे ॥
नाथ भनै इन कुंदकली ते भये हिय दारक दंत घनेरे।
यों कर-कंजन ते विधि जू पुनि तोहिं सँवारी किते रँग दे रे ॥ १ ॥

३४५. नाथ कवि (६)

सुंभ-निसुंभ-बिनासिनि पासिनि बासिनि बिन्ध्य गिरीस की रानी।
संकर संग विलासिनि अंग हुलासिनि श्रीकमलासिनि दानी ॥
जाहि सदासिव ध्यान धरैं अरु मान करैं मुनि चातुर ज्ञानी।
नाथ कहै सोइ सैलकुमारी हमारी करैं रखवारी भवानी ॥ १ ॥

---

१ एक शस्त्र। २ सामना। ३ वैशाख। ४ शुक्ल-पक्ष। ५ पाश लिए।

३४६. नाथ (७) कवि ब्रजवासी

सुभीतै अचल कन्दरा वारि कुंजै सदन फूल फल चारु हरियै वसुन्धर । वरस मेह बूँदै छुटैं जंत्र जल ज्यों पुहुप चुन्यहर नीर सारँग पुरंदर ॥ गरज खग भँवर नाद वाजै वधू इन्द्रवामा लसै ज्यों सुमन को धनुर्धर । पिया लै तड़ित साथ यों स्याम घन नाथ सावन वनो है मदन-वाग सुन्दर ॥ १ ॥

३४७. नरोत्तम कवि

भोरही सों वह कौन सी पाहुनी आई तिहारे ही न्योति बुलाये ।
छोटी-सी छाती छवाँनि[1] लौं वेनी नरोत्तम रूप की लूटि-सी पाये ॥
सारी हरी अँगिया घनवेलि[2] की घूमत सो लहँगा थिरकाये ।
कंज-सो आनन खंज सो नैनन एँड़िन ईंगुर सो लपिटाये ॥ १ ॥

३४८. नरोत्तमदास कवि

(सुदामाचरित्र)

सीस पगा[3] न झँगा[4] तन में प्रभु, जानै को वाहि वसै केहि ग्रामा ।
धोती फटी सी लटी दुपटी यक पाँय उपानह की नहिं सामा ॥
द्वार खड़ो द्विज दुर्वल जानि रह्यो चकि सो वसुधा अभिरामा ।
पूछत दीनदयाल को धाम वतावत अपनो नाम सुदामा ॥ १ ॥

३४९. नैसुक कवि

होरी लगी अवही ते तुम इतरान लागे ऐसो जरि जाय ख्याल जामें लाज जायगी । परिहै जो रंग तो तिहारी सौं विगरि जैहै नई जरतारी नेक सारी भरि जायगी ॥ नैसुक निहारत हौ मूठी फेरि झारत हौ गैयन चरैया हो वलैया डरि जायगी । परिहै गुलाल मेरी आँखिन में लाल, तौ गोपाल यहि व्रज में जवालैं[5] परि जायगी ॥ १ ॥

---

१ एँड़ियों तक । २ एक प्रकार का वस्त्र । ३ पगड़ी । ४ जामा ।
५ अनर्थ हो जायगा ।

३५०. नीलकंठ त्रिपाठी, टिकमापुर के

खरी डर-भरी भरभरी उर परी रहै भरी भरी जाति ज्यों ज्यों राति नियराति है। मुख रसरीति प्रीति सखिन सों राखत पै तन-कौ न तन में प्रतीति अधिकाति है॥ नीलकण्ठ सोहति सकुच-भरे गातन सों सुरति की वात न सुनति, अनखाति है। हिये तन ताकि कसि बाँधै अँगिया की तनी पिय तन ताकि प्यारी पीरी परि जाति है॥ १॥ तन पर भारती न तन पर भार, तीन तन पर भारती न तन पर भार हैं। पूजैं देवदार तीन पूजैं देवदार तीन पूजैं देवदारती न पूजैं देवदार हैं॥ नीलकंठ दारुन दलेलखाँ, तिहारी धाक नाकती न द्वार ते वै नाकती पहार हैं। आँधरे न कर गहे बहिरे न संग रहे बार छूटे बार छूटे बार छूटे बार हैं॥ २॥

३५१. नवलकिशोर कवि

सखी-बेलि-बृंदन के सुख को बलाहक[1] भो भाँति भाँति दाहक[2] भो सौतिन की छाती को। नवलकिसोर नेह नाह को निबाहक भो ज्ञान को उमाहक भो गौरभ गुरु जाती को॥ एरी प्रियबादिनी अमोल बोल तेरो इतो एक ही बिलोक्यो रीति जैसें बुंद स्वाती को। व्यालन को बिष भो पियूष भो पपीहन को सीपिन को मुकुता कपूर केरै[3]-पाती को॥ १॥

३५२. नवल कवि

सूझत न वारापार लिख्यो प्रेम है अपार मिलन अथाह देखि धीरज उड़ात है। पाती को अधार पाइ परत सनेह-सिंधु बिरह-लहरि माँझ हियरा हिरात है॥ तौल गुनी नौल बँधी ढूँढ़त रतन औधि मूरति मरजि वाकी नेकु ना थिरात है। एक बेर बाँचि पुनि फेरि खोलि फेरि बाँचि बाँचि-बाँचि प्रानप्यारी बूड़ि-बूड़ि जात है॥१॥

---

१ बादल। २ जलाने वाला। ३ केले को।

३५३. नवलसिंह (२) कायस्थ, झाँसीवाले

छप्पै

सुभग सिद्धि सुभ वृद्धि सकल संतन सुखकारिनि ।
दुर्गति दुर्ग दुरंत दुःख दारुन दर दारिनि ॥
सरनागत नैपुन्य पुन्य कारुन्य बिहारिनि ।
जगत निरुपित रूप दुष्ट दैत्यन संहारिनि ॥
निर्मर्ष मर्ष हर्षित वचन सुरनपिनर्षि हरिहरनुते ।
सुमति विघ्नमय तव विभो जय जय जय गिरिवरसुते ॥ १ ॥
सुखद जु गुरु लघु बरन बसत जिहि तनु सुकुमारा ।
जिहि के दच्छिन बाम भाग द्वै विधि प्रस्तारा ॥
उभय मेरु कुच गद्य-पद्य रचना में बोलनि ।
द्विविध मरकटी मकरकादि-रचना सु कपोलनि ॥
जिहि अग्र सदा कल बरन की विमल पताका फरहरहि ।
सो सरस्वती विधि-भवन सम सुखद बास मम उर करहि ॥ २ ॥

३५४. नंदकिशोर कवि

(रामकृष्णगुणमाल)

पाजो झँगा दुपटा पटुका रँग राजत कुंकुम के चटकारे ।
माल गरे मनि कुंडल भूषन जोति जगै भुज भूषन न्यारे ॥
तीर कमान लिए सरजू नदी तीर खड़े रघुबीर निहारे ।
नील नए घन से तन के जन के मन के पन के रखवारे ॥ १ ॥

३५५. नायक कवि

सूरताई आँधरे में दृढ़ताई पाहन में नासिका चनान- मध्य नौन रही हाट में । धर्म रहो पोथिन बड़ाई रही वृच्छन बँधेज परापाँतिन में पानी रह्यो घाट में ॥ यहि कलिकाल ने बिहाल कीन्हो सबै जग

१ ब्रह्मलोक ।

नायक सुकवि कैसी बनी है कुठाट में। रजं रही पंथन रजाई रही सीतकाल राई रही राई ते रनोंई रही भाट में ॥ १ ॥

३५६. नबी कवि

मृग कैसे मीन कैसे खंजन प्रबीन कैसे अंजनसहित सितँ-असित जलद से। चर से चकोर से कि चोखे कंडकोर से कि मदनमरोर से कि माते राते मद से ॥ नबी कबि नैना से की और नैन बैना से कि सीपड़े सलोना मध्य राखे मृगमद से। पय से पयोधि से कि और सोंधे सौध से कि कारे भौंर के से अनियारे कोकनद से ॥ १ ॥

३५७. नागर कवि

भादौं कि कारी अँध्यारी निसा लखि बादर मन्द फुही बरसावै।
स्यामाजी आपनी ऊँची अटा पै छकी रसरीति मलारहि गावै ॥
ता समै नागर के दृग दूरि ते चातक स्वाति की मौजहि पावै।
पौन मया करि घूँघुट टारै दया करि दामिनी दीप दिखावै ॥ १ ॥
गाँस गँसीली ये बातैं छिपाइये इश्क ना गाइये गाइये होलियाँ।
गेंद बहाने न बीर चलाइये सूधे गुलाल उड़ाइये झोलियाँ ॥
लोग बुरे चतुरे लखि पावैंगे दाबे रहौ दिल प्रीति कलोलियाँ।
पाँइ परौं जी डरो टुक नागर हाइ करो जिन बोलियाँ-ठोलियाँ २॥
देवन की औ रमापति की दोउ धाम की बेदन कौन बड़ाई।
संखऽरु चक्र गदा पुनि पद्म सरूप चतुर्भुज की अधिकाई ॥
अमृत-पान बिमानन बैठिबो नागर के जिय नेकु न भाई।
स्वर्ग वैकुंठ में होरी जु नाहिं तौ कोरी कहा लै करैं ठकुराई ॥ ३ ॥

---

१ धूल। २ मतलब यह कि भाट को ही अब राना कहते हैं, असल में राना कोई नहीं रहा। ३ सफ़ेद। ४ काले।

३५८. नरेश कवि

झरि से कीने लिए बन बाग ये कौने जु ग्राँवन की हरिग्राई।
कोयल काहे कराहति है बन कौने चहूँ दिसि धूरि उड़ाई॥
कैसी नरेस बयारि बहै यह कौन धौं कौने सो माहुर नाई।
हाय न कोऊ तलास करै ये पलासन कौने दवारि लगाई॥ १॥

३५९. नवीन कवि

भेटत ही सपने में भटू चख चंचल चारु अरे के अरे रहे।
त्यों हँसि कै अधरानहु पै अधरान धरे ते धरे के धरे रहे॥
चौंकी नवीन चकी उझकी मुख स्वेद के बुंद ढरे के ढरे रहे।
हाय खुलीं पलकैं पल मैं दिल के अभिलाष भरे के भरे रहे॥१॥

३६०. क्षत्रिय नवलदास कवि, गूढ़वाले
(ज्ञानसरोवर)

दोहा—भक्त एक ते एक जग, जनि कोउ करै गुमान।
कोउ प्रगट कोउ गुप्त है, जानि रहे भगवान॥ १॥
कोउ शुक्र कोउ बृहस्पति, कोउ मंगल की भाँति।
कोउ कचपचियन्ह उदय घन, सुमन अनेकन जाति॥ २॥

३६१. नरिंद कवि, महाराजा नरिंद सिंह, पटियालानरेश

चंदन की चरचा न रही न रही अरी आड़ जो भाल दई ही।
मोतिन की लरकी लर है दरकी अँगिया पहिरी जु नई ही॥
छींकत हौं पठई जु हती सु तौ तैं न सुनी सुनि हौं ही लई ही।
आयो न आयो बलाय त्यों तेरी तु काहे लरी लरिबे को गई ही॥१॥

३६२. नरोत्तम कवि (३)

आये मनमोहन विताइ रैनि और ही सों काहू सौतिजन पग

---

१ खौर।

जावक लै भाल को। सुकबि नरोतम सरोजनैनी सील करि बलि बलि आगे उठि मिली है गुपाल को ॥ अंचल सों पोंछि बेगि चंचल बिसाल नैन असन बसन करि दसन रसाल को। पाछे ह्वै कै कह्यो जाइ, अरी सहचेरी[2] धाइ[3] आरसी के महल बिछौना करु लाल को ॥ १ ॥

३६३. नीलकंठ मिश्र

जाके तन जोर आयो सर औ सराप हू को सो तो सहि सकै कैसे तेज अरितमा को। कहै नीलकंठ जब पंडव कुबुद्धि भयो भाँवी के भरोसे रिस राखी उर जमा को ॥ पीछे भयो भारथ तौ स्वा-रथ कहाँ को भयो मिटि गयो पानी जब रानी[5] आनी सभा को। छत्रीतन पाइ तियताड़न दृगन देखैं फूटै क्यों न हिया छत्री छिँया[6] ऐसी छमा को ॥ १ ॥ जोति सी जगी रहै जो सौतिऊ जगी रहै जो मेरे जान पाइ रूप भूपति जगी रहै। नीलकंठ निरखि लजानी पन्नगी रहै सराह तनगी रहैं समान ता न गीर है ॥ ऐसी कछू हेरि हरि लेत हरि नीकी छबि हरिनी की छबि जाहि देखत ठगी रहै। लाल से रिझत है री लाल सकबार फार लाल से अधर लखि लालसै लगी रहै ॥ २ ॥

३६४. नारायणदास

दोहा—अजर अमर की रीति सों, विद्या-धनहि बढाव।
मनहु मीचु चोटी गहे, देत बार नहिं लाव ॥ १ ॥
जासों सब संसय मिटै, अनदेखा सो देखु।
पढ़िबो पोढ़ी आँखि है, अपढ़ अंध करि लेखु ॥ २ ॥

---

१ महावर। २ सखी। ३ दौड़। ४ होगी। ५ द्रौपदी। ६ छी-छी।

३६५. नाभादास कवि, अग्रदासजी के शिष्य
(भक्तमाल)

छप्पै

संकर सुक सनकादि कपिल नारद हनुमाना ।
बिपकसेन परलाद् बलिऽरु भीषम जग जाना ॥
अर्जुन ध्रुव अँबरीष बिभीषन महिमा भारी ।
अनुरागी अक्रूर सदा ऊधो अधिकारी ॥
भगवन्त भक्ति अवासिष्ट की कीरति कहत सुजान हैं ।
हरिप्रसाद रस स्वाद के भक्त इते परमान हैं ॥ १ ॥

३६६. नरसी कवि

पद

ध्यान धरि ध्यान धरि नंदनी कुँअर नू जे थकि अखिल आनंद पाम्ये । अष्ट महा सिद्धि ते द्वारऊ मो रहे देह ना दुकृत ते दूर वाम्ये ॥ वृंदावन महामुरलिका धुनि सुनि गोपिका केरँडा वृंद आवे । नरसैयाँ ने मने आनंद अति घणों पुष्प मुक्ताफल लेइ वधावे ॥ १ ॥

३६७. नारायणदास वैष्णव
(छन्दसार पिंगल)

दोहा—श्रीगुरु हरि-पद-कमल को, बंदि मनोज्ञ प्रकास ।
छंदसार यह ग्रंथ सुभ, किय नारायनदास ॥ १ ॥
पिंगल छंद अनेक हैं, कहे भुजंगम-ईस ।
तिन ते लिए निकारि मैं, द्वादस अरु चालीस[२] ॥ २ ॥

धीर समीर सु वै मुरली तट औ जमुना छवि तुंग तरंगित ।
फूलि रहे द्रुम कुंजन-कुंज करैं अलिपुंज पराग सने हित ॥
श्रीवृषभानसुता, नँदनन्दन के गुनगान सुने जित ही तित ।
कौन सुनै सु कहौं किहि सों ब्रज की छवि मो मन में खटकै नित ॥१॥

१ शेष भाग । २ बावन छंद उनमें से चुनकर कहता हूँ ।

३६८. नरिंद कवि प्राचीन

फूलि रही माधुरी रसाल लता साधु री पलासन धुराधुरी अनेक रंग घेरे हैं। सीतल सुगंध मंद दच्छिन के पौन मान-मोचन नरिंद हरिनाच्छिन केरे हैं ॥ प्रफुलित कुंजै त्यै गुलाब आलि गुंजै तोहिं जोहन को मोहन परत पाँय मेरे हैं। हेरै क्यों न बन ततलाय कहा ऐसी रही तन हू में अनगन ठनगैन तेरे हैं ॥ १ ॥

३६९. नवखानि कवि

प्यारी को बुलाइ चित्रसारी देखिबे के मिस लाई वह सखी जहाँ सोइबे को धाम है। प्यारे को निहारि परजंक में मयंकमुखी संक मानि भाजी राजी लंकै अति छाम है ॥ बेनी मृगनैनी की कुँवर कान्ह गहि लई ऐसी भाँति भई नवखानि अभिराम है। भौंरन की चारु चटकीली परतंचा खैंचि तमक्यो चढ़ावत कमान मानो काम है ॥ १ ॥

३७०. नंददास ब्रजवासी

पद

राम-कृष्ण कहिये निसि-भोर।

अवधईस वे धनुष धरे, वे ब्रजजीवन माखन-चोर ॥

उनके छत्र-चँवर-सिंहासन भरत, सत्रुहन, लछिमन जोर।

उनके लकुट, मुकुट, पीतांबर गायन के सँग नन्दकिसोर ॥

उन सागर में सिला तराई, उन राख्यो गिरि नख की कोर।

नन्ददास प्रभु सब तजि भजिये जैसे निरतत चंद चकोर ॥ १ ॥

३७१. परसाद कवि

बड़ी पातसाही ज्यों ही सलिल मलै के बड़े बूड़े राजा-राव पै न कीन्हे तेग खरको। देन लागे नवल दुलहिया नवरोजन

---

१ मृगलोचनियों के। २ नखरे। ३ भागी। ४ कमर। ५ पतली।

मैं नीठि-नीठि पीछे मुख हेरै आनि घर को ॥ वाही तरवारि बादसाहन सों कीन्ही रारि भनै परसाद अवतार साँचो हर को। दुहूँ दीन जाना जस अकह कहा ना ऐसे ऊँचे रहे राना जैसे पात अछैबर[1] को ॥ १ ॥ आये कान्ह द्वार आली वेगि उठि देखौ धाइ, काहू यह बात कही आनँद सुधामई। केतिकौ दिना की हिये तपनि बुझाइबे को हौं हूँ परसाद प्यारे देखन तहाँ गई ॥ झूठो सुख सापने हू करन न पाई ऐसी एहो निरदई स्याम तुरत दगा दई। जौलौं भरि नैन वह मूरति निहारि देखौं तौलौं नैन छोड़ि नींद वैरिनि विदा भई ॥ २ ॥

३७२. पदमाकर भट्ट बाँदावाले

भट्ट तिलगाने को बुँदेलखण्ड-वासी कवि सुजस-प्रकासी पद्माकर सुनामा हौं। जोरत कवित्त छंद छप्पय अनेक भाँति संसकृत प्राकृत पढ़े जु गुनग्रामा हौं ॥ हय रथ पालकी गयंद गृह ग्राम चारु आखर लगाइ लेत लाखन की सामा हौं। मेरे जान मेरे तुम कान्ह हौ जगतसिंह, तेरे जान तेरो वह विप्र मैं सुदामा हौं ॥ १ ॥ सम्पति सुमेर की, कुबेर की जु पावै कहूँ तुरत लुटावत विलंब उर धारै ना। कहै पदमाकर सु हेम हय हाथिन के हलके हजारन को वितर[2] विचारै ना। गंज-गज-बकँस[3] महीप रघुनाथराउ याही गज धोखे कहूँ तोहूँ देइ डारै ना। याही डर गिरिजा गजानन्द को गोई[4] रही गिरि ते गरे ते निज गोद ते उतारै ना ॥ २ ॥

(जगद्विनोद)

औरै भाँति कुंजन में गुंजरत भौंरभीर औरै भाँति बौरन के झौरन के ह्वै गये। कहै पदमाकर सु औरै भाँति गलियान छलियर

---

१ अक्षयवट प्रलयकाल के सागर में नहीं डूबता—ऊपर ही रहता है। २ देने में। ३ हाथियों के झुंड के झुंड दान करने वाले। ४ छिपायरही।

छबीले छैल औरै छबि छ्वै गये ।। औरै भाँति बिहँग-समाज में अवाज होति अबै ऋतुराज के न आजु दिन द्वै गये । औरै रस औरै रीति औरै राग औरै रंग औरै तन औरै मन औरै बन ह्वै गये ।। ३ ।। कूलन में केलिन कछारन में कुंजन में क्यारिन में कलित कलीन किलकंत है । कहै पदमाकर पराग हू में पौन हू में पातिन में पिकन पलासन[२] पगंत है ।। द्वार में दिसान में दुनी में देस-देसन में देखौ दीपदीपन[३] में दिपत दिगंत है । बीथिन में ब्रज में नवेलिन में बेलिन में बनन में बागन में बगर्‍यो बसंत है ।। ४ ।। गुलगुली गिलमैं गलीचा हैं गुनीजन हैं चाँदनी हैं चिकै हैं चिरागन की माला हैं । कहै पदमाकर त्यौं गजक गिजा हैं सजी सेज हैं सुरा हैं औ सुराहिन के प्याला हैं ।। सिसिर के सीत को न ब्यापत कसाला तिन्हैं जिनके अधीन एते उदित[४] मसाला हैं । तान तुकताला हैं बिनोद के रसाला हैं सुबाला हैं दुसाला हैं बिसाला चित्रसाला हैं ।। ५ ।। एकै संग धाइ नंदलाल औ गुलाल दोऊ दृगन गये री उर आनँद मढ़ै नहीं । धोइ धोइ हारी पदमाकर तिहारी सौंह अब तौ उपाइ कछु चित्त में चढ़ै नहीं ।। कासों कहौं कैसी करौं कैसे धरौं धीर हाय कोऊ तौ बताओ जा सों दरद बढ़ै नहीं । एरी मेरी बीर जैसे-तैसे इन आँखिन तें कढ़िगो अबीर पै अहीर को कढ़ै नहीं ।। ६ ।।

३७२. परतापसाहि कवि

(काव्यविलास)

चंदन छूटि गयो कुंचकुंभन, जात रही अधरान की लाली ।
अंजन धोइ गयो दृग खंजन देखि परै मुख की न बहाली ।।
कंपित गात ससंकित अंकित सेद[५] के बुंद लसैं छबिसाली ।
कीनो अरी मन मेरो निरास पी पापी के पास गई किन आली ।।१।।

---

१ पक्षिसमूह । २ टेसू । ३ द्वीप-द्वीप्र । ४ कहे हुए । ५ पसीना ।

द्वारका छाप लगै भुजमूल, कह्यो फल वेद पुरानन तौन है।
कागद ऊपर छाप सुनी, जिहि को सिगरे जग जाहिर गौन है॥
आपु लगाई सु कुंकुम की, सु सुहाई लगै छवि सों उर-भौन है।
छाती की छाप को प्यारे पिया कहिये हँसि याको महातम कौन है॥२॥
कंध सहेलिन के भुज मेलत खेलत खेल खरी इक जाम की।
अंगन अंगन भूषित भूषन जात कही न प्रभा उर वाम की॥
तौ लगि कुंज ते नंदकिसोर विलोकि वढ़ी दसा आतुर काम की।
सुंदरी रूप की मंजरी वाल सु मंजरी देखत मंजरी आम की॥३॥

गंजन असुर मनरंजन मुनीसन के भंजन धरा को भार भूमि-भरतार हैं। भारे भुजदंडन महेसधनुखंडन उदंडन के दंडन अखंड वलसार हैं॥ कहै परताप खलखंडन उदंड महिमंडल के मारतंड जगत-अधार हैं। प्रवल प्रमत्थ हत्थ समर समत्थ जुत गत्थ यों अकत्थ दसरत्थ के कुमार हैं॥ ४॥

३७४. पजनेश कवि पन्नावाले

(मधुप्रिया)

स्याम सरूप में सोहै वुलाक सखी सतमोल सुहाग ज्यों लीजै।
ढीली दगैं मुख मोरि जुटीं गिरीं जंघनि मैन मरूर मरीजै॥
हा लगी होत वुरी पजनेस पयान हू लौं जु यही तजवीजै।
या जमैजाम या सीसा सिकंदरी, यों दुरवीन लौं देखिवो कीजै॥१॥
विलौर की वारादरी जगी जोति जमुरुद की कुरसी वजै वीन।
गनै पहिली प्रतिदीपन दीपति दीपति ते पजनेस प्रवीन॥
प्रसेद के रूप दिठौना परी लट लागि रही जनु लोयन लीन।
मनो रतनाकर में रतिनाथ लिए छवि-वंसी वझावत मीन॥ २॥

दिन तो घरीको घन घेरि घहरान लागे आवति अँधेरी है है आभा इंदरन की। पथिक थोरी ही थोरी उमिरि अकेली

बीर अकुलाइ नाहीं गहौ गैल कंदरन की ॥ द्रुमन लतान में दिखाती यैनजीक ही सों दूरि दूरि ताईं सेतताइ मंदरन की । कहैं पजनेस कोसे दाहिने दुवोसे कोसे डगर नगीच बीच बाधा बंदरन की ॥ ३ ॥ चोत्रा चौक चाँदनी चँदोवा चिकै चौकी चौक चंपक चँपावली चमेली चारु चोज है । खासे खस फरस उसीर खसखानन में पजन कपूर चंदनादि करि चोज है ॥ लाली लखि ललित लली के लाल लोयन में अमल गुलाबदल मलत उरोज है । अवनि असीतल पै ग्रीषम तपी तल पै पिय हाथ हीतल पै सीतल सरोज है ॥ ४ ॥ निंदित गयंद केसरीन खंजनीन हंस दीन यों प्रवीन कीन आतुर अनंग चाल । मानों सब प्रभा को प्रकास सुद्ध जाल ह्वैकै कैधौं पर्व पाइ कै प्रमान बारि गंग पाल ॥ कैधौं चलो कांति-रूप अंगन अनंग साजि कैधौं अभ्रकंदुक प्रपाल मद प्रति ब्याल । लच्छ लच्छ भाँति को प्रकास में प्रकास भास मानों सप्त द्वीप प्रभाजाल जातरूपजाल ॥ ५ ॥ मुनि मन मंजु मौज मिस्रित मजे-जदार पजन प्रतच्छ देत दुति माहताबी ये । रद-छद-छिद्रधर-अधर तमोल-दाग चुंबन सरस रोस रसिक किताबी ये ॥ बिधुमुखबरन सुवर्न पीक पानन की भाषित जिन्हैं में बिधि निधि दिखलाबी ये । झलक झलान झला झलझल झलकत अमल कपोल गोल गहव गुलाबी ये ॥ ६ ॥ जलज सुकाकृति उतारि नथ नासिका सों करन कृतस्थल सुगच्छ प्रतिसुच्छवान । पजन प्रमस्थल है मिसिल नछत्रन की प्रथम नछत्रपति डीठि प्रति मोदमान ॥ सनीकृत कुंडली में सुभ्रित बिराजै बुद्ध सुभ्रित बिराजै बिधु बोधव्रत दिव्यत्रान । पछितात पूनो आजु अरविन्द ऊनो देखि सूनो बिन नथ मुख दूनो दूनो दीप्तिमान ॥ ७ ॥ तमतम तामद रसादि पद तोयद सी नीलक जटान पाट जटा भ्रुकुटी सी है । पजनेस कंदरप दीपति

छटा सी छूटी हाटक फटिक ओट चटक फटी सी है॥ कच कुच दुविच विचित्राकृतिवत वक्र छूटी लट पाटी घट तट लै पटी सी है। विरह असुभ्र पच्छ प्रिय सौं प्रदोप पाइ पन्नगी पिनाकी-पद पूजि पलटी सी है॥ ८॥
अलबेली अली पै धरे भुज को अँगरानी जँभाइ चितै त्रिवली। सरक्यो सिर चीर गिर्‌यो कटि ह्वै पजनेस प्रभा की जगी अवली॥ परचै जड़ी वाल की वेनी बँधी झलकै मुकुताली कपोलथली। विधु के रथ चक्रित चक्र मनो कल केंचुली नागिनि छोड़ि चली॥ ९॥

बैठी विधुकीराति कृसोदरी दरीची बीच खींचि पी निसंक परजंक पर लै गयो। पजन सुजान कवि लपटि लला के गरे झपटि सु नीवी कर जंघन सम्वै गयो॥ गोरो गोरो भोरो मुख सोहै रतिभीत पीत अंतसमै रक्त ह्वैकै स्वेत सो रजै गयो। मानो पोखराज ते पिरोजा भयो मानिक भो मानिक भये ही नीलमनि-नग ह्वै गयो॥ १०॥ ल्याई केलिभवन भुराइ भोरी भामिनी को फूलगंध कै फरस कीनो पौनरुख ते। कंचनकलित कृसतन रतिरमनीय लीनी गहि पीतम प्रसूनसेज सुख ते॥ कवि पजनेस अंक भरत हहा कै हरे सीवी कै समेटि साँस नीवी दाबि दुख ते। आहि करि उछरि सचोट पन्नगी-सी ऐंठि उमठि अरी री मैं मरी री कढ़ी मुख ते॥ ११॥ कवि पजनेस मनमथ के सदन पर संवुल झुलत भाल वृषभाननंदिनी। सुन्न दै सुधार्‌यो विधि बुध विधु अंक बंक दसगुनी दीपति प्रकासी जगवंदिनी॥ सेदकन मध्य दीठि रच्छक डिठौना ता पै छूटी लट डुलत कला जनु कलिंदिनी। मुखअरविंद ते समेटि मकरंदवुंद मानों निज नंदनि चुनावति मलिंदिनी॥ १२॥

३७५. परमेश कवि प्राचीन (१)

आवती जाती किती वट पूजन वाल वा काहू के संग सनै नहिं। ठाढ़ो रहै उत लालची लाल सनेह सों याहू से जात वनै नहिं॥

बीति गई तिथि यों परमेस सु और तिथान की कांति मनै नहिं ।
साँवरी सूरति सों अटकी बट की भटू भाँवरी देत गनै नहिं ॥१॥

घन की घमक औ बनक बकपाँतिन की बीजुरी-चमक करवाल सी दिखात री । ललित लतान लखियत है नदान और कहै परमेस त्यों बहुत बेस बात री ॥ मोरन को सोर चहूँ ओर होत ठौर ठौर दादुर की दूँदि-घोर करै तन घात री । सुखसरसावन लगे री लोग गावन को बिना मनभावन न सावन सुहात री ॥ २ ॥

३७६, परमेश भाट सताँववाले (२)

कोयन की कुरसी में करिकै कुमाच बैठीं बरुनी बरीख वीर बिलसनि बेरे हैं । पूतरी प्रबीन तेई पातुरैं बिलोकियत पलकन प्यादन के पेखियत फेरे हैं ॥ चारु चञ्चलाई चोपदार हैं हमेस बेस कहै परमेस डीठि भौंहन के डेरे हैं । आब माहताब भरे किम्मति किताब भरे मानत न दाब ये नवाब नैन तेरे हैं ॥ १ ॥

बागन बागन ह्वै कै पराग लै ज्यों ज्यों बहै यह बैहरि भूकन ।
त्यों त्यों परी परचण्ड महा परमेस उठै बिरहागि भभूकन ॥
कन्त बिदेस बसन्त समै हियरा हहरान लग्यो अब हूकन ।
नेह-भरो सिगरो तन जारिकै कैला किये यहि कैलिया कूकन ॥ २ ॥

३७७. प्रेमसखी कवि

कौसलकुमार सुकुमार अति मार हू ते आली घिरि आई जिन्हैं सोभा त्रिभुवन की । फूल फुलवाई में चुनत दोऊ भाई प्रेमसखी लखि आई गहे लतिका द्रुमन की ॥ चरन-लुनाई दृग देखे बनि आई जिन जीती कोमलाई औ ललाई पदुमन की । चलत सुभाई मेरो हियरा डराई हाय गड़ि मति जाँय पाँय पाँखुरी सुमन की ॥ १ ॥ छोटे छोटे कैसे तृन अंकुरित भूमि भये जहाँ तहाँ फैलीं इंद्रवधू बसुधान में । लहकि लहकि सीरी डोलत बयारि

और बोलत मयूर माते सघन लतान में ॥ धुरवा धुकारैं पिक दादुर पुकारैं बक बाँधि कै कतारैं उड़ैं कारे बदरान में । अंस भुज डारे खरे सरजू-किनारे प्रेमसखी वारि डारे देखि पावस-वितान में ॥ २ ॥

३७८. पुण्डरीक कवि

कहै पुंडरीक वै निसान फहरान लागे तोरन गुमान देखि धावनि कपीस की । अजहूँ तौ चेत क्यों अचेत तोहिं प्रेत लाग्यो सीता सुखदेनी लायो देवन तेंतीस की ॥ ताहि लै अँकोर कर जोरि मिलु राघव सों ना तो दस दिसा गेंद खेलैं दस सीस की। लंका-पति मूढ़ तेरी आई दसा दसमी रे दसमी विजै की आई औधपुर-ईस की ॥ १ ॥

३७९. परशुराम कवि

पद

सेवा श्रीगोपाल की मेरे मन भावै ।
मनसा वाचा कर्मना उर आन न आवै ॥
करि दण्डवत सनेह सों सनमुख सिर नावै ।
लोचन भरि भरि भाव सों हरि-दर्सन पावै ॥
प्रेम-नेम निहचै करि हरि के गुन गावै ।
यह प्रताप फल परसुराम हरिभक्ति दृढ़ावै ॥ १ ॥

३८०. प्रवीणराय पातुर ओड़छा

दोहा—जुबन चलत तियदेह ते, चटकि चलत किहि हेत ।
मनमथ वारि मसाल को, सैंति सिहारे लेत ॥ १ ॥
ऊँचे ह्वै सुर बस किये, सम ह्वै नर बस कीन ।
अब पताल बस करन को, ढरकि पयानो कीन ॥ २ ॥
बिनती राय प्रबीन की, सुनिये साह सुजान ।
जूठी पतरी भखत हैं, बारी बायस स्वान ॥ ३ ॥

दोहा लाल कह्यो सुनौ, चित दै नारि नवीन
नाको आधो बिंदुजुत, उत्तर दियो प्रवीन ॥ ४
आई हौं बूझन मंत्र तुम्हें निज सासन सों सिगरी मति
देह तजौं कि तजौं कुलकानि अजौं न लजौं लजि है सब
हाथ रहै परमारथ स्वारथ चित्त विचारि कहौ पुनि
जामें रहै प्रभु की प्रभुता अरु मेरो पतिव्रत भंग न होई ॥

छप्पै

कमल कोक[1] स्रीफल मँजीर कलधौत[2]कलस हर[3] ।
उच्च मिलन अति कठिन दमक बहु स्वल्प नीलधर ॥
सरवर सरवन हेममेरु कैलास प्रकासन ।
निसि-बासर तरुवरहि कास कुंदन दृढ़ आसन ॥
इमि कहि प्रवीन जल थल अपक अविध भजत तिय गौरि सँग
कलि खलित उरज उलटे सलिल इंदु सीस इमि उरज ढँग
छूटी लटैं अलबेली सी चाल भरे मुख पान खरी कटि छीन
चोरि नगारा उघारे उरोजन मो तन हेरि रही जो प्रवीनी
बात निसंक कहै अति मोहिं सों मोहिं सों प्रीति निरंतर कीन
छाँड़ि महानिधि लोगन की हित मेरे सों क्यों बिसरै रसभीनी

३८१. प्रवीन कविराय

कुंडलिया

यहि संसार असार में साखी एक न काम ।
सारे को सार्‍यो जन्यो सारी सों बिसराम ॥
सारी सों बिसराम राम सपने नहिं जान्यो ।
दया धरम उपकार कबहुँ नहिं उर में आन्यो ॥
कहि प्रवीन कबिराय करौं केहि की समता तिहि ।
स्रुतिमारग[4] को छोड़ि रहत अपमारग मन जिहि ॥ १

---

१ चकवा। २ सोने के कलश। ३ महादेव। ४ वेद का मार्ग। ५

नरक धाम जो तियन को रमत सदा नर नीच ।
धमधूसर-मूसर परी द्वै नितंब के बीच ॥
द्वै नितंब के बीच कबहुँ निकसी नहिं काढ़े ।
दिनदिन रहत तन्यान मनौ डोली के डाँड़े ॥
कहि प्रवीन कविराय बात मानों नहिं तरकै ।
साँची कहत बनाय कुगति है परिहौ नरकै ॥ २ ॥

कवित्त। कूर भये कुँअर मँजूर भये मालदार सूर भये गुपत[1] अमूर भये जबरे[2]। दाता भये कृपन अदाता[3] कहैं दाता हम धनी भये निधन निधन भये गबरे ॥ साँचेन की बात न पत्यात कोऊ जग माँझ राजदरबारन बुलैये लोग लबरे । भनत प्रवीन अब छीन भई हिम्मति सो कलिजुग अदलि-बदलि डारे सबरे ॥ ३ ॥

३८२. परम कवि महोबेवाले

राजत अमी के मद छाके कालकूट किधौं चंचल तुरंग की समाए नहिं काके हैं । पी के हियरा के मृग मीनन के थाके किधौं सौतिसाल है कै सुखमा के ऐन काके हैं ॥ परम कहत देखि खंजन हू थाके किधौं स्याम सेत ताके लाल आभा साधिका के हैं । छत्र छपाकर के भूपाल के छलाके चारु चंचल चलाँके नैन बाँके राधिका के हैं ॥ १ ॥ ढुरि ढुरि ढुरे बेनी बिपुल[4] नितंबन पै घेरि घेरि घुमड़त घाँघरो घनेरो है । फेरि फेरि फिरत निपट लचकीलो लंक फेरि फेरि दृग फेरि फेरि मुख फेरो है ॥ भुज की डुलनि औ खुलनि कुचकोरन की चाहि चाहि परमेस भयो चित्त चेरो है । झुकि झुकि झूकनि भरत घट[5] ज्यों ज्यों त्यों त्यों मैन के भभूकनि भरत घट[6] मेरो है ॥ २ ॥

---

१ गुप्त । २ शूर नहीं । ३ न देने वाले । ४ भारी । ५ घड़ा । ६ शरीर ।

३८३. प्रेमी यमन कवि
(अनेकार्थनाममाला—रामशब्दार्थ)

ईस नभ अस मृग मेरु धनु अरजुन संगी देव सिंह अन्य सिंह गुच्छ आनिये। दुन्दुभी[1] भँवर सठ अग्नि सूर सस अस्व जम के कौतुक कला गीत चित्र ठानिये ॥ जीव बासुदेव रिस गरुड़ गनेस काल त्रिवली औ मोती माल जलजन्तु जानिये। गजगति हंसगति नरगति त्रिया नदी सित सीतगुरु ऊँट रहिमान मानिये ॥ १ ॥

३८४. परमानन्द लल्लापौराणिक, अजयगढ़वासी

सम्भु से सुढार तालफल से उदार बीजपूर[2] से अपूरब कठोरता ढरत हैं। कंजकलिका से नारिकेरफलिका से गुच्छ फूलन के भासे कंदुकों[3] से उघरत हैं ॥ पर्मानन्द गहब गुराई पीनताई भरे खासे काम नट के बटा से सुधरत हैं। रोज रोज बाढ़त उरोज कामिनी के जातरूप[4] के से कुम्भ गजकुम्भ निदरत हैं ॥ १ ॥

३८५. प्राणनाथ बैसवारे के

संबत ब्योम नराच बसु, मही महिज[5] ऊर्ज[6] मास।
सुक्ल पच्छ तिथि नवमि लिखि, चक्रव्यूह-इतिहास ॥ १ ॥

मोदकछन्द

नमामि स्यामसुंदरं। गुमानकंधिमंदिरं ॥
कराल काल काल के। विरंचि लोकपाल के ॥
अभाग-नाग-केसरी। अपूत पूतना तरी ॥

छन्द

पांडव प्रबोधि मुरारि करि द्वारावती बिचरत सही।
कवि प्रान किमि स्रीपति-कथा नहिं जात पसुपति सों कही ॥
गोपाललालचरित्र पावन कहहिं सुनहिं जे गावहीं।
जन प्राननाथ सनाथ ते फल चारि[7] मंजुल पावहीं ॥ १ ॥

---

१ नगाड़े। २ नींबू। ३ गेंद। ४ सुवर्ण। ५ मंगल वार। ६ कार्त्तिक का महीना। ७ चार फल—धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष।

३८६. पदमेश कवि

छप्पै

ब्रह्म विष्णु सिव लिंग पद्म अस्कंद सुहावन।
वामन मीन वराह अग्नि पुनि कूरम पावन॥
नारद गरुड़ भविष्य ब्रह्मवैवर्तक नीको।
मार्कंडे ब्रह्मांड भागवत सबको टीको॥
पदमेस पुरान अठारहौ समुझि लेहु बुधिमान सब।
सब भुक्तिमुक्तिदातार ये गावत हैं पण्डित सुकवि॥ १॥

आयो आमखास में तमाम उमराय देखे कहीं खोजा काम को कछूक बात मान में। ताही समै ताही के सरकि संग तेग हिन्दी सहमत भागे जेते तुरुक बिवान में॥ पीरन मनाइ मीर मीरन सों कहैं केहू वीर लै सिधारे मढ़ि रहे न अठान में। राजा करनेस के करेरे पदमेस वीर तेरे कर कस्किला राखी मुगलान में॥ २॥

३८७. पूषी कवि मैनपुरीसमीपवासी

फूले अनारन किंसुक-डारन देखत मोद महा उर माँचै।
माधुरी-झौरन आँव के बौरन भौंरन के गन मंत्र से बाँचै॥
लागि रही विरहीजन के कचनारन बीच अचानक आँचै।
साँचै हुँकारैं पुकारैं पुखी कहि नाचै बनैगी बसंत की पाँचै॥ १॥

संगमरवर की सुधारी सरवरपारि[1] फूले तरवर सब विपिन सँ-आस्यो है। ठाढ़ी तहाँ प्यारी संग विहरि विहारी पुखी रैनि उजियारी इत वदन उज्यास्यो है॥ कान को तस्यौना छूटि परसि पयोधर[2] को धरनी परत कनी झरि झनकास्यो है। रोस भरपूर जिय जानि कै कलंकी कूर मानौ चन्दचूर[3] चन्द चूर करि डास्यो है॥ २॥

पीनस[4]सँवारो प्रवीन मिलैं तौ कहाँ लौं सुगंधी सुगंध सुँघावै।

---

[1] तालाब का किनारा। [2] स्तन। [3] शिव। [4] पीनस एक रोगका नाम है।

कायर कोपि चढ़ै रन में तो कहाँ लगि चारन चाव चढ़ावै ॥
जो पै गुनी को मिलै निगुनी तौ पुखी कहु क्योंकरि ताहि रिझावै ।
जैसे नपुंसकनाह मिलै तौ कहाँ लगि नारि सिंगार बनावै ॥ ३ ॥

३८८. पर्वत कवि

फैलि रह्यो बिरहा चहुँ ओर ते भाजिबे को कोउ पार न पावै ।
जानत हौ परबत्त सबै तुम जाल को मीन कहाँ लगि धावै ॥
चाहैं कछूक सँदेसो कह्यो सु तो जी महँ आवत जीभ न आवै ।
ऊधोजू वा मधुसूदन सों कहियो जो कछू तुम्हैं राम कहावै ॥ १ ॥

३८९. पृथ्वीराज कवि

कै पृथीराज छिप्यो अलि को गन कै घन की उमड़ी ठटियाँ ।
कै नग सों मखतूल सिंहासन कै सनि मंदिर की टटियाँ ॥
कै बिबिं[1] ब्याल[2] जुरे फन सों फन आनन-चंद अमी डटियाँ ।
कै दल काम को रोकन को तिय की पटियाँ तमकी घटियाँ ॥ १ ॥

३९०. पद्मनाभ

पद

हेली[3] नव निकुंज लीला रस पूरित स्रीवल्लभ बन मोरे ।
अँग रविपुन छिप न घन दामिनि दुति फल फल-पति दोरे ॥
करत अवेस विरह विरहिनि स्रुति भूतल बहुतक थोरे ।
पद्मनाभ मथुरेस बिचारत स्रीलछिमन भट सुत ओरे ॥ १ ॥

३९१. पारस कवि

लाग री ना इन बातन में हरि आये हैं जानु बड़े निसि भाग री ।
भाग री वैरिन की चरचा ते तजै गुरुं[4] मान पियारस पाग री ॥
पागरी[5] सोहै न पाँयन में कवि पारस तू तो है बुद्धि की आगरी ।
आग री लागै तिहारे हठै मनमोहन के उठि कंठ सों लाग री ॥ १ ॥

---

१ दो । २ सांप । ३ सखी । ४ भारी । ५ पगड़ी ।

३६२ प्रेम कवि

यह मानदसा चित चातुरी चाह हरे-हरे[1] नाहिं कहै हँस कै।
झिझकारनि पानि-निवारनि[2] वा मुसकानि रही हिय मैं बस कै॥
मुखचुंबन हेत दुरावन की भनै प्रेम हिये लगिवो मसकै।
रति के रस के कुच के मसके जे लई सिसके ते अजौं कसकै॥१॥

३६३. पुरान कवि

बाँसुरी के बीच एक भौंर डारि ल्याई सखी ढाँपि पटपल्लव सों महा बुद्धि भारी सों। भनत पुरान यामें आपु ही ते धुनि होत कान दै कै कह्यो सुनो राधा सुकुमारी सों॥ रीझि रीझि वारी ताहि आप ही मगन भई नभ तन चितै मुख मूँद्यो स्याम सारी सों। आँचर में गाँठि दै बिहँसि उठि चली आली प्यारी कही आज ह्याँ ही रह्यो न हमारी सों॥ १॥

३६४. पुरवीने कवि

दोहा—कहै परोसिनि सों तिया, निरखि सखी सुखदैनि।
चारि दिना की चाँदनी, फिरि अँधियारी रैनि॥१॥
गई न वदि संकेत को, बिलखै ब्याकुल बाल।
औसर चूकी डोमनी, गावै तालबेताल॥ २॥
लग्यो डंक मुख जाइये, जहाँ कुटिल अलि जान।
ज्यों मधि काजर-कोठरी, लागै रेख निदान॥ ३॥
फेरि मिलो न हिं देहि दुख, चहे जु नंदकुमार।
जैसें हाँड़ी काठ की, चढ़ै न दूजी बार॥ ४॥
सुंदरताई अकह[3] तन, बतियाँ सुख सरसात।
होनहार बिरवान के, होत चीकने पात॥ ५॥

३६५. परशुराम कवि

जपा[4] के कुसुम ताकी छबि के चतुर चोर मानिक के मीत

१ धीरे-धीरे। २ हाथ को हटाना। ३ अकथनीय। ४ दुपहरी का फूल।

अतिरोचक कलीब के। बिद्रुम[1] के दल द्वै बिराजैं हेमसंपुट में राजत अनूप बहु जन के नसीब के॥ भावती के अधर पियूष के धरनहार कहैं पर्सुराम रसदानी प्रानपीव के। बिंबन[2] के बादी अनुराग के से प्रतिबिंब रजोगुननायक कि बंधु बंधुजीव के॥ १॥

३६६. पतिराम कवि

एक समै सब गोपकुमारि पै खेलत आधिक राति बिहानी।
हौं हूँ गई दुरिबे को जहाँ सु दुरयो तहाँ मोहन हो अभिमानी॥
ये पतिराम लखे जब ते तब ते पल एक नहीं ठहरानी।
भागि अटा ते गई सगरी यों घटा से मनो बिजुरी बिझुकानी॥१॥

३६७. प्रह्लाद कवि

आजु आली माथे ते सु बेंदी गिरै बारबार मुख पर मोतिन की लरी लरकति है। धरत ही पग कील चूरे की निकसि जाति जब तब गाँठि जूरे हू की टरकति है॥ जानि ना परत पहलाद परदेस पिय उससि उरोजन सों आँगी दरकति है। तनी तरकाति कर चूरी चरकाति अंग सारी सरकति आँखि बाईं फरकति है॥ १॥

३६८. पंडितप्रवीन ठाकुरप्रसाद मिश्र, पयासी के

भाजे भुजदण्ड के प्रचण्ड चोट बाजे बीर सुन्दरी समेत सोवैं मन्दर की कन्दरी। मुगल पठान सेख सैयद असेष[3] धीर आवत हजारन बजार के से चौधरी॥ पण्डितप्रवीन कहै मानसिंह भूपति कमान पै अरोपैत[4] यों काम की सी कैबरी। सिंह के ससेटे गज बाज के लपेटे लवा तैसे भाजि भूतल चकत्तन की चौकरी॥ १॥ पावस अमावस की अधिक अँधेरी राति सासु है प्रबासै[5] मेरी ननँद नदान जू। सूनो सुखभौन है परोस को भरोस कौन पाहरू न जागत पुकार परे कान जू॥ पण्डितप्रवीन प्यारो बसत बिदेस

---

१ मूँगा। २ अनार। ३ सब। ४ चढ़ाते। ५ बाहर गई।

पति कौन को अँदेस अब रसिकसुजान जू। एहो ब्रजराज-राज सुनिकै अरज मेरी आजु बसि जैये बसि जैये तौ विहान[1] जू॥ २॥ आयो ऋतुराज आज देखत बनै री आली छायो महामोद सो प्रमोद बन भूमि भूमि। नाचत मयूर मद उन्मद मयूरनी को मधुर मनोज सुख चाखैं मुख चूमि चूमि॥ पण्डितप्रवीन मधुलंपट[2] मधुप-पुंज कुंजन में मंजरी को लेत रस घूमि घूमि। हेली पौन प्रेरित नवेली सी द्रुमनवेलि फैली फूलडोलनि में झूलि रही झूमि झूमि॥ ३॥ जादूगर साँवरो न जानी कस जादू करी पंडित-प्रवीन हौं बिकानी प्रानप्यारे पै। आँगन सों जात अटा नट की बटा सी गैल छैल की छटा सी छवि देखत हौं द्वारे पै॥ घूँघुट के ओट चोट लागी इन नैनन में ऐसी लोटपोट भई पीतपटवारे पै। आई पनिघट पै न घर की न घाट की हौं नोखो री नवल नट अटको हमारे पै॥ ४॥ उझकि झुकाय नेक लचकि लचाय लंकै[3] रसना कसकि दावि दसन अमोल जू। वदन विसाल स्रम-सेद को ललित जाल डोलत कलित कच कुण्डल कपोल जू॥ पंडितप्रवीन हार हलत उरोजभार चंचल है अंचल को उघरि निचोलै[4] जू। धन्य धन्य गेंद तोहिं गहते गुलाव-कर खेलत नवेली करि केलि को कलोल जू॥ ५॥ द्वार दढ़ किल्ली देत दिल्ली को जनावआली रूस की रियासति मसूसि कै त्रसत है। काबुल औ जाबुल जनाब में न ताब रही अरबी अरब्बिन पै काठी ना कसत है॥ पण्डितप्रवीन हठजंगी पै फिरंगी लोग गाढ़े गढ़धारिन को राहु सो ग्रसत है। आकिल अकूत वर महाराज मानसिंह वाजे बादसाह तेरी बाँह लौं बसत है॥ ६॥ बेल्ली को बितान[5] मल्ली-दल को बिछौना मंजु महल निकुंज है प्रमोद बनराज को। भारी

१ सुबह। २ मकरंद-लोभी। ३ कमर। ४ वस्त्र। ५ बेलोंका चँदोवा।

दरबार भिरी भौंरन की भीर बैठो मदन दिवान इतमाम कामकाज को ॥ पंडितप्रबीन तजि मानिनी गुमान-गढ़ हाजिर हजूर सुनि कोकिल अवाज को । चोपदार चातक बिरद बढ़ि बोलैं दरदौलतदराज महराज ऋतुराज को ॥ ७ ॥ हिन्दपति हैगो हिन्दुवान को निसान हाठि हिम्मति में कीरति हमीर प्रभुताई को । दान औ कृपान रुद्रदेव सों न आन गढ़ पन्ना में अमान है प्रमान बीरताई को ॥ भूषन बखानी सूरताई सिवराज ही की पंडितप्रबीन करै और की बड़ाई को । बाँध्यो सालिबाहन जो साका को पताका सही राख्यो मानसिंह करि दावा मरदाई को ॥ ८ ॥ पारथ प्रसिद्ध पुरुषारथ है भारथ में भीम को असीम बल बिदित लराई को । पंडितप्रबीन कौन कीरति नवीन कहै गोरी औ पिथौरा की न थोरी बीरताई को ॥ सरजा सतारा साह दारा की कहै को कियो बाजी बाल गाजी सिवराज सूरताई को । जाती चली साथ सालिबाहन औ बिक्रम के राखी मानसिंह मरजाद मरदाई को ॥ ६ ॥ एरी मतिमंद स्यामसुन्दर के सोहै सीस बीस बिसे गोपिन को चोपि चित्त मोहै प्रान । पंडितप्रबीन है नवीन अनुराग तेरो तेरोई सुहाग साँचो तेरे को समान आनै[2] ॥ मोरवारे मुकुट मरोर की कलँगी पर चारु चाहै चंद्रिका करत कित अभिमान । पाँय पर लोटति पलोटति लखौंगी आजु गरब गुमान साधे सुनिश्चत राधे मान ॥ १० ॥ सानी सिवराज की न मानी महराज भयो दानी रुद्रदेव सो न सूरति सतारा लौं । दाना मवलाना रूम साहिबी में बब्बैर[3]लौं आकिल[4] अकब्बर सखावत बुखारा लौं ॥ पंडितप्रबीन खानखाना लौं नवाब नवसेरवाँ लौं आदिल दराज-

---

१ एहतमाम = प्रबंध । २ और । ३ बाबर शाह । ४ बुद्धिमान ।

दिल दारा लौं। विक्रम समान मानसिंह सम साँची कहौं प्राँची दिसि भूप है न पारावार धारा लौं ॥ ११ ॥ कूना टेर भूनागढ़ पूना में पुकार परै माँगत पनाह जाँपनाह फिरँगाने का। कासी कासमीर सिंध-सूरत हिसार हाँसी हाँक सुनि जात झुकि मौलि मुगलाने का ॥ पंडितप्रवीन कहै हिम्मति कहाँ लौं भूप दर्सन को लाल भयो ढाल हिन्दुआने का। अंग बंग कुल्लू कहिलूर में जहूर जंग जानत जहान मानसिंह मरदाने का ॥ १२ ॥ कैसे हू न विक्रम को विक्रम घटन देतो कैसे निज साको सालिवाहन चलावतो। कैसे महमूद विजैपाल को विगारि देतो लेतो छीनि हिन्द और गदर मचावतो ॥ गोरी के गरूर तें न गारद पिथौरा होतो अहमद दुरानी-की कहानी कौन गावतो। नंदन पुरंदर के दर्सननरेन्द्र वीर तो सो कहूँ नायब जो दिल्लीपति पावतो ॥ १३ ॥

३९९. प्रियादास ब्राह्मण वृंदावनवासी

(नाभा के भक्तमाल का तिलक बनाया उसी का यह कवित्त है)

मेरे तो जनमभूमि झूमि हित नैन लगे पगे गिरिधारीलाल पिता ही के धाम में। राना की सगाई भई करी व्याहसामा नई गई मति बूड़ि वा रँगीले घनस्याम में ॥ भाँवरे परत मन साँवरे सरूप माँझ ताँवरे सी आवैं चलिवे को पतिग्राम में। पूछैं पितु मातु पट आभरन लीजिये जू लोचन भरत नीर कहा काम दाम में ॥ १ ॥

४००. पुरुषोत्तम कवि बुंदेलखण्डी

कवि परसोतम तमासे लगि रहे मान वीर छत्रसाल अद्भुत जुद्ध ठाटे हैं। नादर नरेस के सवाद रजपूत लड़ैं मारैं तरवारैं गज बादर से फाटे हैं ॥ सिंधु लोहू-कुंडन गगन झुंड-झुंडन सों रिपु-रुंड-मुंडन सों खंड सवै पाटे हैं। चरवी चखैयन के परवी समर बीच गरवी मगरवी से करवी से काटे हैं ॥ १ ॥

---

१ पूर्वदिशा में। २ समुद्र तक। ३ सिर।

४०१ पंचम कवि प्राचीन (१)

कीबे को समान ढूँढि देखे प्रभु आन ये निदान दान जूझ में न कोऊ ठहरात हैं। पंचम प्रचण्ड भुजदण्ड के बखान सुनि भागिबे को पच्छी लौं पठान थहरात हैं॥ संका मानि काँपत अमीर दिल्लीवाले जब चंपति के नंद के नगारे घहरात हैं। चहूँ ओर क़त्ता के चकत्ता दल ऊपर सु छत्ता के प्रताप के पताके फहरात हैं॥ १॥

४०२. पंचम कवि बंदीजन डलमऊवाले (२)

उज्ज्वल उदारताई गावत पुराने लोग जोग करिबे को जोगी बसत महिन्द्र है। रत्नाकर की फनिंद देत ना अबेर राख्यो भाष्यो पार पावत न महिमा फनिन्द्र है॥ पंचम सुकवि धरा धरे उपकार हेत चित्त कथा राम की बसत कहा इन्द्र है। सम्भु के बसे ते देवगन के लसे ते आजु सिवगिरि सोहै गिरिगन को गिरिन्द्र है॥ १॥

४०३. पंचम कवि अजयगढ़वाले(३)

पण्डित कबिन्दन के बृन्द बैठे एक ओर एक ओर बाघ से बुँदेला हैं अपार में। राना राव और कछवाहे हाड़ा एक ओर एक ओर कचुली पँवार परिहार में॥ एक ओर पायक धँधेरे औ बघेले कौन सहै भटभेरे कहा कहौं निरधार में। पंचम गुमानसिंह हिन्द के पनाह ठकुराइसि को टीको यार तेरे दरबार में॥ १॥

४०४. प्रधान केशवराय कवि
(शालिहोत्र)

दुहुँ कानन बिच भवँरी देखो। अहिमुसली ता नाम बिसेखो॥

४०५. प्रधान कवि

रोगिन कान सुनै जो कहूँ सहसा निज डीलन ही उठि धावैं। जाइ कै ताहि भरोसो दै भूरि सु नारी निहारि कै रोग मिलावैं॥ देत सुधा सम ते रस हैं मुरदै मुख में परे प्रान जियावैं। भाषै प्रधान ये बैद सुजान जे कालहु के घर ते धरि लावैं॥ १॥

---

१ यह अकबर के कुल की जाति थी।

आँक धतूर घमोइ भरे कँखरी पुटकी जग बैद कहावै।
जानैं नहीं कछु लच्छन रोग के सीत भये पर छाँछे[2] पियावै॥
हाँसो[3] वदैं महाब्राह्मन सों गुन ताके प्रधान कहाँ लगि गावै।
कुत्सित[4] बैदन की करनी यह बैतरनी गऊ लै घर आवै॥ २॥

४०६. प्राणनाथ कवि

चंद विन रजनी सरोज विन सरवर तेज विन तुरँग मतंग विना मदको। विन सुत सदन नितंबिनी सु पति विन विन धन धरम नृपति विना पद को॥ विन हरिभजन जगत सोहै जन कौन नोन विन भोजन विटप[5] विना छद[6] को। प्राननाथ सरस सभा न सोहै कवि बिन बिद्या बिन बात न नगर विना नद को॥ १॥

४०७. पुष्कर कवि

जल जोर महा घनघोर घटा ब्रज ऊपर कोप पुरंदर को।
कबि पुष्कर गोकुल गोप सबै निरखैं मुख श्रीमुरलीधर को॥
धर तैं धरिबो धरनीधर को धरक्यो न हियो धरनीधर को।
कर[7] लै जनु कांकर को कर को करुनाकर को करुनाकर को॥ १॥

४०८. प्रसिद्ध कवि

गाजी खानखाना तेरे धौंसा की धुकार सुनि सुत तजि पति तजि भाजी वैरी बाल हैं। कटि लचकत वार भार ना सँभारि जात परी विकराल जहँ सघन तमाल हैं॥ कवि परसिद्ध तहाँ खगन खिझायो आनि जल भरि भरि लेती दृगन विसाल हैं। वेनी खैंचैं मोर सीसफूल को चकोर खैंचैं मुकुता की माल ऐंचि खैंचत मराल हैं॥ १॥ तातो होत तन और सूखि जात मुख-जोति अंग अकुलात चित्त अधिकौ भँवतु है। जैयत उँसीरभौन लागत न

---

१ मदार। २ मट्ठा। ३ हिस्सा लेना तय करता है। ४ निन्दित। ५ शाखा ६ पत्ती ७ खसखाने में।

नीको पौन ओला घनसार घनो चंदन अमितु है ।। सीरेहू जतन याते कीन्हे हैं अनेक भाँति तापर तिहारी सौंह दुख ना घटतु है । जानत हौं ब्याप्यो तोहिं बिरहा प्रसिद्ध आली, नायक है कोऊ, नाहीं ग्रीषम की ऋतु है ।। २ ।।

४०९. परमानंददास कवि

पद

परमेस्वरि देवी मुनि बंदे पावन देवी गंगे ।
वामन-चरन-कमलनखरंजित सीतल बारि-तरंगे ।।
मज्जन पान करत जे प्रानी त्रिबिध ताप दुख भंगे ।
तीरथराज प्रयाग प्रगट भो जब बनि जमुना बेनी संगे ।।
भगीरथ राज सगर-कुल-तारन बालमीकि जस गायो ।
तुव प्रताप हरिभक्त प्रेमरस जन परमानँद पायो ।। १ ।।

४१०. पराग कवि

रजत[1]-पहार घनसार मालती को हार छीर-पारावार[2] गंगधार धराधरसो । सत्य सो सतोगुन सो सारदा सो संकर सो संख सुक्र मुक्ता सो सुधा सो सुरतरु सो ।। भनत पराग कामधेनु सो कुमोदिनी सो कंज कुन्दफूल सो पुनीत पुन्य फर सो । कासीपुर विक्रम नरेस देसदेसन में तेरो जस राजत छबीलो छपाकर सो ।। १ ।।

४११. फेरन कवि

अमल अनार अरविन्दन को बृन्दवार बिम्बाफल बिद्रुम निहारि रहे तूलि तूलि । गेंदा औ गुलाब गुललाला गुलाबास आब जामें जीव जावक[4] जपाको जात भूलि भूलि ।। फेरन फवत तैसी पाँयन ललाई लोल ईंगुर भरे से डोल उमड़त झूलि झूलि । चाँदनी-सी चन्द्रमुखी देखौ ब्रजचन्द उठै चाँदनी बिछौना गुल-चाँदनी-सी फूलि फूलि ।। १ ।। गृहिन वियोग गृहत्यागिन विभूति

---

१ ठंढे । २ कैलाश । ३ क्षीरसागर । ४ महावर ।

दीनी जोगिनि प्रमोद पुन्यवंतन छलो गयो । ग्रहन ग्रहेस कियो सनि को सुचित लखु व्यालन अनंद से सँभारति दलो गयो ॥ फेरन फिरावत गुनिन ग्रह नीच द्वार गुनन विहीन घर बैठे ही भलो गयो । कौन कौन बातैं तेरी कहौं एक आनन ते नाम चतुरानन पै चूकनै चलो गयो ॥ २ ॥ जनम समै में ब्रजरच्छन समै में साजि समर समै में ज्ञान जब जग्य जूट में । देव देवनाथ रघुनाथ बिस्वनाथ कीन्हो फूल जल दान बान बरषा अटूट में ॥ फेरन बिचास्यो सुभ बृष्टि को बिचारु चारु चारिहू जनेन को प्रसिद्ध चचौं चूट में । अवधि अकूट में सु गोवर्द्धन कूट में सु तरल त्रिकूट में विचित्र चित्रकूट में॥ ३ ॥ चंदन चहल चोवा चाँदनी चँदोवा चारु घनो घनसार घेरि सींच महबूबी के । अतर उसीर सीर सौरभ गुलाब-नीर गजब गुजारैं अंग अजब अजूबी के ॥ फेरन फबत फैलि फूलन फरस तामें फूल-सी फबी है बाल सुंदर सुखूबी के । बिसद बिताने ताने तामें तहखाने बीच बैठी खसखाने में खजाने खोलि खूबी के ॥ ४ ॥

४१२. फूलचंद (१) कवि

ससि सी सरोज सी नारि मनोज की सी आनन ओज सी पूरन परायनि । मंजुल मती सी स्वसुचि सोभा की रासि सी सूघ्यो बिलोकनि मन लेति लरायनि ॥ एकहू न अवगुन गुन अमित बिचारे सब फूलचंद जाहि लखत सहज तरायनि । कमला सी चपला सी बरसाने अबला सी सी सी ईस्वरी सी बिराजै ठकुरायनि ॥ १ ॥

४१३. फूलचंद (२) ब्राह्मण भोजपुर

संभु समान उदार है फूल स्वरूप में मानो मनोज सों ओज है ।
धीर धरा सों गँभीर में सागर नागर सेस दिनेस सरोज है ॥
साहिबी बास बसी रनजीत की दारिद को नित खोवत खोज है ।

तीरथराज है पापिन को कुलनारिन मैन भिखारिन भोज है ॥ १ ॥

४१४. बिहारीलाल चौबे ब्रजवासी

(सतसई)

दोहा—मेरी भवबाधा हरौ, राधा नागरि सोइ ।
जा तन की झाईं परे, स्याम हरित दुति होइ ॥ १ ॥
सीस मुकुट कटि काछनी, कर मुरली उर माल ।
यह बानिक मो मन बसौ, सदा बिहारीलाल ॥२॥
नहिं पराग नहिं मधुर मधु, नहिं बिकास यहि काल ।
अली कली ही सों बिंध्यो, आगे कौन हवाल ॥ ३ ॥
डारत ठोढ़ी गाड़ गहि, नैन बटोही मारि ।
चिलक चौंध में रूप ठग, हाँसी फाँसी डारि ॥४॥
कीनी भली अनाकनी, फीकी परी गोहार ।
तज्यो मनो तारन बिरद, बारक बारन तार ॥ ५ ॥

४१५. बालकृष्ण त्रिपाठी बलभद्र जू के पुत्र (१)

(रसचन्द्रिका पिंगल)

छप्पै

मूढ़बुद्धि परिहरिय होइ परदुःख-दयामय ।
रमित जोग रस माहिं दमित मन बच क्रम निरभय ॥
भक्ति हेत निज राम रचेउ. जे परम सुखद नर ।
खिसि न होइ जनु कबहि तिहूँ पुर ऊपर सुन्दर ॥
सुभ ज्ञान ध्यान वैराग रत तोष जोर तृष्णाहिं सिखित ।
तिन तीन पाँच षट बस करिय सुभ मूरति नरमय लिखित ॥ १ ॥
पंडित चित लखि दौर करत उर भरम सफर भर ।
जगत बसीकर अजिर दमित रतिपति करगत सर ॥
ललित खंजगति सुढर सहित अंजन पियमनहर ।

मरमभेद कहँ सदर नहिंन त्रिभुवन समता कर ॥
अति रूपरासि गुन सकल घर नर मोहनमय मंत्र पर।
बदत बाल कवि रसिकवर पंकजदल सम नयन वर ॥ २ ॥

४१६ वालकृष्णकवि (२)

सम्पति सुमति नीकी विपति सुधीर नीकी गंगातीर मुक्ति नीकी नीकी टेक नाम की। पतिव्रता नारि नीकी परहित बात नीकी चाँदनी सु राति नीकी नीकी जीति काम की ॥ बालकृष्ण वेदबिद उग्र नीकी भूसुर की भक्ति नीकी नीकी है रहनि हरिधाम की। अगन की हानि नीकी तात की मिलनि नीकी सुर मिली तान नीकी प्रीति नीकी राम की ॥ १ ॥ हरि कर दीपक बजावैं संख सुरपति गनपति झाँझ भैरों झालर झरत हैं। नारद के कर बीन सारद जपत जस चारि मुख चारि वेद विधि उच्चरत हैं॥ षटमुख रटत सहस्रमुख सिव सिव सनक सनंदन सु पायँन परत हैं। बालकृष्ण तीनि लोक तीस और तीनि कोटि एते सिवसंकर की आरती करत हैं॥ २ ॥

४१७. व्रजेश कवि

छैल मनमोहन की छवि में छकी हौं छिन एक हू न भूलत लगाई प्रेम-डोरी हौं। भनत व्रजेस साँची सरल सुभाय भरी चाय भरी वृंदावनचंद की चकोरी हौं॥ गोकुल में बसत न गोकुल ते काम कछू गोकुलेस ही के बस गोप की किसोरी हौं। गोरी देह देखि कोऊ गोरी ना कहौ री मोहिं हौं तो सराबोर स्याम रंग ही में बोरी हौं॥ १ ॥

४१८. विजयाभिनंदन कवि

आगम[1] की बात जो बखानी व्यास वेदन में सोई सो करत कहे सुनत अपूबा है। विजयाभिनंदन प्रगट पुहमी[2] में साईं मन-

१ भविष्य की। २ पृथ्वी।

सूबा जानि साह सूबा मन ऊबा है ॥ स्याम सखा सखिन समान कौन और वानी गैब की अवाज महमद काहि तूबा है । एक छत्र छत्ता छितिपाल होइ छत्रिन में वहै छबि छाजी त्याग तेग के अजूबा है ॥ १ ॥ कटक कटीले काटे कोटिन करिंद वारे देत गढ़ गढ़ी ढाहि नेक ही की हाँकरे । जिन की सलाअत लखे ते और राजा राइ ऐसे लग लागन लगे हैं जनु फाँकरे ॥ किये ऐसे जाहिर जहान जहाँ तहाँ जिम दान की अहाव सों कहाँ न करी धाँकरे । रचे करतार अवतार भू के भरतार मही मेंह हवा बाल तेग त्याग आँकरे ॥ २ ॥

४१६. बिजय कवि, राजा विजयबहादुर टेवरी

लखि कै दृग मीन छिपे बन में मन में अरविंद सकाने रहैं ।
बड़ी बेनी भुजंगिनि देखि फखैं कटि केहरि चाहि लजाने रहैं ॥
उकसौंहे उरोजन देखि बिजै मन देवन के ललचाने रहैं ।
मुखचंद की पेखि प्रभा दिन में दिल में चकवा चकवाने रहैं ॥ १ ॥

४२०. बिक्रम, राजा विजयबहादुर चरखारी

(बिक्रमविरदावली)

दोहा—हौं चेरो तेरो भयो, तापर पेखो कर्म ।
कहा दास की दासता, कह प्रभुता को धर्म ॥ १ ॥
चारि जुगन मुनि चारि भुज, लगी न एती देर ।
अब प्रभु कीजतु है कहा, मेरी बेर अबेर ॥ २ ॥

(बिक्रमसतसई)

दोहा—जय जय जय असरनसरन, हरन सकल भवपीर ।
जन बिक्रम मंगलकरन, जय जय श्रीरघुबीर ॥ १ ॥
हरि राधे राधे सु हरि, कर निसिदिन करि ध्यान ।
राधे रट राधे लगी, रट कान्हर मुख कान ॥ २ ॥
जे उरझैं सुरझैं सखी, लखी नवल अवरेच ।

सुरभाये सुरभै नहीं, परपंची के पेंच ॥ ३ ॥

४२१. वंशरूप कवि काशीवासी

सुरतसमै में मोहै किन्नरी नरी हैं रास रस में भरी हैं की करी हैं कोककाज की। वंसरूप चाहैं जंग रंग-की उमाहैं नाचि उठती उमाहैं लखि गाहैं सुखसाज की॥ दीनन को छाहैं दावादारन कों दाहैं सुचि सुजस उमाहैं हैं पनाहैं लोकलाज की। पुन्य अव-गाहैं ये भुवनवरदा हैं बाहैं साहन निवाहैं कासिराज महाराज की॥ १॥ कैधौं काहू मंत्र सों विलोप करि दीन्हो बान देखत हिरानो हिये चेटक लख्यो नयो। इंठ को देखाय हो विलोकि निज डीठ हू सों मैं ही धौं भुलानी कैधौं भ्रम सब को भयो॥ कवि वंसरूप स्यामसुन्दर सरूप ऐसो छन में न जान्यो यह कौतुक कहा भयो। जाय सर तीर ह्वै अधीर मुसकाइ कह्यो यह अरविंद सों मलिंद धौं किते गयो॥ २॥ कंचन के पलँग बिछाये सीसमहल में चहल सुपेदी सनी सौरभ रसाला मैं। ओढ़े ऊनअंबर सकल नखसिख तऊ नेकहू न मानै मन रहत कसाला मैं॥ कवि वंसरूप साजे दीपगन माला स्वच्छ अधिक उमंग त्यों अनंग चित्रसाला मैं। महत मसाला हैं विसाला जे दुसाला आला पालासम लागैं बाला बिन सीतकाला मैं॥ ३॥ लहरि लोनाई में झपत फेरि ऊवत है बार बार चकित निहारि वारपारा मैं। चंचल भवल चख झँख सो उरत फेरि धीरज धरत विधिगति यों विचारा मैं॥ कवि वंसरूप पायो गिरि सों अराम नेंक रामराम कहि केसपास जाय ठारा मैं। बूड़त है मेरो मन पावत न थाह केहूँ तेरी सुचि अंगन-प्रभा की वारिधारा मैं॥ ४॥

४२२. वंशगोपाल कवि

खाय कै पान बिदोरत ओठ हैं बैठि सभा में बने अलवैला।

---

१ दृष्टिबंध का तमाशा। २ सलोनेपन में। ३ मछली।

धोती किनारी की सारी सी ओढ़त पेट बढ़ाय कियो जस थैला॥
बंसगोपाल बखानत है सुनौ भूप कहाय बने फिरैं छैला।
सान करैं बड़ी साहिबी की फिरि दान में देत हैं एक अधैला॥१॥

४२३. बोधा कवि

एकै लिये चौंरी कर छत्र लिये एकै हाथ एकै छाँहगीर एकै दावन सकेलतीं। एकै लिये पानदान पीकदान सीसा सीसी एकै लै गुलावन की सीसी सीस मेलतीं॥ बोधा कवि कोऊ बीन बाँसुरी सितार लिये लाड़िली लड़ावैं फूल गेंदन की झेलतीं। छोटे ब्रजराज छोटी रावटी रँगीन तामें छोटी छोटी छोहरी[1] अहीरन की खेलतीं॥१॥

४२४. बोध कवि

परम प्रसिद्ध की सुमृति सतबुद्धि की सदाई रिद्धि सिद्धि की घमैस[2] मचिबो करै। पूरन पसार पसरत पुन्यवारे भारे गुनिन के बृंद वेदवानी बचिबो करै॥ भनै बोध कवि छवि देखत छकित होत एकौ छन मन न जुदाई खचिबो करै। देवतटिनी[3] के तट अंगन तरंग संग रातो-दिन मुकुति नटी सी नचिबो करै॥१॥

४२५. बोधीराम कवि

ऐसे अनियारे मानो समुद्र करारे भारे मानौ मच्छधारे सोये मैन मतवारे हैं। काजर से कारे खरसान से उतारे कारीगर के सँवारे सो विरहवान मारे हैं॥ घूँघुट जवनिका से निकसि कै चोट करैं कहै कवि बोधी ये विरहज्वाल जारे हैं। ऐसे अति तीखे नैन बानन छिपाइ राखौ भौंह की मरोर सों करोर मारि डारे हैं॥१॥

४२६. बुद्धिसेन कवि

बारी औ खँगार नाऊ धीमर कुम्हार काछी खटिक दसौंधी[4] ये हजूर को सुहात हैं। कोल गोंड़ गूजर अहीर तेली नीच सबै पास

---

१ लड़कियाँ। २ घमासान। ३ गंगा। ४ भाट।

कूँ रहे से कहा ऊँचे भये जात हैं ॥ बुद्धिसेन राजन के निकट हमेस बसैं कूकर बिलार कहा गुन अधिकात हैं। दूर ही गयंद बाँधे दूर गुनवान ठाढ़े गज औगुनी के कहा मोल घटि जात हैं ॥ १ ॥

४२७. बुद्धराज कवि, राव बुद्ध हाड़ा बूँदीवाले

कीनो तुम मान, मैं कियो है कब मान, अब कीजै सनमान, अपमान कीनो कब मैं। प्यारी हँसि बोलु, और बोलैं कैसे बुद्धिराज, हँसि हँसि बोलु, हँसि बोलिहौं जु अब मैं ॥ दृग करि सौंहैं, को रिसौंहैं करि जानत है, अब करि सौंहैं, अनसौंहैं कीने कब मैं। लीजै भरि अंक, जहाँ आये भरि अंक हौ, न काहू भरि अंक, उर अंक देखे अब मैं ॥ १ ॥ ऐसी ना करी है काहू आजु लौं अनैसी जैसी सैयद करी है ये कलंक काहि चढ़ैंगे। दूजे को नगाड़े बाजैं दिल्ली में दिलीस आगे हम सुनि भागैं तो कबिंद कहा पढ़ैंगे ॥ कहै राव बुद्ध हमैं करने हैं जुद्ध स्वामिधर्म्म में प्रसुद्ध जे जहान जस मढ़ैंगे। हाड़ा कहवाय कहा हारि करि कढ़ै ताते झारि समसेर आजु रारि करि कढ़ैंगे ॥ २ ॥

४२८. बृंदावन कवि

ओज करि आपनो पयोज पृथिवी पै रोज रोज हू सरोजन के ओज हरिबो करै। बारिनिधि बसि कै कपाली सीस लसि कै प्रदच्छिना सुमेरु आसपास भरिबो करै ॥ छोटो छोटो ह्वैकै फेरि षोड़स कला लौं बढ़ै नीके बुंद अमल अमीके झरिबो करै। बृन्दावनचंद-नखचंद समता के हेत चंद यह मंद कोटि छंद करिबो करै ॥ १ ॥

४२९. बिंदादत्त कवि

चाँदनी चटक चारु चौतरा में चंदमुखी चाँदनी बिलोकिबे को बैठी सुकुमार है। फैलि रही चाँदनी चटक तैसी अंगन की चहूँओर चंदन सुगंधन को सार है ॥ बिंदादत्त कहै है हुहारे मनिवारे न्यारे सोभा सों सँवारे जल सुघर सुढार है। मोतिन की

माल धरे सुमन बिसाल हाल लाल चलि देखौ आजु बाल की बहार है ॥ १ ॥ उतै उयो तारन समेत तारापति इतै मोतिन जटित लट आनन पै अरी है । उतै अंक सोहत कलंक दिन पूनम के इतै आड़ अंजन की वैसी छवि करी है ॥ बिंदादत्त कहै उतै लखत चकोर इतै चहूँओर सखिन की डीठि सुख भरी है । आजु नंदलाल पास प्यारी को बिलोकौ चलि चन्द्रमुखी चन्द्रमा सों कैसी होड़ परी है ॥ २ ॥

४३०. बदन कवि

रस अनुकूल गुन जामें धुनि झलकत नाहीं जतिभंग है रुचिर अति छंदगति । जाको पान करत बदन कबि सुधा कौन कामिनी अधर मधु माधुरी हू ना रुचति ॥ जो पै ऐसे बचन की रचना कै जानै तौ निसंक सुख भूप को कबित्त कहि पैहै पति । नाहीं तो सभा में आइ आगे सुकबिन के तू आपने कलुष से करेजे सों निकासै मति ॥ १ ॥

४३१. बंदन पाठक कासीवासी

(मानसशंकावली)

दोहा—श्रीसीता श्रीराम-पद, पदुम बन्दि त्रयभाँत ।
धाम नाम लीला ललित, श्रीहनुमत अदवात ॥ १ ॥
श्रीगिरजापति-पुत्र के, बन्दौं पद अभिराम ।
तुलसी तुलसीदास पद, करि कै त्रिविध प्रनाम ॥२॥
श्रीकासीपति ईस्वरीनारायण नृपराज ।
तिहि के सुभग सनेह ते, प्रगट ग्रंथ द्विजराज ॥ ३ ॥
श्रीमानससंका सकल, रही विस्व में छाइ ।
ताके उत्तर-बोध हित, ग्रंथोद्भव सुखदाइ ॥ ४ ॥

४३२. विश्वेश्वर कवि

नीरधि चंद वधून के आनन नाग के लोक अमृत्त जो होई ।

तौ कत छार औ छीन सरै पति औ गर को अधिकार न सोई ॥
पंडित देव प्रवीन कवीन जो आपनी भूल कहै सब कोई ।
जान्यो बिसेसर ईसरदास के कंठ में वास पियूष को होई ॥ १ ॥
जानै निदान निघंट विधान सो नारी को लच्छन रोग अपार है ।
औषधि रूप सवाद विवेक सो पानी औ पौन को भूमि बिचार है ॥
चूरन पाग औ पाक घृतादिक जंत्र रसादिक को मत सार है ।
होइ जसी जु धनन्तर के सम जानौ बिसेसर बैद उदार है ॥ २ ॥

४३३. बिदुष कवि

कुन्ती पांचाली दमयन्ती तारा सकुन्तला की अहिल्या हू मन्दोदरी पहिले सुधारे हैं । मैनका घृताची रंभा मंजुघोषा उर्वसी तिलोत्तमा को तिल हू ते हलुकी निहारे हैं ॥ बिदुष सुकवि भनै गिरा[१] रमा उमा राधा मोहिनी हू रचि फिरि मन में बिचारे हैं। सिया को बनाय बिधि धोयो हाथ जामो रंग ताको भयो चन्द कर झारे भये तारे हैं ॥ १ ॥ राधा सों सिंगार हास रस चोरी माखन की मोहन को गोपी गही भयो ताको पति है । जननी के बन्धन में करुना करी है वहु रिस करि काली को कचरि मान हति है ॥ बिदुष कहत वीर करिकै पछारन में भीत कंस हिये धिन पूतना में अति है । अदभुत बछरा औ बालक बने हैं आप सबसों बिराग करि कही अंत गति है ॥ २ ॥

४३४. बेनी प्राचीन (१) असनीवाले

बियत[२] बिलोकत ही मुनिमन डोलि उठे बोलि उठे बरही[३] बिनोदभरे बन बन । अकल बिकल है बिकाने रे पथिक जन ऊर्द्धमुख चातक अधोमुख[४] मरालगन[५] ॥ बेनी कवि कहत मही के महा भाग भये सुखद सँजोगिन बियोगिन के ताप तन । कंजपुंज-

१ सरस्वती । २ आकाश । ३ मोर । ४ नीचे को मुख किये ।
५ हंससमूह ।

गुंजन कृषीदल के रंजन सो आये मानभंजन ये अंजनबरन घन ॥ १ ॥ आँवा सी अवनि धुँधी धूपरूप धूमकेतु आँधी अंधकूप हारै लोचन अनैसे कै। जमक जलाकन की नाकन की लोहू चलै ब्याकुल जगत साँझ पावै जैसे-तैसे कै ॥ लोकपति लूक से उलूक से लुकत बेनी कुंजछाया जहाँ-तहाँ छाइ रही ऐसे कै। कोठरी तखाने खसखानें जलखाने बिन ग्रीषम के बासर बितीत होत कैसे कै ॥ २ ॥ खेलिबे को फाग देवदारा[1] सी उतरि आईं दीरघ दगन देखि लागतीं न पलकैं। खुलत दुकूल भुजमूल दरसत बर उन्नत उरोज हार हीरन के झलकैं ॥ बेनी कबि भू पर धरत पाँव मन्द मन्द आनन के ऊपर अनूप छबि छलकैं। लाल लाल रंग-भरी मदन तरंग-भरी बाल भरी आनँद गुलाल भरी पलकैं ॥ ३ ॥ नारी बिन होत नर नारी बिन होत नर राति सियराति उर लाये पयोधर में। बेनी कबि सीतल समीर[2] को सनाका सुनि सोवैं सब साँझ ते कपाट दै सहर में ॥ पच्छी पच्छ जोरे रहैं फूल फल थोरे रहैं पाला के प्रकास आसपास धराधर में। बसन लपेटे रहैं तऊ जालु फेटे रहैं सीत के ससेटे लोग लेटे रहैं घर में ॥ ४ ॥ घन मतवारे गज पौन हरकारे बक बीर निरधारे मोर ढाढिन की तान पर। बिज्जु बरछीन की चमक चहुँओरन ते त्यों नकीब चातक पुकारन प्रमान पर ॥ देखि देखि काँपत बियोगी जन कातर सु बेनी कबि कहै इन्द्रधनुष निसान पर। कोकिल की कुहुक दुहाई फिरी ठौर-ठौर पावस प्रबल दल आयो महिमान पर ॥ ५ ॥ करि[3] की चुराई चाल सिंह की चुराई लंक ससि को चुरायो मुख नासा चोरी कीर की। पिक को चुरायो बैन मृग को चुरायो नैन दसन अनार हाँसी गूजरी गँभीर की ॥ कहै कबि बेनी

---

१ अप्सरा। २ हवा। ३ हाथी।

बेनी ब्याल की चुराइ लीनी रती रती सोभा सब रति के सरीर की। अब तौ कन्हैयाजू को चित्त हू चुराइ लीनो चोरटी है गोरटी या छोरटी अहीर की ॥ ६ ॥ गेह देह मेह को न छोभ लोभ मान लघु लाज परलोक लीक तीनों ज्यों नगन में। उन्नत उरोज भार चपल चमक चारु लपटि लपटि जात नाग हू पगन में ॥ बेनी कवि कहै कछू कहत न बनै ऐसी लगनि लगाई हाइ कौन सी लगन में। भूमि हरियारी हरियारी से सिधारी प्यारी निसि अँधियारी अँधियारी सी दगन में ॥ ७ ॥ पृथु नल जनक जजाति मानधाता ऐसे जेते भूप भये जस छिति पर छाइ गे। काल-चक्र परे सक्र सैकरन होत जात कहाँ लौं गनाओं विधि वासर विताइ गे ॥ बेनी साज सम्पति समाज साज सेना कहाँ पाँयन पसारि हाथ खोले मुख बाइ गे। छुद्र छितिपालन की गनती गनावै कौन रावन से बली ते बबूला से बिलाइ गे ॥ ८ ॥ बेदमत सोधि सोधि देखि कै पुरान सबै संतन असंतन को भेद को बतावतो। कपटी कपूत कूर कलि के कुचाली लोग कौन राम-नाम हू की चरचा चलावतो ॥ बेनी कवि कहै मानौ मानौ रे प्रमान यही पाहन से हिये कौन प्रेम उपजावतो। भारी भवसागर में कैसे जीव होतो पार जो पै नहीं रामायन तुलसी बनावतो ॥ ९ ॥ देखत ही दगन दुरे हैं दौरि वारि मीन कानन कुरंग दिये खंजन सकान है। बेनी मखतूल सी विलोके बलि बार-बार छकिगे भुजंग छोड़ि दियो खान-पान है ॥ सोहैं कुच गहब गुलाबी गोल गुम्बज से गेंदा गजकुंभन को गंजत गुमान है। चित दै चकोर चितै चौंकत न चीन्हि परै चोखो मुखचन्द चारु चन्द के समान है ॥ १० ॥

भूमि रहे घन घूमि घने तल बोरत भूमि मनो चहुँधा घिरि।

है अपसोस न रोस करो बिन हौस लता रहि रूखन सों भिरि ॥ बेनी पपीहन मोरन हू हहरान न ढूँढ़ि करैं बहुते फिरि। ज्यों डरपै तरपै बिजुरी परै काहू बियोगिनी पै न कहूँ गिरि ॥११॥

बाँधे द्वार का करी चतुर चित्त का करी सो उमिरि वृथा करी न राम की कथा करी। पाप को पिनाक री न जानै नाक ना करी सो हारिल की लाकरी निरंतर ही ना करी ॥ ऐसी सूमता करी न कोऊ समता करी सो बेनी कबिता करी प्रकासतासता करी। न देव-अरचा करी न ज्ञान चरचा करी न दीन पै दया करी न बाप की गया करी ॥ १२ ॥ बदनसुधाकरै उघारत सुधाकरै प्रकास बसुधा करै सुधाकरै मुधा करै । चरन धरा धरै मृनालऊ धराधरै सु ऐसे अधरा धरै ये बिंब अधराधरै ॥ बेनी दृग हा करै निहारत कहा करै सु बेनी कबिता करै त्रिबेनी-समता करै । सुरत में सी करै सु मोहनै बसी करै बिरंचि हू जसी करै सु सौतिन मसी करै ॥ १३ ॥

४३५. बेनी कवि (२) बैंतीवाले भाट

सुन्दर सुगन्धदार रेसा को न लेस कहूँ स्वाद सरसाये हैं सदाई सुखसाज के। अमृत भरे हैं पीत अरुन हरे हैं जब कर में करे हैं और सेवा कौन काज के ॥ बेनी कबि कहै जौन दीन्हो तौन पावै सदा गुनन को गावै जे टिकैत सिरताज के। धरे धरि पाल हैं सो भेजे महिपाल हैं सो निपट रसाल हैं रसाल महराज के ॥ १ ॥ दंडत अदंड खल खंडत अखंड औ उदंड भुजदंड बर बीरता के बाने के। गब्बर गनीमन के गरब बिलाइ गये छाइ गये प्रबल प्रताप मरदाने के ॥ बेनी कबि कहै खुसी खलक खुदाय जासों हिम्मति की हद सब बातन बखाने के । गाजुदीनहैदर बहादुर नवाब देखो होत या जमाने को सतून हिंदुवाने के ॥ २ ॥ बाजी

कै सु पीठि पै चढ़ायो पीठि आपनी दै कवि हरिनाथ को कछोहा मान सादरै। चकवै दिल्ली के जे अथक अकबर सोऊ नरहरि पालकी को आपने कँधा धरै॥ बेनी कवि देनी औ न देनी की न मोको सोच नावै नैन नीचे लखि बीरन को कादरै। राजन को दीबो कविराजन को काज अब राजन को काज कविराजन को आदरै॥ ३॥ सुरसरि[1] सेंदुर जटाकलाप बेनी वर उपमा अनूप ऐसी सुखमा लहित है। बारन चरम चीर भूपन भुजंग अंग अंजन अनल दृग संग समुचित है॥ बेनी कवि जाको भेद बेदहू न जानत है हावभाव निरवेद अदभुत हित है। नर वहै नारी वहै नर है न नारी वह जानै को अनारी अर्धनारीस्वर चित है॥ ४॥

४३६. बेनीप्रवीन (३) बेनीप्रसाद वाजपेयी लखनऊवासी

सूर सदा रति में ससि सो मुख मंगल रूप धरे बुध नायक।
जीव तियान के सुक्रनिधान फबी रति मन्द अनन्द के दायक॥
राहु के खेद प्रसेद भरो तन केतु मनोहर के छवि छायक।
आये प्रभात कृपा करि कै किहि के गृह ते हमरे गृह लायक॥ १॥
कालि ही गूँथि बबा कि सौं मैं गजमोतिन की पहिरी अति आला।
आई कहाँ ते कहाँ पुखराज की संग यई जमुनातट बाला॥
न्हात उतारी मैं बेनीप्रवीन हँसैं सिगरी सुनि बैन रसाला।
जानत ना अँग की बदली सब सों बदली[2] बदली कहै माला॥२॥

रैनि में जगाई कल करन न पाई इमि ललन सताई परजंक अंक महियाँ। ससकि ससकि करहत ही बितीति निसा मसकि प्रवीन बेनी कीन्ही चितचहियाँ॥ भोर भये भौन के सकोन लागि गई सोय सखिन जगाइबे को आनि गही बहियाँ। चौंकि परी चकि परी औचकि उचकि परी जकि परी सकि परी बकि परी नहिं-

---

१ गंगा। २ खफ़ा हुई।

याँ ॥ ३ ॥ मानव बनाये देव दानव बनाये जच्छ किन्नर बनाये पसु पच्छी नाग कारे हैं। दुरद[1] बनाये लघु दीरघ बनाये केते सागर उजागर बनाये नदी नारे हैं ॥ रचना सकल लोक लोकन बनाय ऐसी जुगुति में बेनी परबीनन के प्यारे हैं। राधा को बनाय विधि[2] धोयो हाथ जाम्यो रंग ता को भयो चंद कर झारे भये तारे हैं ॥४॥

कंकन करन[3] कल किंकिनी कलित कटि कंचन कँगूर कुच केस कारी जाँमिनी[4]। कानन करनफूल कोमल कपोल कंठ कंबुक[5] कपोतग्रीव कोकिल कलामिनी ॥ केसरि कुसुम्भ कलधौत की कलू न कांति कोबिद प्रबीन बेनी करिबरगामिनी। कोककारिका सी किन्नरीक कन्यका सी कैधौं काम की कला सी कमला सी कोई कामिनी ॥५॥

छहरत छबि छिति छोरन लौं छूटी छटा बस किये छैलन छकाये ही रलति है। छीरद की छोहरी सी छपा सी प्रबीन बेनी छपा में छपाकर की छाती में लसति है ॥ छला छाप छाजत छरा के छोर छिटकत छवनि छुवत छैन[6]दुति सी चलति है। छीन कटि छोटी सी छबीली में छटाँक भरि छाई छलछंद छितिपालन छलति है ॥६॥

४३७. बेनी प्रगट (४) नरवलवाले

जल से सु थल पर थल ते सु जल थल महाबल भल जुद्ध क्रुद्ध उनमाथी को। बरस कितेक बीती जुगुति चलै न कछू बिना दीन-बन्धु होत साँकरे में साथी को ॥ मन बच करम पुकारत प्रगट बेनी नाथन के नाथ औ अनाथन-सनाथी को। बल करि हारे हाथा-हाथी सब हाथी तब हाथीहाथा हरषि उबास्यो हरि हाथी को ॥ १ ॥

४३८. बलदेव कवि देवरा नगर बघेलखंडवासी
(सत्कविगिराविलास)

चारिहुँ ओर लसैं बन बाग तड़ाग अनेकन की छबि छाजत।

१ हाथी। २ ब्रह्मा। ३ हाथों में। ४ रात। ५ शंख। ६ बिजली।

सीतल स्वच्छ गँभीर भरे जल गंग ज्यों त्यों सतरंगिनि साजत ॥
सील सरूप सुहाये गुनी रति काम लौं नारि सबै नर छाजत ।
पूरन पौंइ चलै जहँ पुन्य सु भूमि को भूपन देवरा राजत ॥ १ ॥
चाँदनी सी लसै चाँदनी चारु चँदोवा में चंद की सोभा बितानी ।
तानन लेती ते बारवधू लगैं तूल न तौल तिलोतमा बानी ॥
बैठि सिंहासन राजत आपु लसैं कवि कोबिद बीर खुमानी ।
देखि सभा वर विक्रम भूप की नीकी लगै न सुरेसकहानी ॥ २ ॥
आई न जोति अबै तरुनाई की छाई न प्यारे की प्रीति अछेहै ।
बात सुनै रस की बलदेवजू बूझै न रीझै करै नहीं तेहै[1] ॥
छोंड़्यो न खेल अजौं गुड़ियान को बौसक तें लगी देखन देहै ।
कान्ह बिलोकि बिलोकि रहै कछू बोलै न डोलै न खोलै सनेहै ॥ ३ ॥
याकी निकाई न पाई कहूँ तिय मैनका मैन की जाई[2] सी लागै ।
कानन लागैं लसैं वह नैन कहै मृदु बैन सुधारस पागै ॥
नाद सँगीत कलान प्रवीन लखे तन-दीपति के तम भागै ।
द्यौस लगै वर कंचन लीपो सो राति जुन्हाई कि जोति न जागै ॥ ४ ॥
सौंहैं बिलोके रहै सदा सासु की जोई कहै सो, करै परि पाँइनि ।
नंद-जिठानी रहैं सुख पाये सु देखत ही करैं चौगुने चाइनि ॥
सूधिय रीति सदा बलदेवजू जानैं नहीं कछु धाइपाइनि ।
केती तिया सुकिया सुनी-देखी न देखी-सुनी कहूँ ऐसे सुभाइनि ॥ ५ ॥
आरसीभौन भरी छबि सों बनी देखै बनी अपनी परछाहीं ।
जाकी रतीक रती न लहै रति क्यों कहिये तिय औरन माहीं ॥
ताहीं समै बलदेवजू आइ गही ललना की लला कर बाहीं ।
लाज-मनोजमयी मनु ह्वै गयो हाँ न कढ़ी न कढ़ी मुख नाहीं ॥ ६ ॥

---

१ तेहा । २ पैदा की हुई ।

४३९. बलदेव कवि (२) चरखारी के

सुचि सरबज्ञ है कृतज्ञ पंचजज्ञकारी बैन-अनुसारी उपकारी गुन-सिंधु है। परम सपूत सानदारन धरमधुर परम प्रसंस निज-बंस-अरबिंद है। कहै बलदेव जो कहत निवहत सोई सहित समुद्र माँह भरत मुनिंद है। रामपदभक्ति माँह आठौं जाम राचो रहै साँचो द्विजमोहन कविन में कविंद है॥ १॥

४४०. बीर कवि (१), दाऊदादा वाजपेयी मंडिलावाले
(प्रेमदीपिका)

तिय झूमति झूम लौं आवति है गुन गावति है मन भावन के।
ऊँचे अटान के विज्जुछटान के ठाट ठटै दधि भावन के॥
घूमि रही मथुरा नँदगाँव मनों घुमड़े घन सावन के।
कहै बीर मनोरथ कैयो करै मग हेरति है पिय आवन के॥ १॥

तेरी यह बानि देखी निपट कठिन खोटी जौन तू सिखावै बीर भावै मोहिं नाहिने। हैं तौ सिद्धिदायक सकल पुरबासिन के इनको जहान पूजै मोहिं परवाहि ने॥ जाको धरि ध्यान पीव रह्यो ना छनक एक पूजने की कहा नाम लीजै अब नाहिने। सुचि करि गौरि को न पूजन करन पाऊँ बार बार कहत गनेस देखौ दाहिने॥ २॥

४४१. बीर कवि (२) कायस्थ दिल्लीवाले
(कृष्णचंद्रिका)

घुमड़ि घुमड़ि आये बादर उमड़ि धाये साँवरे बिदेस छाये औसर[1] करारे में। दादुर पपीहा मोर सोर चहूँ ओर करैं मारत मरोर उठि कामजर[2] जारे में॥ धूम जलधारैं करैं उमँग सलिल सरैं गाज की गजब मरैं बैस मतवारे में। झूँकै झुकि जाती चढी झूलि झूलि गाती देखि फाटै बीर छाती हा कुठौर भय भारे में॥ १॥

---

१ आदत। २ काम का ज्वर।

कुंजगलीन अलीगन में चली आवत श्रीवृषभानुदुलारी।
ताहि बिलोकि कै रंगभरे छल सों छिपि कै रहे कुंजबिहारी॥
कुंकुमा मारयो उरोजन को तकि पानि-सरोज सों ताहि निवारी।
जानि कै बीर दसा उर आनि बजी वह एक ही हाथ की तारी॥२॥
ऐसे तुम्हारो मिल्यो जियरा सु चल्यो रसरंग अनंग के जागे।
गाउँ निगोड़ो चवाई बुरो है कहाँ लगि छूटिये बातन भागे॥
पैलि परैं कहुँ बात सगेन में जाइ लुके तिय पाँयन माँगे।
काह हमैं औ तुम्हैं बिगरैगी जु टोकैंगे भूलि हू काहू के आगे॥३॥

दोहा—कायथकुल श्रीवासतव, उत्तम उत्तिमचंद।
रामप्रसाद भयो तनय, तासु महामतिमंद॥ १॥
चंद्र बार ऋषि निधि सहित, लिखि संवत्सर जानि।
चन्द्रवार एकादसी, माघबदी उर आनि॥ २॥
निगमबोध सुभ छेत्र जहँ, कालिंदी के तीर।
इंद्रप्रस्थ पुर बसत लखि, इंद्रपुरी मनि बीर॥ ३॥
कह्यो जथा मति आपनी, कृष्णचन्द्रिका ग्रन्थ।
जैसो कछू बताइगे, पूरब पंडित पंथ॥ ४॥

४४२. व्रजचंद कवि

कैला[1] भई कोयल कुरंग बार कारे किये कूटि कूटि केहरी कलंक लंक[2] दहली। जरि जरि जंबूनद[3] भूँगा बदरंग होत अंग फाटो दाड़िम[4] तुँचा भुजंग बदली[5]॥ एरी चंदमुखी तू कलंकी कियो चंद हू को बोलै व्रजचंद सों किसोर आप अदली। छार मूड़ डारैं गजराज ते पुकार करैं पुंडरीक बूड़यो री कपूर खायो कदली॥ १॥

होत ही प्रात जो घात करै नित पास-परोसिनि सों कल गाढ़ी।

---

१ मृग। २ कमर। ३ सोना। ४ अनार। ५ केंचुल।

हाथ नचावत मूड़ खुजावत पौंरि खड़ी रिस कोटिक बाढ़ी ॥
ऐसी बनी नख ते सिख लौं ब्रजचंद ज्यों क्रोध-समुद्र ते काढ़ी।
ईंट लिए पिय को मुँह ताकत भूत सी भामिनि भौन में ठाढ़ी॥ २॥

फूलन की माला मोसों कहत मुलामें ऐसी, फूलन की माला मेलि राखत न क्यों गरैं। मेरे दृग रोज ही बतावत सरोज ऐसे, लेइ कै सरोज रोज मन में न क्यों भरैं॥ हौं तौ री न जैहौं आजु बनमाली पास, वोई पिय आइ पास पाइँ इत को न क्यों धरैं। मेरो मुख चंद सो बतावैं ब्रजचंद रोज, कहौ ब्रजचंदजू सों चंद देखिबो करैं॥ ३॥

खेलत फागु जु मेरी भटू इनसों बड़े चाइ ते बावरी तैं हैं।
केसरि के रँग की भरि सुंदरि डारत कामरी पै पिचकैं हैं।
त्यों ब्रजचंदजू साँवरे गातन नावैं सुगंधन की लपटैं हैं।
ये मँगुवा दधि-माखन के ते कहौ कहाँ ते फगुवा तोहिं दैं हैं॥४॥

आजु मुखचंद पर राजत रुचिर बिन्दु याही ब्रजचंद के बिकावन सिताव की। छाजत छबीली छबि बरनीं न जात मोपै हरनी हितू जन के हिय के हिताव की॥ रति की न रंभा की न सची उरवसी की न, वारि वारि डारियतु उपमा किताब की। गालिब गुलाब की न पंकज के आब की रही न आफताब की न ताब माहताब की॥ ५॥

४४३. ब्रजनाथ कवि

(रागमालाग्रन्थे)

दोहा—तिय चुम्बित मुख, कीर दुति, कुंडल धरि सिर पाग।
मालाधर संगीत गृह, प्रविसत मालव राग॥१॥
तन्वंगी[2] कर को लिए, बैठी मूल रसाल[3]।
स्याम आलिन सों हँसति है, मालसिरी श्रीराग॥ २॥

१ कोमल। २ दुबले अंग वाली। ३ आम की जड़में।

मोर-पच्छ को बसन धरि, पहिरे मुक्तामाल ।
गहि अहि चंदनबृच्छ तर, आसावरि श्रीवाल ॥ ३ ॥
नील कंज तन देखिकै, चातक जाचै नीर ।
घन में बैठी देखिये, मल्लारहि तिय भीर ॥ ४ ॥
गौरी कुंकुम लाइ कुच, उग्र बदन जनु चंद ।
भूपाली सुमिरत पतिहि, परी बिरह के फंद ॥ ५ ॥
मोर चँदोवा सिर स्रवन, पल्लव उर बनमाल ।
इंदीवर तन भ्रमर-जुत, लखि बसंत श्रीवाल ॥ ६ ॥

४४४. व्रजमोहन कवि

ऐसी रूपवारी प्यारी हौं न देखी कामनारी[1] जैसी बृषभानु की दुलारी जो निहारिये । कंज की-सी रासि जाके अंगन सुवास-बस आसपास भृंगन की भीर हाथ ढारिये ॥ छाई जोति भूपन की दूपन को चंद-सोभा मंद गति धारै पाँइ देखिवे सिधारिये । खंज मृग मीन की निकाई व्रजमोहनजू नैननकी दुति पर वारवार वारिये ॥१॥
केसरि को मुख राग धरे ज्यहि की उपमा न कोऊ सम तूल्यो ।
जोबन में बिकसै बिलसै लखि मित्र सुगंध पियै अलि भूल्यो ॥
कोमल अंग मनोहर रंग सु पौन के झूक लगे तन झूल्यो ।
नारि नई निरखी व्रजमोहन नारि नहीं जल पंकज फूल्यो ॥ २ ॥

४४५. बलभद्र सनाढ्य टेहरीवाले (१)
(नखसिख)

मरकत[2]-सूत कैधौं पन्नग के पूत अति राजत अभूत तम-राज के-से तार हैं । मखतूल गुनग्राम सोभित सरस स्याम काम मृग कानन के काहू के कुमार हैं ॥ कोप की किरन कै जलज नल नील तंत उपमा अनंत चारु चँवर सिंगार हैं । कारे सटकारे भीजे सोंधे सों सुगंध वास ऐसे बलभद्र नवबाला तेरे बार हैं ॥ १ ॥

---

१ रति । २ नीलम ।

४४६. बलभद्र कायस्थ पन्नावाले (२)

करनी कछु पूरब कीनी बड़ी बिधु कौने सँजोग सु जीवो करै ।
हुलसै बिलसै झुलनी में झुलै लखि सौतिन को सुख लीवो करै ॥
निसि-बासर पीतम-नैनन को बलभद्र बड़ो सुख दीबो करै ।
मतवारो भयो नथ को मुकुता अधरा को अमीरस पीवो करै ॥१॥

मंजुल मुकुर केरे निकट घरीक रह्यो, उत ते उचटि लोनी लटन में लटि गो। कहै बलभद्र लोनी लट ते उचाटि फेरि ग्रीवा कल कंठ की निकाई में सिमटि गो ॥ भूलो भूलो फिरो फेरि झाँई-सी भुजन बीच आँगुरीन नाभी ते अचाक आइ छँटि गो । कटि को न आयो मन अटको निपट आली कटि के निकट पीतपट में लपटि गो ॥ २ ॥ हीरन के हार ते सरस माहताब, माहत ब ते सरस घन-सार को बरस है । कहै बलभद्र घनसार ते सरस हिम, हिम ते सरस सो सुहायो हासरस है ॥ हासरस हू ते सुद्ध सरस पियूष[1], औ पियूष ते सरस कलानिधि को दरस है । परनापुरंदर महीपति नृपतिसिंह सुजस तिहारो कलानिधि ते सरस है ॥ ३ ॥

४४७ ब्रज—लाला गोकुलप्रसाद कायस्थ बलरामपुरवाले
(दिग्विजयभूषण)
छप्पै

गनपति गौरि गिरीस गिरा[2] बिधि[3] रमा रमापति ।
राजराज सुरराज सप्तऋषि पावन जलपति[4] ॥
राहु केतु सनि भौम सुक्र बुध गुरु रबि निसिपति ।
मच्छ कोल कहि कच्छ सिंहनर[5] बामन भृगुपति ॥
सिय रामचंद ब्रजचंद प्रिय बौद्ध कलंकी अघ हरैं ।
कहि गोकुल सुभ सब दिन सदै ये छत्तीस रच्छा करैं ॥ १ ॥

नेह की न हानि तन मन में तिहारे प्यारे गेह में निहारे दीप

---
१ अमृत । २ सरस्वती । ३ ब्रह्मा । ४ वरुण । ५ नृसिंह ।

मोर दरसान है । राखौ हित और सों की है है बस वाके आय मन को मनाय लीनो यहै बड़ी बात है ॥ गोकुल बिलोकि बाल रावरे के हाल सुनि खीझैं फिरि रीझैं माखै मोहि सतरात है । जोबन-रूप धन मद उमगाये जात खाये बवरात एक पाये बवरात है ॥ २॥ निसि को बिताय घर आये देखि भई दीन छिगुनी को छला करे कुन में निवास है । नवत बड़ाई हेतु बड़े जे प्रवीन ब्रज मान तजै मान हित मानिनी बिलास है ॥ उमँगो अनंद तेरे हिये न समाय प्यारी कहे न जात गुन बानी सों प्रकास है । दामिनी सों घन सोहै घन ही सों दामिनि है मेरो मन तो मैं तेरो मन मेरे पास है ॥ ३॥

(अष्टयाम)

जामैं जोति जेबै जाले कंचन के काम जामैं पैन्हे पायजामै फबै फेंट को बिलास है । पानि पाँय पायतावे मोजे पुंज मोल के जो साजै मौज ही सों प्रतिरोज के लिबास है ॥ राजै महाराज दिग्वि-जयसिंह सिरताज जड़ित जतन सों रतन के उजास है । मानौं मारतण्ड चण्ड मण्डल के आसपास मंडित नवग्रह की मण्डली प्रकास है ॥ १ ॥

(चित्रकलाधर)

बँधि गो अति बाँधत नारन मैं ब्रज तेरे सिंवार से वारनमैं ।
दबि गो चल भौंह के भारन मैं फिरि दौरो फिरै दगतारन मैं ॥
परि गो मुख-पानिप-धारन मैं बहि लागो उरोज-किनारन मैं ।
नहँ हेरि थक्यो बहु बारन मैं मन मेरो हेराइ गो हारन मैं ॥ १ ॥

४४८. बलदेवसिंह क्षत्रिय, श्रीद्विजदेव और क्षितिपालजू के साहित्यशास्त्र के गुरु

अम्बरै सुधारे अँगराग अंग धारे दग अंजन सँवारे कारे कंज मद छीने है । भाल मैं बिसाल लाल रच्यो है रसाल बाल ता बिच

---

१ शोभा । २ कपड़े ।

कुंरगमद-बिन्दु[1] चारु दीने है॥ आरसी में हेरै बैठी ताही को विलास मंजु बलदेव उपमा सकोचि सोचि लीने है। मानों सूर-अंक इंदु, इंदु-अंक अरबिन्द, अरबिन्द-अंक में मलिन्द बास कीने है ॥ १ ॥

चन्दन चमेली चोप चौसर चढाय चारु मधु मदनारे सारे न्यारे रसकारे हैं। सुगति समीर मद सेद[2] मकरन्द बुन्द बसन पराग से सुगन्ध गन्ध धारे हैं ॥ वारन बिहीन सुनि मंजुल मलिंद-धुनि बलदेव कैसे पिक वारे लाज हारे हैं। फूलमालवारे रतिवल्लरी पसारे देखो कंत मतवारे की बसंत यों पधारे हैं ॥ २ ॥

४४९. बिश्वनाथ कवि (१)

अतलस चीन को सलूका आधी बाँह तक सिर पै समूरवाली टोपी सुबासाम है । जुलफैं जलूस चारिबाग को रुमाल काँधे माया-मद-आँधे देत लेत न सलाम है ॥ कहै बिस्वनाथ लखनऊ की गलीन बीच ऐसन अमीरजादे कढ़त तमाम है । चोपदार आगे इतमाम को बढ़ावैं लिए पेचवान पैदर सवारी तामझाम है ॥ १ ॥

४५०. बिश्वनाथ भाट टिकईवाले (२)

मनसब दिल्ली ते लखनऊ ते खैरखाही लंदन ते खिलति बि-साति बिना सकसे । भार भुजदण्डन सँभारे भुवमंडल लौं जाकी धाक धाई धराधीस धकाधक से ॥ हाँक सुनि हालत हरीफ़ नाकदम होत कहै बिस्वनाथ अरि फिरैं जाके मकसे । कहाँ लौं सराही तेरे भुज की उमाही बीर रनजीतसिंह तेरे बादसाही नकसे ॥ १ ॥

४५१. बंसीधर कवि २

एक ओर बान पंचबान[3] को गहाइ दीनो एक ओर रन अति काठिन लखावतो । दोषाकर[4] बीच दोषआकर बसाई सीतभीत करै जेते प्रीति वाहर निवाहतो ॥ बंसीधर कहै घर डगर नगर बीर लै करि समीर रोम रोमनि वसावतो । छूटतो न मान मंत्र तंत्र

१ केसर की टिकली । २ पसीना । ३ कामदेव । ४ चन्द्रमा ।

अरु जंत्र कीन्हे जो नहिं हिमंत दूती कंत बनि आवतो ॥ १ ॥
बोलत न मोर गयो चंद न मलीन भयो चातक रटनि बकी काहे ते भुलानी है। कोकं हू मिले हैं तिन्हैं दुख सरसान्यो अति हरष चकोरन के प्रीति कुम्हिलानी है॥ वंसीधर कहै भौंर मगन कलोल करैं केकरि अडोल रहे सौंत मलुहानी है। चंचला हेरानी घन पानी को न लेस रह्यो कौन रीति पावस की आजु दरसानी है॥२॥
दुवन दुसासन दुकूलं गह्यो दीनबंधु दीन ह्वै कै द्रुपददुलारी यों पुकारी है। छाँड़े पुरुषारथ को ठाढ़े पिय पारथ से भीम महाभीम ग्रीव नीचे को निहारी है॥ अंबर तो अंबर अमर कियो वंसीधर भीषम करन द्रोन सोभा यों निहारीं है। सारी बीच नारी है कि नारी बीच सारी है कि सारिही कि नारी है कि सारी है कि नारी है॥ ३॥

४५२ बारन कवि राउतगढ़वाले

दूध-सी फटिकँ-सी सुँरसरी-सी सारदा-सी सारदा के सुत ऐसी समताई पाई है। चन्दन-सी संख-सी सुहास औ मृनाल ऐसी वक सी विलोकि बहु होती सुखदाई है॥ हीरा ऐसी हंस-सी कपूर और कुंद ऐसी बारन सुकवि मन उपमा न पाई है। पुंडरीक स्वेत फूल सम को न लागत है सुजावलसाह ऐसी चाँदनी बनाई है॥ १॥

(रसिकविलासग्रंथे)

केहूँ छाँड़्यो धाम केहूँ धन केहूँ ढोटा छाँड़्यो केहूँ छाँड़े सुख-पाल पाँइ भागी जाती हैं। केहूँ छाँड़्यो पति केहूँ पान केहूँ पानी छाँड़्यो केहूँ छाँड़्यो अन्न वै सबै न कछू खाती हैं॥ ऐसी तौ गिरा-सी देह सति सोहै तुच्छ मति लखि छाँह आपनी वै आपही डराती हैं। साहिब सुजान साहसुजा जू तिहारे त्रास वैरिन की बधू वन वन बिललाती हैं॥ २॥

---

१ एक पक्षी। २ वस्त्र। ३ बिल्लौर। ४ गंगा।

तुम साँझ ते लाइ रहे जक एक न मानत है वह सौंह दिवाये ।
सासु बिसासी के पास रहै नित कोटिन भाँति टरै न टराये ॥
चालि जाउ न काहे अजू बलिहारी मैं आवै कदाचित आहट पाये ।
कौन बदी चतुराइ तिहारी जो आगि कढ़ावत हाथ पराये ॥३॥

आँगन हमारे बीच एक रूख बैरी को है सोई दुसराइत न कोई आसपासई । ननँद जिठानी गईं सकठकहानी सुनै आयो हो बुलावा न्यौता लै सिधायो सासई ॥ सैयाँ तौ गोसैयाँ जानै कौन देस गौने गयो रहत कहाँ धौं औ बसत कौन बासई । दिया जो जरत बिना तेल सो झलमलात भूत औ पिसाचन सों अजौं जिय त्रासई ॥ ४ ॥

जुवतीगन में ठटि कूप पै ठाढ़ी जबै नंदलाल पै दीठि करै ।
उतसाह सों बोलि उठै हँसि हाथ सहेली के हाथ सों हाथ धरै ॥
सब लोगन की तजि लाज जहाँ निज नाह तिही दिसि लै डगरै ।
भरि कै धरि कै अपनी गगरी खरी और सखीन को पानी भरै ॥ ५ ॥

सफरी से कंज से कुरंग करसायल से आँब की-सी फाँकैं सब कहत सुजान हैं । नटुवा से नट से तुरंगम से खंजन से बालक हठीले जैसे ऐसे ठने ठान हैं ॥ देखो टेढ़ी कोरैं मानौ नख नैया छोर के हैं बान ऐसी अनी पैनी लागे लेत प्रान हैं । ठग बटपारे मत-वारे कवि तुच्छमति इतने ही नैनन के कहे उपमान हैं ॥ ६ ॥

इंद्र की बधू[2] से मुकुता से नीलमनि ऐसे बीजुरी-वचा से दमकत देखे नित्त मैं । हीरा मूँगा मानिक से दाड़िम के दाने ऐसे लाल से विराजत सो सोभा छाई चित्त मैं ॥ जीगनं से कुंद से बकाइनि के फूल ऐसे देखि कै त्रिवेनी तौ सुमिरि आई हित्त मैं । स्याम औ सुरंग सेत दसन की छबि एजू[1] वारन कहत कवि एक ही कबित्त मैं ॥ ७॥

---

१ शायद । २ वीरवहूटी ।

अचल चकोर की कली हैं कोकनँद की सी दाड़िम जँभीरी कीधौं फटिक के पौवा हैं। श्रीफल सुहाये किधौं कोकन के सावक हैं संग गिरिसंकर की कंचन के लौवा हैं॥ कंज की कली हैं की सिंधौरा रूपरासिभरे जोवन के मग किधौं पके से खटौवा हैं। अति ही कठिन हैं बखाने नाहीं जात केहूँ प्यारी के पयोधर की काम के गटौवा हैं॥ ८॥

कान फराइ जमाइ जटा सिर ध्यान लगाइ महान कहाये।
तीरथ जाइ नहाइ नदी-नद छार सों छाइ कै जोग उपाये॥
दंड कमंडल मंडित पानि फिरे महिमंडल मूड़ मुड़ाये।
ऐसे भये तौ कहा जु पै बारन जानकीजीवन जीव न आये॥ ९॥

छप्पै

चातक षटपद तीर बन्द[1] अंबुज जिमि जानौ।
पाथर बक औ सुवा जैलोंका[2] गनरू बखानौ॥
लम्पट नीर अकास अपनपौ भाव बतावै।
जाकी चाँदी अतिथि अलुन मच्छर सुर गावै॥
सुलतान साहसाहेब सुजा कवि बारन यह उच्चरत।
इमि बीस दास तुव सत्रु की सदा रहैं सेवा करत॥ १०॥

४४३. ब्रजवासीदास कवि

(प्रबोधचन्द्रोदय नाटक)

अंतर मलीन दीन हीन पुरुषारथ सों कर्मता विहीन पीन पाप की कहा कहौं। विषय अधीन और कहाँ लौं कहै प्रवीन काम क्रोध लोभ मोह मद के धका सहौं॥ रावरे हैं समरथ मो-से खल तारिवे को अधमउधारन हौ और ते न जाँचहौं। सरल सुजान संत प्यारे की निछावरि मोहिं दीजै सरनागत सन्त-गंग मो परो रहौं॥ १॥

---

१ कमल लाल। २ जोंक।

४५४. व्यासजी कवि

दोहा— व्यास बड़ाई जगत की, कूकर की पहिचानि ।
प्यार करे मुख चाटई, बैरु करे तनहानि ॥ १ ॥
व्यास कनक अरु कामिनी, ये लाँबी तरवारि ।
निकसे हे हरिभजनको, बीच हि लीन्हे मारि ॥ २ ॥
व्यास कनक अरुकामिनी, ये हैं करुई बेलि ।
बैरी मारैं दाँउ दै, ये मारैं हँसिखेलि ॥ ३ ॥
धन विद्या अरु बेलि तिय, ये न गिनैं कुल जाति ।
जो समीप इनके बसै, वाही सों लपटाति ॥ ४ ॥

४५५. व्रजदास कवि प्राचीन

आनन चंद सो खंजन से दृग हैं हर के रिपु[1] के रस छाते ।
प्रेम अमी अनुराग रँगे पै झगे रससिंधु में मानौ चुवाते ॥
अंजन रंजन हैं मन के व्रजचंद भनै बने झूम-झुकाते ।
मानौ कलानिधि पै विवि कंज द्विरेफ[2] लसैं तिन्ह पै मदमाते ॥ १ ॥

४५६. बृंद कवि

कौरवसभा-समुद्र गहर विरोध बारि कोप बड़वानल की ओप अगमगी है । जोधा दुरजोधन करन जाकी वेला बने बृंद कहै लोभ की लहरि जगमगी है । कुबुधि बयारि ते दुसासन तुफान उठ्यो चाल्यो बादियान चीर भीति रगमगी है । भीति पतवार लैकै हूजिये करनधार आजु हरि लाज की जहाज डगमगी है ॥ १ ॥

४५७. बाजीदा कवि

बाजीदा बाजी रची, दिल दरख के बीच ।
जो चाहै जीत्यो सुअब, साहेब सुमिरन सींच ॥ १ ॥

४५८. बलदेव कवि (४) प्राचीन

घुँघुरारे बार वारों मोतिन के हार वारों मुरली बजाय कछु

---

१ कामदेव । २ भ्रमर ।

टोना करि दै गयो। जमुना के कूल कालिह मिल्यो हो अचानक ही जानि न परत कछु बात मोसों कै गयो॥ जब तें बिहाल भई डोलौं बनबीथिन[2] में कहै बलदेव यह मैनबीज वै गयो। सखियाँ निगोड़ी इकनाहक बकावती हैं नन्द को कुमार हाय मेरो मन लै गयो॥ १॥

४५६. बुधराम कवि

कंचन के खंभ दोऊ सुरँग रँगाय डाँड़ी मरुवा पिरोजा लाल पटुली खरी जरी। सोलह सिंगार किये झूलति हैं चंदमुखी पहिले सरस हार मचकै खरी खरी॥ खन आसमान जाय धरती लगाय पाँय फहरत चीर ताहि दाबति घरी घरी। कहै बुधराम को है नायिका नवल ऐसी मानौ आसमान ते बिमान लै परी परी॥ १॥

४६०. बिहारी कवि प्राचीन (२)

कब के बिहारी बलि करत हाहा री तू तौ करति कहा री सबै सरत बिचारिये। जग की जियारी दया देखि घटा कारी उठि आये बनवारी तू कहै तौ पाँय पारिये॥ जिन्हैं देखि हारी बनचारी मृगनारी सारी काम की करारी सबै प्रेम मत वारिये। कारी कजरारी उजियारी अनियारी झपकारी रतनारी प्यारी आँखैं इतै डारिये॥ १॥

४६१. बलिजू कवि

नैनन को कजरा चकचूर है नेक बिलोकनि में सिचुरयो परै।
केसरि भाल के बीच को बिंदु जराव के जोबन सों बिथुरयो परै॥
बेसरि के मुकता बलिजू छबि सों झुकि झूमि झुक्यो उचरयो परै।
ओठनि को रँग सोहैं बतानि मनौ बसुधा पै सुधा निचुरयो परै॥ १॥

४६२. ब्रजलाल कवि

घुमड़्यो गुलाल औ अबीर की धमक छाई सुन्दर सहेली हियो अंग अंग सरसै। नंद को कुमार ग्वालबालन सों सैन मारैं केसरी पिचक छूटैं मानौ मैन दरसै॥ बृंदावन रसिक चकोर सब

१ घूमती हूँ। २ वन की गलियों में।

ब्रजलाल सुर नर मुनि सब देखिबे को तरसैं। होरी अंक जोरी में पियूष अवनी पै आजु राधा-मुखचंद पर झलाझल बरसै ॥ १ ॥

४६३. बनवारी कवि

आनि कै सलावतिखाँ जोर कै जनाई बात तोरि धर पंजर करेजे जाइ करकी। दिलीपति साह को चलन चलिबे को भयो गाज्यो गजसिंह को सुनी है बात बरकी ॥ कहै बनवारी बादसाह के तखत पास फरकि फरकि लोथि लोथिन सों अरकी। हिन्दुन की हद सद राखी तैं अमरसिंह कर की बड़ाई कै बड़ाई जमधर[१] की ॥ १ ॥ नेह बरसाने तेरे नेह बर साने देखि यह बरसाने बर मुरली बजावैंगे। साजु लाल सारी लाल करैं लालसा री देखिबे की लालसा री लाल देखे सुख पावैंगे ॥ तू ही उर बसी उर बसी नाहीं और तिय कोटि उरबसी तजि तोसों चित लावैंगे। सेज बनवा री बनवा री तन आभरन गोरे तन वारी बनवारी आजु आवैंगे ॥ २ ॥

४६४. विश्वंभर कवि

केलिकलोल में कंपति हौं जनु बेलि सी खेलि सकौं न करेरे।
जानौं न हाँसी मिलौं हिय खोलि न बोल न आवै बिलासी के टेरे॥
जद्यपि ऊँचे उरोज नहीं सु बिसंभर हौं सकुचौं मुख हेरे।
तद्यपि मानि महा सुख काहे धौं संतत कंत बसैं ढिग मेरे ॥१॥

४६५. बल्लभरसिक कवि

अटकि चली है पग मटकि धरनि लखि पायल की झनक सुठौन अनखटकी। छीन कटि पीन कुच मीन से नयन सखि सकुचि सटकि चली गली है निकट की ॥ बल्लभरसिक लखि चटक बदन मैं उलटि बटपार जुग धार मरवटकी। सटकी ललन तऊ न टिकी ललन-मति लट की लपट में लपटि आइ अटकी ॥ १ ॥

---

१ कटारी का भेद।

४६६. बीठल कवि (२)

परत तुषार[1] झार उठत अपार भार द्वार भो पहार पूस आँगन सुहात है। बीछी कैसे छौना भरे मानहुँ बिछौना माँझ दिसिहू बिदिसि लागे घेरे घर घात है॥ बीठल सुहित अति गति मति भूलि जात चातक करात जब बोलै आधी रात है। बिरह ने दही रात पिय बिन रही रात आवै नियरात तिय जात पियरात है॥ १॥

४६७. ब्रह्म, श्रीराजा बीरबर

उछरि उछरि भेकी[2] झपटैं उरग पर उरग पै केकिन[3] के लपटैं लहकि है। केकिन के सुरति हिये की ना कछू है भये एकी करि केहरि न बोलत बहकि है॥ कहै कवि ब्रह्म बारि हेरत हरिन फिरैं बैहरि बहति बड़े जोर सों जहकि है। तरनि के तापन तवा सी भई भूमि रही दसहू दिसान में दवागि सी दहकि है॥ १॥
एक समै हरि धेनु चरावत वेनु बजावत ऐन रसालहि।
दीठि परी मनमोहन की वृषभानसुता उर मोतिन मालहि॥
सो छवि ब्रह्म लपेटि हिये कर सों कर लै करकंज सनालहि।
संभु के सीस कुसुंभ के पुंज मनो पहिरावत ब्यालिनि ब्यालहि॥२॥

४६८. विश्वनाथ सिंह बघेले (२) महाराजा रीवाँ

बाजी गज सारे रथ शुतर[4] कतारे जेते प्यादे ऐंड़वारे जे सबीह सरदार के। कुँवर छबीले जे रसीले राजबंसवारे सूर अनियारे अति प्यारे सरकार के॥ केते जातिवारे केते केते देसवारे जीव स्वान सिंह आदि सैलवारे जे सिकार के। डंका की धुकार ह्वै सवार सबै एकबार राजैं वारपार द्वार कौसलकुमार के॥ १॥
पाग जरकसी गँसी कलँगी त्यों बसी बाँकी लंकद्वार असी लसी कसी पटछोर सों। भीजी मुख ह्वै सी मसी हँसी खासी कौमुदी[5]

१ पाला। २ मेढकी। ३ मोरनी। ४ शुतुर=ऊँट। ५ चाँदनी।

सी फँसी अहि ससी सोभा जुलुफ मरोर सों ॥ प्रिया संग सोहैं बातैं करत रसोहैं विश्वनाथ सोऊ सोहैं मुख जोहैं है चकोर सों। दूनों ओर चौंर चारु भये पर आये राम सेवक सलाम दास कीन्हों चहुँ ओर सों ॥ २ ॥

४६९. विष्णुदास कवि

दोहा—नव जलचर दस व्योमचर, कृमि गेरह बन बीस।
बिष्णुदास कवि कहत हैं, मनुज चारि पसु तीस॥ १ ॥
दस सरवर दस हंस हैं, दस चातक दस मोर।
राधाजू के बदन पर, बसत चालिसौं चोर॥ २ ॥
अहि सिव पावक बाज तम, बाल लिखी ततकाल।
लिखि भसमासुर घन बँधिक, हरि फिरि लिख्यो उताल॥ ३॥
सिंहिनि को एकै भलो, गजदलगंजनहार।
बहुत तनय किहि काम के, सूकरितनय हजार॥ ४ ॥
दरपन दरसत हरि सहित, कमला परम प्रबीन।
द्वादस कर पद दस सहित, आठ नयन ससि तीन॥५॥

४७०. बलराम कवि

केलिघर सुघर सिधारीं अभिसार करि बार धूपि अगर अपार नेह पी को है। कहै बलराम जाकी छवि ना छपाये छपै छपा में छबीली छबिवारो अंग तीं को है॥ बारभार झुकत चलत मचकत बाल जावक के भार पग गौन कारिनी को है। जानत छपाकर चकोर जातरूप चोर भृंग जानि गुंजत सुमन मालती को है॥ १ ॥

४७१. विट्ठलनाथ (१) गोकुलस्थ

पद

जमुना जो नाम ले सो सभागी।
सोई रस-रूप को सदा चिंतन करे नेक नहिं कल परे जाहि लागी॥
पुष्टिमारग परम अतिहि दुर्लभ परम छाँड़ि सगरे करम प्रेमपागी।

श्रीविट्ठल गिरिधरन सी निधि अब भक्त को देत हैं बिनहि माँगी ॥१॥

४७२. विहारी कवि (३)

गरुड़सँपाती गति लीन्हे नट नैनन की नाचत थिरकि मित्र खेरे समीर के। छोनी[1] ना छुवत पग अचल[2] उलंघि जात ताते तेज तुरँग अगाऊ जाइ तीर के॥ सोने के सचित साज रतन-जटित सारे भनत विहारी रन पैठत जे चीर के। मन ते सरिस चलिबे को चपलाई अंग राजत कुरंग ऐसे बाजी[3] रघुबीर के ॥१॥

४७३. वैताल कवि

छप्पै

जीभि जोग अरु भोग जीभि सब रोग बढ़ावै।
जीभि करै उद्योग जीभि लै क़ैद करावै॥
जीभि स्वर्ग लै जाय जीभि सब नरक दिखावै।
जीभि मिलावै राम जीभि सब देह धरावै॥
जीभि ओंठ एकत्र करि बाँट सिहारे तौलिये।
वैताल कहै विक्रम सुनो जीभि सँभारे बोलिये॥ १ ॥

टका करै कुलहूल टका मिरदंग बजावै।
टका चढ़ै सुखपाल टका सिर छत्र धरावै॥
टका माइ अरु बाप टका भाइन को भैया।
टका सासु अरु ससुर टका सिर लाड़ लड़ैया॥
एक टका बिन टकटका होत रात अरु रातदिन।
वैताल कहै विक्रम सुनो धिक जीवन इक टका बिन ॥ २ ॥

मरै बैल गरियार मरै जो कट्टर टट्टू।
मरै कर्कसा नारि मरै वह खसम निखट्टू॥
ब्राह्मन सो मरि जाय हाथ लै मदिरा प्यावै।
पूत वही मरि जाय जु कुल में दाग लगावै॥

---

१ पृथ्वी। २ पहाड़। ३ घोड़े।

बेनियाउ राजा मरै तौ नींद धराधर सोइये ।
वैताल कहै विक्रम सुनो इतने मरे न रोइये ॥ ३ ॥
सत्ताइस अरु सात तीनि तेरह तैंतीसा ।
नौ दस आठ अठारह बीस बावन बत्तीसा ॥
चौदह चौंसठि चारि पाँच पंद्रह पैंतीसा ।
सोरह छा छप्पनहु एक ग्यारह इक्कीसा ॥
छानवे कोटि निनानबे सु इको दल भूपत्ति हुव ।
वैताल भनै विक्रम सुनो सु इतने रच्छा करहिं तुव ॥ ४ ॥
पग तुरंग नहिं तुरी लंक केहरि नहिं चीता ।
सिर बिन बेनी गुहै पेट बिन पीठि सुनीता ॥
करि नर सों व्यवहार भार वह सबै उठावै ।
चलै अटपटी चाल हाथ बिन ताल बजावै ॥
नहीं जीव नहिं मास तिहि भगति हेतु भंजन करै ।
बैताल कहै विक्रम सुनो सो गुनी नाम गुन मति धरै ॥ ५ ॥

४७४. बेंचू कवि

जनक जनकजा[1] के बनक पै फीके होत धनक न ताके तन संपति ही धारि ले । दसरथ दर्स देखि द्रवैं दिगपाल सबै तासु सुतवधू तौन हेतहू विचारि ले ॥ भूषन समाज कहाँ छूट्यो पर काज राज सुख को समाज बृथा चित्त सों बिसारि ले । बेंचू सिय लखन सों कहैं पंथ कानन के देवर थकी हौं नेक नेवर[2] उतारि ले ॥ १ ॥

४७५. बजरंग कवि

बारहौ भूषन को सजि कै अरु सोरहौ भाँति सिंगार बनावै ।
बैठी तिया मनिमंदिर में मुखचंद की चाँदनी को दरसावै ॥
सो बजरंग बिचारि कहै कबि खोजि फिरे उपमा नहिं पावै ।
नाइनि ठाढ़ि हहा करती ठकुराइनि भाल न ईंगुर छ्वावै ॥ १ ॥

१ सीता। २ नूपुर।

४७६. वल्लभ कवि (२)

दोहा—वल्लभ बेल्ली[1] प्रेम की, तिल तिल चढ़ै सुभाइ ।
ज्वालजाल ते नहिं जरै, कपटलपट जरि जाइ ॥ १ ॥
गौनसमय मुख नासिका, बेसरि डोलत तीय ।
मानहुँ एकुता इमि कहत, हहा चलौ जनि पीय ॥ २ ॥
तन ताजी असवार मन, नयन पियादे साथ ।
जोवन चलो सिकार को, बिरह बाज लै हाथ ॥ ३ ॥
तन कंचन को महल है, तामें राजा प्रान ।
नयन झरोखा पलक चिक, देखै सकल जहान॥ ४ ॥
करसर सहित कमान बिन, मारत भरे कसीस ।
घाव कहूँ नहिं देखिये, सालै नख अरु सीस ॥ ५ ॥

४७७. बकसी कवि

जेई वेद प्रभु के बसत उर अंतर हैं तेई वेद द्विज मुख रसना बिसेखिये । प्रभुजू के बंदन करत लोक लोकपति ऐस ही बड़ाई सतिजीव अवरेखिये ॥ बकसी कहत इन्हें एकसम माने रहौ दूसरो न मानौ गनौ दृगन में पेखिये । गुपत चहौ तौ परमेसुर को ढूँढ़ो करो प्रगट चाहौ तो इतै ब्राह्मन को देखिये ॥ १ ॥ माँगहु सँवारे सीस सेंदुर सुधारे लर मोतिन की डारे झलकत दुति ढार की । तन जरकसी सारी तामें जगमगै प्यारी भारी छबि होत उर कंचन के हार की ॥ बालम बिदेस ताके ऐबे को दिवस सुन्यो ठाढ़ी मग जोए पल छिनक अबार की । बकसी कहत तिया सकल सिंगार किये बाजूबंद बाँधे बाजू पकरे किंवार की ॥ २ ॥

४७८. ब्रजवासीदास बृंदावनी
(ब्रजविलास)

दोहा—कहौ कहा चाहत फिरत, धाम अँधेरे माहिं ।

---

१ बेल । २ एक प्रकार का घोड़ा ।

बूझे बदन दुरावते, सूधे चितवत नाहिं ॥ १ ॥
मम लोचन आगे सदा, खेलहु सखन बुलाय।
तेरो बालविनोद लखि, मेरो हियो सिराय॥ २ ॥

४७९. वंशीधर मिश्र सँडीलेवाले

जिन्हैं तू मगन तेरे तिन्हैं ताकि देखो नर नग्न कै निकारिकै चढाइबे को जीता है। सपने की सम्पदा सुलभ साथ सब ही के सोई हित लाग्यो हरिनाम आनि हीता है॥ कहै मिस्र वंसी कब हूँ न आई मति वैसी जैसी चहूँ छहूँ ठहराय गावै गीता है। चेत नाहीं परैगो पै तरी ताकै चलौ अब सीताराम जपि ले जनम जात बीता है॥ १ ॥

४८०. विश्वनाथ कवि (५) प्राचीन

उकुति जुगुति[1] करि उपमा बिचारि चारु[2] तुक[3] निरधाँरि सुभ अच्छरन कीजिये। छंद दृढ़ बंद करि अरथ अनूप धरि जमक जराउ जड़ सोधि[4] सुद्ध लीजिये॥ ललित ललित पद लहैं बिस्वनाथ कहैं गहैं कविरीति रीझि रीझि रस पीजिये। उदक उदायक बलायक समान दान गाहक बिना कबित्त नाहक न दीजिये॥ १ ॥

४८१. व्रजराज कवि

गुंजरित भृंगपुंज कुंजरित कोकिलादि पात पात सहकार[5] फूल फल नये री। चंपक कदंब औ कदंब भाँति भाँतिन के आलबाल[6] राजत तमाल बाल छये री॥ बेला औ चमेला तूत एला[7] केला कुंजन में सीतल सुगंध मंद सीरी बाइ अये री। महासुकुमारी प्रानप्यारी व्रजराज की तू आज व्रजराज केहि काज बन गये री॥ १ ॥

४८२. बलदेव कवि (५) दासापुर के ब्राह्मण

(शृंगारसुधाकर)

पाँवन की रज पावन हेत गलीन में आरत फेरो करैं।

---

१ उक्ति और युक्ति। २ सुन्दर। ३ काफ़िया। ४ ठीक करके। ५ आम। ६ थालहा। ७ इलायची।

बलदेव सुधासम केवल नाम अधार सबै थल टेरो करैं ॥
धरि राखे हैं प्रान निछावरि को मन चेरेन हू कर चेरो करैं ।
डर मानि भरे दृग दूर ही सों भृकुटीन को रावरी हेरो करैं ॥ १ ॥
हौं सब भाँति अधीन लखो पै चवाइन के गन नेकु न मानते ।
छूटत नेह नहीं सहजै बलदेव सबै गुरुलोगहु जानते ॥
ता पै भनैं कुलकानि कथा करि रोप हिये सतरीति बखानते ।
होनी सु तौ अब है चुकी है हकनाहक ही सब यें दृग तानते ॥ २ ॥

४८३ बलदेवदास जौहरी (६) हाथरस के निवासी
(भाषा कृष्णखण्ड)

दोहा—सुमिरि सम्भु गिरिजा सुमिरि, गनपति सदा मनाय ।
विघनविनासन एकरद, हूजै सदा सहाय ॥ १ ॥

कवि

महाराजराजा स्रीअनूपगिरि तेरी धाक गालिब गनीमन के पैर गरे जात हैं । भनत वाजेस भयो भीम भौ भरम महा दिल को उदार भूअधार धरे जात हैं ॥ तेरी सीलता को वीरता को धीरता को सुनि गुनीजन दुनी के हुलास भरे जात हैं । मेकल मतंगन में हौदा धरे जात पर मवल परिंद तेरे पौदा परे जात हैं ॥ १ ॥

४८५ विश्वनाथ अतार्ई (४)

मानुषजनम करतार तोहिं दीन्हो कूर ताकी रे कृतघ्नी तू ना सरन पर्यो रहो । चौरासी भ्रम्यो है कहूँ नेक न बिरम्यो[3] है भाजाभाज यों सम्यो है अघओघन भर्यो रहो ॥ पाँचन सों मिलि खारा मैं मगरूर बैठि जौन करै काम जासों कारज सर्यो रहो । नाम सों न भेव्यो विस्वनाथ यों ही बूड़ि गयो लोहे मध्य पींजरा में पारस धर्यो रहो ॥ १ ॥

४८६. बालनदास कवि
(रमलसार)

दोहा—इन्दु नाग अरु बान नभ, अंक अब्द सुति मास ।

---

१ बड़े-बूढ़े । २ शत्रु । ३ बिरमा=बिलमा ।

कृस्नपच्छ तिथि पंचमी, बरनेउ वालनदास ॥ १ ॥
गुरु गनेस सुभ सेष मुनि, गरुड़ध्वज गोपाल ।
रमलकथा सुख कमल करि, चरनन की रज वाल ॥ २ ॥
चौंसठि प्रस्न विचारि कै, संकर कीन प्रकास ।
तेहि मा सुख संसार को, बरनत वालनदास ॥ ३ ॥

४८७. बादेराय बन्दीजन डलमऊवाले

वही ज्ञान ज्ञाता वही सुमति को दाता करामात दरसाता अंग ब्याल लपटाइ कै । गरे मुंडमाल कंठ काल हू को काल ससि सोहत है भाल रीझै डमरू बजाइ कै ॥ ऐसे सबै महिमा बखानै को महेसजू की बादेराय ध्यायो गुन कवित बनाइ कै । सकल सुमति सुख संपति सहित दै कै साँकरे में संकर सहाइ करौ आइ कै ॥ १ ॥

४८८. विपुलविट्ठलजी गोकुलस्थ

पद

प्रिया स्याम सँग जागी है ।
सोभित कनक कपोल ओप पर दसनछाप छवि लागी है ॥
अधरन रंग छुटी अलकावलि सुरत रंग अनुरागी है ।
विट्ठलविपुल कुंज की क्रीड़ा कामकेलि-रस पागी है ॥ १ ॥

४८९. विहारीदास (४)

पद

तू मनमोहनी री मोहन मोहे री अंग अंग ।
अगमनी अलकैं झलकैं बर उर पर छूटी लट मुख हँसत लसत दसनावलि सहज भृकुटीभंग ॥ मृग मधुप लौं स्याम काम सब तजे बन बेली धाम सौरभ सुरसब्द सुनत फिरत संग संग । बिहारनि दासि स्वामिनी सुखरासि रहसि फिर चितयो मानि आनि उर अंगरंग अनंग ॥ १ ॥

४९०. व्यासस्वामी

पद

सैननि बिसरे बैननि भोर।
बैन कहन कासों पियहिय ते विहँसत कतहि किसोर ॥
दुख मेटत भेटत तुमको नाहिं चुंबन देत न थोर।
काहि देत जोबनधन कर गहि लै कुचकोर अकोर ॥
काके पाइँ गहत मम प्यारे कासों करत निहोर।
कौनिहिं विकल किये नवनागर तुम पनिहँ तुम चोर ॥
निज बिहार आरोपि आन पर कोपि मानगढ़ तोर।
व्यासस्वामिनी बिहँसि मचाई सुरतिसमुद्र हिलोर ॥ १ ॥

४९१. वल्लभ

पद

बाती कपूर की जोति जगमगै आरती विट्ठलनाथ विराजै।
घंटा ताल पखावज आवज सप्त सुरनि सारद साजै ॥
या छवि की उपमा कह कहऊँ कोटि काम निरखत लाजै।
श्रीवल्लभ प्रेम प्रताप भरे नित आनँद मंगल गोकुल गाजै ॥ १ ॥

कवित्त। गायो ना गोपाल मन लायो ना रसाल लीला सुनि न सुबोध जिन साधु-संग पायो है। सेयो ना सवाद करि धरि अवधरि हारि कबहुँ न कृष्णनाम रसना कहायो है ॥ वल्लभ श्रीविट्ठलेस प्रभु की सरन आय दीन ह्वै कै मूढ़ छन सीस ना नवायो है। रसिक कहाय अब लाज हू न आवै तोहिं मानुष-सरीरधरि कहा धौं कमायो है ॥ १ ॥

४९२. व्रजपति

पद

ग्वालिनि माँगत बसन अपाने।
सीतकाल जल भीतर ठाढ़ी आवत नाहिं दयाने ॥
तुम ब्रजराजकुमार प्रबल अति कौन परी यह बाने।

---

१ आदत।

हम सब दासि तिहारी ब्रजपति तुम बहु निपट सयाने ॥ १ ॥

४६३. बलरामदास

पद

मोहन बसन हमारे दीजै ।
वारने जाउँ सुनो नँदनंदन सीत लगत तन भीजै ॥
कौन सुभाव वृथा अनऔसर[1] इन बातन कस जीजै ।
सुनि दुख पावै महर जसोमति जाइ कहैं अब हीं जै ॥
सब अबला जल माँझ उघारी दारुन दुख न सहीजै ।
प्रभु बलराम हम दासि तिहारी जो भावै सो कीजै ॥ १ ॥

४६४. विष्णुदास

पद

प्रात समय स्रीवल्लभसुत को परम पुनीत बिमल जस गाऊँ ।
अंबुजबदन सुभग नयना अति स्रवनन लै हिरदै बैठाऊँ ॥
जबजब निकट रहत चरनन तर पुनि पुनि निरखि निरखि सुख पाऊँ ।
विष्णुदास प्रभु करो कृपा मोहिं बल्लभनंदनदास कहाऊँ ॥ १ ॥

४६५. बंशीधर

पद

होति खरी तहाँ जहाँ खोरि[2] साँकरी सुन्दरस्याम सलोना री ।
इत ते हौं जात उतते वे आवत ओढ़े पीत उढ़ोना री ॥
हँसि मुसकाय लटकि जब बोलैं पूछत हैं वधु कोना री ।
हौं सकुची मो पै उतरु न आयो इन ठग ठनी ढिठोना री ॥
चित्रलिखी रहिगई ताहि छन मनु पढ़ि डारी टोना री ।
बंसीधर गिरिधर पर वारी अब कछु और न होना री ॥ १ ॥

४६६. बृन्दाबन

पद

आजु सखी बन ते बने आवत गावत स्याम सखागन में ।

---

१ बेवक्त । २ गली ।

गति गुंजत अमित गयंद हु की लखि कौन रहै अपने मन में ॥
पगिया सिर लाल रही झुकि भाल सों पीत झँगा झलकै तन में
ये उपमा उपजी जिय में मानो चपला लपटी स्याम घन में ॥
घुँघरारी लटैं लटकैं मुख ऊपर राजत है रज गोधन में ।
चित्रलिखी सी रहिगई ता छिन बृंदावनप्रभु बृंदावन में ॥ १ ॥

४६७- विद्यादास

पद

आलसजुत देखियत जो भामिनी ।
राजत हैं रतनारे नैनन पिय सँग जागत गई जामिनी ॥
बाँह उठाय जोरि जमुहानी ऐंड़ानी कमनीय कामिनी ।
भुज टूटत छवि यों लागत मनु टूटि भई द्वै टूक दामिनी ॥
कुच उतंग पर रची कंचुकी सोभित त्रिवली उदर स्यामिनी ।
मानो मदन नृपति के तंबू हरिमन जीत्यो राधिका नामिनी ॥
बिथुरी अलक सिथिल कच डोरी नखछत छुरित मरालगामिनी ।
द्विगुन सुरति करि श्रीगोपाल भजि प्रमुदित विद्यादासस्वामिनी ॥ १ ॥

४६८. भूपति श्रीराजा गुरुदत्तसिंह बंधलगोती अमेठीनरेश

सीसफूल सूर[1] सीसथली को विभूषै भूप मंगल सुरंगबिंदु चंदन को मलकै । टीको सुरगुरु[2] मुख चंद को विलोके सुक्र लटकनमोती सोन रोकै राहु अलकै ॥ ठोढ़ी अंक स्याम सनि गोरे रंग बुध गनि ऐडत डिठौना केतु सौतिन को तलकै । उच्चथल परे हैं सकल ग्रह तेरे आली या ते बनमाली लोटपोट कोटि ललकै ॥ १ ॥ मीन ह्वै कमीने परे पानी में निहारे हारि हारि कै चकोर ताते चुगत अँगारे हैं । भूपति भनत गंज कंजन के खंजन के गंजन गरब करि हारे कै निकारे हैं ॥ डेरे रतनारे तारे कारे औ सितारे सेत उपमा

---

१ सूर्य । २ बृहस्पति ।

सितासित तरंगन में भारे हैं। प्यारी तेरे मान दृग पानि पर सान धारे कैंवर कसीसे वै कमानवारे दारे हैं ॥ २ ॥

४९९. भृङ्ग कवि

जब नैनन प्रीति ठई ठग स्याम सयानी सखी हठि यों बरजी।
नहिं जान्यो वियोग को रोग है आगे झुकी तब हौं तिहि सों तरजी॥
अब देह भये पट नेह के घाले सों ब्यौंत करै बिरहा दरजी।
ब्रजराजकुमार बिना सुनु भृङ्ग अनंग भयो जिय को गरजी ॥ १ ॥

५००. भरमी कवि

जिहि मुच्छन धरि हाथ कछू जग सुजस न लीनो।
जिहि मुच्छन धरि हाथ कछू पर-काज न कीनो॥
जिहि मुच्छन धरि हाथ कछू पर-पीर न जानी।
जिहि मुच्छन धरि हाथ दीन लखि दया न आनी॥
मुच्छ नाहिं वे पुच्छसम कवि भरमी उर आनिये।
नहिं बचन लाज नहिं सुजस मति तिहि मुख मुच्छ न जानिये॥

५०१. भगवान कवि

सजनी रजनी[१] रतिरंग जगी मनमत्थ कला करि आरभटी।
परिरंभन चुंबन अर्द्धविलास प्रकास महा छवि केलि ठटी॥
पिय की नखरेख कपोल लगी उपमा यह अद्भुत तासु डटी।
भगवान मनौ परिपूरन चंद में न्यारी है द्वैजकला प्रगटी॥ १ ॥

५०२. भीषम कवि

नंद बवा कि सौं मारिहौं साँटि उतारि कै तौ गहनो सब लैहौं।
भौंह कमान तू काहे चढ़ावति नैनन डाँटे ते हौं न डरैहौं।
देखत ही छन एक में भीषम ग्वालन पै दधि दूध लुटैहौं।
गूजरी गाल न मारु[२] गवाँरि हौं दान लिये बिन जान न दैहौं॥ १ ॥

---

१ रात। २ बढ़-बढ़कर बातें न कर।

४०३ भगवतीदास ब्राह्मण
(नासिकेतोपाख्यान)

दोहा—एते कर्मन पातकी, देखे हम जमद्वार।
तिन कहँ त्रास दिखावहीं, पूछहिं बारहिं बार॥ १॥
द्विज ह्वै संध्या नहिं करैं, अरु नहाय बिन खाहिं।
तिनके सिर आरा चलहिं, यहि महँ संसय नाहिं॥ २॥

४०४. भगवानदास निरंजनी
(भर्तृहरिशतक भाषा)

अरे अरे काम क्रूर बानवृष्टि वृथा पूर कोकिल कलभ तूर मोको न सतावैंगे। तरुनी विचित्र वाम महारस भरी काम अनत कटाच्छ धाम चित न चलावैंगे॥ चन्द्रधर-चरनचकोर ह्वै कै चित लाग्यो काम जाग्यो जानि कैसौ सम्भु गुन गावैंगे। डरैं नाहीं तासु डर भूल्यो है तू काके बर भगवान रुद्र बर रुद्र ह्वै कै धावैंगे॥ १॥

४०५. भोज कवि प्राचीन (१)

बातन ते गोरख कबीर तत्त्वज्ञान पाये बातन ते संत औ महंत हू पुजात हैं। बातन ते डाकिनी परेत भूत मुँह बोलैं बातन किये ते कारे नाग उतरात हैं॥ बातन ते मोहि लेत सत्रुहू को पल हीं में बातन ते रीझैं बादसाह साँची बात हैं। भोज कहै बात करामात बिना बात कैसी बात कहि आवै तौ तौ बात करामात है॥ १॥

४०६. भोजमिश्रकवि (२)
(मिश्रशृंगारग्रंथ)

हूल उठी हरम हिये में यह बात सुने त्रास परो सारी बादसाही के अवास[1] में। खान सुलतान घने दाँतन तिनूका धरैं आँतन पखेरू मीर मारे एक स्वास में॥ भोज रतनेस से सवाई करी राजा राव बुद्ध बलवान वीरताई के अवास में। अप्सरा अकास में तमासे लगीं जा समै सु ता समै कटारी एक मारी आमखास में॥ १॥

---

[1] अंतःपुर।

५०७. भोज कवि (३) बिहारीलाल भाट चरखारीवाले
(भोजभूषण)

चाह के हैं चाकर गुलाम गोरे गातन के सेवक हैं साँचे सुघराई सुखदान के। खानेजाद खाँसे खूबसूरती के भोज भनै जोरा बरदार तेरे कदम कलान के॥ छोरा छाँह छवि के पिछौरा पाँय पोंछन के भौंरा खुसबोइ मुख मधुर बतान के। मोह के मुसाहब मुसद्दी दृगफेरन के हेरनके हुकुमी हजूरी हाँसि जान के॥ १॥ आबदार अजब अनोखी अनियारी अलबेली ऐसी आँखैं ऐन ऐननसे रूखीसी। भोज भनै जोबन जलूस मैन जागै जोति जोति जोम जुलुम हलाहल में पूखी सी॥ ताकि जाती तीखन तिरीछी तरुनाई पर तेरी दृग-नोकै तेज तीरन ते तीखी सी। नैन मढ़ि जाती चाह चोप चढ़ि जाती हियो फोरि बढ़ि जाती कढ़ि जाती साफ सूखी सी॥ २॥
मृगसावक के दृग देखि वड़े सजि वेनी भली रुचि माँग सँवारैं। कंचुकी केसरि के रँग की पुनि पाँयन पायल की झनकारैं॥ भोज भनै कटि केहरि की छवि छीनि लई गज ऊपर वारैं। सारी भली जरतारी लसै सिर चौविसमास को घूँघुट डारैं॥ ३॥
भोज भनै एते होत हलके हरामजादे होसहीन हीजन सों हर्गिज हितैये ना। कलही कलंकी कूर कृपिन कुनामी काक कपटी कुकर्मी क्रोधी किंचित हितैये ना॥ चूतिया चवाई चोर चंचल चलाँक चित्त चोपचोप चख तिन तरफ चितैये ना। बदी बदराही बदनामी बदकौल बद बेदरद बेदिल सों बात हू बतैये ना॥ ४॥

५०८. भानदास कवि चरखारीवाले

लीलम हरिद्रारंग बंदरी हलब्बी पटा मानसाही खाँड़ा धोप ऊना तेग तरनो। मिसिरी नेवाजखानी गुपती जुनब्बीखानी सुलेमानी खुरासाँनी कत्ता तेग करनो॥ सैफ गुजराती अँगरेजी औ हुदम्मी रूसी मक्की त्यों दुधारा नाम डौंत नामधरनो। गुरदा मगरबी

सिरोही औ फिरोजखानी भान कवि एती तरवारिजाति बरनो ॥ १ ॥

५०९. भूधर कवि काशीवासी

मदन महीपति के दूत से भँवत भौंर भौन भानु मानिनी की जोति रही दवि है। पीतम की चाहू चहुँ ओर ते उछाह भयो वारुनी को राग लखे राग रह्यो फवि है॥ मैन को सुभाव हावभाव चित्त मिलिबे को आगम जनायो तहाँ भूधर सुकवि है। चंद है न चाँदनी न तेज है न तम तैसो रवि है न राति है छबीली एक छवि है ॥१॥ सीरे तहखाने तामें खासे खसखाने सींचे अतर गुलाब की बयारि रपटत है। भूधर सँवारे हौज छूटत फुहारे वारे भारे तावदान पाँति भू पै उपटत हैं ॥ ऐसे समै गौन कही कैसे करि कीजियत सुधा की तरंग प्यारी अंग लपटत है। चंदन किंवार घनसार के पगार प्यारे तऊ आनि ग्रीषम की झार झपटत है ॥ २ ॥ बार बार बैल को निपट ऊँचो नाद सुनि हुंकरत बाघ विरझानो रसरेला में। भूधर भनत ताकी बास पाइ सोर करि कुत्ता कोतवाल को वगानो वगमेला में ॥ फुंकरत मूषक को दूषक भुजंग तासों जंग करिबे को झुक्यो मोर हदहेला में। आपुस में पारषद कहत पुकारि कछु रारि सी मची है त्रिपुरारि के तबेला में ॥ ३ ॥

५१०. भूसुर कवि

श्रीमहेस भूप जस कम्बु सो कपूरसम कंज सो कलानिधि सो राजै कामतरु सो। कैरव सो कन्द सो करीस सो है करकासो काँस सो कपास सो औ कामधेनु वर सो॥ कमला के पति सो है कमला के पितु ऐसो कमनीय हीरा सो कदरि सुधासरु सो। कलिकाक-मण्डली के वातन सो सोभित है भूसुर सुकवि भनै कासीपतिवरु सो॥ १॥ कोई एक कामिनी रमन परदेस ताको भेजी है मँजूसी ताके नीचे लिखि अहिपति। भूसुर सुकवि वाके ऊपर में सिव फिरि पवनज चंपक बनाई है सुवरमति ॥ बूझत कविन्दन को बात याको भाव

कहौ सब ही बिदुषबृन्द पेखिनिज मनगति । कहियो बिचारि नाहीं मौनहि पकरि रहौ बिना धुनि जाने कहे सभा हँसै वाको अति ॥ २ ॥

५११. भोलासिंह कवि पन्नावाले

कट्टन कलेस के कलेसन के चट्टन, चपट्टन चबाई दहपट्टन कपट्ट के। गट्टन गनीमन के गीधिन के रट्टन अघट्टन सुघट्टन सुघट्टन अघट्टके ॥ भनै भोलासिंह बीर बाम्हन के वट्टन जे गाइ नगरट्टन गुसंतन सुघट्ट के। दुवनद पट्टलात भवकील पट्ट बंदौ जुगुलकिसोर गढ़ परनाबिकट्ट के ॥१॥

५१२. भावन कवि, भवानीप्रसाद पाठक मौरावाँवाले

पढ़न न देत हैं कबित्त बाजे भावन जू बाजे चुपचाप सुनि नीमि सी अचै रहैं । बाजे दस बीस गूढ़ पूछि दृष्टिकूटन को मूढ़ सत साखिन की चरचा मचै रहैं ॥ बाजे अफसोस करैं बाजे रहि रोस धरैं बाजे दै भरोस दरबार में नचै रहैं । बाजे सूम सूका देत पाथर लगाइ छाती बाजे सूम साहब सुपारियो पचै रहैं ॥ १ ॥

धोई सी चूनरी रोई सी कंचुकी तैसे सिधौरा सिंदूरन चोखा । धौं कबका लहँगा धरा भावन पायो परा कहूँ तागभरोखा ॥ चूरी परैं क्रूर ते सरकी तरकी ग्ररकी सब बात में धोखा । नेगी कहैं हम आजु लख्यो यह सूम जतीम चढ़ाउ अनोखा ॥ २ ॥

(काव्यशिरोमणि)

धारि थृगा गज देत प्रिये सुभ मौक्तिकदंतन सों सुभ चाल है । आपुन लेत सदा परिधान को आसन को मनमुद्दित खाल है ॥ माल मनीन की देत प्रिये नित आप लपेटत अंगन ब्याल है । भावन भावती के सुखदायक संकर सों कहु कौन दयाल है ॥ १ ॥

आवत ही बृषभानु के लोग सबै सकुचैं दुख सों चपिहैं री । राधे सराहि कहैं सुख गे अब ताप की थापैं महा थपिहैं री । छाहैं छपै तन में अति ब्याकुल ते तन जाइ कहाँ छपिहैं री ॥ पंचतु है है महापँचतत्व जो भावन यों हीं दुबो तपिहैं री ॥ २ ॥

कुमुदविलास देखि कुमुदविलास सब सर से सरोज सखि भावै नहीं औगुनी। अति विपरीत देखौ सिगरे द्विजन सीखी रीति भयदानि बनचारिन ते सौ गुनी॥ नखत निहारि उर कौन के न फून होत निसाचर चन्द देखि कौन निज छौगुनी। भावन विहीन देखि भावन अनंदहोत सरद हमारी सौतिवरखाते सौगुनी॥१॥

५१३. भौन कवि (१) नरहरिवंशी भाट बैंतीवाले
(शृंगाररत्नाकरग्रन्थे)

ग्रीषम ते तचि बचि पावस मरु कै पाई तामें फूकैं जुगनू सुभूकैं लागैं पौन की। हूकैं उठैं हिय में कनूकैं लखे बूँदन की भिल्लि हू न मूकैं ये विलासी वैरी भौन की॥ चपला चहूकैं त्यों त्यों तन में भभूकैं उठैं ऊकैं मारैं मुरवा कहां मैं कौन कौन की। दादुर की हूकैं घाड़ करत अचूकैं उर कोकिल की कूकैं तापै वूकैं देतीं नौन की॥१॥

मोहन मीत हमारे नहीं हैं तिहारे तिहारे रहैं घर नाहीं।
ताही ते नीकी लगै मजनी रजनी निज पी की छुऔं नहिं छाहीं॥
भौन कविंद कहै हँसि कै अँसुवा उमड़े दृगछोरन माहीं।
मेरे लिलार लिखी विधना लिखि तेरे लिलार पिया-गलबाहीं॥२॥

धरत धरनि पग करत कलोल छन ऐंचत निचोल ओट लुकत लुगाई की। लरत भिरत फेरि फिरत फितूर करि गिरत परत पै करत मन भाई की॥ रिरकनि खिझनि बुझनि सुरझनि भौन अरुझनि अरनि ददा की और दाई की। भूलति न माई मोहिं भाई की दुहाई वह हेरनि हँसनि मुसुकानि सिसुताई की॥३॥ तापन तपाउ मत्त गज सों चपाउ मोसों धरनि नपाउ पाव पाव को पकरि कै। अहि सों डसाउ नर्कपुर में वसाउ लैकै सुजस नसाउ दुख दीजै सुख हरि कै॥ कहत सुकवि भौन पौन सों उड़ाउ बेगि अँखियो रँजाउ कान तातो राँग भरि कै। माथहि छिलाउ लाउ कालकूट-तामें पुनि कूर सों मिलाउ ना गुविंद देह धरि कै॥४॥

५१४. भगवंतराय कवि (१)
(रामयणसुंदरकाण्डे)

सुवरनगिरि सो सरीर प्रभा सोनित सी तामें झलझलै रंग बाल दिवाकर को। दनुज-सघन-वन-दहन-कृसानु[1] महा ओजसों विराजमान अवतार हर को॥ भनै भगवंत पिंग लोचन ललित सोहैं कृपाकोर हेर्यो विरदैत उचै कर को। पवन को पूत कपिकुल पुरुहूत[2] सदा समर सपूत बंदौं दूत रघुवर को॥१॥ गाढ़ परे गैयर गुहारिवो विचार्यो जव जान्यो दीनवंधु कहूँ दीन कोऊ दलि गो। जैसे हुते तैसे उठि धाये करुना के सिंधु अस्त्र सस्त्र वाहन बिसारि कै विमालि गो॥ भनै भगवंत पीछे पीछे पच्छिराज[3] धाये आगे प्रतिपच्छि छेदि आयुधै उछलि गो। जौ लौं चक्रधारी चक्र चाह्यो है चलाइवे को तौ लौं ग्राहग्रीव पै अगारी चक्र चलि गो॥२॥

५१५. भगवंतकवि (२)

रात की उनींदी राधे सोवत सकारे भये झीनो पट तानि परी पाँवन ते मुख ते। सीस ते उलटि वेनी कंठ ह्वै कै उर ह्वै कै जानु ह्वै छ्वानि ह्वैकै लागी सूधे रुख ते॥ सुरति-समर करि जोवन के महाजोर जीति भगवंत अरसाय राखी सुख ते। हर को हराय मानौ माल मधुकरन की राखी है उतारि मैन चंपा के धनुख ते॥१॥ कट्टरो ताजिनो वीन ना वाज्निो भिच्छुकै लाजिनो भाजिनो देवा। माह के मास में फूस को तापनो भूत को जापनो झाँझरो खेवा॥ भनै भगवंत एते नहीं काम के जे नहीं राम के नाम लेवा। धर्म को लूटनो साधु को लूटनो धूम को घूटनो सूम की सेवा॥२॥

चलु री सयानी तूं सिरानी सव लाज जात मानी बात तेरी नेक राति सरसान दे। नूपुर उतारि छोरि किंकिनी धरन दीजै नैनन में नींद नारि नर के समान दे॥ तू तो धरु धीर तौ लौं मैं तो सजौं चीर

---

१ दैत्यवन जलाने को अग्नि। २ वानरेन्द्र। ३ गरुड़।

जौ लौं भारी भगवंतजू को चित्त ललचान दे। छपा को छपाय छपि जान दे छपाकर को आऊँगी कन्हैया पै जुन्हैया नेक जान दे॥ ३॥

५१६. भूमिदेव कवि

कुच लोह गोला लाल लाल मैन आगि तये चोलीदल पीपर धराऊ मेरे कर पर। भुज हेम साँकरे सों बाँधि कै मुसुक मेरी छाती पर धरि दे उरोज दोऊ गिरिवर॥ भनै भूमिदेव फिरि बेनी कारी नागिनि सों अंगन डसाउ विष छाउ रोम रोम दर। राधे मैं बिहारी परनारी जो अनारी कहूँ सौंहैं करवाइ ले बिहारी कामसरवर॥ १॥

५१७. भवानीदास कवि

सोम[2] समेत अमावस माघ अन्हैवेको आये जके सब ठाढ़े।
देखन को छवि अंग की ताकी जु गंग सों माँगैं यहै वर गाढ़े॥
दास भवानी कहै कवि को दुति जाके अदेखे सों नेह जो बाढ़े।
खोलति ना तिय नेक प्रभा तिय चौविसमास को घूँघुट काढ़े॥१॥

५१८. भौनकवि प्राचीन (२)

भावती जो पिय की बतियाँ सखि सालती हैं उर सूल सी बोई।
घोर घटा बिजुली चमकै तिसरे पपिहा पिय-पीय रटोई॥
भौन भनै भ्रम भामिनि को लरजैं छतियाँ तन काम बिगोई।
सासन सास उसासत है बरसात गई वर साथ न सोई॥ १॥

५१९ भूषण त्रिपाठी टिकमापुरवासी
(शिवराजभूषण)

इंद्र जिमि जंभ पर बाड़व सु अंभ पर रावन सु दंभ पर रघुकुल राज है। पौन बारिवाह पर संभु रतिनाह पर त्यों सहस्रबाह पर राम द्विजराज है॥ दावा द्रुमदुंड पर चीता मृगझुंड पर भूषन बितुंड[3] पर जैसे मृगराज है। तेज तिमिरंस पर कान्ह जिमि कंस पर त्यों मलेच्छवंस पर सेर सिवराज है॥ १॥ गरुड़ को दावा जैसे नाग के

---

१ चाँदनी। २ अर्थात् सोमवती अमावास्या। ३ हाथी।

समूह पर दावा नागजूथ पर सिंह सिरताज को । दावा पुरुहूत को पहारन के पूर पर पच्छिन के गन पर दावा जैसे बाज को ॥ भूषन अखण्ड नव खंड महिमंडल में तम पर दावा रविकिरन समाज को । उत्तर पछाँह देस पूरब दखिन माँझ जहाँ बादसाही तहाँ दावा सिवराज को ॥ २ ॥

केतक देस जित्यो दल के बल दच्छिन चंगुल चापि कै नाख्यो ।
रूप गुमान हर्‍यो गुजरात को सूरतको रस चूसि कै चाख्यो ॥
पंजन मेलि मलेच्छ मले दल सोई बच्यो जिहि दीन ह्वै भाख्यो ।
सौ रँग है सिवराज बली जिहिं नौरंग में रँग एक न राख्यो ॥ ३ ॥

साजि चतुरंग बीर रंग ह्वै तुरंग चढ़ि सरजा सिवाजी जंग जीतन चलत है । भूषन भनत हद निनद नकीबन के नैननीर मद दिसागज को गलत है ॥ ऐलफैल खैलभैल खलक में गैलगैल गजन की ठेल पेल सैल उसलत है । तारा सों तरनि धूरि धारा सों लगत जिमि थारा पर पारा पारावार ज्यों हलत है ॥ ४ ॥ भुज भुजगेस के वै संगिनी भुजंगिनी सी खेदि खेदि खाती दीह दारुन दलन के । बखतर पाखरन बीच धसि जात मीन पैरि पार जात परवाह ज्यों जलन के ॥ रैयाराव चम्पति के छत्रसाल महाराज भूषन सकत को बखानि यों बलन के । पच्छी पर छीने ऐसे परे परछीने बीर तेरी बरछी ने बर छीने हैं खलन के ॥ ५ ॥ राजत अखंड तेज छाजत सुजस बड़ो गाजत गयन्द दिग्गजन हिये साल को । जाके परताप सों मलिन आफ़ताब होत ताप तजि दुज्जन करत बहु ख्याल को ॥ साजि साजि गज तुरी कोतल कतारी दीन्हे भूषन भनत ऐसो दीन-प्रतिपाल को । और राजा-राव मन एक हू न ल्याऊँ अब साहू को सराहौं की सराहौं छत्रसाल को ॥ ६ ॥ चाकचक चमू के अचाकचक चहूँ ओर चाक सी फिरत धाँक

चम्पति के लाल की। भूपन भनत वादसाही मारि जेर करी काहू उमराव नां करेरी करवाल की ॥ सुनि सुनि रीति विरदैत के बड़प्पन की थप्पन उथप्पन की रीति छत्रसाल की। जंग जीति लेवा ते वै है कै दामदेवा भूप सेवा लागे करन महेवा-महिपाल की ॥७॥

दोहा—इक हाड़ा बूँदी धनी, मरद गहे करवाल।
सालत औरँगजेव के, वे दोनों छत्रसाल ॥ १ ॥
ये देखौ छत्तापता, ये देखौ छत्रसाल।
ये दिल्ली की ढाल ये, दिल्ली ढाहनवाल ॥ २ ॥

सारस से सूवा करवानक से साहजादे मोर से मुगुल मीर धीर में धचै नहीं। वंगला से वंगस वलूच औ वलख ऐसे काविली कुलंग याते रनमें रचै नहीं ॥ भूपनजू खेलत सितारे में सिकार संभा सिवा को सुवन जाते दुवन सचै नहीं। वाजी सव वाज की चपेटैं चंग चहूँ ओर तीतर तुरक दिल्ली भीतर वचै नहीं ॥ ८ ॥ राना भो चमेली और वेला सव राजा भये ठौरठौर रस लेत नित यह काज है। सिगरे अमीर आनि कुन्द होत घर घर भ्रमत भ्रमर जैसे फूलन की साज है ॥ भूषन भनत सिवराज वीर तू ही देसदेसन की राखी सव दक्खिन में लाज है। त्यागै सदा षटपद पद अनुमान जैसे अलि नवरंगजेव चम्पा सिवराज है ॥ ६ ॥ कूरम कमल कल द्विज है कलिन्द मूल गवर गुलाव राना केतकी सुवाज है। तोंवर कनैर जाहीजूही पुनि चन्द्रावल पाडर पवाँर गौर कैंवरे दराज है ॥ भूषन भनत मुचुकुन्द वड़गूजर वघेले हैं वसन्त सदा सुखद नेवाज है। लेइ रस एतन को वैठि न सकत अहे अलि अवरंगजेव चम्पा सिवराज है ॥ १० ॥ साजि गज वाजि सिवराज सैन साजत ही दिल्ली दल गही दिसा दीरघ दुवन की। तनिया न तिलक सुथनिया न

रहीं अंग घामै घबरानी छोड़ि सेजिया सुखन की ॥ भूषन भनत घाक बहियाँ न कोऊ नाक तहियाँ सु थाकि थाकि रहियाँ रुखन की । गालियाँ सिथिल भई वालियाँ विथलि गईं लालियाँ उतरि मुगलानियाँ मुखन की ॥ ११ ॥ उलदत मद अनुमद ज्यों जलधिजल बलहद भीमकद काहू के न आहके। प्रबल प्रचंड गंड मण्डित मधुपवृन्द विन्ध्य से बलन्द सिन्धु सात हू के थाह के॥ भूषन भनत झूल झंपति झपान झुकि झूमत झुकत झहरात रथ डाह के। मेघ से घमण्डित मजेजदार तेजपुंज गुंजत सो कुंजर कमाऊँनरनाह के ॥१२॥

५२०. भगवानहितरामराय

पद

बने आज नन्दलाल सखि प्रेममादक पिये संग ललना लिये जमुनतीरे ।
फूली केसर कमल मालती सघन वन मन्द सुगन्ध सीतल समीरे ॥
नीलमनि वरन तन कनकमण्डित वसन परम सुन्दर चरन परसि माला ।
मधुर मृदु हास परकास दसनावली छविभरे इतरात दृग विसाला ॥
किये चन्दन खौरि वदनारविन्द मकरंद लोभे भ्रमर कुटिल अलकैं ।
हलतकुंडल लटकिचलत जव स्याम घनमनिनकीकांति कल गंडझलकैं॥
रसिकमनि रंग भरे विहरे बृन्दाविपिन संग सखिमण्डली प्रेमपागी ।
कहै भगवानहितरामराय प्रभु सुमिरि सोई जानै जाहि लगनलागी १

५२१. भीष्मदास

पद

यहि कलि परम सुभगजन धनि श्रीविट्ठलनाथ उपासी ।
जो प्रकटे व्रजपति बिठलेस्वर तो सेवक व्रजवासी ॥
व्रजलीला भूल्यो चतुरानन वल टास्यो व्रतरासी ।
अब लौं सठ अव गनत अभागे करत परस्पर हाँसी ॥
परिहरि सदन सदा जस गावत भक्त मुक्ति की दासी ।
वदत न कछु भीषम भववैभव भजनानन्द उपासी ॥१॥

५२२. भंजन कवि

सोई मेरी वीर जोइ लावै बलवीर ताहि देहौं दोउ वीर मेरो विरह बँटाइ ले। भंजन छपा की पीर छपै ना छपाये पीर छपाकर छपै तौ छपाकर छपाइ ले॥ मदन लगो है धाय धाय सों कहौरी धाय एरी मेरी धाय नेक मोहूँ तन धाइ ले। देह मेरी थरथराइ देहरी चढ़ो न जाइ देह री तनक हाथ देहरी नँघाइ ले॥ १॥

जीव हैं द्वै रसना मुख एक है तीनि हैं नैन ते रूप विसेखै॥
तीनि तिया विवि कै रति एक है ताके सपूत है सेत विसेखै।
होइ न कूट कहै कवि भंजन चातुर होय हिये महँ लेखै॥
बाँझ को पूत विना अँखियान कुहू निसि में ससि पूरन देखै॥ २॥

५२३. भूप कवि भूपनारायण बंदीजन काकूपुरवाले

भूप कहै सुनियो सिगरे मिलि भिच्छुक बीच परौ जानि कोई।
कोई परौ तौ निकोई करौ न निकोई करौ तौ रहौ चुप सोई॥
जानत हौ वलि ब्राह्मन की गति भूलि कुपंथ भलो नहिं होई।
लेइ कोई अरु देइ कोई पर सुक्र ने आँखि अकारथ खोई॥ १॥

५२४. भगवतरसिक वृन्दावनवासी

कुंडलिया

सुचिता सील सनेह गति चितवनि बोलनि हास।
कचगूँथनि सीमन्त सुभ भाल तिलक सुखरास॥
भाल तिलक सुखरास दृगन अंजन अति सोहै।
बीरी वदन सुदेस चिबुक रसिकन मन मोहै॥
जावक मिहँदी रंग राग भगवत नित उचिता।
ये सोरह सिंगार मुख्य तामें वर सुचिता॥ १॥

नूपुर बिछिया किंकिनी नीवी-बन्धन सोइ।
करमुँदरी कंकन वलय वाजूबँद भुज दोइ॥
वाजूबंद भुज दोइ कंठसी दुलरी राजै।

नासा बेसरि सुभग स्रवन ताटंक बिराजै ॥
भगवत बेंदा भाल माँग मोती गो ऊपर ।
द्वादश भूषन अंग नित्य प्यारी पग ऊपर ॥ २ ॥

५२५. भगवानदास व्रजवासी

पद

श्रीवल्लभसुत परम कृपाल ।
तैसेइ श्रीगिरिधर श्रीगोबिन्द बालकृष्णजू नयन बिसाल ॥
महामोह मददोष दुखी जन प्रकट भये षट दर्सन ईस ।
जीव अनेक किये किरतारथ कोमल कर धारत पर सीस ॥
जा दर्सन सुर नर को दुर्लभ सरनागत को सुलभ अपार ।
जन्म मरन भवबन्धन छूटे जिन श्रीमुख देख्यो इकवार ॥
श्रीवल्लभ रघुपति श्रीजदुपति मोहनमूरति श्रीघनस्याम ।
जन भगवान जाय बलिहारी यह सुनि जपौं तिहारो नाम ॥१॥

५२६. भूधर कवि असोथरवाले (२)

म्यान ते कढ़त भूत अफरे अहार पाइ हार पाइ हरषि महेस आइ नाचिगे । गाइ गाइ बरन वरंगना वरन लागीं चहलै सकल स्त्रान चरबी के मचिगे ॥ भूधर भनत मारे मुगल पठान सेख सैयद अमीर भूप धीर केते पचिगे । राइ भगवन्तजू के खड्ग मुखखेत आइ खपे ते सहादति ते खेस ओढ़ि बचिगे ॥ १ ॥

५२७. मान कवि (१)

कीन्हो ना बिलम्ब जब खम्भ गहि बाँध्यो बाप प्रकट प्रताप आप भये नरहारी है । कीन्हो ना बिलम्ब जब ग्राह गज ग्रसि लीन्हो छोड़ि खगराज वेगि बिपति बिदारी है ॥ कहै कवि मान बर बसन बढ़ाइ राख्यो कीन्हो ना बिलम्ब जब द्रौपदी पुकारी है । भई जेरवारी नहिं करिये अवारी अब अनधबिहारी सुधि लीजिये हमारी है ॥ १ ॥ तब ना बिचार्‌यो पाप गीध को सुगति दीनो

तव ना विचार्‍यो पाप गनिका उधारी है । तव ना विचार्‍यो पाप सवरी के फल खाए तव ना विचार्‍यो पाप साप तिय हारी है ॥ कहै कवि मान पुनि तव ना विचार्‍यो पाप वानर, निसाचर वनाये अधिकारी है । भई जेरवारी सो भरोसो मोहिं भारी अव अवध-विहारी सुधि लीजिये हमारी है ॥ २ ॥

५२८. मान कवि, वैसवारे के (२)

(कृष्णकल्लोल, कृष्णखंड भाषा)

दोहा—अष्टादस सै वरस सो, सरस अष्टदस साल ।
सुचि सैनी वर वार को, प्रगट्यो ग्रन्थ विसाल ॥ १ ॥

छप्पै

जव लगि जग जगमगत भानु सितभानु नखतगन ।
जव लगि गिरि हिमवान पुहुमि पवमान प्रवल वन ॥
जव लगि सेस जलेस अमर अमरेस विराजत ।
जव लगि हरि हर ब्रह्म ललित लोकन छवि छाजत ॥
जव लगि ध्रुव सनकादि सव अरुनादिक दूनौ अनुज ।
तव लगि नृप वैरीसाल सुख चिरंजीवि चम्पति तनुज ॥ १ ॥

जय गजमुख मुख सुमुख सुखद सुखमा सरसावन ।
जय जग सिद्धि समृद्धि वृद्धि वुधि वर वरसावन ॥
जय मंगल आचरन मंगलावरन विविध विधि ।
जय वर वरन अडोल कलित कल्लोल कलानिधि ॥
जय सम्भु-सुवन दुख-दुवन-हर भुवन भुवन गुनगाथ जय ।
जय निखिल-नाथ निजनाथ जय जय जय जय गननाथ जय ॥ २ ॥

५२९. मोहनभट्ट वाँदावाले कवि पद्माकरजू के पिता (१)

अड्डादार ऐंड़दार ओजदार आवदार तरक तराकदार तोरादार तेग म्यान । वखतवलंद श्रीनरिंद सभासिंह-नंद हिंदपति जालिम तो जस जाहिरै जहान ॥ तुम जनि जानौ हम हीं से हम और नहीं

मोहन बखानै चारु रौरे गुनपरमान । इन्द्र के जयंत, रतिकंत कृष्णचन्द्रजू के, रुद्र के खड़ाँनन, समुद्र के कलानिधान ॥ १ ॥ दावि दल दक्खिन सुसिक्खन समेत दीन्हे लीन्हे गहि पकरि दिलीस दहलन में । रूस रुहिलान खुरासान हबसान तचे तुरुक तमाम ताके तेज तहलन में ॥ मोहन भनत यों विलाइति-नरेस ताहि सेर रतनेस घेरि ल्यायो सहलन में । जिहिं अँगरेज रेज कीन्हे नृपजाल तिहिं हाल करि खबस मचायो महलन में ॥ २ ॥ पीत पटवारे क्रीट गौहरनवारे गजमनिगनवारे तरि कुबर सँभरिगे । अंगराग केसरि से सर वढ़े केसर में मृगमद्वारे मृग आतुर उधरिगे ॥ मोहन भनत भूरि भूपन मयूषन के कारन सकल सुरलोकन में भरिगे । गंगजल ताला में अन्हात वार वाला वाके अंग अंग आला याते जीवजाला तरिगे ॥ ३ ॥

जानत हौ सब मेरे हवाल अहो गुनजाल कहौं कहा गोसे ।
बंधुविरोध न संग सहोदर संग सखा सो लखा दिल दोसे ॥
उद्यम हाल न भाल विसाल सो मोहन मोहन तेरे भरोसे ।
जामें रहै मम वाकप्रमान सुजान सुजान विनै करौं तोसे ॥ ४ ॥

५३०. मोहन कवि (२)

तकत ही ताकी तेज सकत समर सूर जकत है हुकत है थकै देत चाली को । छीन लैहै मद मदवारन को मद करि विरद विहद पैजपालै पैजपाली को ॥ मोहन भनत महाराज जयसिंह तेरी तेग रनरंग में खिलावै खल व्याली को । सोनितै को ताल भरै काली को कपाल अरु मुंडन की माल पहिरावै मुंडमाली को ॥ १ ॥ कबै आप गये ये बिसाँहन बजार बीच कबै बोलि

१ कार्त्तिकेय । २ चंद्रमा । ३ किरणों के । ४ सगा भाई । ५ रुधिर । ६ शिव । ७ खरीदने ।

जुलहा विनाये दर पट से । नंदजी के कामरी न वहाँ वसुदेव-जू के तीनि हाथ पटुका लपेटे रहे कटि से ॥ मोहन भनत यामें रावरी वड़ाई कहा राखि लीन्ही आनिवानि ऐसे नटखट से। गोपिन के लीन्हे तव चीर चोरि-चोरि अब जोरि-जोरि लागे देन द्रौपदी के पट से ॥ २ ॥

गोकुल गैल में छैल फिरै अति फैल करै मन मैन जगावै ।
नेक विलोकत मोहत मोहन मानिनि-मान को दूरि भगावै ॥
विष्णु विरंचि विचार मनावत गावत कीरति मोद पगावै ।
वावरी जो पै कलंक लग्यो निरसंक ह्वै काहे न अंक लगावै ॥३॥

४३१. मुकुंदलाल वनारसी, रघुनाथ कवि के गुरु

रति के मुरीद महवूब वेदरद दोनों पानिप के प्याले पल अलफीन झेलैंगे । सित औ असित डोरे सुरुख सुधारि सेली कोए कलमन स्रुतिपथन उठेलैंगे ॥ अंजन इलाही नूर पगे हैं मुकुंद कहै नजरि की आसा मन माहँ जीति खेलैंगे । राधे नैन वेनवा विहद छवि छाके वाँके मैन सर खाल नंदलाल पर मेलैंगे॥१॥

४३२. मुकुंदसिंह

छूटैं चन्द्रवान भले वान औ कुहुक-वान छूटत कमान जिमी आसमान छ्वै रह्यो । छूटैं ऊँटनालैं जमनालैं हथनालैं छूटैं तेगन को तेज सो तरनि[2] जिमि ज्वै रह्यो ॥ ऐसे हाथ हाथन चलाइ कै मुकुंदसिंह अरि के चलाइ पाइ वीर-रस च्वै रह्यो। हय चले हाथी चले संग छोड़ि साथी चले ऐसी चलाचल में अचल हाड़ा ह्वै रह्यो ॥ १ ॥

४३३. माखनकवि (१)

खंजन नवीन मीन मान के उमा के देत नाके देत मृगमद कंजके कहाँ के हैं । ठौर ठौर भँवर भ्रमत जाके ताके संग माखन चकोर कहै चंचल चलाँके हैं ॥ ऐसे ना रमा के ना उमा के ना तिलो-

---

१ कटि । २ सूर्य ।

च्छमा के प्रबल हरौल पंचबान प्रति नाके हैं। हैं न मंजुघोषा के बखाने मैनका के मैन ऐन सुखमा के नैन बाँके राधिका के हैं ॥१॥

नित ही तिनूका तोरैं भूमि लिखि नख हू सों बसन मलीन राखैं नेकु ना धोवावहीं। पाँव धोवैं थोरे सौच दातउनि करैं थोरी केस राखैं रूखे पीठि मूठ की बजावहीं ॥ डासन[1]-विहीन दोऊ संध्यन में रोज सोवैं रोवैं अन्न खात हँसैं माखन सो गावहीं। औगुन इतेक ये कुबेर हू कदाति[2] करैं हरैं धन विष्णु फेर बेर न लगावही ॥ २ ॥

तात नरायन वारिधि[3] मन्दिर पूत पितामह सो जिन जायो।
छेह को धाम सहायक मित्र सो संभु सुरेसहि को जु रिझायो ॥
माखन ऐसी रची जिहि को तिहि को जग मेटनहार न गायो।
कौन को प्यारो न अंबुज जो पै तुषार[4] की त्रास न काहू बचायो ॥ ३ ॥

ऐसे मैनका हू के न ऐसे मैनका हू के न ऐसे मैन काहू के सँवारे दीह दौर के। भौंर हैं न कारे ऐसे भौंर हैं नकारे ऐसे भौंर हैं नकारे कंज मंजुल मरोर के ॥ सर सुखमा के हैं सरस सुखमा के हैं सो सर से हैं माखन कटाच्छ पैनी कोर के। देखे हरि नीके नैन देखे हरिनी के नैन देखे हरिनी के नैन तीके हैं न और के ॥४॥

४३४. माखन लखेरा पन्नावाले (२)

बाजे डफ ढोल बाजे फाग के समाज साजे ग्वालन के झुंड लै गुविंद फौज जोरी है। बाँधे सिर चीरा हीरा झलकैं कलंगिन में अंगन तरंग-रंग भूषन करोरी है ॥ केसरिया बागे अनुरागे प्रेम पागे मन माखन सभागे फहरात पटछोरी है। लीन्हे भरि झोरी पिचकारी रंगबोरी आजु होरी आजु होरी बरसाने आजु होरी है ॥ १ ॥

---

१ बिछौना। २ कदाचित्। ३ समुद्र। ४ पाला।

५३५. माधवानंद भारती काशीस्थ
(माधवीशंकरदिग्विजय)

भद्रग्रहं यद्यशरमणीयं
भक्त्या ह्यमरैरपि श्रवणीयं ।
आशुतोप श्रीहर कमनीयं
नौमि सदा शंकरभजनीयं ॥ १ ॥

चौपाई ।

मंगलमूरति सिद्धिविधायक । विनवहुँ प्रथमहिं श्रीगननायक ॥
श्रीगिरिजा जगजननि भवानी । चरन वंदि विनवौं सुखखानी ॥ १ ॥

५३६. महेश कवि

सुनि वोल सुहावन तेरे अटा यह टेक हिये में धरौं पै धरौं ।
मढ़ि कंचन चोंच पखौवन में मुकताहल गूँदि भरौं पै भरौं ॥
सुख पींजरे पालि पढ़ाइ घने गुन औगुन कोटि हरौं पै हरौं ।
विछुरे हरि मोहिं महेस मिलैं तोहिं काग ते हंस करौं पै करौं ॥ १ ॥

५३७. मदनमोहन

पद

तैं निसि लाल सों रति मानि मैं तव ही जानि पग डगमग मग न परत सूधे। सिथिल वदन कवरी[1]केस राजत आनन सुदेस वोलत कछु लटपटी वानी ॥ यह छवि मो मन भाई मिटिहै चपलताई पीकलीक अधरन लपटानी । मदनमोहन किसोर रिझाये श्यामा प्यारी धनिधनि नवनिकुंजरानी ॥ १ ॥

५३८. मंगद कवि

सूझै न मो[2] वन वाग तड़ाग सवै विधि फूल पलासन[3] सूझै ।
सूझै न मो घरकाज सखी नहिं सासु जेठानी की वातन वूझै ॥

---

१ चोटी । २ मुझको । ३ टेसू के फूल ।

बूझै न मंगद बेनु नये नये सैनन नैनन में नहिं जूझै।
सूझै वही बनमाल गरे सिगरो जग साँवरो-साँवरो सूझै ॥ १ ॥

५३९. माधवदास

पद

श्रीगोकुलनाथ निज वपु धस्यो।
भक्त हेत प्रगटे श्रीवल्लभ जग ते तिमिर जु हस्यो ॥
नंदनँदन भये तव गिरि गोप व्रज उद्धस्यो।
नाथ विट्ठलसुवन वहै कै परम हित अनुसस्यो ॥
अति अगाध अपार भवनिधि तारि अपनो कस्यो।
दास माधव त्रास देखे चरनसरनै पस्यो ॥ १ ॥

५४०. महाकवि *

राधिका माधवै एक ही सेज पै धाइ लै सोई सुभाइ सलोने।
प्यारे महाकवि कान्ह के मध्य में राधे कहै यह बात न होने ॥
साँवरे सों मिलि ह्वै है न साँवरी बावरी बात सिखाई है कोने।
सोने को रंग कसौटी लगै पै कसौटी को रंग लगै नहिं सोने ॥ १ ॥

५४१. मलिंद कवि, मिहींलाल बंदीजन, डलमऊवाले

सोहै दंड चंड जे अखंड महिमंडल में दारिद विखंडन में धीरज धरात है। देस औ विदेस नरईसन सों भेंट करि करि सरवर नेक नेक ठहरात है ॥ गिलिम गलीचा पदमालया समूह सदा घोड़े पील पालकी हमेस दरसात है। भनत मलिंद महाराजश्रीभुआलसिंह तेरी भागि देखे ते दरिद्र भागि जात है ॥ १ ॥

५४२. महताब कवि

कहै मन चित को लगाय कै चरन रहौ स्रवन कहत गुनगाथ सो गहो करौं। बैन यों कहत रानारूप को पढ़ौंगो ह्वाँई नैन हू

* पं. कृष्णविहारी मिश्र बी० ए० एल्० एल्० बी० ने प्रमाणित किया है कि महाकवि कालिदास कवि ही का एक उपनाम है।

कहत रूपलाह सो लहो करौं ॥ त्योंही महताव दोइ मास घर सीख बिन बैस यों कहत परदेस क्यों रहो करौं । कीजिये दुरस न्याउ हिन्दूपति बादसाह कौन को उराहनो द्यों कौन को कहो करौं ॥ १ ॥ सोहत सजीले सित असित सुरंग अंग जीन सों दै अंजन अनूप रुचि हेरे हैं । सील-भरे लसत असील गुन साज किये लाज की लगाम काम कारीगर फेरे हैं ॥ घूँघुट फरस तामें फिरत फबित फूले लोक महताव अवलोकि भये चेरे हैं । मोरवारे मन के त्यों पन के मरोरवारे त्योरवारे तरुनी तुरंग दृग तेरे हैं ॥ २ ॥

४४३. मनसा कवि

पूरन करत परिपूरन मनोरथन सूरन के तूरन में कूरन की कंडिका । बनन के बीच उपवनन के बीच होत आपने जनन की है नीकी मानतंडिका ॥ देत दलदंडिका ये दोरदंड[1] दंडिका है जाकी दिपै मारतंड कोटिन उदंडिका । सिद्धि की करंडिका जो मनसा प्रचंडिका जो खंडन की खंडिका सो मेरी मात चंडिका ॥ १ ॥ दीपतिसिखा सी खासी मैनका तिलोत्तमा सी रतिदा सी रंभा सी सु रूपरंभा रासी है । सीता सी सती सी सत्यभामा सी सकुंतला सी सची सी सिवा सी स्वाहा सुधा सुखमा सी है ॥ कौल की कली सी है कला सी है कलानिधि की मनसा महा सी मुखहासी में मकासी है । संभुसालिका सी सुरपाल-बालिका सी बाल लालमालिका सी हरितालिका उपासी है ॥२॥ चामीकरचित्रिका सी चित्र की चरित्रिका सी चंपकलता सी चपला सी चारुता सी है । द्रुपदसुता सी दमयंती सी दिमाकदार दीप सी दिपति देव-देवदारिका[2] सी है ॥ मनसा कहत भवभामिनी[3] सी भासमान वृषभानुजा सी भानुभा सी भवभा सी है । संभुसालिका

१ भुजदंड । २ देवबालिका । ३ गौरी ।

सी सुरपाल-बालिका सी बाल लालमालिका सी हरितालिका उपासी है ॥ ३ ॥ एक ही झमाके में छमा के मन मोहैं दृग ऐसे मारमा के ना उमा के ना रमा के हैं । दस हूँ दिसा के मनसा के फल देनवारे करन निसा के इमि जाकी ओर ताके हैं ॥ जाइ कै जहाँ के तहाँ मीन जल ढाँके गये हरिन हहा के ऐसे कमल कहाँ के हैं । सदन समा के सुखमा के उपमा के चारु चंचल चलाँके नैन बाँके राधिका के हैं ॥ ४ ॥ लालची लजीले लोल ललित रसीले लखे लोगन ललकि लै लै लूटत लराँके हैं । छिन में छलीन चित छैलन को छोभै छरैं छोरैं छरकीले सो छबीले छवि छाके हैं ॥ मनसा कहत डेरा डोड़ी के न डाँड़े डाका डारत डगर डग डारत में डाके हैं । ऐसे और काके मैनका के अबला के मैनबानन ते बाँके नैन ताके राधिका के हैं ॥ ५ ॥

५४४. मनसाराम कवि

स्याम द्रुम स्याम तम स्याम निसा स्याम बन स्याम नभ स्याम स्याम स्याम घन स्याम है । स्याम मनि स्याम बेनी गूँदी स्याम मानिक सों दीन्ही स्याम खौरि करै चली स्याम काम है ॥ मंसा-राम स्याम चोली भुजन कसे है बाम धरे स्याम चीर धाई भौंर भीर स्याम है । स्याम कुंजधाम सराजाम स्याम कै कै गई स्यामा स्याम जहाँ स्याम जहाँ स्याम स्याम है ॥ १ ॥

५४५. मीरन कवि

हौं मनमोहन सों मिलि कै करती उहाँ केलि घनी तरुछाहीं । सो सुख मीरन कासों कहौं मन मारमसोसन ही मुरझाहीं ॥ पात गये झरि धूम के पुंजन कूह परी सिगरे बन माहीं । गाँव के लोग महा निरदै जो पलासन कोऊ बुझावत नाहीं ॥ १ ॥

सुमन में बास जैसें सु मन में आवै कैसे नाहीं कहे होत नाहीं हाँ

कह्यो चहत है। सुरसरि सूरजा मैं सूरसुता सोहै जैसे वेद के वचन बाँचे साँचे निवहत हैं॥ परिवा के इन्दु की कला जो वसै अम्बर में परिवा को अच्छ परतच्छ न लहत है। जैसे अनुमान परमान परब्रह्म जैसे कामिनी की कटि कवि मीरन कहत है॥ २॥

५४६. मधुसूदन कवि

घेरि रह्यो विरहा चहुँ ओर ते भागिवे को कोउ पार न पावै।
जानत हौ पर बात सवै तुम जाल को मीन कहाँलगि धावै॥
चाहै कछूक सँदेसो कह्यो सु तौ जी महँ आवै पै जीभ न आवै।
ऊधोजू वा मधुसूदन सों कहियो जु कछू तुम्हैं राम कहावै॥ १॥

५४७. मधुसूदनदास माथुर ब्राह्मण, इष्टकापुरी के निवासी

(रामाश्वमेध भाषा)

हे रघुकुलभूषन दुष्टविदूषन सीतापति भगवान हरे।
नवपङ्कजलोचन भवभयमोचन अतिउदार गुन दिव्य भरे॥
यह नृप वल भारी समर मँझारी प्रन करि बंधन कीन प्रभो।
अब वेगि छुड़ावहु विरद बढ़ावहु सबको दीन विलोकि विभो॥१॥

५४८. मतिराम त्रिपाठी टिकमापुरवाले

पूरन पुरुष के परम दृग दोऊ जानि कहत पुरान वेद बानि जोरि रढ़ि गई। कवि मतिराम दिनपति जो निशापति जो दुहुँन की कीरति दिसन माँझ मढ़ि गई॥ रवि के करन भये एक महा दानि यह जानि जिय आनि चिन्ता चित्त माँझ चढ़ि गई। तोहिं राज वैठत कुमाऊँ श्रीउदोतचन्द चन्द्रमा की करक करेज हू ते कढ़ि गई॥ १॥

(ललितललाम)

परम प्रवीन धीर धरमधुरीन दीनबंधु सदा सुनी जाकी ईस्वर में मति है। दुर्ज्जन विहाल करि जाचक निहाल करि जगत में कीरति जगाई जोति अति है॥ राउ सत्रुसाल के सपूत पूत

भाऊसिंह मतिराम कहै जाहि साहिवी वति है । जानपति दानपति हाड़ा हिंदुआनपाति दिल्लीपति द. पति वालानंदपति है ॥ २ ॥ कैसे आसमान से विमान से घन से ाज रावरे चलत मानो मेरु से लसत हैं । अतल वितल तल हलत लत दल गज- मद राजैं दिगदन्ती चिक्करत हैं । कहै मतिराम सभ. दुरद दराज ऐसे जिन्हैं पाइ कविराज आनँद भरत हैं । कुंभ छा. पटपद[2] मद निकरन नद कदन वलंद गढ़ गरद करत हैं ॥ ३ ॥

छप्पै

जव ला. च्छप कोल[3] सहसमुख धरनिभारधर
जव लगि आठौ दिसन दावि सोहत दिग्गज वर ।
जव लगि कवि मतिराम स-गिरि[5]-सागर महिमंडल ।
जव लगि सुवरनमेरु सघन घन मगन अगन चल ॥
नृप सत्रुसालनंदन नवल भावसिंह भूपालमनि
जग चिरंजीव तव लगि सुखित कहत सकल संसार धनि ॥ ४ ॥

दोहा—भौंह कमान कटाच्छ सर, समरभूमि विच नैन ।
लाज तजे हू दुहुन के, सलज सुहृद सव वैन ॥ १ ॥
रूपजाल नँदलाल के, परि कै वहुरि छुटै न ।
खंजरीट मृग मीन से, व्रजवनितन के नैन ॥ २ ॥

वानी को वसन कैधौं वात को विलास डोलै कैधौं मुख चंद चारु चाँदनी प्रकास है । कवि मतिराम कैधौं काम को सुजस कै परागपुंज प्रफुलित सुमन सुवास है ॥ नाक नथुनी के गजमोतिन की आभा कैधौं रति अन्त प्रगटित हिय को हुलास है । सीत करिवे को पिय नैन-घनसार कैधौं वाला के वदन विलसत मृदु हास है ॥ ५ ॥

१ मस्तक । २ भ्रमर ३ वाराह । ४ शेष नाग । ५ पहाड़ों और समुद्रों सहित ।

(छन्दसारपिंगल)

दाता एक जैसो शिवराज भयो जैसो अब फतेसाहि स्री-नगर साहिबी समाज है । जैसो तौ चितौर-धनी राना नरनाह भयो जैसोई कुमाऊँपति पूरो रजलाज है ॥ जैसे जयसिंह जसवन्त महाराज भयो जिनको मही में अजौं बढ्यो बलसाज है । मित्र साहिनन्द स्रीबुँदेलकुलचन्द जग ऐसो अब उदित सरूप महराज है ॥ ६ ॥ लखमन ही संग लिये जोवनविहार किये सीतहिये वसै कहो तासों अभिराम को । नवदलसोभा जाकी विकसै सुमित्रै लखि कोसलै बसत कोऊ धाम धाम ठाम को ॥ कवि मतिराम सोभा देखिये अधिक नित सरसानिधान कवि कोविद के काम को । कीनो है कवित्त एक तामरस[1] ही को यासों राम को कहत कै कहत कोऊ वाम को ॥ ७ ॥

(रसराज)

चन्दन चढ़ा री नभ चन्द न चढ़ारी अंग चन्द उजियारी देखि नकरात कैसी है । फूँद फन्द फुफुँदी गँसीली गाँठि गूँदि गूँदि मूँदि धूँदि मुख मन्द मतरात कैसी है ॥ मतिराम मिलन विहारी को तू प्यारी चलु नित रतिवारी आजु जकरात कैसी है । कतरात कैसी बात बतरात कैसी जात सतरात कैसी रात इतरात कैसी है ॥८॥
चोर की चोर छिनार छिनार की साहु की साहु बली की बली ।
ठग की ठग कामुक कामुक की अरु छैल की छैल छली की छली ॥
परवीनन की परवीन ही त्यों मतिराम न जानै कहाँ धौं चली ।
इन फेरि दियो नथ को मुकता उन फेरि कै फूँकी गुलाबकली ॥९॥
गोपवधू तन तोलत डोलत बोलत बोल जु कोमल भाखैं ।
ऊरू नितम्बन की गुरुता पग जात गयन्दन की गति नाखैं ॥

---

१ कमल ।

आगम भो तरुनापन को मतिराम भनै भईँ चञ्चल आँखैं।
खंजन के जुग सावक ज्यों उड़ि आवत ना फरकावत पाँखैं ॥१०॥

एरे मतिमन्द चन्द धिक है अनन्द तेरो जो पै बिरहीन जरि जात तेरे ताप ते। तू तो दोषाकर[2] दूजे धरे है कलंक उर तीसरे सखान संग देखौ सिर छाप ते॥ कहै मतिराम हाल जाहिर जहान तेरो बारुनी[3] के बासी भासी राहु के प्रताप ते। बाँधो गयो मथो गयो पियो गयो खारो भयो बापुरो समुद्र ऐसे पूत ही के पाप ते ॥ ११ ॥

५४६. मंडन कवि, जैतपुर, बुन्देलखंड के

(रसरत्नावली)

बैरी के निसान सुनि बिरचि बिरचि बेष नाहर से लपकि पुकार लागे बीर के। मंडन अनूप सिर मौर बाने बाँधे सबै लोहे के गहैया औ सहैया भारी भीर के॥ होन लागी महा मार दुपकैं चलन लागीं तोप तरवारैं अरु रेले चले तीर के। दौरि-दौरि देखिबे को आँखैं चलीं लोगन की हाथ चले मंगद के पाइँ चले मीर के ॥ १ ॥ गरद के झुंड ढक्यो मारतण्डमण्डल लौं बाने फहराने जब ढिग आनि अरि के। तमकि तमकि तब राजे करजीले बीर बिरुझाने खरुजाने जैसे बाघ थरि के॥ मंडन बिरुझि लीनी घोरन की बाग दीनी दौरि कै दरेरे जैसे भादौं की लहरि के। जित-तित बीजुरी से लोह लागे लहकन बरसन बान लागे जैसे बूँद झरि के ॥ २ ॥ आइ गयो दरबर औचकही हरबर अम्बर अनी के बरियार करिबर के। तामसी तुरुक मान साहसी दराबखान कीन्हीं किरपान घमासान मचे परके॥ मंडन सुकबि यह चाहत बधाई जब जीत के नगारे बाजे बीतत समर के। चलत हिमाचल ते

---

१ बच्चे। २ दोषों का घर और रात करनेवाला। ३ पश्चिम दिशा।

मडसू वजाइ तौ लौं डाक चौकी डाकिनी लै हाथ डार्‍यो हरके ॥३॥
यों झनकार चुरी झनकी सुचि ये सुनि कान अचाक जागे।
उनई यों घटा सी लटैं चहुँ ओर जो मोर लखे हुलसे रसपागे॥
लगी मुख मण्डन यों नहियाँ जु पढ़े सब सीखि सुआ बड़भागे।
यों कछु कामिनी बोलन लागी जु ऊतर देन कबूतर लागे॥ ४॥
रूप की रीझनि प्रेम पर्‍यो किधौं रूप की रीझनि प्रेम सों पागी।
मंडन मैन जग्यो मनसा बस कै मनसा बस मैन कै जागी॥
लाजहि लै कुलकानि भगी किधौं लाज लिये कुलकानिहि भागी।
नैन लगे वहि मूरति माई किधौं वह मूरति नैनन लागी॥ ५॥
उतै वह नंदत री अनखाति इतै यह सौति सुहागिल घूरति।
घौसहि[1] बीतत बार न लागत मंडन लाजन हौं तो बिसूरति॥
औरन को तौ मरू कै सिराति तऊ उनको यह राति न पूरति।
प्यारे को जाड़ो सुहात है माई सु ताते कहावत सैन की मूरति॥६॥
रसकेलि दुहून सों होड़ परी कहुँ कुण्डल डोलैं कहूँक तरौना।
मंडन अंगन अंग मिले सुनि ऐसे भये सब काम खिलौना॥
नंदलला धरि ध्यान रहे वृषभानुलली कछु पावत गौं ना।
चित्र लिख्यो लखि चाहि रही झपट्यो तब बाघ छुड्यो मृगछौना७

वादर के बीच धौं बिराजति है बीजुरी कि गोरो गात गोरी को गोपाल सों मिलत है। रस ही के रस मुख मुख सों मिलत कैधौं सोरह कला को चन्द कौंल सों हिलत है॥ मंडन हिये की खौरि ढरकि पसीजि किधौं देह में से न्यारो कै कै नेह पघिलत है। टूटि टूटि मोती सीसफूल ते गिरत कैधौं मेरी आली तरनि तरैयाँ उगिलत है॥ ८॥

मानि सबै मनुहारि वहू मुसक्याइ उठै अँगिया न उतारै।

१ बीतती है।

मंडन डोरी के छोरत ही रिस कै मिस कै अँगुरी गहि मारै ॥
लला अपनो मन भायो करै सु चुरी खनकै जब हाथन झारै।
कोयल सी कुहकै पिहकै सिसकै सतराइ झुकै झझकारै ॥ ९ ॥
वहि द्यौस अकेली गली में गई मिलि जान न पाई कितीक अरी।
गहि बाँह लियो रस ओठन को पै न मंडन मैन अँगारि भरी॥
ऐसे कछू झहराइ कै हाथ हरे सुर प्यारी उसास धरी।
सु लग्यो है अजौं वह मेरे हिये हिलकी सिसकी विष की सी डरी ॥१०॥
का कहि कै घर जैयतु है अरु कौन सुनै अति बीती भई।
कवि मंडन मोहन ठीक ठगी सु तौ ऐसी लिलार लिखी ती दई॥
और भई सो भले ही भई पर एक ही बात विती ती नई।
रति हू ते गई मति हू ते गई पति हू ते गई पंति हू ते गई॥ ११॥

(नयनपचासा)

दोहा—प्रेमनखासे नागरी, हृदय तुरंग बिकात।
लोचन तेरे लाहरी, ऊपर ही लै जात ॥ १ ॥
डीठि डोरि सो मन कलस, काम कुआँ में डारि।
ये नैना तुव नागरी, भरत प्रेम-रस-बारि ॥ २ ॥
खरे डरारे चरपरे, कजरारे अमनैक।
दृग अनियारे नागरी, न्यारे जानि करि नैक ॥ ३ ॥
बाँकी गढ़ी बिसाल अति, सुन्दर भली लजोहि।
ये आँखैं लाखैं लहैं, जो मो तब सुधि होहि ॥ ४ ॥

५५० मल्ल कवि

नागर पराने सुनि समुद सकाने रन गब्बर डराने दिलजोरा[1] छोरि बाने के। द्युपति[2] सकाने देखि दल के पयाने[3] अरि भभरि तुलाने नर काँपैं हँवसाने के॥ मल्ल कवि हम जाने वीररस सर-

१ इज्ज़त। २ इंद्र। ३ यात्रा।

साने खींची कुलभानु कोटि किंमति बखाने के। कन्तन पुकारैं सुकु-मारैं सुनि सोर जब दुन्दुभी धुकारैं भगवन्त मरदाने के ॥ १ ॥
आजु महादीनन को सूखि गो दया को सिन्धु आजु ही गरीबन को सब गाँथ लूटि गो। आज द्विजराजन को सकल अकाज भयो आज महाराजन को धीरज सो छूटि गो ॥ मल्ल कहै आज सब मंगन अनाथ भये आज ही अनाथन को करम सो फूटि गो। भूप भगवन्त सुरलोक को पयान कियो आज कवितान को कलप-तरु टूटिगो ॥ २ ॥

५५१. मानिकचन्द

पद

जे जन सरन गये ते तारे।
दीनदयाल प्रकट पुरुषोत्तम विट्ठलनाथ लला रे ॥
जितनी रविछाया की कनिका तितने दोष हमारे।
तुम्हरे चरनप्रताप तेज ते तेते ततछन तारे ॥
माला कंठ तिलक माथे दै संख चक्र बपु धारे।
मानिकचँद प्रभु के गुन ऐसे महापतित निस्तारे ॥ १ ॥

५५२. मुनिलाल कवि

प्रभा होत मानिहू ते उज्वल अनंत रूप जंत्र मंत्र तंत्र तत्व सिद्धन समख हैं। हीरा ते बलंद सुठि सोहैं चंद मकरंद कंजरासि जोहैं चाहैं देवतन चख हैं ॥ कहै मुनिलाल ऐसो मोद भुवमंडल में जोज ओज पुष्ट[१] चक्र अखिल अलख हैं। ऐनक ते चोखे दरपन ते अनोखे सुधा-मोखे रामचंद जू के पाँयन के नख हैं ॥ १ ॥

५५३. मानदास कवि ब्रजवासी

पद

जागिये गोपाल लाल जननी बलि जाई। उठो तात भयो प्रात

---

१ पूंजी।

रजनी को तिमिर गयो प्रगटे सब ग्वालबाल मोहन कन्हाई ॥ उठो मेरे आनंद कंद गमन चंद मंद मंद प्रगट्यो अकास भानु कमलन सुखदाई। संृगी सब पुरत वेनु तुम बिन ना छुटीं धेनु उठो लाल तजो सेज सुंदर बर राई ॥ मुख ते पट दूरि किये जसुदा को दर्स दियो अरु दधि सब माँगि लियो विविध रस मिठाई। जेंवत दोउ राम[1] स्याम सकल मंगल गुननिधान थार में कछु जूठ रही सो मानदास पाई ॥ १ ॥

५५४. मदनगोपाल शुक्ल फतूहावादी

(अर्जुनविलास)

प्रवल प्रचंड सुंडादंड सों घमंडदार तेरे भुजदंड भू अखंड भार काँध्यो है। समंदार सूरमा सुसील भूप अर्जुनसे नेम धरि तब चंडीपद अवराध्यो है ॥ मदन सुकवि कविराज राजवंदन को दै दै गजवाजिवृंद तैं ही काज साध्यो है। कलि में गयो तो भोज विक्रम विना जो टूटि सोई अब धर्मध्वजा तैं ही फेरि बाँध्यो है॥१॥
सील औ लाज मिठाई बतानिमों तैसी दृढ़ाई स्वधर्म मयूषन।
साधुता और पतिव्रत दोष मिताई सबै सो न काहू को दूषन ॥
तैसी बिनै औ अचार छमा गुरुलोगन सेइबे को बिन दूषन ॥
येई तियान को तीरथ से सुखकीरतिकारी हैं द्वादस[2] भूपन ॥ २ ॥

(वैद्यरत्न)

ज्वानी चहै फेरि जो आवन तो यह जतन कराउ।
अँवरा को रस काढ़ि कै अँवराचूर्न सनाउ ॥
अँवराचूर्न सनाउ भाउना दै बहुतेरी।
बरनै मदनगोपाल बात जो मानै मेरी ॥
सुखै घाम में खाइ खाँड़ मधु[3] सों यह सानी।
ऊपर पीजै दूध फेरि चाहै जो ज्वानी ॥ १ ॥

---

१ बलदाऊ। २ बारह। ३ शहद।

५५५. मदनगोपाल कवि, चरखारीवाले

चातुर के चेरे हैं कमेरे रसिकन हू के भाव हू के भूखे हैं भिखारी बड़े गान के। गुनिन के गाहक औ यार हैं सपूतन के रूप के रिझैया औ सनेही बड़े तान के॥ पंडित के पालक औ संत के सरन रहैं प्रीति करैं तासों जे कुलीन बड़ी कान के। एते पर मदन भरोसे सीता-रामजू के और सों न काम जेते लोग हैं जहान के॥ १॥

५५६. मेधा कवि

(चित्रभूषण)

दोहा—चित्रालंकृत भेद बहु, को कवि बरनै पार।
कछुक भेद गुरुपद सुमिरि, भाखत मति अनुसार॥ १॥
संवत मुनि रस बसु ससी, जेठ प्रथम सनि वार।
प्रगट चित्रभूषन भयो, कवि मेधा सिंगार॥ २॥
जे भाविष्य व्रतमान[1] कवि, तिन सों विनय हमारि।
परमकृपाजुत सादरन, करिहैं याहि प्रचारि॥ ३॥
अपनी मति लघु समुझि कै, या ते संग्रह कीन।
उदाहरन सतकविन के, राख्यौं सुमति प्रवीन॥ ४॥
सब्द अर्थ पद दोप जर, औगुन अगन विचार।
अच्छर मोटे पातरन, नाहीं एक विचार॥ ५॥

५५७. महबूब कवि

तौलौं कुल-रीति दीख गल नलपट्टी चट्टी अतरन भट्टी मलयाचल अमल के। कित्तन सुमन चित्त वित्तन हरत हित्त मित्तन करत रित्त चाहत अमल के॥ चित्रित चरित्र तेरी चाहन विचित्र अति कहै महबूब दिल मिलत उछल के। रमो एक कंदरन कंदरपकंद आज अंदर बगीचन के मंदिरन चल के॥ १॥ जानै राग रागिनी

१ वर्तमान।

कवित्त रस दोहा छंद जप तप तेग त्याग एक सीग्र तन का। महबूब उरझ न देखि सकै मित्र की विचित्र हरिभाँति भै रिझैया नुकतन का॥ जासे जो कबूलै सो न भूलै भूलै माफ करै साफ-दिल आकिल लिखैया हर फन का॥ नेकी से न न्यारा रहै वदी से किनारा गहै ऐसा मिलै प्यारा तौ गुजारा चलै मन का॥ २॥ आगे धेनु धारि गेरि ग्वालन कतार तामें फेरि फेरि टेरि धौरी धूमरी नगन ते। पोंछि पुचकारन अँगोछन सों पोंछि पोंछि चूमि चारु चरन चलावैं सुवचन ते॥ कहै महबूब धरे मुरली अधर वर फूँकि दई खरज निखाद के सुरन ते। अमित अनंद भरे कंद छवि वृंदवत मंद गति आवत मुकुंद वृंदावन ते॥ ३॥

५५८. मनीराम कवि (१)

वह चितवनि वह सुंदर कपोलदुति वह दसननि छवि विज्जु[1] की धरति है। वह ओठ-लाली वह नासिका-सकोरनि में वह हावभाव कैयो कौतुक[2] करति है॥ कहै मनीराम छवि वरनि सकै को वह रति ते सरस मन मुनि को हरति है। वह मुसकानि जुग भौंहनि कमान दुति वह वतरानि ना विसारी विसरति है॥ १॥

५५९, मनीराम मिश्र कन्नौजवासी (२)

(छंदछप्पनी पिंगल)

एक कवर्ग के अंत को अंक चवर्ग के द्वै मनीराम गनीजै।
चारि टवर्ग के वीच विना तजि जानि थकार पवर्ग न कीजै॥
तीनि यवर्ग के छाँड़ु रकार ते और षकार हकार न कीजै।
वर्नन कीन विचारि कै चित्त ये मित्त कवित्त के आदि न दीजै॥
ङ ञ झ ट ठ ढ ण थ प फ व भ म र ल व ष ह।

५६०. मनीराय कवि

सोने को जराव को न जानो जात हीरन को मोतिन को पन्नन

---

१ विजली। २ तमाशे।

को काहे को बनायो है। देव को चढ़ो है कै दियारी को पढ़ो है कै गुनीन को गढ़ो है बिन गुनै गरे आयो है॥ कवि मनीराय एजू उर ते उतारि दीजै दीजै कर मोहिं नेक मेरे मन भायो है। छवि की छला सो इंद्रजाल की कला सो करि हा हा हरि कहौ ऐसो हार कहाँ पायो है॥ १॥

५६१. मानिक कवि कायस्थ, ज़िला सीतापुर

अँगिरात जम्हात प्रभात उठी परजंक पै प्यारी के अंग मुरे परैं। दृग मूंदे से आलस खोले कहूँ कब हूँ तन सेद[2] के बुंद ढुरे परैं॥ मानिक मध्य तरौनन के चख मींजै दोऊ उपमा उभरे परैं। पाय सहाय प्रभाकर है ज्यों सुधाकर सों जल जात लुरे परैं॥ १॥

५६२. महानंद वाजपेयी

(भाषा बृहच्छिवपुराण)

दोहा—बंदौं गनपतिचरनरज, निसिदिन प्रेम लगाइ।
बिघन निवारैं दुख हरैं, सुखगन करैं बनाइ॥ १॥
संकरचरनसरोजरज, बंदौं कर जुग जोरि।
सदा रहैं अनुकूल है, माँगौं यहै निहोरि॥ २॥

चौपाई

मैं बहु लखे पढ़े श्रुतिवादा। मिटेहु न मन कर सकल विषादा॥
भ्रमत रह्यो मैं सब जग माहीं। संकरतत्त्व लह्यो कहुँ नाहीं॥

५६३. मून ब्राह्मण कवि, असोथरवाले

रोम स्याम सेत मध्य लोहित लकीर लसैं मानों जुग मीन है महीन लाल जाल सा। मून सुधा-माधुरी त्यों अधर अरुनता में बिंबाफल[3] फरहज फूल फीको फालसा॥ अली संग चली मोहिं आवत गली में मिली लीन्हे करकमल में कमल सनाल सा। सारी जरतारी की किनारी में छिपाये छवि आधो मुख देख्यो

१ डोरा। २ पसीना। ३ कुँदरू।

आधो देखिवे की लालसा ॥ १ ॥ उतै आई नाइका नवेलिन विहाय सून इतै कढे वेलिन ते स्याम यहि धाक रीं। जुरिगे दुहूँ के दृग लालची लजीले लोल ललित रसीले लोक-लाज को विदा करी ॥ मुरि मुसक्याइ कै छवीली पिकवैनी नेक करत उचार मुख वोलन को वाँकरी। ताक री कुचन वीच काँकरी गोपाल मारी साँकरी गली में प्यारी हाँ करी न ना करी ॥ २ ॥ कंजवन मानि सून हंसगन आइ फिरे गंध वन भृङ्गन की भंग करि डारे तैं। पाके फल जानि सुकपुंज पछिताने आइ पाइ कै वसंत वात वृथा पात डारे तैं ॥ दूरि ते विलोकि अरुनाई अति फूलन की आमिष अकार गीध वायस विडारे तैं। ऐरे तरु सेमर के सिफति तिहारी कहा आस दिये पच्छिन निरास करि डारे तैं ॥ ३ ॥ विम्व में प्रवाल में न ईंगुर गुलाल में न चम्पक रसाल में न नेसुक निहारे मैं। दाड़िमप्रसून में न मून धरासून[1] में न इंद्र की वधून में न गुंजा[2] अधिकारे मैं ॥ कुसुम सुरङ्ग में न किंसुक[3] पतंग में न जावक मजीठ कंजपुंज वारि डारे मैं। राधेजू तिहारे पग अरुनसमानता को हेरि हारे कविता न आवत विचारे मैं ॥ ४ ॥

५६४. मणिदेव कवि वनारसी

मदन सजोरी ताहि जोरि कौन रूप और रातौ दिन जोरी भूरि भीति सी घिराति है। मिस कै उठाय ताहि सुख सरसार जाय भौन पहुँचाय जाय कांति की किराति है ॥ मनिदेव भनत नवेली के सुभाव को री आय कै अकेली देखु नेक ना थिराति है। गही पी फलंग पर सुंदर पलंग पर चारि हू अलंग पर खसकी फिराति है ॥ १ ॥ याहू माहिं संकर वनाये सिद्ध मंत्र सव तिन-सों भयंकर भिलात लखि दुन्द को। मोहनादि होत सव तिनसों

१ मंगल। २ घुँघची। ३ टेसू के फूल।

सहज मानि दूरि करै कठिन कलेसन के कन्द को ।। और सुनो तुलसी गोसाईं सूर आदिन की कविता सों भाखैं मनिदेव बुध वृन्द को । मन को लगाइ सुनौ मेरी वात भाषा अति लागति है प्यारी रघुनन्द, व्रजचन्द्र को ।। २ ।।

५६५. मकरंद कवि

तेरे मन भावै ना मनावै कैसे मकरन्द लाल विन दूपनै तू लाल दिन दूपनै । हँसि मन हँसो पिय रसवस करु प्यारी ल्याये हैं सु मन ते सुमन लागे सूखनै ।। कौ लौं तू न बोलै मुख बोलै बलि जाउँ प्यारी तो ते मधुराई पाई ऊखनै पियूषनै । उन्हैं प्यास भूख नै तू तजि बैठी भूखनै है तोहिं तौ मनावैं व्रजभूखनै तू भू खनै ।। १ ।। कीधौं वहि देस घन घुमड़ि न वरसत कीधौं मकरन्द नदी-नद-पथ भरि गे । कीधौं पिक चातक चतुर चक्रवाक वक कीधौं मत्त दादुर मधुर मोर मरि गे ।। मेरे मन आवत न आली प्यारे आवत ज्यों कामकरानिकर मही ते यौं निकरि गे । कीधौं पंचसर हर फेरि कै भसम कियो कीधौं पंचसर जू के पाँचौ सर सरि गे ।। २ ।।

५६६. मकरंद राय भाट—पुवावाँ

(हास्यरसग्रन्थ)

साधकी न साध है असाध ही की सेवा करैं कपटी रसायनीको देखे हरषात हैं । मारि जानै पारो तामो वंग करैं हेमरंग दें हैं करि चौगुने गुरू की सौंह खात हैं ।। आपने पराये सव गहने उतारि लाये रहैं मुँह वाये स्वामी सटके प्रभात हैं । लोभ चाँदी सोने घर खोने के करम कीने रोवैं वैठि कोने जब दूने करि जात हैं ।। १ ।।

५६७. मंचित कवि

आजु निज पानिन ते पानि छुइ पाऊँ याही वेतन ते मारि गोप ग्वाल विचलाऊँ ना । वीरन की सौंह जो अहीरन के देखत ही बीर बलवीरहू को बीर गहि लाऊँ ना ।। मंचित भनत जो पै जोम जोरदारन

को चूर कै न डारौं फेरि मुख दिखराऊँ ना । खेलन न आऊँ खि-
लवार ना कहाऊँ जो पै लाड़िलीबिजै के बिजैवाजे बजवाऊँ ना॥१॥
तुम नाम लिवावती हौ हम पै हम नाम कहौ कहा लीजिये जू ।
अब नाव चलै सिगरी जल में थल में न चलै कहा कीजिये जू ॥
कवि मंचित औसर जो अकती सखती हम पै नहीं कीजिये जू ।
हम तौ अपनो वर पूजती हैं सपने नहीं पी पर पूजिये जू ॥ २ ॥
आँखैं गुलाब सी खासी लसैं मुख नासिका बिंब धरा अवली को ।
भारी नितंबन जंघन पीन वनो कटि छीन वनाव लली को ॥
मंचित भीजो लसै उर चीर उरोजन ओप सरोज-कली को ।
बाँधि कै जूरो कसे अँगिया मन पूरो करै तिय छैल छली को ॥३॥

५६८. मुवारक, सैयद मुवारकअली बिलग्रामी

नेप के पुंज सुघराई के सदन सुख सोभा के समूह और सावधान मौज के । लाजन के बोहित पुरोहित प्रमोदन के नेह के नकीब चक्रवर्ती चितचोज के ॥ दया के दिवान पतिव्रतहू के परधान नैन ये मुवारक विधान नवरोज के । सफरी के सिरताज मृगन के महाराज साहब सरोज के मुसाहब मनोज के ॥ १ ॥ दीरघ उजारे कजरारे भारे प्रेमनद कोकनद के से दल राजत भँवर से । सुघर सलोने कै मुवारक सुधा के दोने छवि के बिछौने कै अमलता के घर से ॥ लाज के जहाज कैधौं मान के विराजमान राधिका सुजान आजु तेरे दृग दरसे । चाकर चकोर भये मृग दास मोल लये खंजन खवास भये सफरी नफर से ॥ २ ॥

कान्ह के बाँकी चितौन चुभी चित काल्हि तू झाँकी री ग्वारि गवाछन ॥
देखी है नोखी सी चोखी सी कोरन ओछे फिरैं उभरे चित जा छन ॥
मार्यो सँभारि हिये में मुवारक हैं सहजै कजरारे मृगाछन ॥
काजर दे री न एरी सुहागिनि आँगुरी तेरी कटैंगी कटाछन ॥ ३ ॥

छल करि छैल तजि गोकुल की गैल लगी कुबिजा चुरैल पगी मन बच काइ है। आप हैं सुखारी हमैं कियो है दुखारी प्रीति पाछिली बिसारी कहो एक कछू ना इहै ॥ घनस्याम जीते ब्रज कामबामही ते हैं मुबारक पिरीते सो यहाँ पर न पाइ है। मरन उपाइ है न देखि है न पाइ है जु औरै कलपाइ है सो कैसे कल पाइ है ॥ ४ ॥ कनकबरन बाल नगन लसत भाल मोतिन की माल उर सोहै भली भाँति है। चन्दन चढ़ाइ चारु चंदमुखी मोहिनी सी प्रात ही अन्हाइ पगु धारे मुसकाति है ॥ चूनरी विचित्र स्याम सजि कै मुबारकजू ढाँकि नखसिख ते निपट सकुचाति है। चन्द्र मे लपेटि कै समेटि कै नखत मानो दिन को प्रनाम किये राति चली जाति है ॥ ५ ॥

५६९. मनोहर कवि (१) राय मनोहरदास कछवाहा

दोहा—अचरज म्बहिं हिन्दू तुरुक, बादि करत संग्राम।
एक दिपति सों दिपत अति, काबा कासीधाम ॥ १ ॥
इन्दु बदन नरगिस नयन, सम्बुल बारे बार।
उर कुंकुम कोकिलबयन, जेहि लखि लाजत मार ॥२॥
सुथरे बिथुरे चीकने, घने बने घुँघुरार।
रसिकन को जंजीर से, बाला तेरे बार ॥ ३ ॥
अकबर सों बर कौन पर, नरपति पति हिंदुवान।
करन चहत जेहि करन सों, लेन दान सनमान ॥ ४ ॥

५७०. मनोहर (२) काशीराम भरतपुरवाले
(मनोहरशतक)

दोहा—ओछे नर के पेट में, कैसे बात समाय।
बिन सुवरन के पात्र के, बाघिनि दूध नसाय ॥ १ ॥
भृत्य आपनो चाहिये, पलक नयन की नायँ।
तनक झोंक चख पर परे, वही पलक अड़ि जायँ ॥ २ ॥

अरुन-बरन अँगुरीन पग, नखअवली की आब।
जनु कनेर की कलिन में, पँखुरी लगी गुलाब॥ ३॥
है पखाल मल मूत की, छनक माहिं फटि जाय।
रे अजान यहि खाल पै, इतनो मति इतराय॥ ४॥
केलि करी ससिमुखिन सँग, कस्यो न हरि सों मेल।
मेलभेल अब सुमन के, चढ्यो काल की रेल॥५॥

कवित्त। पान हैं कहत तो सों पूरी करु आस मेरी मो मन कचौरी धरैं धीर न धरायेते। तू तो है पकौरी तो सों बड़ी मोखताई भई पायो है कछू को सार प्रीतम पराये ते॥ कैसे रबड़ी है खोआ मुकर न मनोहर महिं नाहीं गौंदी सी का होत घबराये ते। कहत समोसे खजला के सब बराबरी गुपचुप रहो कहा बातन बनाये ते॥ १॥

५७१. मातादीन शुक्ल अजगरावाले

बालबदी करै बादि सदा पितु मातु तऊ भरैं गोदन माहीं।
कूर कसूर करै पसु भूरि तजै तऊ पालक पालिबो नाहीं॥
हे रघुनाथ तिहारे ही हाथ अनाथ हौं दीन कहौं केहि पाहीं।
मैं जड़ताबस तोहिं तज्यो ताजि मोहिं बराबरि होहु बृथाहीं॥ १॥
पल एक अनेकन कल्प से जात बिना हरि सों नहिं आवत हैं।
दुख दीन मलीन हितू न लखैं तऊ दीनदयाल कहावत हैं॥
कुबिजा कहँ भोग बियोग हमैं लिखि ता पर जोग पठावत हैं।
बेगुनाह के नाहक काह कही जो जरे पर लोन लगावत हैं॥ २॥

५७२. मानिकदास कवि मथुरावासी

(मानिकबोध)

जमुनातट केलि करैं बिहरैं सँग बाल गोपाल बने बल भैया।
गावत हैं कबौं बंसी बजावत धावत हैं कबहूँ सँग गैया॥
कोकिल मोर की नाइँ वे बोलत कूजत हैं कपि मिर्ग की नैया।
मानिक के मन माहिं बसो अस नंद को नंद जसोदा को छैया॥ १॥

५७३. मुरारिदास कवि

पद

सुंदरलाल गोवर्द्धनधारी कहँ तुम रैनि वसे मेरे लाल।
आलस नयन वयन वलि वोलत छुटे वंद पग डगमग चाल॥
सारँग अधर रुचिर वपु नखछत कुच प्रसंग उर विलुलित माल।
करि रथहीन मीनपति जीत्यो चढ़ी धनुष मानो मोह विसाल॥
नहिं सतभाय कहत पीतम सौं फिरत हो पातपात अरु डाल।
दास मुरारि प्रीति औरन सों देखत प्रकट तुम्हारे हाल॥ १॥

५७४. मन्य कवि

गई साँझ समै की वदी वदि कै वड़ीं वेर भई निसा जान लगी।
कवि मन्यजू जानी दगैलन छैलन छैल की छाती निदान लगी॥
अव कौन को कीजै भरोसो भटू निज वारियै खेती ये खान लगी।
अति सूधे वुलाइवे की वतियाँ नहिं जानिये का धौं वतान लगी॥१॥

५७५. मननिधि कवि

लसत सपानि तीखे ढारे खरसान महा मनमथवान को गुमान गरियत है। भारे अनियारे देखु तरल तरारे ये सुलच्छ नील तारे मीन हीन भरियत है॥ मृग वन-लीन जोति मोतिन की छीन ऐसे जलज नवीन जलधाम धरियत है। मननिधि आजु की अजूवी लखि नैनन में खूवी खंजरीटन की खाम करियत है॥ १॥

५७६. मणिकंठ कवि

अमल अनंग के अनंद की उदित भूमि जीति पिय वाजी दगावाजी सी पसारी है। कनक के पात से उदर में उदित दुति त्रिवली तिहारी मैं निहारी मनिहारी है॥ रूप गुन चातुरी सों सुर-नर-नागन को जीते मनिकंठ विधि सोहैं रेख सारी है। सौति-सुख उतरै को पिय-प्रेम चढ़िबे को कुंदन की प्यारी पैरकारी सी सँवारी है॥ १॥

५७७. मोती लाल कवि

एकै आनि नीरज के दल अँखियान तारे देखत निहारे पै परै न पावैं पलकैं। एकै आनि दाड़िम दसन द्युति मान एकै श्रीफल उरोजन मिलावै कौल-कलकैं॥ मोतीलाल मूँदे भेस कुच भुजमूल तऊ दारिये अनोखी छिगुनी की छबि छलकैं। कहाँ ते हौं आई इहि ओर भूलि माई मोहिं ब्रज की लुगाई लोग देखि देखि ललकैं॥१॥

५७८. मुरली कवि

अरुनाई एँड़िन की रवि-छवि छाजत है चारु छवि चंद-आभा नखन करे रहैं। मंगल महावर गुराई बुध राजत है कनक-बरन गुरु[1]-बनक धरे रहैं॥ सुक्र सम जोति सनि राहु केतु गोदना है मुरली सकल सोभा सौरभ भरे रहैं। नवौ ग्रह भाइन ते सेवक सुभाइन ते राधा ठकुराइन के पाँइन परे रहैं॥ १ ॥

५७९. मोतीराम कवि

पीउ पीउ करत मिलैं जु आजु मोहिं पीउ सोने चोंच चातक मढ़ाऊँ अति आदरन। कठिन कलापिन[2]के कंठन कटाइ डारौं देत दुख दादुर चिराइ डारौं दादरन॥ मोतीराम झिल्लीगन मंदिर मुँदाइ डारौं बधिक बुलाइ बाँधौं बक की बिरादरन। बिरह की ज्वालन सों जिरह जराइ डारौं साँसन उड़ाऊँ बैरी बेदरद बादरन॥ १ ॥

५८०. मनसुख कवि

सतोगुन मूरति के को गुन बखानि सकै चरन प्रताप परसत ही सिला[3] तरी। गनिका पधारी भृगु लात उर धारी नहीं भीलनी बिचारी निरवारी बिपदा खरी॥ अधम उधारे प्रभु अगन बिचारे मनसुख पचि हारे मुनि केती करता करी। दूध पी कै माइ के जु काहू पूत ना करी सु बिष पी कै नन्दजू के पूत पूतना करी॥ १॥

---

१ बृहस्पति। २ मोर। ३ अहल्या।

५८१. मिश्र कवि

ललना मुख इन्दु ते दूनो लसै अरविन्द बसै चखवार सी लै ।
मुसकानि मनोहर जोन्ह महा कहि मिश्र जुवान सुधार सी लै ॥
तन ओप करै दुति चम्पक लोप सची सकुचै प्रति पारसी लै ।
कहि आवै न रूप सिपारसी याते दिखावै लला कर आरसी लै ॥ १ ॥

५८२. मुरलीधर कवि

प्रफुलित भये सब अवधपुरी के वासी प्रफुलित सरजूकी सोभा सरसाई है । नाचैं नर नारी अति आनँद अपार भये घूमत निसान मुर्लीधर सुखदाई है ॥ देवता विमानन ते फूलन की वृष्टि करैं बन्दी सूत मागध अनेक निधि पाई है । चलि क्यों न देखै आली राम को जनम भयो दसरथ-द्वार बाजै आनँद बधाई है ॥ १ ॥

५८३. मोहन कवि प्राचीन

जाप जप्यो नहिं मंत्र थप्यो नहिं वेद पुरान सुन्यो न बखानो ।
बीति गये दिन योंहीं सबै रस मोहन मोहन के न बिकानो ॥
चेरो कहावत तेरो सदा पुनि और न कोऊ मैं दूसरो जानो ।
कै तौ गरीब को लेहु निवाजि कै छाँड़ौ गरीबनिवाज को बानो १॥

५८४. मुकुन्द कवि प्राचीन

चौका की चमक औ झमक झीनें बस्त्रन की देह की दमक बीर काको घर खोइवो । कहत मुकुन्द गयो तात को निरास भयो बात को बिसन ठयो गात को बिलोइवो ॥ भौंहैं मटकाय लटकाय लट अब हीं ते रुचत कुचनको है बार बार जोइवो । तब ही धौं कैसी ह्वै है सजनी री रजनी में एक दिन साँवरे के कंठ लागि सोइवो ॥१॥

५८५. मलूकदास कवि

चंद कलंकी कहा करि है सरि[1] कोकिल कीर[2] कपोत लजाने ।
विद्रुम हेम करी[3] अहि केहरि[4] कंजकली औ अनार के दाने ॥

---

१ सरवर=बराबरी । २ तोता । ३ हाथी । ४ सिंह ।

मीनसरासन धूम की रेख मलूक सरोवर कम्बु भुलाने।
ऐसी भई नहीं है भुव में नहीं होइगी नारि कहा कवि जाने॥१॥
अलंकार छन्द काव्य नाटक को है अगा़ॅर[1] राग रागिनी भँडार बानी को निवास है। कोककारिकान खाता पंकज को कोसे[2] मानों निकसत जामें भाँति भाँति को सुवास है॥ फूल से झरत बानी बोलत मलूक प्यारी हँसनि में होत दामिनी को परकास है। ऐसो मुख काको पटतैर[3] दीजै प्यारे लाल जामें कोटि कोटि हाव-भाव को बिलास है॥ २ ॥ कैधौं राहु-डरते धरी है चन्द ढाल विधि कैधौं राहु घेरि रह्यो चन्द्रमा को आइ कै। कैधौं तमभूमि में मलूक प्रेम की कसौटी कैधौं विधि पढ़िवे की पाटी गढ़ी चाइ कै॥ कैधौं आदिरसे[4] की बनाई उभै[5] क्यारी भली कैधौं मेघ-घटा रही चन्द्रमा पै छाइ कै। सुंदर सुहावनी है चित्त की चुरावनी है बटपारी पाटी प्यारी बैठी है बनाइ कै॥ ३ ॥

५८६. मीररुस्तम कवि

जहाँ अर्थ निज धर्म छूटै सकल भर्म सुभ कर्म स्वाद स्वजय जय प्रकासी। सुगम की अगम है अगम की कथा नित अगम सुरसरी पान दोषं बिनासी॥ पढ़ै पंडितौ वेदबिद्या सदाही परम-हंस दंडी अखंडी सन्यासी। कहै मीररुस्तम जहाँ मीत नायम सु चलु चित्त चलु चित्त चलु चित्त कासी॥ १ ॥

५८७. महम्मद कवि

मन मुलुक खलक तहसील करन तन परगन सुख अखत्यारी।
बनी आदम आदि कुटुम सँग लै चल तेरे फीलसवारी॥
हौदा हूल महम्मद कुंभ महाकर जगत जँजीर बहारी।
तेरी जरब पियारी वोह जारी दिलवर खूवी हुसननगर फ़ौजदारी॥१॥

१ घर। २ भीतरी हिस्सा। ३ उपमा। ४ शृंगार-रस। ५ दोनों।

५८८. मीरीमाधव कवि

बाँसुरी बिसद बंसीबट को बसेरो तहाँ त्रिविधि[1] बयारि बन बिसद बहति है। बरन बिरह मीरीमाधव ये बिधिवर बेप बूझि मानों वारि बिरसु कहति है॥ वारिजवदन बिरचो है बेना बानी बाँकी बिपिन बसन सुनि बिरचि रहति है। बारक कहति बिलखौंही हौं ही बार भई बार बार मोसों चलु बावरी कहति है॥ १॥

५८९. मदनकिशोर कवि

औचक ही आइ सुखदैन मन मेरो लैन मैनभरी नैनन की सैनन सरसि गो। सुधा के से सीकर[2] सुनाय मृदु बैनन सों जानिये बसीकर के बैनन बरसि गो॥ तन को मिलाय करि तनको मिलाय करि तन को मिलाय करि तनको तरसि गो। अंगन अरसि गो री अंगन परसि गो री मदनकिसोर ऐसे दरसै दरसि गो॥ १॥

आव अब मेरे मनभावन बिदेसी पीव प्रानप्यारे प्रानन ते प्रानन परसि जा। चातक लौं[3] बासर बिताय बिसवास तेरे वारिद सुधा के द्वैक बुंदन बरसि जा॥ ससिकै सरीर भयो कामरि करीर की सी नीरनिधि नेह नीर सर से सरसि जा। बरसैं भई हैं बिन देखे तरसै है तन मदनकिसोर नेक दरसै दरसि जा॥ २॥

५९०. मखजात कवि, वाजपेयी ज्वालाप्रसाद

उठे घनजाल देखि दामिनिकलाप देखि देवराजचाप देखि त्रास अति पावतो। बुंदबृंद-पात देखि सूर्य अप्रकास देखि दिन हू को अंत देखि चैन हू न पावतो॥ नभ को बितार देखि वायु सुखचार देखि अति अंधकार देखि मोमैं मन लावतो। होतो उहाँ पावस तौ एरी सखी बात सुनौ बीस बिसे आजु ही हमारो कन्त आवतो॥ १॥

---

१ तीन तरह की– शीतल, मंद, सुगन्ध। २ कण। ३ तरह।

५६१. महाराज कवि

बात चली चलिबे की जहाँ फिरि बात सुहानी न गात सुहानो।
भूषन साजि सकै कहि को महराज गयो छुटि लाज को बानो॥
यों कर मींजति है वनिता सुनि पीतम को परभात पयानो।
आपने जीवन को लखि अंत सु आयु की रेख मिटावति मानो॥१॥

५६२. मुरलीधर (२)

कोऊ न आयो उहाँ ते सखी री जहाँ मुरलीधर प्रानपियारे।
याही अँदेसे में बैठी हुती उहि देस के धावन[1] पौरि[2] पुकारे॥
पाती दई धरि छाती लई दरकी अँगिया उर आनँद भारे॥
पूछन को पिय की कुसलात मनो हिय-द्वार किवाँर उघारे॥१॥

५६३. मनोहर कवि (३)

दीनदयाल कृपानिधि सागर जानत हौ सब ही तुम जी की।
प्रीति पुनीत हिये निबहै जिन देह दई कबहूँ बपु ती की॥
ऊधो उसास न पावति लै न दुरावति भाउ सदा सब ही की।
चारो[3] नहीं है विचारो मनोहर कीजिये सोई लगै जोऽब नीकी॥१॥

५६४. मदनगोपाल कवि

भारी हारभार उरभार त्यों उरोजभार जोवन मरोर जोर दाबे दलियत है। परँग-परग[4] पर यहै जिय होत संक टूटि न परत कौन पुन्य फलियत है॥ कोऊ कहै खरी खीन कोऊ कहै कटि ही न मदन-गोपाल ऐसे चित्त धरियत है। काहू की न मानौ साँक कहत ही आई नाक ऐसी खीनी लाँक पै उलाँक चलियत है॥१॥

५६५. मोतीलाल कवि अघैलावाले

(भाषागणेशपुराण)

दोहा—जेते जन्म तुम्हार भे, देह तजे करि भोग।
तेते सिर की माल किय, प्रिया तिहारे सोग॥१॥

---

१ दूत। २ द्वार पर। ३ वश। ४ पग-पग।

पाछे सिव धावत फिरैं, किये क्रोध सुखमूल।
भावी वस नृप कठिन है, छूट न संभु त्रिसूल॥ २॥

५९६. मीरा बाई चित्तौर की रानी

दोहा—रसन कटै आनहि रटै, फुटैं आन लखि नैन।
स्रवन फटैं ते सुने बिन, श्रीराधा जस बैन॥ २॥

कवित्त। कोऊ कहौ कुलटा कुलीन अकुलीन कहौ कोऊ कहौ अंकिनी कलंकिनी कुनारी हौं। कैसे सुरलोक नरलोक परलोक सब कीन मैं अलोक लोक लोकन ते न्यारी हौं॥ तन जाहु मन जाहु देव गुरुजन जाहु जीभ क्यों न जाहु टेक टरत न टारी हौं। बृंदावनवारी गिरधारी के मुकुट पर पीतपटवारे की मैं मूरति पै वारी हौं॥ १॥

५९७. महेशदत्त ब्राह्मण, धनौली ज़िला बाराबंकी
(काव्यसंग्रह)

दोहा—गजमुख सुखकर दुखहरन, तोहिं कहौं सिर नाय।
कीजै जस लीजै विनय, दीजै ग्रन्थ बनाय॥ १॥
जगदीस्वर को धन्य जिन, उपजायो संसार।
छिति जल नभ पावक पवन, करि इनको विस्तार॥ २॥
नृपहि दास, दासहि नृपति, पवि तृन, तृनहि पषान।
जलधि अल्प सर, लघु सरहि, उदधि करै छनमान॥ ३॥

५९८. मनभावन ब्राह्मण मुंडियावाले
(श्रृंगाररत्नावली)

फूली मंजु मालतीन पै मलिन्द बृन्द वर सुरभि लपेट्यो मंद मधुर बहै समीर[1]। ललित लवंगन की वल्लरी तमाल जाल लतिका कदंबन की देखे दूरि होत पीर॥ बौंड़ी गुंज पुंज अति झौंड़ी झुकि झाँक्यो वन केकीकुल कलित कपोत पिक बोलैं कीर। भरे प्रेम स्यामा स्याम गरेभुज धरे-दोऊ हरे-हरे[2] डोलतहैं तरनितनूजा[3]-तीर॥ १॥

---

१ हवा। २ धीरे-धीरे। ३ यमुना।

५९९. मनियारसिंह कवि क्षत्रिय काशीनिवासी
(हनुमतछब्बीसी)

अभय कठोर बानि सुनि लछिमनजू की मारिबे को चाही जो सुधारी खल तरवारि। यार हनुमंत तेहि गरजि हहास करि डपटि पकरि ग्रीव भूमि लै परे पछारि॥ पुच्छन लपेटि फेरि दंतन दरदराइ नखन वकोटि चोंथि देत महि डारि डारि। उदर बिदारि मारि लुत्थन लोटारि वीर जैसे मृगराज गजराज डारै फारि फारि॥ १॥

सोरठा—छत्रीवर मनियार, कासीवासी जानिये।
जापै पवनकुमार, दयावंत सुखप्रद सदा॥ १॥
मृगपद मंजुल पास, सरजू तट सुरसरि निकट।
बलिया नगर निवास, भयो कछुक दिन ते सुमति॥ २॥

(भाषासौंदर्य्यलहरी)

तेरे पद पंकज पराग राजै राजेस्वरी वेदवंदनीय विरुदावली बढ़ी रहै। जाकी किनुकाई पाइ धाता ने धरित्री कियो जापै लोक लोकन की रचना कढ़ी रहै॥ मनियार जाहि विष्णु सवै सर्व पोषत सों सेस ह्वै कै सदा सीस सहस मढ़ी रहै। सोई सुरासुर के सिरोमनि सदासिव के भसम के रूप ह्वै सरीर पै चढ़ी रहै॥ १॥

६००. राम कवि (१)
(रससागर)

दोहा—चित्रित दस अवतार सखि, तामें सतवों कौन।
बंक चितै कै जानकी, मुसुकानी गहि मौन॥ १॥
राधा प्यारी फागु में, गहि गहि कान्हहि लेति।
दियो न मैं यह जानि कै, फिरि फिरि काजर देति॥ २॥
अन्तरिच्छ गच्छत सुपथ, ह्वै सपच्छ वुधचित्त।
अच्छर प्रभु के ध्यान को, इच्छत कविता बित्त॥ ३॥

कवित्त। चरचत चाँदनी चखन चैन चुयो परै चौंधा सो लग्यो है

चारों ओर चित चेत ना। गुंजत मधुप बृन्द कुंजन में ठौर ठौर सोर सुनि सुनि रह्यो परत निकेत[1] ना॥ राम सुने कूकन करेजो कसकत आली कोकिल को कोऊ मुख मूँदि अब देत ना। अन्त करे डारत बसन्तहि बनाय हाय कन्तहि बिदेस ते बुलाय कोऊ लेत ना॥ १॥ दंग करि दंगल उदंगल उदंग करि मंगल कै मंगल अमंगल दवाइ हौं। धीर निधि मण्डि धूरि धारनि घमण्डि घन-मण्डलै घमण्डि घन-नादहि[2] बहाइ हौं॥ राम कवि कहै मैं अकेला आजु हेला करि देखत सुहेला लंक ढेला लौं बहाइ हौं। महामद अन्ध दसकन्ध के उतंग उत काटि उँचमंग[3] हार हर को चढ़ाइ हौं॥ २॥ दीरघ दँतारे भारे अंजन अचल कारे गाढ़े गढ़ कोट पट तोरत पविन के। चौंपवन्त घन से सिंगारे वारि बरसत सुंडन उदन्त रथ रोंकत रविन के॥ कहै रामबकस सपूत सिरमौर राना ऐसे राज देत महामन्दर छविन के। बारे मघ-वानवारे महामयदानवारे दानवारे दानवारे द्वारे में कविन के॥ ३॥

६०१. रामसिंह कवि

धावत प्रबल दल हिम्मति बहादुर को संकि सत्रुसाउज से नदी नद् छूटि जात। सबद नगारन के भारी गजभारन के मारे खुर-थारन के फनी-फन फूटि जात॥ झँपिजात तरनि धरनि-कोन कम्पिजात दिग्गज धनेस रामसिंह मन हूटि जात। कूटि जात पब्बय सघन बन टूटिजात छूटि जात गढ़ मठ वैरिन के लूटिजात॥ १॥ भूलि न दान करै दमरी रन में न कहूँ किरवान जगाइस। पोतो गनाइ धरै घर में करै झूठी सो पंचन में फुरमाइस॥ बातैं बनाइ कै नोनी नई जिन जाचक को जियरा भरमाइस। राम कहै न रहै चिर चौकस चीकने ठाकुर की ठकुराइस॥ २॥

६०२. रामजी कवि (१)

वारि जात वारिजात[5] दोऊ पारिजात देखि प्रबल प्रताप की

[1] घर। [2] मेघनाद। [3] सिर। [4] धनुषसमते। [5] कमल।

कुमाच कुँभिलाती हैं। आब ना दिखात आफ़ताब सो भुलात देखि गालिब गुलाब को गरूर गरकाती हैं।। रामजी सुकबि जाहि देखत प्रकास होत पाप की पनाली पास पास है बिलाती हैं। राधा ठकुराइन के पाँइन के तीर कवि-उक्ति मड़राती खिसियाती फिरि जाती हैं ।। १ ।।

६०३. रामदास कवि

स्याम घन आये आली स्याम परदेस छाये स्यामकण्ठ सत्रु आगि अंग में बढ़ै लगी । स्यामकण्ठ[1]-बोल सुनि स्यामकण्ठ सौंरि आवै कोकिला हू कूकि कूकि प्रानन कढ़ै लगी ।। झिल्ली औ मँडूक कूक सुनि हिये होत हूक रामदास तात गुननिधि सों चढ़ै लगी। रैनि अँधियारी होन लागी द्रुम बाढ़ी दसकन्धबन्धु-प्यारीऊ[2] पयानो सो पढ़ै लगी ।। १ ।।

६०४. राम कवि, रामरत्न गुजराती ब्राह्मण, फ़र्रुखाबादी

(बरवै नायिकाभेद)

बरवै—पात पात करि ढूँढ़्यों, सब बन बीनि ।
घटहि हुते मो बालम, पर्‌यो न चीनि ।।
बालम सुरति बिसरिगै, कहत सँदेस ।
एकहु पथिक न बहुरा, कस वह देस ।।
बालम की सुधि आवत, यह गति मोरि ।
निकसिनिकसि जिय पैसत, ज्यों चकडोरि।।
पात पात करि लूटिसि, बिपिन समाज ।
राजनीतियह कसिकासि, कस ऋतुराज ।।

६०५. रामसहाय कवि कायस्थ, बनारसी

(वृत्ततरंगिणी)

घाँघरो घूमघुमेरो लसै तन चूनरी रंग कुसुंभ के गाढ़े ।

---

१ मोर। २ रावण के भाई विभीषणकी स्त्री सरमा=अर्थात् शर्म ।

दूलरी तीलरी चौलरी कंठ उरोजन कंचुकी मोल से वाढ़े ॥
रामसहाय विलोकत ही घनस्याम निकुंज के बीच में ठाढ़े ।
लाज-भरी अँखियाँ विहँसीं मिलि चौविसमासको घूँघुट काढ़े ॥ १ ॥

६०६. रामप्रसाद वंदीजन बिलग्रामी, रसाल कवि के पिता

घेरि लियो विरधापन आनि कै पाँव चलाये चलैं न हमारे ।
आनन सों स्वर सुद्ध कढ़ै नहिं कानन वात सुनौं न पुकारे ॥
कंपत हैं सव अंग दयानिधि नैन भये दोउ नीर पनारे ।
दै अपनी सु दसा पठयो हम गोकुलचन्द को पास तिहारे ॥ १ ॥

६०७. रामदीन वंदीजन अलीगंजवाले

कालि ही सहेलिन में जात हुती जमुना को इत ही ते कान्ह कछु तान अनुराग्यो है। सुनि कै स्रवन लखि नैनन सरूप वाको चपल चितौनि मानो मैन-सर लाग्यो है ॥ भावत न भीर कोउ जाइ नहिं तीर कछु सुधि ना सरीर केहू कियो मंत्र जाग्यो है। भनै कवि रामदीन मन में विचरि देखो भूत नाहिं लाग्यो याहि नंदपूत लाग्यो है ॥ १ ॥

६०८. रामदीन त्रिपाठी, टिकमापुर

दोहा—जो वाँधी छत्रसालजू, हृदय माहिं जगतेस ।
परिपाटी छूटै नहीं, महाराज रतनेस ॥ १ ॥

६०९. रामलाल कवि

प्रथम[2] पचीसहू के वैर को निवारति हौं छठये अठारा और पन्द्रह चढ़ाइ कै। चौविस वतीस सताईस त्यों सतावत हैं ताते छिति-सुत सो उठत अकुलाइ कै ॥ भनै रामलाल प्यारी प्यारे को सँदेसो लिखि प्यारे मुख बैन कह्यो पथिक बुझाइ कै। जीवत जो चाहैं कान्ह तुर्त मोहिं मिलैं आनि ना तो नाक[3] जाती हौं भुवैन[4]-ऋतु खाइ कै ॥ १ ॥

---

१ दुशाला। २ यह एक कूट कवित्त है। ३ स्वर्ग। ४ विष।

जूरो ऐसी सोभा देत रूरो कैधौं मानों हेम-गिरि पै वियाल[1] ऐंठि बैठो है ॥ १ ॥

६१४. रामनारायण कायस्थ

उन्है जो कहे हैं बैन रसना ते कहा भयो रस नाहिं जामें दोष वामें कहा दीजिये । मति में न आये मति नाम ही प्रतच्छ वाके मैन जाको कहत भरोसो कौन कीजिये ॥ नय नाहि नैनन में प्रेम उपजावै कौन रामनारायन यह साँची कै पतीजिये[2] । झारि झिझकारि प्यारे काहे को कहाये कर मोहन रिसाइ हाइ बैठी हाथ मींजिये ॥ १ ॥

६१५. ऋषिजू कवि

दरवाजे न जैये लजैंगे सबै बरिआँई[3] कलंक लगाइबो है ।
सुनि कै क्यहि भाँति सों धीर धरैं मृदु बाँसुरी तान को गाइबो है ॥
इहि बाँस की कौन कहै ऋषिजू सु पतिव्रत पूरो छुड़ाइबो है ।
सुनु री सजनी ब्रज को बसिबो तरवार की धार को धाइबो है ॥ १ ॥

६१६. रामकृष्ण चौबे कालिंजरवासी

(विनयपचीसी)

द्रुपदसुता को गहि ल्यायो है सभा के बीच नीच यों दुसासन कुमति मन में भरी । देखे भूप भीषम करन द्रोन मौन गहि खैंचत बसन उर धीर काहू ना धरी ॥ दीनन के नाथ तुम ऋषिका के नाय नाथ अंवर बढ़ायो है पुकारी जब हे हरी । नंद के दुलारे रामकृष्ण जग तारे सुनो पीतपटवारे देर मेरी वार क्यों करी ॥ १ ॥

६१७. रघुनाथ पण्डित शिवदीन रसूलावादी

(भाषा-महिम्न)

वसुधा बलंद को बनायो रथ बैठिबे को जंता चारि बंदत चरन रवि चंद है । धनुष नगेन्द्र कीन्हो पीनो चक्र बान कीन्हो

१ वियाल=सर्प । २ मानिए । ३ ज़बरदस्ती ।

बिनही अडम्ब सम ख्यात हू समंद है ॥ तंत्र तूल अनल पतंग मिलि होत जैसे कोप की किरन जैसे त्रिपुरनिकंद[1] है । नाहीं परतंत्र है सुतंत्र रघुनाथ प्रभु संग पाल दावानल करत अनंद है॥१॥

६१८. रामसखे कवि

(नृत्य-राघव-मिलन नाटक)

सोरहौ सिंगारवारो नील मेघ हूँ ते कारो आनत प्रमोदबन सजनी यह को है । चंदन सुगंध कान फूल तेल जुलफन में अंजन लगाये नैन सैनन करि जोहै ॥ भूषन बसन सन मोती मनि मानिक धनुष बान तरकस धारे अति सोहै । पाँयन पनहियाँ लाल सोहै जनु कामजाल रामसखे वाको रूप सबको मन मोहै ॥१॥

६१९. ऋषिराम मिश्र पट्टीवाले

(वंशीकल्पलता)

दोहा—उभय घरी दिन अंत में, गौरी लई अलाप ।
मोहि गईं ब्रजनायिका, यह बंसी परताप ॥ १ ॥

बाँसुरी अलापी जाय बन में बिहारी लाल ईमन कल्यान सूर फाखता सुहायो री । भनै ऋषिराम तहाँ काफी औ झँझौटी राग मारू औ केदारा सुभ सोरठ सुनायो री ॥ देस औ बिलावल विहाग बनकुंजन में भौंर के तरंगन में भैरौं ठहरायो री । साधि परभाती जड़ जानी राति जाती काहू बंसीबट वंसी आपु भैरवी बजायो री ॥ १ ॥

दोहा—नवल किसोरी राधिका, नवल छैल ब्रजचंद ।
वंसीवट बंसी धरी, अधरन पर गोविंद ॥ १ ॥

कान्ह की बाँसुरी ऐसी बजी मन मेरो हरो सुधि ना रही प्रान की । प्रान की कौन गुमान करै अनुमान बिचारि कियो सुरतान की ॥ तान की तेग लगी जिय में हिय में अति सोच करै बृषभान की । भान की भौन को भूली फिरै जब ते परी कान में बाँसुरी कान की॥१॥

[1] त्रिपुर को जलानेवाले ।

६२०. ऋषिनाथ कवि

ल्याई सखी नवला को भुराइ धरै डग दारन लोकै रटी ज्यों।
देखत ही मनमोहन को भई पानिप[1] में गई बूड़ि घटी ज्यों॥
प्यारे भरी अँकवारि[2] पसारि बिहारि को ज्यों ऋषिनाथ ठटी ज्यों।
यों निकसी कर-कुंडल ते नटकुंडली ते कढ़ि जात नटी ज्यों॥ १॥

वन उपवन निरझर[3] सर[4] सोभासने अंबर[5] अवनि कल वल वरसावनी। हंसजलरंवित खचित थल वन वनी तारापति सरिस जुन्हाई सुखदावनी॥ ऋषिनाथ मालती मुकुंद कुंद कुसुमित वस पारिजात पारिजातावलि[6] पावनी। मन अरुझावनी रसिक रास रसरंग भावनी सरदरैनि सरद सुहावनी॥ २॥

६२१. रविनाथ कवि

बूड़त वारि में आगि दवारि उवारि लियो महलाद मयाहर।
वै रविनाथ सनाथ कियो निज सेवक जानि भे खम्भ से वाहर॥
रूप धर्‍यो नरकेहरि को हरनाकुस मारि गये जब ठाहर।
आनन देखि डरी कमला हँसि वेनी गह्यो मृगनैनी की नाहर॥ १॥

६२२. रविदत्त कवि

रूठै क्यों न जन जाके मन में विकार वसै रूठै जातिपाँति और रूठै दुखदाइये। रूठै राव राना सवै जाना वही ठौर ही में रूठै जो परोसी ताहि मन में न ल्याइये॥ रूठै परिवार यार सारा संसार औ कविंद मूढ़ पंडित रविदत्त ना सकाइये। एते सब रूठैं आइ चूमैंगे अँगूठो मेरो एहो रघुनाथ एक तू न रूठो चाहिये॥ १॥

६२३. रतनेश कवि

मंजरिया[7] लघु पाली अली तिहि लेन की मोहिं परी टक है।

---

१ पानी। २ गोद में। ३ झरने। ४ सरोवर। ५ आकाश। ६ कल्पवृक्षों की कतार। ७ बिलैया।

नभ मंदिर चित्त को देखत ही लखि स्वान पस्यो तहँ औचक है ॥
झझकी रतनेस भई भय कंप चढ़ी रुचि रोम भई सक है ।
भुजमूल उरोज कपोलन दै नख भाजि गई न गई धक[1] है ॥ १ ॥

प्रथम समागम ते कंपत सरोजमुखी दुखी ह्वै रहत अरु प्रीति न लहति है । दिनन की थोरी अरु बातन में अति भोरी नीवी कसि बाँधे डोरी छोरी ना चहति है ॥ कहि रतनेस दिन बूड़े मन बूड़ि आयो सासु को बोलाय दौरि पाँयन गहति है । जानि घर माहीं पिय आय गही बाहीं हम नाहीं हम नाहीं परछाहीं सों कहति है ॥ २ ॥

६२४. रत्नकुँवरि
(प्रेमरत्न)

सोरठा—अविगत आनँदकन्द, परमपुरुष परमातमा ।
सुमिरि सु परमानन्द, गावत कछु हरि बिमल जस॥१॥
अगम उदधि मधि जाहिं, पंगु[2] तरहिं बिनु जिमि तरँनि[3] ।
तैसिय रुचि मन माहिं, अमित कान्ह-जस-गान की॥२॥

६२५. रसनायक, तालिबअली बिलग्रामी

तट की न घट भरैं मग की न पग धरैं घर की न कछु करैं बैठी भरैं साँसु री । एकै सुनि लोटि गईं एकै लोट-पोट भईं एकन के दृग ते निकसि आये आँसु री ॥ कहै रसनायक सो ब्रजबनितान बधि बधिक कहाय हाय भयो कुल हाँसु री । करिये उपाय बाँस डारिये कटाय नाहीं उपजै गो बाँस नाहीं बाजै फेरि बाँसुरी ॥ १ ॥

६२६. रावराना कवि, चरखारीवाले भाट

सोनजुही सेवती निवारी सों बिराजी भये राजी भये निरखि मुलामी मुख तेरी है । फूली फुलवारी बीच राजै चारु चन्द्रिका सी सघन निकुंज की अँधेरी में उजेरी है ॥ सहज सुभाव छबि

---

१ धड़कन । २ लँगड़े । ३ नाव ।

पानिप के पुंज भरे रावराना सुकवि हजारन में हेरी है। मान सिख मेरी एरी मालती न मान करु तेरे मकरंद पै मलिंद देत फेरी है ॥ १ ॥ चन्दमुख उन्नत उरोज अनियारे दृग अधर सुधारस सराहि पीजियत है। गोरे गोरे गरुये नितम्ब जुग जंघ राजै लङ्क लचकीली भरि अंक लीजियत है ॥ रावराना सुकवि सचिक्कन[1] अमोल गोल अमल कपोल छवि देखि जीजियत[2] है। आनँद की वेली रूपरासि अलवेली ऐसी नायिका नवेली सों सनेह कीजियत है ॥ २ ॥ फाग खेलि स्याम संग सदन[3] सिधारी प्यारी राजै दुति दामिनी सी भामिनी भरी अनङ्ग। कवि रावराना वैठि रतनसिंहासन पै दर्पभरी दर्पन लै भूपन सँभारै अंग ॥ चन्दमुख चंदन ते चंद की कला सी खासी कञ्चन की भारिन में जल भरि लाई गंग। कोमल कपोलन ते धोवै ज्यों गुलाल-लाली त्यों त्यों होति आली अति गहँव[4] गुलावी रंग ॥ ३ ॥

६२७. रघुराज, श्रीवांधवनरेश महाराज रघुराजसिंह वहादुर वघेले

वसुधाधर में वसुधाधर में औ सुधाधर में त्यों सुधा में लसै।
अलिवृंदन में अलिवृंदन में अलिवृंदन में अतिसै सरसै ॥
हियहारन में हरहारन में हिमहारन में रघुराज लसै।
व्रजवारन वारन वारन वारन वारन वार वसंत वसै ॥ १ ॥

(हनुमतचरित्र सुंदरशतक)

दोहा—संवत उनइस सै चतुर, आस्विन सुदि सनि वार।
सरदपूर्निमा को वन्यो, सुंदरसतक उदार ॥ १ ॥

कोई कहै नंदी को सराप साँचो करिवे को कैधौं कपिरूप धरि आये कासिका के नाथ। कोई कहै कैधौं देखि मुनिन को

१ चिकने। २ जीते हैं। ३ घर। ४ गहरा।

दुख दीवो दुसहन महि कोपि आये सरसुतीनाथ ॥ कोई कहै कैधौं देवनाथ की पुकार सुनि भेज्यो है प्रचंड चक्र रोपित है रमानाथ। कोई कहै कैधौं सिया हेत रावनै निकेत कपिकुलकेत कालकील भेज्यो रघुनाथ ॥ १ ॥

६२८. राय कवि

सीतल समीर आय उरन दुसाल होत जगत बिहाल होत बचत न भागे ते। हाथ पायँ कंपे जायँ बसनन धरे रहैं रैनि कंप जाय ना रजाई तन त्यागे ते ॥ राय कवि दंपति विनोद चहूँ कोदै करैं सिसिर में होत घर-बाहर अभागे ते। अगिन के आगे ते न जागे ते न बागे ते सु सीत जात उन्नत उरोज उर लागे ते ॥ १ ॥

६२९. रनछोर कवि

बदि गे अवधि ऐसे धिक मोह भेज्यो नाहिं दियो दुख देह सु तौ नेह बिसरायो है। विरह की ज्वाला जाल जरि जरि उठै जीव पीव पीव करै यों अनंग उर छायो है ॥ आयो सासुसुत ता को तात चल्यो मिलिबे को चढ़ि चित्रसारी नारी नीके चित लायो है। कहै रनछोर दोऊ मिले चारों भुजा जोरि ससुर की छाती लगे बहू सुख पायो है ॥ १ ॥ *

६३०. रायजू कवि

आये हैं भाव भरे नँदलाल सुभाव करै घरकाज से भावै।
झाँकी दै नैन की सैन कस्यो हँसि रायजू कुंजन खेल खेलावै ॥
जो बरुनी बरुनीन[3] पै पल घूंघुट खैंचन सासु सिखावै।
ताहि न लाज सों काज कछू जरि जाइ सो लाज जो काज न आवै॥१॥

६३१. रसाल कवि, अंगनेलाल भाट, बिलग्रामी

(बरवै अलंकार)

बरवै—सरसम लागत सरसों सरसों फूल।

---

१ सालती है। २ चारों तरफ़। * यह एक कूट समस्या पूर्ति है। ३ पलक।

घर सों भेंट न बरसों बरसों सूल ॥ १ ॥
बन उपबन सब करहत करहत हाल ।
करहत देखी करहत जीवत बाल ॥ २ ॥

खरी जु स्याम गात की न जानौं कौन जात की अनेक नेक भाँति की सुभाइ भेंट ह्वै गई । बधू बधू है साथ की सुभावती है गात की अनेक चूरि हाथ की मनै की मौज कै गई ॥ गही न जात भामिनी लजात जात कामिनी न दीठि होत सामनी दयाल ह्वै चितै गई । रसौल[1] नैन जोरि कै बिसाल भौंह मोरि कै चटाक चित्त जोरि कै पटाक पट्ट दै गई ॥ १ ॥

६३२. रसिकदास

पद

सुमिरो नर नागर वर सुंदर गोपाल लाल ।
सब ही दुख मिटि जैहैं चितत लोचन विसाल ॥

ध्रुवा । अलकन की झलकन लखि पलकन गति भूलि जात भ्रूविलासै[2] मंद हास रदन छदन अति रसाल । निंदत रवि कुंडल छवि गंड[3] मुकुर[4] झलमलात पिच्छगुच्छ[5] कृत वतंस[6] इंदु विमल विंदु भाल ॥ अंग अंग जित अनंग माधुरी तरंग रंग विगत मद गयंद होत देखत लटकीली चाल । रतन रसन पीत वसन चारु हार वर सिंगार तुलसि कुसुम खचित पीन उर नवीन माल ॥ ब्रजनरेस बंसदीप वृंदावन वर महीप श्रीवृषभान मान्यपात्र सहज दीन जन दयाल । रसिक रूप रूपरासि गुन निधान जान राय गदाधर प्रभु जुवतीजन मुनि मन मानस मराल ॥ १ ॥

६३३. रसिया, नजीबखाँ महाराजा पटियाला के सभासद

रमि कै रसरीति की गैलन माहिं अनीति को पंथ न गाँहिये[7] जू ।

---

१ रसीले । २ भौंह का मटकना । ३ कपोल । ४ शीशा । ५ मोर-पंख के गुच्छ । ६ कलँगी । ७ ग्रहण कीजिए ।

अब तौ छलछन्द की बानि तजौ हँसि-बोलि कै चित्त उमाहियेजू ॥
रसिया कर जोरि करौं बिनती कछु और हमैं नहिं चाहिये जू ।
यह प्रेम की आँखैं लगीं सो लगीं पै कुलीन ज्यौं और निबाहिये जू॥१॥

६३४. रूप कवि

कैधौं कली बेला की चमेली की चमक चारु कैधौं कीर कमल में दाड़िम दुरायो है। कैधौं दुति मंगल की मण्डल मयङ्क मध्य कैधौं बीजुरी को बीज सुधा में सिरायो है॥ कैधौं मुकताहल महावर में बोरि राखे कैधौं मैन-मुकुर में सीकर सुहायो है। रूप कवि राधिकाबदन में रदन छवि सोरहो कला को काटि बत्तिस बनायो है॥ १॥

६३५. रूपनारायण कवि

रमि कै रतिमन्दिर में तरुनी रँगरावटी में रसमाले किये।
पगि प्रेम में पूरि प्रवीन के प्यार सों सौतिन ही में दुसाले किये॥
कवि रूपनरायन आरसी लै कर आनन पै वसवाले किये।
अरविन्दन वैर कियो वरु लै मनो भानु के इन्दु हवाले किये॥१॥

६३६. रामजी कवि (२)

चोंथते चकोर[1] चहुँओर जानि चंदमुखी रही बचि डरन दसन दुति दम्पा के। लीलि जाते वरही बिलोकि बेनी बनिता की गुही जो न होती यों कुसुमसर कम्पा के॥ रामजी सुकवि ढिग भौंहैं ना धनुष होतीं कीर कैसे छोंड़ते अधर बिम्ब भम्पा के। दाख के से झौंरा झलकत जोति जोवन की भौंर चाटि जाते जो न होती रङ्ग चम्पा के॥ १॥ स्वेदकन जाली अंसुमाली[2] की तपनि आली सुकी जानि खण्डे ते अधर बिम्ब बूझे हैं। बेनी जानि साँपिनी यों चोंथी हैं कलापिनी[3] ने बापुरी चकोरी को कपालै चन्द सूझे हैं॥ रामजी सुकबि मैं पठाई तू न तहाँ गई वन्द कञ्चुकी के काहू झौंर

---

१ मोर। २ सूर्य। ३ मोरनी।

में अरुझे हैं। उरन उरोज न स्वयम्भू सम्भु किंसुक सों कुंजन के कोने कहौ कौने आजु पूजे हैं ॥ २ ॥

६३७. राजाराम कवि

ठगी सी न ठौर चित ठोढ़ी गहे ठाढ़ी हुती ठौर ही ठनाकि परी टाई दै ठनकसी। पञ्चबान कञ्चु में रुमंच रश्च रश्च भये कंचु ऐसी ह्वै गई जो काया हू कनक सी ॥ छनक में छीन भई छिगुनी ते राजाराम छबीलो छरी सी परी छिति में छनक सी। वनक सी हनी पुनि फनक सी खाई सुनि स्याम को सिधारिवे के तनक भनक सी ॥ १ ॥

६३८. रसिकशिरोमणि कवि

नागर नवल नीके रसिकसिरोमनि हैं ललित त्रिभङ्गी गति कैधौं सखियान की। मुख कहु ससि सों दुहूँ कुल प्रगट जस कुबिजा विदित जग कहा रति जान की ॥ मोहन विसासी उत लागै उर फाँसी सी सुजस ब्रजवासी करैं हाँसी सुखदान की। गोकुल बिलासी नवलासी सी बिसारि चित दासी की बिदा सी कुलकानि कुलकानि की ॥ १ ॥

६३९. रघुनाथ प्राचीन

ग्वाल सङ्ग जैबो ब्रज गाइन चरैबो ऐबो अब कहा दाहिने ये नैन फरकत हैं। मोतिन की माल वारि डारौं गुंजमाल[2] पर कुंजन की सुधि आये हियो धरकत हैं ॥ गोवर को गारो रघुनाथ कछू याते भारो कहा भयो महलन मनि मरकत हैं। मन्दिर हैं मन्दर[3] ते ऊँचे मेरे द्वारका के ब्रज के खरिकै[4] तऊ हिये खरकत[5] हैं ॥ १ ॥

६४०. रंगलाल कवि

छप्पै

जटित[6] जवाहिर मल्ल रल्ल चहुँ दिसि दिसि हल्लिय।

१ काम। २ घुँघची की माला। ३ मंदराचल। ४ गोशाला। ५ खटकते हैं। ६ जड़े हुए।

गहरि नदिय खलभलत भार फनपति थर सल्लिय ॥
तरवर घन दय परत होत कुल्लाहल भाँरिय।
हय-हींसनि थर थसक मसक नर मिलत न नारिय ॥
चढ़ि हंकि निसंक अभंग दल प्रगट जंग दल जान तुव।
सुज्जान नंद रँगलाल मनि कुल बदनेस सु भानु हुव ॥ १ ॥

६४१. रसरास कवि

लालहिं घेरि रही ललना मनो हेमलता लपटानी तमालहि।
ख्यालहि[१] टूटत जात न जानत लूटत है रसरास रसालहि ॥
सालहि सौतिन के उर में चलि री उठि बेगि दै ताल उतालहि।
तालहि देत उठी ततकाल लगाय गुपाल के गाल गुलालहि ॥१॥

६४२. रसरूप कवि

एरे मतिमंद बिप्र मानत कहे न छिप्रे[२] जानि यह पीछे भली-भाँति समुझावैगी। कवि रसरूप अंग फूलि कै फिरत ऐवै भूलि जैहै सेवा जबै साँप लपटावैगी ॥ कंठ को कपाल-माल डमरू त्रिसूल कर कामरू की विद्या दै बनाय बवरावैगी। तरल तरंगा ताको त्यागु तू प्रसंगा ना तो नंगा करि गंगा तोहिं पंच में नचावैगी ॥ १ ॥

६४३. रघुनाथराय कवि

काली अरधंग लै कपाली मुंडमाली चल्यो देखि लोहू लाली को हुलास भयो प्यासे को। कोप्यो रोप्यो राइ रघुनाथ कौन समुहाइ राइ उपराइन के परो जी उसासे को ॥ बादसाह जहाँ बैठो जंग जोरि तहाँ स्वच्छ साहसी अमरसिंह रोप्यो रनरासे को। लै लै स्रगैं[३] दौरी अपछरा पहिराइबे को आसन सों आयो पाकसासन[४] तमासे को ॥ १ ॥

---

१ फ़ौरन। २ जल्दी। ३ माला। ४ इंद्र

६४४. रघुराय कवि

प्यारेहित काज प्यारी प्यारीहित काज प्यारे दुहुँन सिंगारे तन नीके चटमट सों । जमुना के नीर तीर हँसि हँसि बातैं करैं मन अटकायो कल कोकिला की रट सों ॥ एते रघुराइ घन घटा घहराइ आई बरसन लाग्यो नान्हीं बूँदन के ठट सों । जौलौं प्यारो प्यारी को उढ़ायो चाहै पीत पट तौलौं प्यारी प्यारो ढाँपि लीन्हो नील पट सों ॥ १ ॥

६४५. रामकृष्ण कवि

राजैं मेघडंबर जो अंबर परसि कर तेज चकचौंधे होत वाहन दिनेस के । सुंडन के सीकर छुटत जब ऊरध को बसन दरीचिन के भीजत सुरेस के ॥ लंका होत संका सुनि घननात घंटा घोष चलत लचत फन सेस भुजगेस के । उड़त मलिंद गंड-मंडल ते रामकृष्ण झूमत गयंद फिरैं कोसलनरेस के ॥ १ ॥

६४६. रतन कवि ब्राह्मण, बनारसी

(प्रेमरत्न)

दोहा—वह वृन्दावन सुखसदन, कुंज कदम की छाहिं ।
कनकमई यह द्वारका, ताकी रज सम नाहिं ॥ १ ॥
नृपतिसभा सिंहासन, जिहि लखि लजत अनंग ।
नहिं बिसरत वह सखनको, गाय चरावन संग ॥२॥
राजसाज साजे सकल, तिमि नहिं नेकु सुहाहिं ।
गुंजमाल वन चित्र जिमि, मोरमुकुट माथे माहिं ॥ ३ ॥

६४७. रघुनाथदास ब्राह्मण, महंत अयोध्या के

राम के नाम के अच्छर द्वै महिमा कहि सेस सकै न करोरी ।
जासु प्रसाद सुरासुर में हर हर्षि हलाहल पान करो री ॥

---

१ मेघों का समूह ।

जन रघुनाथ के नाथ सोई जो सजीवनसार सुधा रस कोरी।
रकार श्रीराजकुमार उदार मकार सो श्रीमिथिलेसकिसोरी ॥ १ ॥

६४८. रज्जब कवि

दोहा—रज्जब जाकी चाल सों, दिल न दुखाया जाय।
इहाँ खलक खिजमति[1] करै, उत है खुसी खुदाय ॥१॥
साध सराहै सो सती, जती जोषिता जान।
रज्जब साँचे सूर को, वैरी करत बखान ॥ २ ॥

६४९. रघुलाल कवि

आई एक प्यारी गौने सोने से सरीर नोने[2] रूप रस रति के प्र-
कास दरसात हैं। अतर सुगंध रंग भूषन वसन वोरे लाल दृग
डोरे मनों फूले जलजात[3] हैं ॥ कवि रघुलाल सेज आये सुखदान
जाके नखसिख छवि के छरा से छहरात हैं। अंकुरित जोवन छुये
ते लंक संकुरत ईकुरत जंघ अंग कुंकुरत जात हैं ॥ १ ॥

६५०. रघुनाथ उपाध्याय, जौनपुरवासी
(निर्णयमंजरी)

दोहा—मंगलमूरति सिवसुवन, श्रीगनेस हेरंब।
बानी बाक सरस्वती, श्रीसारद जगदंब ॥ १ ॥
इन कहँ प्रथमहिं सुमिरिकै, वहुरि इष्ट करि ध्यान।
उर धरि गुरुपदपद्मजुग, करौं कछुक निर्मान ॥२॥

६५१. रसरंग कवि लखनऊवाले

नंदलला लखी वा दिसि पै जहाँ जाति नवेलिन की अवली है।
अंग विभूषित भूषन ते सब रंग रँगे पट सोभ सली है॥
ता विच नील पटो पहिरे रसरंग रले गले चंपकली है।
जात चली मुसकात गली में सबै विधि सों वृषभानलली है ॥१॥

---

१ सेवा। २ सलोने। ३ कमल।

६५२. रतन कवि; श्रीनगर बुंदेलखंडी
(फ़तेशाहभूषण)

सोहत सुरंग मुख-रंग में दुरंग सोहै जिन रंग सोहैं को है रंग ना रँगीप के। सुकवि रतन सरवसी भरे उरवसी तर वसी करै उरवसी के समीप के॥ चमकनि चीकने कपूर-मनि कैसे ओपे लोपे ते विलोकत विवेक ज्ञान दीप के। सरस सरोजमुखी तेरे ये उरोज मूँगा मीर मसनंदी मानों मदन महीप के॥ १॥

(फ़तेप्रकाश)

सुंदर पुरंदर-गयन्द[1] से बलन्द कद मंदर समंद मंद भर मेदिनी भरैं। धावा की धमक धुकि धसकि धराधरन ससकि ससकि सेस सीस न धरा धरैं॥ वार न लगत ऐसे वारन बकसि देत साह मेदिनी को फतेसाह साहसी ढरैं। पुंडरीक[2] से प्रचण्ड पुंड पुंडरीक जानि सुंडन सकेलैं चन्दमण्डल खरे-खरैं॥ १॥ गोकुल को गई मति गई हौं दही लै गई नन्दजू के मन्दिर समीप ह्वै सिधाई हौं। ग्वालि घरघाली तो सनेहवारी बातन में घेरि वनमाली बड़ी बेर बिलमाई हौं॥ दोऊ कर जोरि नैन मोरि कै निहोरि हरि कहा करौं त्योर तारिबे को सकुचाई हौं। प्यारी तेरे प्यार के पत्यार प्यारे मोहन को मरग नगीना करि देन कहि आई हौं॥ २॥

६५३. रतन कवि (२)
(रसमंजरी भाषा)

दोहा—कल कपोल मद लोभ रस, कल गुंजत रोलंब[3]।
काकदंब अवलंब कह, लंबोदर[4] अवलंब॥ १॥

चौपाई।

अति पुनीत कलिकलुषविहंडन। साहिसभा सबहिन सिरमंडन॥

दोहा—रसिकराज हरिवंस तिन, चंचरीक निजहेत।
भानु उदित रसमंजरी, मधुर मधुर रस लेत॥ २॥

---

१ हाथी। २ एक दिग्गज का नाम। ३ भ्रमर। ४ गणेश।

निकसे नव निर्जन कुंजन ते अँगअंग अनंग के प्रेम जगे ।
किये कानन केतकी की कलिका कमनीय कपोल परागपगे ।।
लखि यों विधि राधिका माधव की भरि वारि वलाहक[1] ज्यों उमगे ।
बरसे नयना झरि लाइ भले निरखे तन को न निमेख[2] लगे ।।१।।
उर ते गिरि मोतिनमाल परी कटि लागत कंठ तटी कल सों ।
भृकुटी तट मोरि कछू छवि सों करनांबुज डारि भुजावल सों ।।
अलवेलिय भाँति खुजावति कान सुरंग खरी अँगुरीदल सों ।
तिरछे वलवीर हि वारहि वार विलोकत वालवधू छल सों ।।२।।

६५४. रतनपाल कवि

दोहा--जाके घोड़ा अनसधे, और सारथी कूर ।
ताको रथ पहुँचै नहीं, होय वीच चकचूर ।।१।।
भक्तिभाव ते की अवाँ, ज्ञानअगिनि तपि जाय ।
रतनपाल तिन घटन[3] में, ज्ञान अमी ठहराय ।।२।।
पूजा कै भगवान की, तिलक देत सिव हेत ।
सिव जानैं हरि देत हैं, हरि जानैं सिव देत।। ३ ।।
माला तुलसी की धरै, तिलक लगावै आड़ ।
ना हरि के ना रुद्र के, वृथा भये तजि भाँड़ ।।४।।

६५५. रूपसाहि कायस्थ, वागमहल पूना-समीपवासी
(रूपविलास)

वृच्छन वल्ली चढ़ी करि चोप अली अलिनी मधु पी मुदकारी ।
कोकिल सारिका[4] कीर कपोत करैं धुनि माधुरी काननचारी ।।
फूले सबै वन वाग तड़ाग भरे अनुराग पिया अरु प्यारी ।
चैत में चारु विहारु करैं दसरत्थकुमार विदेहकुमारी ।। १ ।।
सावन के दुखदावन यों घनस्याम विना घन आनि सतावै ।

---

१ वादल । २ पलक । ३ घड़ा और हृदय । ४ मैना ।

तैसे मिलो तिन्हैं आनि ये मोर सु जोर के सोर जरे पै जरावै ॥
प्यारे को नाम सुनाय सखी हिये पापी पपीहा ये सूल उठावै ।
नेह नवेली मरी अब हौं दिन दोइक पीय जु और न आवै ॥२॥

दोहा—श्रीजू सीतापतिचरन, हिये ध्याय सुख पाय ।
रूपसाहि विरचत विमल, रूप विलास सुहाय ॥ १ ॥
छत्रसाल बुंदेलमनि, ता सुत श्रीहिरदेस ।
सभासिंह तिनके तनय, ता सुत हिन्दुनरेस ॥ २ ॥
कायथ गनियरवार है, श्रीवास्तव पुनि साम ।
कीन्हो रूपविलास जिन, ग्रन्थ अधिक अभिराम ॥ ३ ॥
गुन[३] ससि वसु[३] सासि जानिये, संवत अंकप्रकास ।
भादौं सुदि दसमी सनी, जनम्यो रूपविलास ॥ ४ ॥

६५६. रघुनाथ कवि वंदीजन, काशीवासी

(रसिकमोहन)

लावत मैं न सुगन्ध[१] लखी सब सौरभ को तन देत दसी है ।
अंजनरंजन हू विन स्याम बड़े बड़े नैनन रेख लसी है ॥
ऐसी दसा रघुनाथ लखे यहि आचरजै मति मेरी फसी है ।
लाली नवेली के ओंठन में विन पान कहाँ ते धौं आन बसी है ॥ १ ॥

(जगतमोहन)

तिमिर परात[२] कुलकैरव[३] लजात रंग रूप सरसात अंग रोज नव वर के ।
फूलत विटप[४] वेलि गुंजत भँवर फिरैं पंथ लागे चलन पथिक थरथर[५] के ॥
वेदधुनि होत चहूँ दूध को स्रवत गऊ असनदसन ध्यान पूजा हरि हर के ।
रोग जात सोग जात कहै कवि रघुनाथ उवत परेखे चोर देखे दिनकर के १॥

(काव्यकलाधर)

विरची सुरति रघुनाथ कुंजधाम बीच कामवस बाम करै ऐसे

१ खुशबू । २ भागता है । ३ कुमुद (कोकावेली) । ४ वृक्ष ।
५ जगह-जगह के ।

थात्र थपनो । जंघन सों मसकै सकोरे नाक ससकै मरोरैं भौंह हँस-कै सरीर डारै कपनो ॥ आँखिन सों आँखि ना मिलावैं लचकावैं लंक भुज खींचि लावै अंग छोंड़ि करै जपनो । ज्यों ज्यों जी में आवै त्यों त्यों रीझि रस अधरा को आपु पियै पिय को पियावै पियै अपनो ॥ १ ॥

(इश्कमहोत्सव)

आप दरियाव, पास नदियों के जाना नहीं दरियाव पास नदी होइगी सो धावैगी । दरखत बेलि ही के आसरे को राखता ना दरखत ही के आसरे को बेलि पावैगी ॥ आपके लायक कहने था सो कहा आप रघुनाथ मेरी मति न्याव ही को गावैगी । वह मुहताज आपकी है आप उस के ना आप कैसे चलौ वह आप पास आवैगी ॥ १ ॥

(काव्यकलाधर)

दोहा—ठारह सत पै द्वै अधिक, संवतसर सुखसार ।
काव्यकलाधर को भयो, कातिक में अवतार ॥ १ ॥

सकल दिसान बस करता सरूपवान तेजवान ज्ञानवान भाग-वान गथ के । वेद विधिविहित सुकवि रघुनाथ कहै प्रतिपाल-करता सकल पुन्यपथ के ॥ सबसों अजीत आपु सबके जितैया आपु आपु सरवज्ञ हैं जनैया जे अकथ के । ऐसे मंसाराम के महीप बरिबंड जैसे काम पुरुषोत्तम के राम दसरथ के ॥ १ ॥

६५७. रसखानि कवि, सैयद इब्राहीम, पिहानीवाले

मानुस होहुँ वही रसखानि बसौं ब्रजगोकुल गोप गुवारन ।
जो पसु होहुँ कहा बस मेरो चरौं नित नंद की धेनु मँझारन ॥
पाहन होहुँ वही गिरि को जो धरयो कर छत्र पुरंदर धारन ।

१ स्थापित । २ समुद्र । ३ श्रीकृष्ण ।

जो खग होहुँ बसेरो करौं वही कालिंदी कूल कदंब की डारन॥ १ ॥
या लकुटी अरु कामरिया पर राज तिहूँ पुर को तजि डारौं।
आठ हू सिद्धि नवौ निधि को सुख नंद की गाइ चराइ बिसारौं॥
कोटिन हू कलधौत[२] के धाम करील के कुंजन ऊपर वारौं।
आँखिन सों रसखानि कहै ब्रज के बन बाग तड़ाग निहारौं॥२॥
मोरपखा सिर ऊपर राजत गुंज[३] की माल हिये पहिरौंगी।
ओढ़ि पितम्बर लै लकुटी बन गावत गोधन संग फिरौंगी॥
भावै री तोहिं कहा रसखानि सो तेरे लिये सब स्वाँग करौंगी।
या मुरली मुरलीधर की अधरान धरी अधरा न धरौंगी॥ ३ ॥
एक समै मुरलीधुनि में रसखानि लियो कहुँ नाम हमारो।
वा दिन ही ते ये बैरी बिसासिनि झाँकन देतीं नहीं हैं दुवारो॥
होत चवाव बचाओं सु क्यों करि क्यों अलि भेंटिये प्रानपियारो।
दीठि परी तब ही चटको अटको हियरे पियरे पटवारो॥ ४ ॥
संकर से मुनि जाहि जपैं चतुरानन ध्यानन धर्म बढ़ावैं।
जा पग देव अदेव भये सब खोजत हारे जु पार न पावैं॥
जाहि हिये लखि आनँद ह्वै जड़ मूढ़ हिये रसखानि कहावैं।
ताहि अहीर की छोहँरियाँ[४] छछिया भरि छाँछ को नाच नचावैं॥ ५ ॥

डहडही बौरी मंजु डार सहकार[५] की पै चहचही चुहिल चहूँकित[६] अलीन की। लहलही लोनी लता लपटी तमालन पै कहकही ता पै कोकिला की काकलीन की॥ तहतही करि रसखानि के मिलन हेत बहबही बानि तजि मानस मलीन की। महमही मंद मंद मारुत मिलन तैसी गहगही खिलनि गुलाब की कलीन की॥ ६ ॥

१ पक्षी। २ सुवर्ण। ३ घुँघची ४। लड़कियाँ। ५ आम। ६ चारों ओर

६५८. रामचंद कवि नागर, गुजरातवासी
(गीतगोविंदादर्श, भाषा-गीतगोविंद)

सोरठा—आनँदकंद अमंद, सजन कुमुद कुल चंद नृप ।
डालचंद कुलचंद, रायचंद प्रतिपाल प्रभु ॥ १ ॥

घन घेरि आयो वन सघन तिमिर छायो रैनि को डरैंगे लेखि देखि यों दृगन ते । नंदजू कहत बृषभानुनंदिनी सों नंदनंदनहिं घरै जाहु लैकै वेगि बन ते ॥ गुरु के बचन पाइ प्रेम की रचन भरे चले कुंज-तीर[1] तरु देखि कै विपिन ते । जमुना के कूल में रहसि रसकेलि करैं ऐसे राधा-माधौ बाधा हरैं मेरे मन ते ॥ १ ॥

६५६. रामदया कवि
(रागमाला)

दोहा—भैरव, दीपक, मेघश्री, कौसिक और हिंडोल ।
रामदया षट राग ये, वरनत पुरुष अमोल ॥ १ ॥

भैरो सुर गाये कोल्हू आपु सों चलत मालकौस के अलापे होत पाहन दरारैं री । सबद सुने ते सूखे रूखहू हेरे होत जल की कनूकैं झरैं मेघ की मलारैं री ॥ चढ़ि कै हिंडोरे जब गावत हिंडोल राग फिरकी सी डोलै पाय मारुत के रारैं री । दीपक उचारै दिया हाथ सों न बारै मन औरै करि डारैं ये कदंबन की डारैं री ॥ १ ॥

६६०. राजाराम कवि

छाई छवि हीरन की रवि जोति जीरन की राजाराम चीरन[2] की चिलकारी अलकैं । अबला[3] अहीरन की पाली दधि-छीरन की सोने से सरीरन की गारी दै दै बलकैं ॥ पिचकारी नीरन की मार सम तीरन की देव दान चीरन की माँगिवे को ललकैं ।

---

१ किनारे । २ वस्त्रों की । ३ स्त्री ।

हैं करैं बीरन की उड़नि अबीरन की मुख-लाली बीरन की बीरन की झलकैं ॥ १ ॥

६६१. राजा रणधीरसिंह, सिरमौर, सिंगरामऊ

(भूषणकौमुदी)

दोहा—भाषाभूषन ग्रन्थ को, किय जसवन्त नरेस।
टीका भूषनकौमुदी, रचि रनधीर सुवेस ॥ १ ॥
सम्वत मुँनि ससिनिँधि धरनि, माघ त्रिदस सित चार।
सुभ मुहूर्त कवि वार लहि, भयो ग्रन्थ अवतार ॥ २ ॥
जनप्रनप्रतिपाली बिसद, भव-घाली अवगाह।
ऐसी काली को सुजस, आली बरनै काह ॥ ३ ॥

मंजुल सुरङ्ग वर सोभित अचिन्त रेख फल मकरन्द जन मोदित करन हैं। प्रमित विराग ज्ञान केसर अव्यक्त देखे विरद असेस जस पांसु पसरन हैं ॥ सेविंत नृदेव मुनि मधुप समाधि ही के रनधीर ख्यात द्रुत इच्छित भरन हैं। ईस हृदि मानस प्रकासित सदाई लसैं अमल सरोज वर स्यामा के चरन हैं ॥ ४ ॥

(काव्यरत्नाकर)

छप्पै

एकरदन गुनसदन मदन अरि पञ्च-वदन-सुत।
विघनकदन गजवदन दानि मङ्गल सिँदूरजुत ॥
भाल चन्द गजवन्द मन्द-मति-तम-बिनासकर।
वुद्धिकरन है स्मरन जासु वर वरन भासकर ॥
मद झरत गण्ड मण्डरित अरु झुण्ड झुण्ड गुंजरित जेहि।
करि ध्यान हृदय अरविन्दपद सीस धारि रनधीर तेहि ॥ १ ॥
दोहा—सम्वत मुनिँ निधिँ वसु ससी, अंक-रीति गनि चारु।
जेठसुक्ल सुभ द्वादसी, जनित ग्रन्थ गुरुवारु ॥ १ ॥

---

१ चरण-कमल।

६६२. रसिकलाल, बाँदावाले

सोरठा—गयापिण्ड मा कूप, रसिकलाल सुत सों कहै।
संतत खनियो कूप, मृगनयनी पानी भरैं॥ १॥

६६३. रसपुंजदास

(प्रस्तारप्रभाकर पिंगल)

दोहा—सूधी रेखा लघु समुझि, गुरु सुक-चञ्चु-अकार।
इनमें बरतैं छन्द सब, जे कवि बुद्धि उदार॥ १॥

६६४. रसलीन-गुलामनबी, बिलग्रामी

(रसप्रबोध)

दोहा—ग्यारह सै चौवन सकल, हिजरी सम्वत पाइ।
सब ग्यारह सै चौवनै, दोहा राखे ल्याइ॥ १॥
सत्रह सै अट्ठानबे, मधु-सुदि छठि बुधवार।
बिलग्राम में आइ कै, भयो ग्रन्थ-अवतार॥ २॥
सौतिन मुख निसि कमल भो, पिय चख भये चकोर।
गुरुजन मन सागर भये, लखि दुलहिनि मुख ओर॥ ३॥
सखिन कहे ते आभरन, नेकु न पहिरत वाम।
मन ही मन सकुचति डरति, भजत लाल को नाम॥ ४॥
नवला मुरि बैठति चितै, यह मन होत विचार।
कोमल मुख सहि ना सकत, पिय-चितवनि को भार॥ ५॥

(फुटकर)

सोरठा—पीतम चले कमान[2], मोको गोसा[3] सौंपि कै।
मन करि हौं कुरबान, एक तीर[4] जब पाइ हौं॥ १॥

६६५. रसलाल कवि

प्यारे को चीरो चुनौटिया राजत प्यारी की चूनरी लागी किनारी।
प्यारे को बागो बनो बहु सुन्दर प्यारी की कञ्चुकी सोंधे सुधारी॥

---

१ शुक्लपक्ष। २ कमाने को और कमान। ३ एकांत और गोसा। ४ पास और बाण।

रसलाल सु भाल पै टीको लसै अरु प्यारी की बेंदी रही छवि न्यारी ।
झाँकैं झरोखे में दोऊ लखे सिरीनन्दलला वृषभानु दुलारी ॥ १ ॥

६६६. रामचरण ब्राह्मण, गणेशपुरवाले
(कायस्थधर्मदर्पण)

दोहा—निकरी गजमुख-गाल ते, नदी मयन जल ताल ।
पाप-बाल की डाकिनी, हरै सकल भ्रमजाल ॥ १ ॥
सीता, रघुनन्दन, लषन, भरत, सत्रुहन बीर ।
वन्दौं पवनकुमारजुत, विहरत सरजू तीर ॥ २ ॥
वचन-अर्थ इव एकमय, वचन-अर्थ के हेतु ।
वन्दौं जग-जननी-जनक, पारवती-वृषकेतु ॥ ३ ॥

६६७. रामराइ कवि

पद

जयति श्रीवल्लभसुवन उद्धरन त्रिभुवन फेरि नन्द के भवन की केलि ठानी । इष्ट गिरिवरधरन सदा सेवक चरन द्वार चारों वरन भरत पानी ॥ वेदपथ व्यास से हनूमान दास से ज्ञान को कपिल से कर्मजोगी । साधु लछिमन निपुन बहु ब्रजराज प्रगट सुखरासि मनो इन्दुभोगी ॥ सिन्धुसम गम्भीर मिलन रङ्ग नीर प्रीति को जल छीर ब्रजउपासी । ध्यान को सनक से भक्त को सनँद से याही ते बस कियो ब्रह्मरासी ॥ मनहुँ इन्द्र को जीति कृष्ण सों करी प्रीति निगम की चली नीति अति बिवेकी । रहित अभिमान ते बड़े सनमान ते सील अरु दान गोविन्द टेकी ॥ सदा निर्मल बुद्धि अष्ट सिद्धि नव निद्धि द्वार सेवत जहाँ मुक्ति दासी । रामराइ गिरिधरन जानि आयो सरन दीन के दुखहरन घोषबासी ॥ १ ॥

६६८. रामदास बाबा, सूरजी के पिता

पद

हम पर यह हिगई बीबाजन।
लै डारे जसुदा के आगे जे तुम फोरे भाजन॥
दुरी बात करि देत प्रगट सब नेकुहु आई लाज न।
रामदास प्रभु दुरे भवन में आँगन लागी गाजन॥ १॥

६६९. रहीम कवि (२)

सुनिये बिटप[1] प्रभु पुहुप[2] तिहारे हम राखिये हमैं तौ सोभा रावरी[3] बढ़ाइ हैं। तजिहौ हरस तो बिरस ते न चारो कछू जहाँ जहाँ जैहैं तहाँ दूनी छबि पाइ हैं॥ सुरन चढ़ैंगे सुर नरन चढ़ैंगे सीस सुकवि रहीम हाथ हाथ ही बिकाइ हैं। देस में रहैंगे परदेस में रहैंगे काहू भेस में रहैंगे तऊ रावरे कहाइ हैं॥ १॥

६७०. रामप्रसाद अगरवाले

लाला तुलसीराम मीरपुरवाले भक्तमाल-ग्रन्थकर्ता के पिता

सवैया

दीनमलीन औ हीन ही अंग विहंग[5] परो छिति छीन दुखारी।
राघव दीनदयाल कृपाल को देखि दुखी करुना भइ भारी॥
गीध को गोद में राखि कृपानिधि नैनसरोजन में भरि बारी।
बारहिबार सुधारत पङ्ख जटायु की धूरि जटान सों झारी॥ १॥

६७१. लाल कवि (१) प्राचीन

दारा और औरँग लरे हैं दोऊ दिल्ली बीच एकै भाजि गये एकै मारे गये चाल में। बाजी दगाबाजी करि जीवन न राखत हैं जीवन बचाये ऐसे महाप्रलैकाल में॥ हाथी ते उतरि हाड़ा लस्यो हथियार लै कै कहै लाल बीरता बिराजै छत्रसाल में।

१ वृक्ष। २ फूल। ३ तुम्हारी। ४ वश। ५ जटायु।

तन तरवारिन में मन परमेस्वर में पन स्वामिकारज में माथो हरमाल में ॥ १ ॥ मिली पारावार[1] को हजार करि धारा तऊ पारावार वेग को न पारावार सरि की । वन्दौं नागदारा नागदारा देवदारा लाल मानो हंस चारा चार क्षित कल हरि की ॥ जाति विधि द्वारा जमकारा ना वरुनकारा न्हाइ पापी पापन को आरा मैन-अरि की । पारा ते सरस दूध-धारा से सरस चन्द-तारा ते सरस सेत धारा सुरसरि की ॥ २ ॥

(विष्णुविलास नायिकाभेद)

बाँह डुलाइ चले अति ऐंड़ सों भौंहन ही हँसि बात कहे री ।
गोल कपोल उतुङ्ग[2] नितम्ब विलोकत लोचन लागि रहे री ॥
जानति है गड़ि जात हिये खन जो भरि अंकम नेकु गहे री ।
काहे न कान्ह रहे निपटैं लटि ज्यों यह जोवन याहि लहे री ॥ १ ॥

तरुन तीय वस रसिक सदा सुखही रहै ।
अति गँभीर निंश्चिन्त न चित विकृति गहै ॥
राजा उदयन वत्सराज सम होइ जो ।
धीर ललित सुविवेकी नायक कह्यो सो ॥ १ ॥

६७२. लाल कवि (२) बनारसी

अँरिन[3] सँहारै गजवंटनि अहारै रक्त पियत अघारै ऐसी जालिम जवाल की । जंग जीतिवे की जामें अमित कला है काल की सी अबला है ऐसी सोहत हवाल की ॥ कहै कवि लाल जंग मुकुति-जुगुतिवारी चेतसिंह कर धारी है धौं कौन काल की । जमदण्डिका सी रन बीच चण्डिका सी है सुरत्न-कन्यका सी तेग कासी-महिपाल की ॥ १ ॥ छोटे छोटे पात कौनौ काम के न ठहरात देखे छुद्र छाँह मन कैसे कै रसाइये । पैने पैने कण्टक

---

१ समुद्र । २ ऊँचे । ३ शत्रुओंको ।

बिलोकि कै बढ़त सूल मूल हू में ठौर बिसराम को न पाइये ॥ लाल कवि फूल फूले रस-रूप-गन्ध बिना स्वाद बिना फल सुख कैसे कै लगाइये । तुम ही कहौ न तौन बारी में बबूर जौन कौन आस राखि रावरे के पास आइये ॥ २ ॥ बंसीवारे प्यारे तेरी बानीके प्रवाह बीच तरत सभा की सभा प्रेमनीर छाकी है। वेनु की अदा की तान बाँकी वे सुकवि लाल चर थिर ताकी थिर-चरता हू थाकी है ॥ अकथ[2] कथा की कथा कहाँ लौं बखानौं तथा भव की त्रिथा को नेक सुनत वृथा की है । पण्डितप्रथा की मति थाकी हेल थाप थहै न इहि विथा की थाकी कहन कथा की है ॥ ३ ॥

६७३. लाल कवि (३) बिहारीलाल त्रिपाठी, टिकमापुरवाले

सूनो परो कब को यह गेह है साँकरो यामें न सूरप्रकास[3] है ।
जौन बतायो पठायो इहाँ तिन कीनो खरो तुम्हरो उपहास है ॥
आई हौ भागि रहौ अनतै कहुँ आली कहौ यामें कौन सुपास है ।
भीतर कारे भुजंग बसैं अरु ऊपर चौक चुरैल को बास है ॥ १ ॥
ऊजरी होय न केहूँ अली तिरछी चितवै हरि सों अनुरागी ।
लाज कहै नहीं छूटत दाग दगा दै सुनार बनावत दागी ॥
भेंट भई जमुनातट में तकि दोऊ रही न टरैं अनुरागी ।
गूजरी ठाढ़ी कहै चलु गूजरी गूजरी भाजन गूजरी लागी ॥ २ ॥
कोऊ डरानी परानी कोऊ डरपै नहिं मेरो हियो मजबूत है ।
बावरी ये घर बाहर की सब जाहिर मोहिं तिहारो अकूत[5] है ॥
लाऊँ दिखाऊँ मिटाऊँ कलंक इहाँ ब्रज एक बड़ो अवधूत है ।
तोहिं तौ भाव भवानी को आवत गाँव के लोग लगावत भूत है ॥ ३ ॥
बिधि वा मृगनैनी को रूप अनूप लिख्यो मनो औरहि लेखनियाँ ।
दृग कंज से लाल सुधाधर से मुख अंग अनूप अलेखनियाँ ॥

---

१ जड़में भी । २ न कहने लायक़ । ३ सूर्यकी रोशनी । ४ भागी । ५ भाव ।

लखि पेखन की सुधि भूलि गई हैं भई अँखियाँ अनिमेखैनियाँ।
रहि पेखनहारी की पेखि रहे छवि पेखनहार औ पेखनियाँ॥४॥

६७४. लाल कवि (४)

(भाषा-राजनीति)

दोहा—मंत्र सु मैथुन औषधी, दान मान अपमान।
गृह-संपति अरु छिद्र ये, प्रगट न लाल बखान॥१॥
नृत्य-गीत अरु पढ़त में, सभा, जुद्ध, ससुरारि।
लाल अहार बिवहार में, लज्जा आठ नेवारि॥२॥
षोड़स बरस विवाह करि, द्वादस गृह बिसराम।
बरस चतुर्दस बास बन, राज करत पुनि राम॥३॥
बावन जुग की बात है, लाल अवधविस्तार।
तेरह त्रेता है गये, भये राम अवतार॥४॥
बुधि जाके बल ताहि के, निर्बुधि के बल कौन।
ससँक हन्यो निज बुद्धि ते, सिंह महाबल जौन*॥५॥
जो उपाय ते होत है, बल ते क्यों कहि जात।
कनकसूत ते साँप को, कवई कियो निपात†॥६॥
बसै बुराई जासु उर, ताही को सनमान।
भलो भलो कहि त्यागिये, खोटे ग्रह जप दान॥७॥

६७५. लालगिरिधर बैसवारे के

पद

नवलै आली सँग लै चली।
चली लै पतियाय बतियन जहाँ रति की थली।
धरत जहँ पग परत तहँ मृदु पाँवड़े मखमली॥
गौनहाई चूनरी बिच गौनहाई लली।
मनो पावकलपट में छवि देत कुंदन डली॥

१ देखने की। २ पलकहीन। ३ खरगोश। * व † हितोपदेश में कथाएँ हैं

कहूँ अँगड़ति अड़ति कतहूँ चलत है वै गली ।
लिए जात मतंग को मानो महावत चली ॥
हेरि आवत भावती हरि-दृष्टि नेकु न हली ।
लालगिरिधर मनहुँ रति की वेलि फूली-फली ॥

६७६. लालमुकुंद

कनकाचल कंदर अंदर लौं निरवात सिंगारलता लटकी ।
तियरोमावली किधौं संकर है लखि बाल भुजंगिनि ह्वै ठटकी ॥
भनि लालमुकुंद किधौं चकवा ताकि मीर सिकार लगी पटकी ।
किधौं मैन मतंग जक्यो थकि तुंग जँजीर अरीन परी अटकी॥१॥

६७७. लालचंद कवि

अजब पखेरू एक हाड़ है न चाम जाके आप उड़ि जाइ पर पंख ना दिखात हैं । ताके वार बीनि बीनि बसन बनावैं लोग ओढ़त न मैले दिव्य रोज ही दिखात हैं ॥ जप तप जोग वारे षटरस भोगवारे लालचन्द ओढ़ि ओढ़ि हिये हरषात हैं । सुर मुनि ईसन को पंडित कवीसन को मंत्र सबको है यहै वाको मास खात हैं ॥ १ ॥

कुंडलिया—पसरै बीता एक लौं सिकुरि हाथ भरि जाय ।
जियै आयुबल और की, कछू न पीवै खाय ॥
कछू न पीवै-खाय जीव बिन दुर्लभ नाहीं ।
देखो विमल विचारि देखिये सब जग माहीं ॥
लालचंद लखि परै नहीं कवितन की कसरै ।
कर में देखो खोजि होत का सिकुरे पसरै ॥ २ ॥

६७८. लोने (१) लोनेसिंह मितौलीवाले

(भागवत भाषा)

लाल री वाजत भूरि मृदंग छुटै बहु रंग भयो नभ लाल री ।

१ गुफा । २ जहाँ हवा नहीं चलती ।

लाजरी गुंजन की उर माल अबीर भस्यो भरि झोरिन साल री॥
साल री होत विलोके बिना नँदनंदन आजु रचो ब्रज ख्याल री।
ख्याल री लोने कहा बरनै मनमोहन नाचत दै करताल री॥ १॥

६७९. लोने कवि (२)

मोरे मोरे मंजुतर मंजरीन मिलि आली गंधगुनमयी मंद मारुत झकोरे लेत। नवलकिसोर लोने कंपजुत लतिकान लम्पट निपट रस आनँद अथोरे लेत॥ गरल[2] की गाँठ से गँठे से ये कठे से ठसे फिरत अयान मान गाँठ गहि छोरे लेत। काम के से चर ऋतुराज के से सहचर चचर करत चंचरीक[3] चित चोरे लेत॥ १॥ कारे झपकारे रतनारे अनियारे सोहैं सहज ठरारे मनमथ मतवारे हैं। लाज भरि भारे भारे चपल अन्यारे तासे साँचे के से ढारे प्यारे रूप के उज्यारे हैं॥ आधी चितवनि ही में किये तैं अधीन हरि टोने से वसीकर की लोने परिहारे हैं। कमल कुरंग मीन खंजन भँवर बृषभानु की कुँवरि तेरे दृगन पै वारे हैं॥ २॥

६८०. लक्ष्मणदास

पद

रामकृष्ण वासुदेव दामोदर दीनबंधु दयासिन्धु करुनानिधि मोहन बनवारी। मधुसूदन मुरलीधर माधव जगजीवन प्रभु कमलनयन राधापति गोविंद गिरिधारी॥ अच्युत गोपाल कान्ह चिंतामनि चक्रपानि विट्ठल भगवन्त विष्णु केसव कंसारी। नामै सब सुखविलास लछमन दासानुदास अज्ञ अल्पबुद्धि चरन सरन परि पुकारी॥ १॥

६८१. लक्ष्मणसिंह कवि

मुस्की महरोर मौर महुवर मटौहा मोती लखौरी लाखी लाल लालो लहरदारो है। पँचरंग पीलग पिलंग मुखपट्ट नौवहर

१ घुँघची। २ विष। ३ भ्रमर।

बिहार बदामी पीत तारो है ॥ तोलिया तिलकदर तुरकी दरियाई टोप अबलख अबस्या अबरान कुलवारो है । जारद जरद नुकरा नागारनि सून धूम लछमनसिंह छत्तिस तुरंग रंग न्यारो है ॥ १॥

६८२. लीलाधर कवि

जानि तौ परैगी जब काहू की परैगी दीठि रहि जैहै द्वारन को खोलिबो औ ढाँकिबो । लीलाधर कहै कापै परैगे तिहारे दृग भलो ना समुझि लोकलीकन को नाकिबो ॥ तूरन में ताप ह्र है पूरन सो पाय ब्रज चूरन हजारन को रहि जैहै फाँकिबो । सोकन करैगो तन पोपन मिटैगो सब दोपन को मूल है झरोखन को झाँकिबो ॥ १ ॥ तारे तुम कैयक उबारे काज बैठो अब भारे भुवभार के उतारे जब कैहौं मैं । लीलाधर हेरैं गुर रहियो चितैरे भूलि परियो न भोरै गीध गनिका गनैहौं मैं ॥ कहौं कहा बारबार दीनन के यार ये अपार पारावार जाके पार जब जैहौं मैं। खगपति वाहवारे जगत निवाहवारे चारि बाँहवारे वाहवा रे तव कैहौं मैं ॥ २ ॥ दसन की चंड चोट असिन दुटूक करैं दलित अदल अरिदल दगाबाज हैं। दीह दरखत जरमूर ते उखारिबे को स्रवनपवन गहे अलख इलाज हैं ॥ जिनके दरस दिगदंती मद बिन होत लीलाधर कवि सुरदंती सिरताज हैं । अगड़ी अडंवर हैं जंगी अनखंगी पारवारपूर संग संगजी के गजराज हैं ॥ ३ ॥

६८३. लच्छू कवि

केकी कि कूक पिकी की पुकार चहूँ दिसि दादुर दुन्दि मचायो ।
भूमि हरी चमकैं चपला अरु स्याम घटा जुरि अंबर छायो ॥
ऐसे में आवन होइ लछू अबला लखि लाल सँदेस पठायो ।
पावन को पग भो बिरहा सु अहो मनभावन सावन आयो ॥ १ ॥

६८४. लछिराम कवि, ढोलपुर के
(शिवसरोज)

एकै पग सोहत विभूति सिव आभरन एकै पग जेवदार जावक भरे रहैं। एकै अंग सोहत सुकवि लछिराम कहै एकै अंग चर्म एकै बसन गरे रहैं॥ एकै नैन लाल लाल ज्वाल सों सदैव रहैं एकै नैन उज्ज्वल सों कज्जल करे रहैं। एकै कर गौरि के सु कटितट करे एकै सिवसिंह सेंगर के सिर पै धरे हैं॥ १॥
नित सासु कहै सिसुता सों भरी ननँदी रिसही सोऊ झेलती हैं।
चल चाल हैं वार भरे रज सों सिर पै उपरैनी न मेलती हैं॥
लछिराम कहै यह वैस भली पै अली कछु द्यौस में वेलती हैं।
वह वाल सों वालन के गन में मिलि लालन के सँग खेलती हैं॥ २॥
आनन ओप की चोप लखे मुसकानि में आनि सुधा बरसै लगी।
छूटि गई वह सूधी चितौनि सो नैनन तीच्छनता सरसै लगी॥
द्वै परिखेप के मध्य में चारु उरोजन की गुरुता दरसै लगी।
वारन वार लटी कटि ह्वै लछिराम कहै वे छवा परसै लगी॥ ३॥
है अचलै मचलै न चलै सखि लीन्ही छलै मेहँदी लुनै जाल की।
आयो अलेते कुलै न पलै परै होत फलै मिलै सिद्धि सी लाल की॥
देखत ही धरी पाइ कै धाइ कही नहीं जाइ कथा तेहि हाल की।
ज्यों हरिनी परनी अहै जाल की त्यों गति आजु भई वहि वाल की॥ ४॥
है नहीं अंत रमै तुमसों मैं निरंतर भेद कह्यो सब जी को।
कारज कौन करै इत को उतै जाइ लै आइयो मोहन पी को॥
क्यों न तुम्हैं उचितै लछिराम सु मारग में दुति होत है फीको।
जो हमको अति लागत नीको सोई तुम को अति लागत नीको॥ ५॥
लाज कहै यह काम कि काम है काम कहै यह लाज निगोड़ी।
काम कहै करु नाम के कारज लाजु कहै गहै मोहिं न छोड़ी॥

यों दुविधान विधान के बीच में मोहिं लगाइ लई इन होड़ी।
है कनकातुल बाल को अंग घटै न बढ़ै सम राखत जोड़ी ॥ ६ ॥

९८५. लेखराज कवि, नंदकिशोर मिश्र, गँधौलीवाले

(रसरत्नाकर)

सनसन डोलै पौन सनसन सूख्यो सन सनसन अंग दुख सन होत हरघरी । वनवन वीनि लीन्हो वनवन व्यौरि व्यौरि वनत न वरनत क्यों हूँ उर धरधरी ॥ लेखराज ऊखऊ पियूप सों विसेस सेस राखि नाहिं अनिमेस देखि देखि करवरी । अव हरवरी सरवरी मिलैं कैसे कंत आर हरी अरहरी अरहरी अरहरी ॥ १ ॥
राति रतिरंग पिय संग सों उमंग भरि उरज उतंग अंग अंग जंवूनद के । ललकि ललकि लपटाय लाय लाय प्रेम वलकि वलकि वोल वोलत उलद के ॥ लेखराज लाख लाख अभिलाख पूरे किये लोयन लखात लखि सूखे सुख खद के । दोऊ हद रद के सु देत छद रद के विवस मैनमद के कहै मैं गई सदके ॥ २ ॥

(लघुभूषण अलंकार)

वरवै

लेस गुनौ गुन अवगुन गुन जेहि ठौर ।
नैन राग ना रुचि कुचि सुचि सुकठौर ॥ १ ॥
नैन कंज सकटाच्छन नहिं मकरन्द ।
स्याम स्वेत अरुनारे करत अनंद ॥ २ ॥
साँचे कमल से नैना निसिदिन फूल ।
विना नाल के लोने स्रुतिहि दुकूल ॥ ३ ॥
लेत गंगजल मुंडन खग तस हेत ।
राजत गोदी संकर जन सुख देत ॥ ४ ॥

(गंगाभूषण)

अंग अंग सोभा की तरंग है सुरंग रंग धीर है उतंग संग राजत

महेस के। वंक कर चलत दलत दुख सक्र आदि चक्र से भ्रमत भौंर ठौर एक देस के ॥ एक रद धारे हैं विदारे हैं विघनवृन्द जन-सुखकन्द फन्द फारे महिषेस के।लेखराज केस छोरि वेस दीनता ते पेस वंदत हमेस पद गंगा औ गनेस के ॥ १ ॥

६८६. लालनदास ब्राह्मण, डलमऊवाले

दोहा—दाल्‌भ्य ऋषि की दलमऊ, सुरसरि तीर निवास।
तहाँ दास लालन वसे, करि अकास की आस ॥ १ ॥

छंद

छल करी सुरेस नारि गौतम सों दीन्ही साप सहसरेखै।
श्रीपति घाटि कियो विन्दा सों गे बौराय त्रिविध पेखै ॥
रावन हरी जगतमाता कों ताके कुल न रहै रेखै।
यह लालन कहत पुकारि घाटि जिन किया न होइ सो करि देखै॥१॥

६८७. लछिराम व्रजवासी

पद

छवीले लाल छवि तेरी मोहिं नीकी लागति है होतन मन जी वारो रे।
भोर भये आये मेरे अँगना हौं पलकन सों पग झारों रे॥
सुख दीजै रसलीजै रैनि को हौं चित ते नेक न टारो रे।
कृष्णजीवन लछिराम के प्रभु सँग नव सत सिङ्गारो रे ॥ १ ॥

६८८. लोधे कवि

कान्ह अचानक आइ गये चितये विन घूँघुट कैसे कै कीजै।
तौ कहती हम सों कछु वे इन वातन ऊपर क्यों करि जीजै॥
लोधे कहैं हम आपुन वैसिये भावै जहाँ सो तहाँ कहि दीजै।
ढोटा पराये को नाम न छाड़हु मोहिं सों जीभ बड़ी करि लीजै॥१॥

६८९. लोकनाथ कवि

बनबने बानिक मो बरन बरन फूले लोकनाथ ललित लतान छवि छाई है। मंजु मंजु मंजरीन गुंजत मधुपपुंज कुंजन में कोकिला की कूकनि सुहाई है॥ होरी होरी करत किसोरी दौरी खोरी खोरी गोरी चल तहाँ बलि बलि सुखदाई है। लटकि लटकि कान्ह बाँसुरी बजावत हैं एरी चलि देखिये बसंत ऋतु आई है॥१॥

६९०. लाल (५), लल्लूजी कवि आगरे के

(सभाविलास)

दोहा—भाव सरस समुझत सबै, भलें लगैं यहि भाइ।
जैसे अवसर की कही, बानी सुनत सुहाइ॥ १॥
नीकी पै फीकी लगै, बिन अवसर की बात।
जैसे बरनत जुद्ध में, रस सिंगार न सुहात॥ २॥
फीकी पै नीकी लगै, कहिये समय विचारि।
सबके मन हरखित करै, ज्यों वियाह में गारि॥ ३॥

६९१. लतीफ़ कवि

चंद सों आगरी है मुख जोति बड़े अति नैन समासम[2] दोऊ।
घूँदत हाथ में आवत नाहिंन कैसे कै जाय छिपै कहौ कोऊ॥
मावस रैनि की पूनो करै कल थोरक सो मुख खोलत सोऊ।
देखि लतीफ यहै ब्रजवाल सु आवत री यह खेल के खोऊ॥ १॥
सब रैनि जगी हरि के सँग राधिका बासर[3] बास[4] उतारति है।
अतिआलसवन्त जम्हाति तिया अँगिराति भुजान पसारति है॥
सरकी अँगिया जु हरे रँग की सु लतीफ महा छवि पारति है।
मनु है जो पुरैनि[5] के पातन में उरझ्यो चकवा तेहि टारति है॥२॥

१ गली-गली। २ सम-विषम। ३ दिन। ४ वस्त्र। ५ कमल।

६६२. लाला पाठक कवि

(शालिहोत्र)

दोहा—सुमिरि राम के जलजपद, विधि बंदौं कर जोरि ।
दीरघ पच्छ तुम्हार प्रभु, अल्प बुद्धि अति मोरि ॥ १ ॥

६६३. लक्ष्मणशरणदास

पद

श्रीवल्लभ पुरुषोत्तमरूप ।
सुन्दर नयन विसाल कमलरँग मुख मृदु बोल अनूप ।
कोटि मदन वारौं अँगअँगपर भुज मृनाल अति सरस सरूप ॥
देवीजी वड़धारन प्रगटी दास सरन लछिमनसुत भूप ॥ १ ॥

६६४. लाल साहब, महाराज त्रिलोकीनाथसिंह, द्विजदेव, महाराज मानसिंह बहादुर के भतीजे और जाँनशीन, भुवनेश कवि

(भुवनेशभूषणग्रन्थ)

भुवनेस गुलाब से गातन पै नित नैनन ते जल सों झरि हैं ।
चके चित्त चकोरन हू चुगि कै विरहानल ज्वाल सबै हरि हैं ॥
घनस्याम प्रवास[१] चले तो चलो सिख यों हम लै चित में धरि हैं ।
करि है छल जो पै मनोज अहो तो कहो हम कौन दवा करि हैं ॥ १ ॥
समता भ्रमता में परी ही रहैं अवलोकि छटा उन नैनन की ।
सरसात ससी दुति सुन्दरता लहि हैं छवि लाजि सरोजन की ॥
भुवनेस सबै विधि ये तो सुरंग कुरंग[२] गहै सरि क्यों इनकी ।
इन पानिप को लहि मीनहु के गन आस करैं निज जीवन[३] की ॥ २ ॥

आये नहिं कंत होन चाहै रजनी को अंत सोवति सयानी चंद मन्दहि पिछानि कै । उससि उसांसु आँसु मोचि[४] सोचि लोचन ते ती तन में छाये दुख दीरघ मसानि कै ॥ सकुचि सहेलिन सों सोई भुवनेस इमि ढाँपि लीन्हो अंग अंग सारी सुभ्र[५] तानिकै ।

---

१ परदेश । २ मृग । ३ जल और ज़िंदगी । ४ छोड़कर । ५ सफ़ेद ।

मानो करि हीर कोक कीर मृग इन्दु अहि बाँधि राख्यो जालदार पींजरे में आनि कै ॥ ३ ॥

६९५. वाहिद कवि

सुन्दर सुजान पर मन्द मुसकान पर बाँसुरी की तान पर ठौरहि ठगी रहै । मूरति बिसाल पर कञ्चन की माल पर खंजन सी चाल पर खौरन खगी रहै ॥ भौंहैं धनु-मैन पर लोने जुग नैन पर सुद्ध रस बैन पर वाहिद पगी रहै । चञ्चल से तन पर साँवरे बदन पर नन्द के नँदन पर लगन लगी रहै ॥ १ ॥

६९६. श्रीपति कवि, पयागपुरनिवासी

जलभरे घूमैं मनो भू मैं परसत आइ दसहू दिसान घूमैं दामिनि लये लये । धूरिधारधूसरित धूमसे धुधारे कारे धारे धुरवान धावैं छबि सों छये छये ॥ श्रीपति सुजान कहै घरी घरी घहरात तावत अतन तन ताप सों तये तये । लाल बिन कैसे लाज चादर रहैगी अब कादर करत मोहिं बादर नये नये ॥ १ ॥ मदमई कोयल मगन है करत कूकैं जलमई मही पग परते न मग में । बिज्जु नाचै घन में बिरह हिय बीच नाचै मीचु नाचै ब्रज में मयूर नाचैं नग में ॥ श्रीपति सुकबि कहै सावन सुहावन में आवन पथिक लागे आनँद भो अँग में । देह छायो मदन अछेह तम[1] छिति छायो मेह छायो गगन सनेह छायो जग में ॥ २ ॥

(काव्यसरोज)

फूलन के मग में परत पग डगमगै मानो सुकुमारता की बेलि बिधि बई है । गोरे गरे बसत लसत पीक-लीक नीकी मुख-ओप पूरन छपेस[2] छबि छई है ॥ उन्नत उरोज औ नितम्बभार श्रीपतिजू टूटि जानि परै लंक[3] संक चित भई है । या ते रोममाल मिस मरग छरी दै त्रिबली की डोरि गाँठि काम बागवान दई

---

१ अभेद्य अंधकार । २ चंद्रमा । ३ कमर ।

है ॥ ३ ॥ कामिनी सदन गजगामिनी विलोकि आई दा[1]-
मिनी न पाई गो गुराई गोरे गात सी । विधु मानसर ते सरद
ससि कर तर सेस के मुकुर ते अधिक अवदात सी ॥ श्रीपति
सुजान परखत हरखत मन नैन को सितासित सरोज नव
वात सी । जाही हारि जात सी जुही बिदारि जात सी विकास
खारिजात सी सुवास पारिजात सी ॥ ४ ॥ रारि जात अलि कीने
वारिन की आरि जात लागि जात सहज बयारि जाके तन की ।
श्रीपति सुजान जाही-जूथिका[2] बिदारि जात महिमा बिगारि जात
पारिजात-बन की ॥ झारि जात मालती गुलाब मद मारि जात
सौरभ उतारि जात केतकी सघन की । वारि जात तगर अगर धूप
हारि जात राह पारिजात पारिजात के सुमन की ॥ ५ ॥ वारि
जात पारिजात पारिजात हारि जात मालती बिदारि जात सोंधेन
की झरी सी । माखन सी मैन सी मुरार मखमल सम कोमल सरस
तरु फूलन की छरी सी ॥ गहगही गरुई गुराई गोरी गोरे गात
श्रीपति बिलौर-सीसी ईंगुर सों भरी सी । बिज्जु थिर धरी सी
कनकरेख करी सी प्रवाल दुति हरी सी ललित लाल-लरी सी॥ ६ ॥
गोरी महा भोरी तेरे गात की गुराई देखि दिन दिन दामिनी की
छाती होत धुँधा सी । श्रीपति कमल की कसानी मखमल की बद-
खसानी लाल की ललाई लागै मुँधा सी ॥ मोम निंदरत सोमकर
को हरत जोम रोमरोम छुरत छपायेन की छुधा सी । सुखमा को
ऐनमई हीतलको चैनमई पी-मन को मैनमई नैनन को सुधा सी॥७॥
एहो ब्रजराज एक कौतुक बिलोकौ आज भानु के उदै में वृषभानु
के महल पर । बिन जलधर बिन पावस गगन धुनि चपला चमंकै
चारु घनसार थल पर ॥ श्रीपति सुजान मन मोहत मुनीसन के

---

१ बिजली । २ जाही जूही के फूल । ३ धकधकं । ४ व्यर्थ ।

सो। गौरी सो गिरा सो गजवदन गदाधर सो गंगा सो गऊ सो गंगधारा सो गधूल सो॥ १७॥

६६७. सरदार कवि बनारसी
(साहित्यसरसी)

संग की सहेली रहीं पूजत अकेली सिवा तीर जमुना के वीर चमक चपाई है। हौं तौ आँई भागत डरत हियरा ते घेरे तेरे सोच करी मोहिं सोचित सवाई है॥ बचि हैं वियोगी जोगी जानि सरदार ऐसी कण्ठ ते कलित कूक कोकिल कढ़ाई है। बिपिनसमाज में दराज सी अवाज होत आज महाराज ऋतुराज की अवाई है॥ १॥

बैठति आपु खुसी खिरकी खनहू-खन हेरि हरा हलरावै।
जो सरदार बँधो सुक बाहिर ताहि पके फल खोलि खवावै॥
सासु पतिव्रत की चरचा चित दै चतुराइनि मोहिं सिखावै।
रोखभरी अँखियाँ करिकै ननदी किमि आपु झुकै झँपि जावै॥

राजकाजका में है न साजसाजका में मन्त्रतन्त्रलाजका में है न जन्त्रसाधिका में है। बेदकाँधिका में है न भेद बाधिका में सरदार नाधिका में नाहीं ध्यानलाधिका में है॥ बासआसिका में ना प्रकासपासिका में सदा हासरासिका में है न साँसबाधिका में है। ज्ञानधारिका में है न कामकारिका में है जो कान्ह द्वारिका में है, पै सदा राधिका में है॥ ३॥

वा दिन ते निकसो ना बेहेरि[1] कै जा दिन आगि[2] दै अंदर पैठो।
हाँकत हूँकत ताकत है मन मारवत मार-मरोर उमैठो॥
पीर सहौं न कहौं तुम सों सरदार बिचारत चार कुटैठो।

१ बन। २ फिर।

ना कुच कंचुकी छोरी लला कुच कन्दर अन्दर बन्दर बैठो ॥ ४ ॥
वे थिर की बतियाँ कहि कै थिर जे थिरकी कहि वे थिर की हैं।
वे खिरकी खिरकीन बतावत कै खिरकी खिरकी खिरकी हैं ॥
ये सरदार सुनैं सबरी नवरी नवरी नवरी टरकी हैं।
वे घर की घर की न बिचारत ये परकी परकी परकी हैं ॥ ५ ॥

(रसिकप्रिया-तिलक)

दोहा—बास ललितपुर नन्द है, हरिजन को सरदार।
बन्दीजन रघुनाथ को, पालत पवनकुमार ॥ १ ॥

छप्पै

सरस सुजस-ससि उदित होइ दिनरैनि प्रकासित।
मारतंण्ड उद्दंड तेज ब्रह्मण्ड बिलासित ॥
पंचदेव परिपूर क्रिया दृगकोर निहारे।
दुसमन दावादार पाँइ पर सीस सुधारे ॥
सरदार सुच्छ अतलच्छ गृह अच्छ अच्छ क्रीड़ा करो।
पुत्रन समेत ईस्वर नृपति सीस विप्र आसिष धरो ॥ १ ॥

६६८. सूरदासजी

(सूरसागर)

पद

देखे री मैं प्रकट द्वादस मीन।
षट इन्दु द्वादस तरनि सोभित बिम्ब उडुगन तीन ॥
दस-अष्ट अम्बुज कीर षटमुख कोकिला सुर एक।
दस द्वै जु विद्रुम दामिनी षट व्याल तीनि बिसेक ॥
त्रिवलि पर श्रीफल विराजत उर परस्पर नारि।
ब्रजकुँवरि गिरिधरकुँवर पर सूर जन बलिहारि ॥ १ ॥

---

१ परकीया। २ सूर्य। ३ नक्षत्र। ४ मूँगा।

(सूरविनय)

आप को आपनही बिसरो ।
जैसे स्वान[1] काँच के मंदिर भ्रमि-भ्रमि भूकि मरो ॥
ज्यों केहरि प्रतिमा के देखत बरबस कूप परो ।
तैसे ही गज फटिकासिला सों दसननि आनि करो ॥
मरकट[2] मूठि छोड़ि नहिं दीन्ही घर घर द्वार फिरो ।
सूरदास नलिनी के सुवना कहु कौने पकरो ॥ २ ॥

दोहा—सुंदर पद कवि गंग के, उपमा को बरबीर ।
केसव अर्थगँभीर को, सूर तीनि गुन तीर ॥ १ ॥
तन समुद्रसम सूर को, सीप भये चख लाल ।
हरि मुकुताहल परत ही, मूँदि गयो ततकाल ॥ २ ॥

६९९. सन्तदास ब्रजवासी

पद

माई कौन गोप के ये दोउ नागर ढोटा ।
इनकी बात कहौं सखि तोसों गुनन बड़े देखन को छोटा ॥
अग्रज[3] अनुज[4] सहोदर जोरी गौर स्याम ग्रंथित सिर चोटा ।
संतदास बलि बलि मूरति पर लला ललित सबही विधि मोटा ॥ १ ॥

७००. श्रीधर कवि (१)

श्रीधर भावते प्यारी प्रवीन के रंगरँगे रति साजन लागे ।
अंग अनंग-तरंगन सों सब आपने आपने काजन लागे ।
किंकिनि पायल पैंजनियाँ बिछिया घुँघुरू घन गाजन लागे ॥
मानो मनोज महीपति के दरबार मरातिब[5] बाजन लागे ॥ १ ॥

७०१. श्रीधर (२) राजा सुब्बासिंह, ओयल के

(विद्वन्मोदतरंगिणी)

कारन भाव को भाव को रूप नवौ रस पूरन कै दरसायो ।

---

१ कुत्ता । २ बंदर । ३ बड़ा भाई । ४ छोटा भाई । ५ नौबत ।

नाइका दूती रसौ मिलि तातु इन्हैं करि न्यारोई भेद बनायो ॥
जन्य पिता अवरोध विरोध औ दृष्टि सबै रसाभास जनायो ।
विद्वनमोदतरंगिनि श्रीधर आनँदखानि बखानि बनायो ॥ १ ॥
जा मुखकी दुति दीप ते सौगुनी दामिनी कुंदन केसरि आइका ।
काम की खानि सदा मृदु बानि सनेह छकी छिति में छविछाइका ॥
अंग अनूपम को बरनै सब अंगन प्रीतम को सुखदाइका ।
मानो रची विधि मूरति मोहनी श्रीधर ऐसी सराहत नाइका ॥२॥

७०२. श्रीधर मुरलीधर कवि (३)
(कविविनोद पिंगल)

दोहा—श्रीधरमुरलीधर सुकवि, मानि महा मन मोद ।
कवि विनोदमय यह कियो, उत्तम छंदविनोद ॥ १ ॥
श्रीधरमुरलीधर कियो, निज मति के अनुमान ।
कविविनोद पिंगल सुखद, रसिकन के मन मान ॥ २ ॥

७०३. सूदन कवि

दंतिन[1] सों दिग्गज दुरंदर दबाइ दीन्हे दीपति दराज चारु चंदन के नद हैं । सुंडन झपट्टि कै उलट्टत उदग्ग गिरि पट्टत समुद्दवल किम्मति विहद हैं ॥ सूदन भनत सिंह-सूरज तिहारे द्वार झूमत रहत सदा ऐसे बझकद्द हैं । रद्द करि कज्जल जलद[2] से समद्दरूप सोहत दुरद जे परदलदलद[3] हैं ॥ १ ॥ एकै-एक सरस अनेक जे निहारे तन भारे लाल भारे स्याम कामप्रतिपाल के । चंग लौं उड़ायो जिन दिल्ली को वजीर भीर मारि बहु मीरन को किये हैं विहालके ॥ सिंह बदनेस के सपूत यों सुजानसिंह सिंह लौं झपटि नख कीन्हे किरवाल के । वेई पठनेटे मेलि साँगन खखेटे भूरि धूरि सों लपेटे लेटे भेटे महा-काल के ॥ २ ॥ सेलन धकेला ते पठानमुख

---

१ हाथी । २ बादल । ३ शत्रुदलके दलनेवाले ।

मैला होत केते भट मेला ह्वै भजाये भुव भंग में। तंग के कसे ते तुरकानी सब तंग कीन्ही दंग कीन्ही दिली औ दुहाई देत बंग में॥ सूदन सराहत सुजान किरवाने गहि धायो धीर धारि बीरताई की उमंग में। दक्खिनी पछेला करि खेला तैं अजब खेल हेला करि गंग में रुहेला मारे जंग में॥ ३ ॥

७०४. सेन पति कवि, वृन्दावनवासी

(काव्यकल्पद्रुम)

दूरि जदुराई सेनापति सुखदाई ऋतु पावस की आई न पठाई प्रेम पतियाँ। धीर जलधर[1] की सुनत धुनि धरकी सो दरकी सुहागिनि की छोहभरी छतियाँ॥ आई सुधि बर की हिये में आइ खरकी सुमिरि प्रानप्यारी वह प्रीतम की बतियाँ। भूली औधि आवन की लाल मनभावन की डग भई बावन की सावन की रतियाँ॥ १ ॥ गोरस न साधे राखै बरन विवेक ही सों पद को भरोसो राखै काम करै तीर को। निसा पाइ नीक ही प्रबंध करै नेम ही सों दोहा करि कृति को बखानै बलबीर को॥ पत्र लै कै प्रगट करै है पृथु पालना को सेनापति सुकवि विचारै मतिधीर को। कीन्हों है कवित्त कविराज महाराजन को ऋषि को कहत कोऊ कहत अहीर को॥ २ ॥ फूलन सों बाल की बनाय गुही बेनी लाल भाल दीन्ही बेंदी मृगमद की असित है। अंग अंग भूषन बनाये ब्रजभूषनजू बीरी निज कर सों खवाई करि हित है॥ ह्वै कै रसबस जब दीबे को महाउर के सेनापति स्याम गह्यो चरन ललित है। चूमि हाथ लाल को लगाय रही आँखिन सों एहो प्रानप्यारे यह अतिअनुचित है॥ ३ ॥ धातु सिला दारु निरधारु प्रतिमा को सारु सो न करतारु है विचारु बीच गेह रे। राखि

---

१ बादल।

दीठि अंतर जहाँ न कछु अंतर है जीभ को निरंतर जपावत हरे हरे॥अंजन बिमल सेनापति मनरंजन दै जपिकै निरंजन परम पद लेह रे। करि न सदेह रे वही है मन देहरे कहा है बीच देहरे कहा है बीचदेंह रे॥५॥

७०५. सूरति मिश्र आगरानिवासी

खरी होहु ग्वालिनि, कहा जु हमैं खोटी देखी, सुनौ नेकु बैन, सो तौ और ठाउँ जाइये। दीजै हमै दान, सो तौ आजु ना परव कछू, गोरस दे, सो रस हमारे कहा पाइये॥ मही दीजै दीजै, सो तौ देहै महि-पति कोऊ, दही दीजै, दहे हौ तौ सीरो कछू खाइये। सूरति सुकवि ऐसे सुनि हरि रीझे लाल लीन्ही उर लाय सोभा कहाँ लगि गाइये ॥ १ ॥

(अलंकारमाला)

दोहा—तड़ि घन वपु घन तड़ि वसन, भाल लाल पख मोर।
ब्रजजीवन मूरति सुभग, जय जय जुगलकिसोर॥ १ ॥
सूरति मिस्र कनौजिया, नगर आगरे बास।
रच्यो ग्रंथ नव भूषनन, वलित विवेकबिलास॥
संवत सत्रह सै बरस, छाँसठि सावन मास।
सुरगुरु सुदि एकादसी, कीन्हो ग्रन्थ प्रकास॥ २ ॥

७०६. श्रीधर कवि (४)

(भवानी छंद)

छप्पै

नारायन नर अमर बीर बिसहुर थिर थाप्यो।
विविध दीर्घ पर दान सक्ति सासन सचि आप्यो॥
जय जयकार जगत्ति उदय उच्चरी अगोचरि।
सब्द पंच पच्छंदि धवल मंगल सचराचरि।

---

१ भीतर। २ फ़र्क़। ३ लगातार। ४ तरह-तरह के।

आनदरूप अविगति हवी सोःय सून्य मंडल धनी ॥
साधीरवंस श्रेष्टसुरथ मार्कंडेमुनि वर्ननी ॥ १ ॥

७०७. सुखदेव (३)

प्रान दिलीपति केरे लिये दिये भालन पारु दई अरिजालहि ।
दारिद दीन्हो सबै द्विजलोगन निर्भयदान दियो कलिकालहि ॥
अंतरवेद को देह दई दतिया को वियोग दियो तिहि कालहि ।
राज दियो भगवंत महीप को माथ दियो अपनो हरमालहि ॥ १ ॥
भानु प्रभा बिन जैसे सरोज सरोज बिना गति ज्यों सरसी की ।
ज्यों रजनीस बिना निसि को रजनीस बिना निसि लागत फीकी ॥
ज्यौं हरा ज्यों बिन देव हरा बिन ज्यों छतिया औ तिया बिन पी की ।
त्यों भुवकंत बिना भगवंत लगै सब अंतरवेद न नीकी ॥ २ ॥

७०८. सुखदेव मिश्र (२) दौलतपुरवाले

मीन की बिछुरता कठोरताई कच्छप की हिये घाय करिबे को कोल ते उदार हैं । बिरह बिदारिबे को बली नरसिंहजू सों बामन सों बली बलदाऊ अनुहार हैं ॥ द्विज सों अजीत बलबीर बलदेव ही सों राम सों दयाल सुखदेव या बिचार हैं । मौनता में बौध कामकला में कलंकी चाल प्यारी के उरोज ओज दसौ अवतार हैं ॥ १ ॥ मंदर महेंद्र गंधमादन हिमालै सम जिन्हैं चल जानिये अचल अनुमान ते । भारे कजरारे तैसे दीरघ दँतारे मेघमंडल बिहंडैं जे वै सुंडादंड ताने ते ॥ कीरति बिसाल छितिपाल श्रीअनूप तेरे दान जो अमान का पै बनत बखाने ते । इतै कविमुख जस-आखर खुलत उतै पाखर-समेत पील खुलैं पीलखाने ते ॥ २ ॥

(रसार्णव)

लरिकाई के खेल छुटे न बनाइ अजौं न मनोज के बान लगे ।

---

१ तालाब । २ चंद्रमा । ३ मंदिर ।

तरुनांपन आयो नहीं सजनी तरुनीन के बैन सुहान लगे ॥
हरि को हैं कहाँ के हैं कौन के हैं ये बखान कछूक हितान लगे ।
अब तो तिरछे चलि जान लगे दृग कान लगे ललचान लगे ॥१॥

दोहा—कानन ढूँढ़ें विघन के, जानन के यह ज्ञान ।
कज आनन की जाति मिटि, गजआनन के ध्यान ॥ १ ॥
मरदनराउ-निदेस को, सादर सीस चढ़ाय ।
मिस्र सुकवि सुखदेव ने, दीन्हो ग्रंथ बनाय ॥ २ ॥

७०६. श्रीसुखदेव मिश्र (१) कंपिलावासी

(वृत्तविचार पिंगल)

छप्पै

रजत-खंभ पर मनहुँ कनक जंजीर विराजति ।
विसद सरद-घन मध्य मनहुँ छनदुति-छवि छाजति ॥
मानहुँ कुंद कदंब मिलित चंपक प्रसून-तति ।
मनहुँ मध्य घनसार लसति कुंकुम लकीर अति ॥
हिमगिरिपर मानहुँ रविकिरन इमि तियवर अरधंग महँ ।
सुखदेव सदासिव मुदित मन हिम्मतिसिंह नरिंद कहँ ॥१॥

(फ़ाजिलअलीप्रकाश)

त्रिभंगी छंद

जय जय गननायक सिद्धि विनायक बुद्धि विधायक भयहरनं ।
जय जय खलदाहन विघन-विगाहन मूपकवाहन जनसरनं ॥
जय जय गुनआगर सब सुखसागर अवनि उजागर दुवन दमो ।
जय जय जगवंदन कलिमलकन्दन गिरिजानन्दन नमो नमो ॥ १ ॥

दोहा—जेती पर पृथु रथ फिर्‌यो, जेती धरी फनीस ।
तेती जीती अवनि है, औरँगजेव दिलीस ॥ १ ॥

---

१ जवानी । २ चाँदी । ३ सुवर्ण । ४ उज्ज्वल । ५ विजली ।

दाता ज्ञाता सूरमा, सुमति इनाइतिखान ।
अति फ़ाजिल फ़ाजिलअली, तिन के भये सुजान ॥ २ ॥
रची कपिल मुनि कंपिला, बसत सुरसरी-तीर ।
निसि दिन जा में देखिये, कवि कोविद की भीर ॥ ३ ॥
अलहयार खाँ भुज बली, सुमति सूर-सिरताज ।
जिन्हैं दियो कविराज-पद, बड़े गरीबनेवाज ॥ ४ ॥

७१०. शिवसिंह प्राचीन (१)

हौं जमुना जल जात अचानक बानक सों नँदलाल ठई ।
तब दौरि धस्यो कर सों कर को उर लाइ लई जनु निद्धि पैई[1] ॥
सिवसिंह जहीं परस्यो कुच को तुतुराइ कह्यो अब छोड़ु दई ।
भुज ते निवुकाइ गुपाल के गाल में आँगुरी ग्वारि गड़ाइ गई ॥१॥

७११. शिवसिंह सेंगर काँथानिवासी, ग्रन्थ के कर्त्ता (२)

पियो जब सुधा तब पीवे को कहा है और लियो सिवनाम तब लेइबो कहा रह्यो । जान्यो निज रूप तब जानै को कहा है और त्याग्यो मन आसा तब त्यागिबो कहा रह्यो ॥ भनै सिवसिंह तुम मन में विचारि देखो पायो ज्ञान-धन तब पाइबो कहा रह्यो । भयो सिवभक्त तब ह्वैबे को कहा है और आयो मन हाथ तब आइबो कहा रह्यो ॥ १ ॥ महिष से मारे मगरूर महिपालन को बीज से रिपुन निरबीर भूमि कै दई । सुम्भ औ निसुंभ से सँहारि झारि म्लेच्छन के दिल्लीदल दलि दूनी दरविन लै लई ॥ प्रबल प्रचण्ड भुजदण्डन सों गहि खग्ग चण्ड मुण्ड खलन खलाइ खाक कै गई । रानी महारानी हिंद लन्दन की ईस्वरी तैं ईस्वरी समान मान हिंदुन की ह्वै गई ॥ २ ॥ सिंह से पछारे सिख स्याही सम पेसवान स्यार से सिराज भेड़ियान सी

---

[1] पाई ।

हबसभीर। चीता सम चीनी औ बराह से रुहेले हेले करी से वजीरी लोमरीन से पठान, मीर ॥ रोज से फिरोज ओज मौज हरि रूसिन की रीछ से तुरुक काक काबुली फरांस बीर। तेरे तेज तरनि तरुन को निहारि सकै साह कै वजीर कै मुसीर कै देबीर भीर ॥ ३ ॥ चीनी चापि डारे भूनि डारे भूटियान भट पीसि डारे पेसवा सिराज सैन संहरी। मीरखान मारि कै सिराइ दीन्हे सिक्खन को हरि कै रुहेलन सु हेलन पै हुंकरी ॥ पानी बिन कीन्हे हैं जपानी रुसी रोस हेरि हबसी हराये रूम साम हाम पै अरी। छाँहैं हिंदुवान की पनाहैं साहसाहन की जगनिरवाहैं बाहैं तेरी हिंदसंकरी ॥ ४ ॥ टीपू को टिमाक मीरखान को दिमाक तुरकान तुमतराक हाँक-धाँक है दरीन की। नाजिम निजामति सुजाइति सुजाइदौला हिम्मत हवस बीरताई बर्बरीन की ॥ सिक्खन की सेखी कारसाजी निज सेनन की रूसिन की रिस दगाबाजी दर्दरीन की। तेरे मारतंड तेज अखिल अनूप आगे आँब इसकंदरी न ताब बाबरीन की ॥ ५ ॥ खान खुरासान के खिलति पाय खूब खुस काबुल के कामदार कीरति कहा करैं। अरब इरानी तुहरानी इस्पहानी खानी तेरी महारानी सौंह भौंहनि चहा करैं ॥ रूम रूस तूस फिरँगाने औ सकल हूस तेरे धूमधाम के धमाकन सहा करैं। ना करे निबाह कहाँ हाँकरे पनाह कहाँ याते नरनाह सब हाजिर हहा करैं ॥ ६ ॥ कहकही काकली कलित कलकंठन की कंजकली कालिंदी कलोल कहलन में। सेंगर सुकवि ठंड लागती ठिठुरवारी ठाठ सब ठठे ठगि लेते टहलन में ॥ फहरैं फुहारे फबि रही सेज फूलन सों फेन सी फटिक चौतरा के

---

१ संपूर्ण। २ चमक। ३ एक देश। ४ कोकिला।

पहलन में। चाँदनी चमेली चम्पा चारु फूलबाग बीच बसिबे बटोही मालती के महलन में ॥ ७ ॥

७१२. शिव कवि (१) अरसेला वंदीजन, देवनहावाले

(रसिकविलास)

मंद मंद चलि कै अनंद नंदनंद पास अँगिया के वंद बार बार तरकत हैं। बतियाँ रसाल बर बाल हँसि हँसि कहै हीरा होत जात लाल पन्ना मरकत[1] हैं ॥ कहै सिव कवि ऐसे तकि कै तमासे तनि कौतुक सखीन के हिये सों सरकत हैं। जहाँ जहाँ मग माहिं पग देत तहाँ तहाँ रुचिर कुसुंभ के से कुंभ ढरकत हैं ॥ १ ॥

(अलंकारभूषण)

गोरी की हथोरी सिव कवि मेंहदी को बिंदु इंदुंती[2] को गन जा के आगे लगै फीको है। अँगुठा अनूप छाप मानों ससि आयो आप करकंज के मिलाप पात तजि ही को है ॥ आगे और आँगुरी अँगूठा नीलमनिजुत बैठो मनों चोप भरो चेंडुवा[3] अली को है। दबि कै छला सों कोमलाई सों ललाई दौरि जीतत चुनी को रंग छोर छिगुनी को है ॥ १ ॥

(पिंगल)

तोटक छंद

कटि देखि महा जु रही लटि है।
कुचभारन सों न परै छटि है ॥
त्रिवली मिसु[4] मैन कसी थटि है।
यह कुंदन की रसरी बटि है ॥ १ ॥

७१३. शिव कवि (२) भाट बिलग्रामी

(रसनिधि)

सापने में आयो सुख साँवरो सलोनो वह निज अंग आगे जो

---

१ नीलम। २ बीरबहूटी। ३ बच्चा। ४ बहाने।

अनंगहि लजायो है। मोहनी सी बातैं कहि कहि गहि गहि बाँह हँसि हँसि हरष हजार उपजायो है ॥ सिव कवि कहै मो पै कह्यो ना परत कछू बिरह दुसह दुख नेकु न भजायो है। जौं लगि हिये में मैं लगाऊँ री रसिकराउ तौं लगि बजरमारे गजर बजायो है ॥ १ ॥

७१४. शिव प्रसाद सितारेहिन्द बनारसी
(भूगोलहस्तामलक,इतिहासतिमिरनाशक)

केते भये जादव सगरसुत केते भये जात हू न जाने ज्यों तरैयाँ परभात की। बलि बेनु अंबरीप मानधाता पहलाद कहिये कहाँ लौं कथा रावन जजात की ॥ वेहू ना बचन पाये काल कौतुकी के हाथ भाँति भाँति सेना रची घने दुखघात की। चार चार दिना को चवाव सब कोऊ करौ अंत लुटि जैहै जैसे पूतरी बरात की॥१॥

दोहा—इत गुलाम इत अलतमस, इतहि महम्मदसाह।
इतहि सिकन्दर सारिखे, बहुतेरे नरनाह ॥ १ ॥
जे न समाये बाहुबल, अटक-कटक के बीच।
तीन हाथ धरती तरे, मीचु किये अब नीच ॥ २ ॥

७१५. शिवनाथ कवि
(रसरंजन)

नाचि नट नदी लोहू पिये घटघटी रन ऐसी अटपटी सिवनाथ सिरतेस की। कौन सिर आड़ी होति काहू सों न आड़ी होति काहू सों न आड़ी होति चौड़ी होति देस की ॥ झमकैं झिलिम सत्रु भाजैं दीप-दीपन के लचै छन माहँ मद गब्बर नरेस की। अरिन पै करि कोप काटत झिलिम टोप सुजस को कोस देति ओप जगतेस की ॥ १ ॥ आब छिरकाइ दे गुलाब कुंद केवरा में चंपक चमेली चोप चाँदनी निवारी में। जुही सोनजुही जाही

१ नक्षत्र। २ एक नदी।

चंदन कदंब अंब सेवती समेत वेला मालती पियारी में ॥ सिवनाथ बाग को बिलोकिबो न भावै हमैं कंत बिन आयो री बसंत फुलवारी में । भागि चलौ भीतर अनार कचनारन में आगि लगी बावरी गुलाला की कियारी में ॥ २ ॥

दोहा—त्रिबिध महामायामई, तीनि भेद परकास ।
स्वीया परकीया कही, पुरजोषिता बिलास ॥ १ ॥
तीनौ के भेदन रहे, तीनि लोक परिपूरि ।
इनहीं ते उपजत जगत, यही सजीवनमूरि ॥ २ ॥

७१६. शिवराम कवि

मीना के महल में बिराजै राधे सिवराम देखत प्रभा के भये भानु अस्त भूतिया । रतन अभूषन की कुंडलीं ते मानौ कढ़ी चौ-गुनी चटक चारु चंद्रिका अछूतिया ॥ चरचि चुक्रानो चकचौंधो चट्ट चढ़ि आयो चरन बिलोकि चौंको सत चित दूतिया । ऊपर लखत ग्यारा गिर्यो गगनाइ गुनि चौदहौ कला को भूलि बन्यो चन्द्र चूतिया ॥ १ ॥

७१७. शिवदास कवि

जैसे फल झरे को बिहंग छाँड़ि देत रूख भुवा देखि सुवा छोड़ै सेमर की डार को । सुमँन सुगंध बिन जैसे अलि छाँड़ि देत मोती नर छाँड़ि देत जैसे आबदारको ॥ जैसे सूखे ताल को कुरंग छाँड़ि देत मग सिवदास चित्त फाटे छाँड़ि देत यार को । जैसे चक्रवाक देस छाँड़ि देत पावस में तैसे कवि छाँड़ि देत ठाकुर लबार को ॥ १ ॥

७१८. शिवदत्त कवि

उत्तर महेस पुनि रामन मैनाक और तीसरो मथन जच्छदिसि

---

१ जो छूती नहीं जा सकती । २ फूल ।

चवथारो है। पंचम रुचिर षष्ठ उतर सारंगी कहै कविजन लहै ज्ञान चित्त सो विचारो है॥ सप्तम राजीव पुनि धावन विभासै सिद्धि मध्यग वरन वर चरचा सुधारो है। कहै सिवदत्त हनुमान प्रति जानकी जू आसिरवचन निसि वासर हमारो है॥ १॥

७१६. शिवलाल दुबे डौंड़ियाखेरवाले

धीर गयो ही को सुनि सोर वरही को बीर नाम लै कै पी को या पपीहा आनि पीको है। मेघअवली को घोर पौन अवली को वहै मार अवली को हाइ मार अवली को है॥ नाह से पंथी को कहूँ आइवो न ठीको कहै देखि अवनी को रंग लागत न नीको है। डारै अधजी को मोहिं कीन्हे अवजी को यह जानत न जी को भेद रहत नजीको है॥ १॥ रूसन में दूसन में लाल मन मूसन में मैन की मसूसन में धीर कैसे रैहै री। कोकिला की कूकन में पौन मन्द झूकन में औसर की चूकन में फेरि पछितैहै री॥ वेलिन नवेलिन में संग की सहेलिन में खेलन में केलिन में मनसा समै है री। वृंदावनकुंजन में फूलन के पुंजन में भौंरन की गुंजन में भूलि मान जै है री॥ २॥

धावन कोऊ पठाऊँ उतै उन तौ इहिऔसर में कह्यो आवन।
गावन एरी लगे मुरवा धुरवा नभमंडल में लगे धावन॥
छावन जोगी लगे सिवलाल सु भोगी लगे हैं दसा दरसावन।
तावन लागो वियोगिनि को तन सावन वारि लगो वरसावन॥३॥

काहे को रूसत पावस में इन बातन तोहिं न कोऊ सराहैं।
पौन लगे लहराती लता तरुकुंज कदंब में केकी करा हैं॥
बोल सुहावने चातक के लगैं इन्द्रवधूगन धाई धरा हैं।
बोलि पठाई उतै उन पै उनये नये देखि नये बदरा हैं॥ ४॥

---

१ मोर। २ बोला। ३ बटोही। ४ मोरनी। ५ बीरबहूटी।

बहु फूलैं कदंब-निकुंजन में अरु भावतो पौन बहै नित में ।
बरजै जनि कोऊ मयूरन को गरजैं घन आपने ही चित मैं ॥
सिवलाल भयो मन-भायो जितो अब और करौंगी तितो हित मैं ।
बर साइत में घर आइ गये बड़े भाग भटू बरसाइत मैं ॥ ५ ॥

७२०. शिवराज कवि

मंगल होत कहै सिवराज कहाँ केहि के दुख होत बिसेखो ।
कौन सभा महँ बैठि न सोहत, को नहिं जानत चित्त परेखो ॥
कौन निसा ससि को न उदोत भो का लखिकै बिरही दुख पेखो ।
बाँझ को पूत बिना अँखियान कुहू निसि में ससि पूरन देखो ॥१॥

७२१. शिवदीन कवि

एक समै श्रीपति गौरीस के मिलाप काज पच्छि राज पीठि चढ़ि पहुँचे छिनकमें । कहै सिवदीन सिव बेगि उठे पेखत ही गरुड़ बिलोकि भाजे व्याल हुते लंक में ॥ कीन्ही ईस बाम ओट ससि हँसि सुधा ढारो जियो बाघ धायो भाग्यो बृषभ ससंक में । नगन बिलोकि लजी उमा रमाकंत हँसे पीतपट ओट कै लगायो हरि अंक में ॥१॥

७२२. शंभु (१) राजा शंभुनाथसिंह सोलंकी

कौहर कौल जपादल बिद्रुम का इतनी जु बँधूक में कोति है ।
रोचन रोरी रची मेहँदी नृप संभु कहै मुकता सम पोति है ॥
पाँय धरै ढरै ईंगुर-सो तिहि में मनि-पायल की घनी जोति है ।
हाथ द्वै-तीनि लौं चारिहूँ ओर ते चाँदनी चूनरी के रँग होति है ॥१॥
देखा चहै पिय को मुख पै अँखियाँ न करै जिय की अभिलाखी ।
चाहति संभु कहै मन में बतियाँ मुख ते पुनि जाति न भाखी ॥
भेंटिबे को फरकैं भुज पै नहिं जीभि ते जाइ नहींनहिं नाखी ।
लाज औ काम दुहून बहू बलि आजु दुराजै प्रजा करि राखी ॥२॥

---

१ उदय । २ सर्प । ३ दो राजोंकी मातहत रिआया ।

साँझ ही ते रतिकी गति जीतिकै लोकके आसन जे गिरा गावति।
वारिजनैनन वारहिवारन चूमिवे को मिसु भोर छपावति॥
केलिकला के तरंगन सों हठि मोहन लाल को ज्यों ललचावति।
अंक[1]में बीति गई रतिया पै तऊ अतिया तियै छोड़ि न भावति॥३॥
रूठि उठै उठि वैठै भटू झिझकारै झुकै विहँसै मुख फेरे।
दूनी ह्वै जाइ छुये अँचरा छरकै फुफुँदी के छरा तन हेरे॥
चेरे से कै लिये सम्भु सदा गृहकाज अकाज के जाति न नेरे।
वाल के ख्यालहि में नँदलाल रहैं छकि रोज घरी पर घेरे॥४॥
रीति तजी विपरीति[2] सजी रसना वजी मंजुल लंक के घोस तें।
ह्वौ उर वीच उरोज दवे नृप संभु वचे हैं अनंग के रोस ते॥
चापि कपोल दुहूँ कर सों मुख चूमति प्यारी अनंदित तोस तें।
वैर तजे मधु चंद पियै मकरंद मनो अरविन्द के कोस ते॥५॥
अंगराग जानति न सखिन के पट रँगे केसरि के आप न पखारै सारी सेत है। अधर खराई लै घसत क्यों ललाई जाइ अरुन सुभाय ही कवै धौं यह चेत है॥ नैन प्रतिविम्ब परै आरसीमहल मध्य सम्भुराज द्वारन कपाट दै दै लेत है। खंजरीट[3] जानि दौरि दौरि गहै आनि जव मूठी परै झूठी तव छौंड़ि छौंड़ि देत है॥६॥
फूलन को विनिवो ठहराइ कै याइ कै दूती मिलाइ दई।
नँदलाल निहारि निहाल भये छवि कुंदनमाल सी वाल नई॥
कर ते छुटि भागि दुरी[4] पग द्वै वलि पै न चली कछु चातुरई।
हरि हेरे न पावत भावती सम्भु कुसुंभ के खेत हेराइ गई॥७॥
वालम के विछुरे वदी वाल के व्याकुलता विरहा दुखदानि ते।
चौपरि आनि रची नृप सम्भु सहेलिनि साहेविनी सुखदानि ते॥

---

१ गोद। २ एक प्रकार की रति। ३ खँड़रैचा पक्षी। ४ छिपी।

तो जुग फूटै न मेरी भटू यह काहू कही सखिया सखियानि ते ।
कंज से पानि से पाँसे गिरे अँसुआ गिरे खंजनसी अँखियानि ते ॥८॥

७२३. शम्भुनाथ (२)

(रामविलास रामायण)

दोहा—वसु ग्रह मुनि ससि धर वरप, सित फागुन कर मास ।
सम्भुनाथ कविता दिनै, कीन्हो रामविलास ॥१॥
श्रीगुरु कवि सुखदेव के, चरननहीं को ध्यान ।
निर्मल कविता करन को, वहै हमारे ज्ञान ॥ २ ॥

मिटे ही उछाह उठे दाह हिय-हिय माँह जब ते अवध चाह चलिवे की वगरी । कहाँ वडे वार कहाँ तरुन विचार भेप ऋपि के विचारन धरत सिर पगरी ॥ मुखदुति मुरझानी चल्यो अँखियान पानी सब देह पियरानी हरद ज्यों रगरी । हाइ-हाइ बानी घर घर सरसानी सोकसिन्धु में समानी बिललानी सब नगरी ॥ १ ॥

७२४. शम्भुनाथ (३) ब्राह्मण असोथरवासी

(अलंकारदीपिका)

वार न रहत वारपार ही वहति जाकी धार ही में मीचु अरि वर की वसति है । वार वार वैरिन को वारति बिदारति औ वादर बली में बिजुरी सी बिलसति है ॥ सम्भु कहै काटि कूटि कौंचन की गिरह जिरह ज्यों तिलारा गंगधारा में धसति है । भगवंत रैया राव म्यान ते तिहारी तेग अरिन के प्रानन समेत निकसति है ॥१॥

आजु चतुरंग महाराज सैन साजत भो धौंसा की धुकार धूरि परि मुँह माही के । भय के अजीरन ते जीरन उजीर भये सूल उठी उर में अमीर जाही-ताही के ॥ बीर-खेत बीर बरछी लै बिरझानो इतै धीरज न रह्यो संभु कौन हू सिपाही के । भूप भगवंत

१ वढ़ी । २ कवच । ३ वह सेना, जिसमें घोड़े, हाथी, रथ और पैदल हों ।

सब ग्वाही कै खलक बीच स्याही लाई बदन तमाम बादसाही के ॥ २ ॥ हेरत ही हाथिन के हलके हेराइ जैहैं रोरे सम घोरे रथ बहल बिलाविंगी। मुहरें रुपैये पर मोहरें रहैंगी करी परी सी नितं-बिनी ते परी रहि जावैंगी ॥ पालकी में हाल की खबरि ना रहैं गी। जब काल के कलेवर की फौजें उठि धावैंगी। सम्भु जू सिपाही माही चलत मरातब ते नौबति बजाइबे की नौबति न आवैंगी ॥ ३ ॥ सीरी सीरी बही चहूँ ओर ते बयारि बड़ी घटनि बगारि बड़ो आसरो सो दै रहो। याही हेतु छोड़ि कै नदीन नद एते दिन तेरी आस गहे तेरी ओर तकतै रहो ॥ नीरद[2] तू आपनो बिचारि देखु नाम सम्भु कहा ऐसे औसर में ऐसो हठ लै रहो। गरजि गरजि हुलसायो हियो चातक को बुन्दन के समयनि मुंद मुख कै रहो ॥ ४ ॥ सारी हरी गोरे तन कैसी खुलि रही देखौ तैसो लोनो लहँगा लहलहात डोरी है। तैसे तरिवन छोटे छुवत कपोल डोलैं तैसी खुली नाक नथ मोतिन की जोरी है ॥ भोरी[3] थोरी बैस की सलोनी सुकुमारि सम्भु कै धौं देह धरे चित चोरिबे की चोरी है। बसीकर मन्त्र कैधौं रूपवन्त देवता है कै धौं यह बाम काम ठग की ठगोरी है ॥ ५ ॥

७२५. शम्भुनाथ (४) त्रिपाठी, डौंड़ियाखेरेवाले
(बैतालपचीसी)

दोहा—नन्द व्योम धृति जानि कै, सम्वतसर कवि सम्भु।
माघ अँध्यारी द्वैज को, कीन्हो तत आरम्भु ॥ १ ॥
छवि कदम्ब लखि अम्ब के, उमड़त मोद अखण्ड।
कलखा करि करिवरबदन, फेरत सुंडादण्ड ॥ २ ॥

---

१ समूह=घेरा। २ बादल। ३ भोली।

एक समै गिरिराज की नन्दिनि आई अन्हाइ कहूँ सरसी ते ।
भासुर[1] भाल दिये दल कौंल को आनन सों छवि की छवि जीते ॥
सो हठि लेवे को सुंड पसारि तहाँ गननायक आइ अभीते ।
चाहि कै चोप सों दौरि मनोहर लेत सुधा अहिराज ससी[3]ते ॥१॥

(मुहूर्त्त-मंजरी)

सिंह के सिंह के अंस में जो गुरु होहिं तौ भूलेहु ब्याह न कीजै ।
मेष के सूरज होहिं तौ कीजिये भाषत पण्डित सो सुनि लीजै ॥
गोदावरी अरु गङ्ग के बीच में मेष हू के रवि मैं न कहीजै ।
पण्डित एक कहै गुन मण्डित जी में विचारि जनौ मति दीजै ॥ २॥

७२६. शम्भुनाथ मिश्र (५) सातनपुरवावाले

(वैसवंशावली)

दोहा—गहरवार अरु परगही, पुनि भालेसुलतान ।
तिलकचन्द नरनाह के, कृत्रिम[4] छत्री जान ॥ १ ॥

लोध विप्र । कीनछिप्र ॥ वैसवंस । वै प्रसंस ॥ १ ॥

तासु पुत्र रावता सुजानियो महाबली ।
और देव छोड़ि भक्ति कै महेस की भली ॥
जीतियो अनेक सत्रु जे बखानि जात ना ।
तासु पुत्र भो वलिष्ठ जासु नाम सातना ॥
सातना नरेस के तिलोक चन्द जानिये ।
जासु दान मान एक जीह क्यों बखानिये ॥ २ ॥

७२७. शम्भुनाथ मिश्र (६) गंज मुरादाबादवाले

देवन की देखी दाँदि[5] मारे मधु-कैटभ को महिष सँहारे कीन्ही नेक नहीं देरी है । करी ना अवार[6] मातु सत्रु पै सवार ह्वै कै दैत्यन को

---

१ प्रकाशमान । २ निठुर । ३ चंद्रमा । ४ नक़ली । ५ दाद-फ़र्याद । ६ देरी ।

फेरि आप फिरत न फेरी है ॥ कहै सम्भुनाथ सम्भुरानी तिहुँ-लोकरानी दीन सुनि बानी आनी नूतन न बेरी है । लागी ना निमेष[1] ते निसुम्भ को बिदारि[2] डारे बिपति हमारी कहा सुम्भौ ते कॅरी है ॥ १ ॥

७२८. शम्भुप्रसाद कवि

दम्पति[3] नेह सों रङ्ग भरे लसैं कुंजन में लिये कोई सखी न है । सुन्दरता इनमें छल सों मुरली लइ कान्ह के हाथ सों छीन है ॥ सम्भुप्रसाद कहै लखि कै धरे पीन पयोधर पै सो प्रवीन है । माँग्यो जबै मुसक्याइ कह्यो सुनो बाँसुरी है की ये बीन नवीन है॥१॥

७२९. सन्तन कवि बिन्दकीवाले (१)

काम के वकील फिरैं सुरँग सबीलई कोइ न आसपास ना चलत चतुराई को । जोवन चढ़ाई वारी वैस पै करत चढ़ि चढ़ि न सकत कहै सुपथ सहाई को ॥ दारु को मराऊ है न दाउ ज्ञान गोलिन को कहुँ ना लगाउ ऐसी अलँग उचाई को । सन्तन लुनाई फौजैं हारि हटीं फिरि लरि कैसे जन लूटै गढ़ वाकी सिसुताई को ॥ १ ॥

७३०. सुजान कवि भाट

सुखाइ सरीर अधीन करैं दृग नीर की बूँद सों माल फिरावैं । नेह की सेली वियोग जटा लिए आह की सींगी सँपूर बजावैं ॥ प्रेम की आँच में ठाढ़ी जरैं सुधि आरो लै आपनी देह चिरावैं । सुजान कहैं कला कोटि करौ पै वियोगी के भेद को जोगी न पावैं॥१॥

७३१. श्याम कवि

औनि[4] ते अकास ते अवासन ते उदक[5] ते इन्दु के उदै ते आ-सुदे ते उमड़ो परै । स्याम कवि मालन ते मन ते मनी ते मनमोहन

---

१ पल भर । २ फाड़ डाला । ३ पति-पत्नी । ४ पृथ्वी । ५ जल ।

के मोह ते मनोज ते मड़ो परै ॥ झाँकती झरोखन ते झंझा के झकोरन ते झाड़न ते झारन ते झूमि झुमड़ो परै। पान ते प्रसून[1] ते पराग ते पहारन ते हारन ते हेम ते हिमन्त हुमड़ो परै ॥ १ ॥

७३२. सन्तबकस कवि होलपुर

कारी सारी सोहति किनारी कोर कानन लौं ककना कनक चूरी कारी कर मैं ठई। कारी लोनी लतिका सी उरज भुजंगी कारी ठोढ़ी ठकुराइनि की कारी कारी सोभई ॥ कारी अभिलाष ब्रजराज पास कारी त्यों ही उतरि अटा ते कारी कारी मग को लई। कारी दिसि कारी निसि कारे नैन कानन लौं कारी कंचुकी को पैन्हि कारे कान्ह पै गई ॥ १ ॥

७३३. सन्तन कवि जाजमऊ के (२)

वै वरु देत लुटाइ भिखारिन ये विधि पूरब दानि गऊ के।
द्वै अँखियाँ चितवैं उत वै इत ये चितवैं अँखियाँ यकऊ के ॥
वै उपमन्यु दुवे जग जाहिर पाँड़े वनस्थी के ये मघऊ के।
वै कवि संतन हैं विंदुकी हम हैं कवि संतन जाजमऊ के ॥ १ ॥

७३४. शोभ कवि

चाह सिंगार सँवारन की नव वैस[2] बनी रति वारन की है।
सोभ कुमार सिवारन की सिर सोहति जोहति वारन की है ॥
हंसन के परिवारन की पग जीति लई गति वारन[3] की है।
याहि लखे सरवारन की छनकौ रति के परिवारन की है ॥ १ ॥

७३५. शिरोमणि कवि

हूल हियरा में धाम धामनि परी है रोर भेंटत सुदामै स्यामै बनै ना अघात ही। सिरोमनि रिद्धिन में सिद्धिन में सोर पर्‌यो काहि बकसी धौं काँपै ठाढ़ी कमला तहीं ॥ नरलोक नागलोक

१ फूल। २ अवस्था। ३ हाथी।

नभलोक नाकलोक थोक थोक काँपै हरि देखे मुसक्यात ही।
हालो पत्यो हालिन में लालो लोकपालिन में चालो पत्यो
चालिन में चिउरा चबात ही ॥ १ ॥

दादुर चातक मोर करो किन सोर सुहावन कै भरु है।
नाह तेही सोई पायो सखी मोहिं भाग सोहागहु को वरु है॥
जानि सिरोमनि साहिजहाँ ढिग बैठो महाविरहा हरु है।
चपला चमको गरजो बरसो घन, पास पिया तौ कहा डरु है॥२॥

७३६. शंकर कवि

नायिका विहारी अभिसार को सिधारी भारी संकर अँधेरी में
उजेरी को सो कंद है। भादौं को विषम मेह दीप सी दुरै न देह
नागर के नेह को सनेह दृष्टि बंद है॥ सिवा जान्यो नागरि पि-
साचिनि कमच्छा जान्यो मृगन कलानिधि औ छली जान्यो छंद
है। विज्जु जान्यो घन घोर घग पट मोर जान्यो भोर जान्यो
चोरन चकोर जान्यो चंद है॥ १ ॥

७३७. सिंह कवि

हास ही हास में मान भयो पिय पौढ़ि रहे पलिका पट तानि है।
मान छुड़ावै को बैठी बिसूरति काह कहै धौं पिया मुख मानि है॥
सिंह उरोज दै पाँयन पौढ़ि कै काम के बान लगैं तब जानि है।
पीतम नेह सौं अंक भत्यो लगि प्यारी गरे मुरि कै मुसकानि है॥१॥

आदि मजाद विचारे विना सिर सौंपत भार महा अति तापै।
गाड़र ऊँट कि सान करै यह बात कहो कहि जात है का पै॥
सिंहजू काग सुहावन होइ तौ काहे को कोऊ मरालहि थापै।
काम परे पछिताहिंगे वै जे गयंद को भार धरैं गदहा पै॥ २॥

७३८. संगम कवि

समै को न जानै सीख[१] काहू की न मानै रारि[२] कठिन को ठानै

१ उपदेश। २ झगड़ा।

सो अजानै भई जाति है । पाछे पछितैहै घात ऐसी नहिं पैहै टेक तेरी रहि जैहै कहा टेढ़ी भई जाति है ॥ संगम मनावै तोहिं हित की सिखावै सीख जा बिन न आवै भौन ताही सों रिसाति है । मोसों अठिलाति विन काम को हठाति प्यारी तू तौ इतराति उत राति बीती जाति है ॥ १ ॥ तीर है न बीर कोऊ करै ना समीर धीर बाढ़ो स्रम-नीर मेरो रह्यो ना उपाउ रे । पंखा है न पास एक आस तेरे आवन की सावन की रैनि मोहिं मरत जियाउ रे ॥ संगम मैं खोलि राखी खिरकी तिहारे हेत होति हौं अचेत मेरी तपनि बुझाउ रे । जानु जानि जानौं कौन कीजिय उताल गौन पौन मीत मेरे भौन मंद मंद आउ रे ॥ २ ॥ सोरा नख स्याम लालू कंजा कलजीह जौन कौड़ी पाँवपेंचा पाँउ जखम गनी-जिये । बड़ी लूम बालखण्डी माई पर झोंकदार साँड़ा सटखोरा पर नजर न कीजिये ॥ संगम कहत टेढ़ दाँत को दुरद दान दीवे को पतालदंती मन में न धीजिये । राजसिरताज सिंहराज महाराज भूलि ऐसो गजराज कविराज को न दीजिये ॥ ३ ॥

७३९. सम्मन कवि

दोहा—बाज, बीर, बीरा, बनिज, चूतकला[3], कल, पोत ।
सम्मन इन सातहुन पै, चोट करे रँग होत ॥ १ ॥
विप्र, बैद्य, बालक, बधू, गुरु, गरीब, अरु, गाय ।
सम्मन इन सातहुन पै, चोट करे रँग जाय ॥ २ ॥

७४०. श्रीगोविन्द कवि

भूप सिवराज साहि प्रबल प्रचण्ड तेग तेरो दोरदंण्ड[4] भूमि झारत झड़ाका है । फारै आसमान भासमान को गरब गारै डारै मघवान[5] हू के हिय में हड़ाका है ॥ कहै श्रीगुविन्द सब सत्रुन के

---

१ मूर्ख । २ हठ करती है । ३ जुआँ । ४ भुजदंड । ५ इंद्र ।

सीसन पै गाज ते गिरत गरु गाज ते धड़ाका है। हौदा काटि हाथी काटि भूतल बराह काटि काटि श्रीकमठ-पीठि काटत कड़ाका है ॥ १ ॥

७४१. सखीसुख कवि नरवरवासी

रोग सो अनाथिन की औषधी को जानै सब खान की क्रियान में प्रवीन मन भायो है। मेटत अजीरन को भूख न बढ़ाइ देत ना-रिन के सोधिबे को भेद जानि पायो है ॥ कली ना खिलत ये हैं पुरिया खुलति लाली भोगिन को देत सेखी सुख सो सुहायो है। रिझवार मोहन के आगे गुन प्रगटत आजु बनि देखु री बसंत बैद आयो है ॥ १ ॥ फूलन के दोने रचि साकलि सुमन सुचि सान्यो मकरंद चीकनो लै घृतसोतु है। महामुनि ऋतुराज काम वेद बाँचत है खग होम स्वाहाकार द्विजन को गोतु है ॥ मदनगुपाल देवता की पूजा कीजियत सखीसुख वारी प्यारी तेज को उदोतु है। मधुकुण्ड माँझ लाल टेसू ये अगिनि झरैं आजु वृन्दावन में अनूठो होम होतु है ॥ २ ॥

७४२. सुखराम कवि

कंचुकी कोचकी कैसी कसी लसी श्रीफल से लसे गुच्छ विसाल हैं।
मोती-लरैं बिहरैं खँजरैं खगरैं सी जरी जरी जाल रसाल हैं।
एती लहे छबि चेती कहा कुच केती कहै सुखराम सु माल हैं ॥
आइये लीजिये दीजिये जू कछु बीच किनारे लगे लखौ लाल हैं॥ १॥

७४३. सुखदीन कवि

भाव औ बिभाव अनुभाव दस हाव नव रस को प्रभाव ते सु-भाव ही रढ़त हैं। धुनि गुन तीनि चारि गन को प्रचार करि विमल विचार अलंकार न मढ़त हैं ॥ नष्ट औ उदिष्ट वर्नमात्रिका सदष्ट मेरु मर्कटी पताका प्रसतार को वढ़त हैं। सुखदीन सोहरा मनोहरा मुदित मंजु दोहरा हमारे देस छोहरा पढ़त हैं ॥ १ ॥

७४४. सूखन कवि

कालिहही कंस को होत विध्वंस कहौ जिन के रस में रसवानी ।
बाप तिहारे दई तिनको तुम ताही ते कंस बिभौ भरुहानी ॥
देती हौ दान लली बृषभान की धौं मटकी पटकी मनमानी ।
सूखन नन्द को छोह करौं न तौ आज ही तेरो उतारती पानी ॥ १ ॥
कालिह परे पलना पर झूलत आज उगाहन दान लगे हौ ।
कंस की यादि नहीं तुमको जिनके डर लाल उहाँ ते भगे हौ ॥
पावै सुनै तौ बिसाइ कहा पुनि बंदि परे पितु मातु सगे हौ ।
सूखन छाँडिये मेरी गली इन बातन केतिक लोग ठगे हौ ॥ २ ॥

७४५. शेख कवि

प्यारी परजंक पै निसंक परी सोवत ही कंचुकी दरकि नेकु ऊपर को सरकी । अतर गुलाब औ सुगंध की महक पाइ देखो उठि आवनि कहाँ ते मधुकर की ॥ बैठो कुच बीच नीच उड़ि न सकत केहूँ रही अवरेख सेख दुति दुपहर की । मानहु समर में सुमिरि बैरसंकर को मारि सब रारि फौंक रहि गई सर की ॥ १॥ नेक सो निहारे नाह नेक आगे नीकी बाँह छुवत समिटि नारि नाहिंयै ररति है । पीतम के पानि मेलि आपनी भुजा सकेलि धरकस कोलि हियो गाढ़ो कै धरति है ॥ सेख कहै आधे बैन बोलि कै मिलावै नैन हाहा करि मोहन के मन को हरति है । केलिको अरंभ लखि खेलहि बढ़ाइबे को प्रौढ़ा जो प्रवीन सो नवोढ़ा ह्वै ढरति है ॥ २ ॥

७४६. सेवक कवि

काबुल कँपत करनाटक तपत कलकत्ता पत्ता के समान हालै हद जुरते । रूम रुहिलान मुगलान खुरासान हबसान सान छोड़ि छोड़ि भरे डर उर ते ॥ सेवक कहत गड़बड़ द्राविड़न परै धकत दिलीस देस देस तेज तुर ते । भानुकुल-भानु महादानी रतनेस जब चक्रधर सुमिरि चलत चक्रपुर ते ॥ १ ॥

सहजही पटना सतारो जाने तोरि डारे सागर उजारि जाने गढ़ आगरो लहो। कासमीर काबुल कलकत्ता औ कलिंजराज गौड़ गुजरात ग्वालियर गोह दै गहो॥ सेवक कहत और कहाँ लौं बखानौं देस जाके निरदेस को नरेस चित्त दै चहो। औनि के पनाह नरनाह रतनेससिंह को न नरनाह तेरी बाँह-छाँह में रहो॥ २॥

बड़े छेम सों छेमकरी मड़रात सुदेत क्यों मंडल है घरके।
मम सेवक बाहु बिलोचन त्यों तजि दाहिने बाग दोऊ फरके॥
कहिये हित के हित मेरी हितू कर के कत कंकन हू करके।
दरकै कुच के पट कंचुकी के तरके बँद आजु कहा तरके॥३॥

गुनमें सनी को घर वालनि मनी को रूप छानि कै बनी को गनी हेरति हिया को मैं। भाव में भरी को रति रंग में डरी को गौरि सेवक ढरी को डरी मदन-तिया को मैं॥ गरब गही को रंभा मान की मही को नित्त चित्त की चही को लही काम की क्रिया को मैं। अग्नि की धिया को जोतिजूह की जिया को बेस बिधना बिया को कबै पेखिहौं पिया को मैं॥ ४॥

७४७. संत कवि

पिय सों जु झुकी रसना बिन काज लगे गुन नाम समान तिहारे।
नै नै चले अति रूखे रहे तुम ताही ते नैन ये नाम धरा रे॥
संत बिरोध बढ्यो अति ही जिय ते दुख नेक टरै नहिं टारे।
पाइ सुलच्छन नाम अरे कर काहे को नंदलला झिझकारे॥१॥

अधउई चाँदनी अँधेरी अधऊपर लौं कोक अधसोक दिन आभा अधद्वै गई। अधमिटो मान मानिनी को सो बिलोकि संत बाढ़ी नीरनिधि की अवधि अध त्वै गई॥ ता समै अटा चढ़ि पिया को पंथ देखिबे को अंग अंग मदन मरोर बीज व्वै गई। अधमुँदे कमल

१ चील्ह। २ सवेरे।

कुमुद घन अधखुले अधउओ चंद देखि आधासीसी ह्वै गई ॥ २ ॥

७४८. सवितादत्त बाबू

बीच अमैं विविभौंर बनो सहकार सरोज की सौरभ बीधे ।
हेरति ज्यों हरिआनन ओर त्यों ह्वै ह्वै फिरैं उत होत सनीधे ॥
राखे इतै न रहैं सविता अकुलात विलोकनि लालच बीधे ।
या विधि नैन नितंबिनि के ठहरात न लाज औ काम सबीधे॥ १ ॥

मुखसों लगत मुख सौंहैं न करत मुख लाज काम समता वपुष में लगी रहै । रति के विलास उर अंतर बसावै पै प्रकास ना करत अंग प्रेम कै पगी रहै ॥ केलि की कथान कहे ऊतर न देति उर रूखे नैन मूँदे हौंस सुनै की जगी रहै । प्यारे को जगौहैं जानि ओढ़ै पट तानि तानि लगी रहै उर जौ लौं पलक लगी रहै ॥ २ ॥

७४९. साधर कवि

छप्पै

अरध चंद इत दिये उतै ससि पूरन पिध्ये ।
इतै जटा मधि गंग उतै मुकुताहल लिध्ये ॥
इत त्रिसूल त्रय नयन उतै बेंदी रोरी की ।
इत भुअंग-आभरन उतै बेनी गोरी की ॥
साधर सुकब्बि बहु लिदा सिव सकल सभा आनँद हिये ।
सर्वंगी को ध्यान करु अर्द्धंगी आसन किये ॥ १ ॥

७५० सुन्दर कवि

काके गये बसन पलटि आये बसन सु मेरो कछु बस न रसन उर लागे हौ । भौंहैं तिरछी हैं कवि सुन्दर सुजान सोहैं कछू अर-सोहैं गोहैं जाके रस पागे हौ ॥ परसों मैं पाँय हुते परसों मैं पाँय गहि परसों ये पाय निसि जा के अनुरागे हौ । कौन बनिता

१ आधा सिर दर्द करने की बीमारी । २ आम । ३ कमल । ४ खुशबू । ५ फँसे । ६ भीतर । ७ बसने । ८ कपड़े । ९ छूती हूँ ।

के हौ जू कौन बनिता के हौ सु कौन बनिता के बनिता के संग जागे हौ ॥ १ ॥

मन है तो भली थिर ह्वै रहि तू हरि के पदपंकज में गिर तू ।
कवि सुन्दर जो न सुभाव तजै फिरिबोई करै तौ इहाँ फिर तू ॥
मुरली पर मोरपखा पर ह्वै लकुटी पर ह्वै भृकुटी भिर तू ।
इन कुण्डल लोल कपोलन में घनै-से तन में घिर ह्वै थिर तू ॥२॥

सासु रिसाति बकै ननदी सखि तू सिखवै सिख सीख के बैना ।
है ब्रजवास चवाव महा चहुँ ओर चलै उपहास की सैना ॥
देखत सुन्दर साँवरी मूरति लोक अलोक की लीकैं लखै ना ।
कैसी करौं हटके न रहैं चलि जात तऊ लखि लालची नैना ॥ ३ ॥

क्रीट सुति कुण्डल कपोल गोल लोयन की बोलनि अमल हेरि हँसनि वा लाल की । राग औ धमारि के मवार में न गावै तहाँ देखि ब्रजनारि घाँघरनि उन लाल की ॥ भागि आई भागि से भले में देखि आई लाल ताकि पिचकारी दग चलनि उताल की । गोकुल गलीन में गोपाल गन गोप लीने आवत करत बीर गरद गुलाल की ॥ ४ ॥

(सुन्दरशृंगार)

दोहा—नगर आगरो वसत है, जमुना-तट सुभ थान ।
तहाँ बादसाही करैं, बैठे शाहजहान ॥ १ ॥
साहजहाँ तिन गुनिन को, दीने अनगँन दान ।
तिनने सुन्दर सुकवि को, कियो बहुत सनमान ॥२॥
नग भूपन गन सब दिये, हय हाथी सिरपाव ।
प्रथम दियो कविराज पद, बहुरि महाकविराव ॥ ३॥
विप्र ग्वालियर-नगर को, बासी है कविराज ।

१ मेघ । २ परिपाटी । २ वेशुमार ।

जापै साह दया करै, सदा गरीबनेवाज ॥ ४ ॥
सम्वत सोरह सौ बरस, बीते अट्ठासीति ।
कातिक सुदि षष्ठी गुरुहि, रच्यो ग्रन्थ करि प्रीति॥५॥

७५१. सुन्दर कवि (२)

कामिनी की देह अति कहिये सघन बन उहाँ सु तौ जाइ कोऊ भूलि कै परत हैं। कुंजर है गति कटि केहरि[1] को भय यामें वेनी कारी नागिनी सी फन को धरत है ॥ कुच हैं पहार जहाँ काम चोर बैठो तहाँ साधि कै कटाच्छ बान प्रान को हरत है। सुन्दर कहत एक और अति भय तामें राच्छसी वदन खाँव-खाँव ही करत है ॥ १ ॥ नीर बिना मीन दुखी छीर[2] बिना सिसु[3] जैसे पीर जाके दवा बिन कैसे रह्यो जात है । चातक ज्यों स्वाति-बुंद चंद को चकोर जैसे चन्दन की चाह करि फनी[4] अकुलात है ॥ अधन ज्यों धन चाहै कामिनी को कामी चाहै ऐसी जाके चाह ताको कछू ना सुहात है । प्रेम को प्रभाव ऐसो प्रेम तहाँ नेम कैसो सुन्दर कहत यह प्रेम ही की बात है ॥ २ ॥

सेवक सेव्य[5] मिले रस पीवत भिन्न नहीं अरु भिन्न सदाहीं ।
ज्यों जल बीच धर्यो जल-पिण्ड सुपिंडऽरु नीर जुदे कछु नाहीं ॥
ज्यों दृग में पुतरी दृग एक नहीं कछु भिन्न न भिन्न दिखाहीं ।
सुन्दर सेवक भाव सदा यह भक्ति परा परमेसुर माहीं ॥ ३ ॥

७५२ शंकर कवि (२)

एक समै मिलि सूनी गली हरि राधिका संकर भाग भरे भर ।
साहस सों उन हेरि दियो उन संकन-संक सों अंक[6] लई भर ॥

१ सिंह । २ दूध । ३ बच्चा । ४ सर्प । ५ जिसकी सेवा की जाय । ६ गोद ।

सौंहें अनेक करी सजनी सिर हाथ दियो नहिं मानी इते पर।
काहे से री सुनु मेरी भटू उन छाती छुई उन छोड़ि दियो कर॥१॥

७५३. शंकर त्रिपाठी, बिसवाँवाले (३)

(रामायण कवित्त)

आरंज प्रात गये गुरु गेह को पाँय परे कहि आरत बानी।
आसिष दीन्ही वसिष्ट तबै हरषे मुनिवृन्द महासुख मानी॥
कारनकाज विचारो भली विधि की गति सों कछु जाति न जानी।
संकर भारत मौन लही यह देखि चरित्र रिसाइ न रानी॥ १॥

७५४. शंकरसिंह गौर, चंडरावाले (४)

हरी है सबै सुधि-बुद्धि हरी तिय सेज परी तन चेत न री है।
नेरी है कहाँ रति रूप रतीक न सोने के साँचे ढरी पुतरी है॥
तेरी है मनोज महानद की नृप संकर सोभित लाल डरी है।
डरी है खरी यहि पावस में सिखि-सोर सुने लखे भूमि हरी है॥१॥

७५५. संपति कवि

कोटिन सरूप रूप एकही करत जब जानत अचर देत्र कायर डहक-ती। चंडमुंडमर्दनी महिषकाल कालिका सुदामिनी दमक तोई भारि कै भहकती॥ खाउँ खाउँ करत अघात न आगम जोति जोगिनी जमाति कई भाँति से लहकती। दुष्टन के उदर बिदारि कै करेजे पर चढ़ि-चढ़ि रुधिर चभकि कै चहकती॥ १॥

७५६. शीतल त्रिपाठी, टिकमापुरवाले (१)

बिहारीलाल कवि के पिता

आजु अकेली उताहिली ह्वै तट लौं पहुँची तुम आई करार मैं।
साथ सखीन के हाहा किये पग हौं हूँ दियो जल-केलि बिहार मैं॥
सीतल गात भये सिथिले उछरी तौ मरू करि केतिकौ बार मैं।
कान्ह जो धाइ धरै न अली तौ वही हुती हौं जमुना-जलधार मैं॥१॥

१ रामचंद्र। २ मानुषी। ३ नाव। ४ मोर।

७५७. शीतलराय भाट, बौंड़ीवाले (२)

छप्पै

चकित पवन गति प्रबल थकित रवि स्रवन सुनत जस।
बिकल होत दल दुर्वन[1] भुवन जस पूरि रह्यो बस॥
गिरत बिटप[2] बल कटक कोल[3] कंपत उर अहिगन।
स्रवत सिंधु उछलत मनोज दृग जा दृग ता मन॥
चहुँ ओर सोर बरनत सुकवि वर बिसेन बसुधा बस्यो।
दब्बै जमीन हहलत सु गिरि जब्बै गुमान हयवर[4] कस्यो॥ १॥

७५८. सुवंश शुक्ल, बिगहपुरवाले

हैं गुरुलोग बिलोचन चित्त के साँपिनी-सी सदा सासु सिहारो।
जे रन ही में कलंक धरे खरे ते खल चारिहूँ ओर निहारो॥
पाउँ धरै को न ठाउँ कहूँ अब ह्वैहै कहा यह बात बिचारो।
किंसुक दान सुबंस कहै अभिराम उरोजन पै तिय डारो॥ १॥
दंपति मोद भरे मन में अँग-अंग अनंग सुबंस बखान्यो।
आसव[5] दोउ दुहूँन पियावत बासव[6] की सरि को सुख मान्यो॥
लेत पिये सिगरो रसनासव गोगन जन्म बृथा करि जान्यो।
है प्रतिबिंब मनो मधु में तेहि ते सब इंद्रिन मंजन ठान्यो॥ २॥
प्यारी सु आनि अचानक आलिन पीतम की कहि दीन्ही अवाई।
भूरि[7] भरी पुलकावली यों सब अंगन में सुखमा[8] सरसाई।
बाल उताल[9] सुबंस कहै नँदलाल के देखन को उठि धाई॥
भार नितंबन को न गयो कटि टूटन की मन संक न आई॥ ३॥
देव सुरासुर सिद्ध-बधून के एतो न गर्व जितो[10] यहि ती को।
आपने जोबन के गुन के अभिमान सबै जग जानत फीको॥

१ शत्रु। २ वृक्ष। ३ बाराह। ४ श्रेष्ठ घोड़ा। ५ पीने की चीज़ मदिरा आदि। ६ इंद्र। ७ बहुत। ८ शोभा। ९ जल्दी। १० जितना।

काम कि ओर सिकोरत नाक न लागत नाके को नायक नीको।
गोरी गुमानिनि ग्वारि गँवारि गनै नहिं रूप रतीक रती को॥४॥
गहु रे हरि के पदपंकज तू परिपूरो सिखावन है यहु रे।
यहु रे जग झूठो है देखु चितै हरिनाम है साँचो सोई कहु रे॥
कहु रे न कहूँ परद्रोह की बात सुबंस कहै कोऊ सो सहु रे॥
सहु रे मन तो सों करौं बिनती रघुनाथ निरंतर को गहु रे॥४॥

७५९. सिरताज कवि, बरसानेवाले

मानती न मालिनी कहे ते तौन तेरी बात काहे ते लतानन की लौंदैं झकझोरती। कहै सिरताज फुलवारी की बहार देखि करि अनुराग अनमोलो सुख रोरती॥ फूलो री गुलाब गुलदाउदी गहबदार बेला औ चमेलिन की बेलिन बिथोरती। कारन कहा है इन नारिन को बाग बीच नाहक प्रसून ये अनारन के तोरती॥१॥

छप्पै।

करि हरि मृग मंजीर कलानिधि अहि बिम्बाफर।
चलन लंक दृग उरज बदन बेनी अधराधर॥
मत्त तरुन बन कनक पूर्न परिपक्क रुचिर दुति।
सुरस छुपी सिसु उगी दोष बिन असित बोलि जुति॥
सिरताज सरोष सभीत बिन बेध सरद नव निकट जल।
सुनु बाल गात ऐसे निरखि कस न होइ लालन बिकल॥२॥

७६०. सुमेर कवि

करत कलोल कीर कोकिल कपोत केकी चन्द की बधाई बाजैं जानै जानि घन-धुनि। सुकबि सुमेर मीन मृगज मराल मन मुदित मधुप न्योते कोकिला सकल सुनि॥ केहरि कँदूरी कीर कदली कमल फूले सौतिन सजे हैं तन चीर चारु चुनि चुनि। कहा पट

१ स्वर्ग। २ रति, काम की स्त्री। ३ अरोरती=लूटती। ४ केला।

[illegible] नि प्यारी पौढ़ी हौं बिलोकौ आनि चारों ओर चौंचँद मच्यो है
तु[illegible] रूसे सुनि ॥ १ ॥

७६१. सागर कवि, ब्राह्मण
(वामामनरंजन)

जाके लगे गृहकाज तजै अरु मातु पिता हित बात न राखैं ।
संग में लीन ह्वै चाकर चाह कै धीरज-हीन अधीन ह्वै भाखैं ॥
तर्फत मीन ज्यों नेह नवीन में मानों दई वरछीन की साखैं ।
तीर लगैं तरवारि लगैं पै लगैं जनि काहू से काहू की आँखैं॥१॥
जाके लगै सोई जानै बिथा पर-पीर में कोऊ उपहास करै ना ।
सागर जो चुभि जात है चित्त तौ कोटि उपाउ करै पै टरै ना ॥
नेक-सी कंकरी जा के परै सोऊ पीर के मारे सु धीर धरै ना ।
कैसे परै कल एरी भटू जब आँखि में आँखि परै निकरै ना ॥ २॥

७६२. सुलतानपठान, नवाब सुलतान मोहम्मदखाँ
(१) रामगढ़, भूपालके अधिपति
(कुंडलिया-सतसई का तिलक)

मेरी भवबाधा हरौ राधा नागरि सोइ ।
जा तन की झाँई परे स्याम हरित दुति होइ ॥
स्याम हरित दुति होइ मिटै सब कलुषकलेसा ।
मिटै चित्त को भरम रहै नहिं एक अँदेसा ॥
कहि पठान सुलतान काटु जमदुख की बेरी ।
राधा बाधा हरौ इहा विनती सुनु मेरी ॥ १ ॥
नासा मोरि नचाइ दृग करी कका की सौंह ।
काँटे-सी कसकत हिये गड़ी कटीली भौंह ॥
गड़ी कटीली भौंह केस निरवारत प्यारी ।

१ खफ़ा । २ जन्म-मरण की बाधा । ३ अक्स ।

मारत तिरछी कोर मनो हिय हनत कटारी ।।
कहि पठान सुलतान छके नर देखि तमासा ।
वाको सहज सुभाव और को बुधि-बल नासा ।। २ ।।

७६३. सहजराम बनिया, (१) पैंतेपुर
(रामायण)
चौपाई

सीता स्वक्ष्क भक्ष कठोरा । भगन भयउ उर भूपन कोरा ।।
भूपजरा रिपु सल्य उमा-सी । तेहि छत बहुरि रमापति धाँसी ।।१।।

७६४. सुलतान कवि (२)

तुम चाले की बातें चलावती हौ सुनिकै अति ही तन छीजतु है ।
छन नेकहु न्यारी जो होति कहूँ थल मीनन की गति लीजतु है ।।
जब लौं सुलतान न आवै घरै तब लौं तौ बिदा नहिं कीजतु है ।
वहि पीतम की अनुहारि सखी ननदी-मुख देखि कै जीजतु है ।। १ ।।

७६५. सुखलाल कवि

दसरथ के बेटे खरे खरेटे धनुप करेटे सर टेटे ।
गोरे सौंरेटे उर बघनेटे जरी लपेटे. सिर फेटे ।।
नैना कजरेटे रन दुलहेटे रमा पलेटे चरनेटे ।
सुखलाल समेटे चारौं बेटे हँसि करि भेंटे सौंरेटे ।। १ ।।

७६६. शिवनाथ सुकुल, मकरंदपुरवाले देवकीनंदन के भाई

पति-प्रीति प्रिया विपरीति रची रति-रंग-तरंग बहारन को ।
नचै बेग ते बेसरि को मुकुता चित बित्त हरै दृग सारन को ।।
वह नाथ के सौंहैं न डीठि करै गड़िजाति है नीठि निहारन को ।
रति कूजित गान की तान मनो निहुरे ससि लेत है तारन को ।। १ ।।

७६७. सुजान कवि

आपन ही नैनन सों नैनन मिलाइ लेत सैनन चलाइ हरि लीन्हे
गौना ।

चित्त धाइ चाइ। अब क्यों कहत गुरुलोगन की संक मोहिं मारत निसंक काम कासों कहौं जाइ जाइ॥ एरे निरदई कान्ह कहत सुजान तोसों तेरे बिन हेरे आँखें रहैं झर लाइ लाइ। दूरी जो बसाइ तौ परेखो हू न आइ एरे निकट बसाइ मीत मिलत न हाइ हाइ॥ १॥

७६८. शिवप्रकाशसिंह बाबू, डुमरावँवाले
(रामतत्त्वबोधिनी)

तुलसी प्रसाद हिय हुलसी श्रीरामकृपा सोई भवसागर के पुल-सी है लसी हैं। जाकी कविताई अनरथ-तरु-टंगासम गंगा की-सी धार भक्तजन-मन धसी है॥ परमधरम मारतंड उर-व्योम[1] उग्यो काम क्रोध लोभ मोह तम निसा नसी है। वाही के प्रकास जमगन मुँह मसि[2] लाई अति सुख पाय जिय मेरे आय बसी है॥ १॥

७६९. सबलसिंह कवि
(षटऋतु बरवै—भाषाऋतुसंहार काव्य)

भावै चन्द न चन्दन सुरभि[3]-समीर।
भावै सेज सुहावनि बालम तीर॥ १॥
ऋतु कुसुमाकर[4] आकर विरह बिसेखि।
ललित लतान मितान बितानन देखि॥ २॥
का बड़ भयऊ सेमर फूले फूल।
जो पै स्याम भँवर सखि नहिं अनुकूल॥ ३॥
जेठमास सखि सीतल वर कै छाँह।
नई नींद सिरहनवाँ पिय कै बाँह॥ ४॥
पिय कर परस सरस अति चन्दन-पंक।
भावक रजनि सुहावनि दरस मयंक॥ ५॥

१ आकाश। २ स्याही। ३ सुगंध। ४ वसंतऋतु।

७७०. शिवदीन कवि, भिनगावाले
(कृष्णदत्तभूषण)

जमुना के तट बंसीवट के निकट कहूँ लख्यो पीतपट औ मुकुट छवि सोह में । उड़ि गये भूषन बसन प्यास बास साँस आस लगी रैनि-दिन मिलिबे की छोह में ॥ बारबार बरत वियोग की विधान बीच भनै सिवदीन परी मनसिजद्रोह में । ज्ञान गुन वोरि लाज कुलकानि भानि-भानि वा दिन ते वाको मन मोहि रह्यो मोह में ॥ १ ॥

७७१. सुमेरसिंह साहेबजादे

बातें बनावती क्यों इतनी हम हू सों छप्यो नहिं आज रहा है ।
मोहन की वनमाल को दाग दिखाय रह्यो उर तेरे अहा है ॥
तू दरपै करै सौंहैं सुमेर अरी सुनु साँच को आँच कहा है ।
अंक लगी तौ कलंक लग्यो जु न अंक लगी तौ कलंक कहा है॥१॥

७७२. शेखर कवि

भीतर ते उठि आवत देखि कबै वह बाल भुजा भरि लैहैं ।
सेखर कंठ लगाइ कै पाछे ते आनँद के अँसुवान अन्हैहैं ॥
कन्त भले भले बोल के साँचे कह्यो तुम हो हम वा दिन ऐहैं ॥
औधि गये यों भिया घर जाय कबै हम हाय बराइनो पैहैं ॥ १ ॥

७७३. सेवक कवि असनीवाले (२)

मुख भावन भूपित जाको बिलोकि न चन्द की ओर चितैबो भलो।
अधरामृत पान कै सेवक जाके पियूष[1] सों कौन हितैबो भलो ॥
जिहिं लाय कै अंक निसंक दई न परीन को रंक मितैबो भलो ।
धिक ता के बिना पलकौ तजि कै न बियोग में बैस बितैबो भलो ॥१॥
जब ते सुनि देखे बसे मन में तब ते फिरि भेंट भई नई री ।
जल-हीन से मीन दुखी अँखियाँ तलफैं दिन-रैनि बिथा भई री ॥

१ अमृत ।

विधि सों अब सोच नहीं सपने में गह्यो कर मैं हूँ उठी दई री ।
मनमानी भई नहीं सेवक सों तजि नैनन नींद कितै गई री ॥ २ ॥
हमको कित कैसे कहाँ न लखैं नित ऐसी विथा जिय जागती हैं।
न गनाय गुनाय मनाय जनाय बनाय वही रँग रागती हैं ॥
कसकैं न सकैं काढ़ि कैसे हु सेवक सोहन-सी दिल दागती हैं ।
परतीन की बैन सुधा सों भरी बरछीन ते सौगुनी लागती हैं ॥३॥

७७४. सबलश्याम कवि

कहा भयो जानै कौन सुन्दर सबलस्याम छूटी गुन[3] धनुष तुँ-नीर[4] तीर झरिगो । हालत न चपलता डोलत समीरन के बानी कल कोकिल कलित कण्ठ परिगो ॥ छोटे छोटे छौनां[5] नीके नीके कलहंसन के तिनके रुदन ते स्रवन मेरो भरिगो । नीलकंज मुदित निहारि वारि विद्यमान भानु मकरन्दहि मलिन्द पान करिगो ॥१॥

७७५. सोमनाथ कवि

सोने-सो सरीर ता पै आसमानी रंग चीर औरै ओप कीनी रवि रतन तरौना द्वै । सोमनाथ कहै इंदिरा[6]-सी जगमगै बाल गाढ़े कुच ठाढ़े मानो ईस जुग भौना द्वै ॥ कारी घुँघुरारी मन्द पवन झकोर लागे फरहरै अलक कपोलन के कौना द्वै । सो छवि अमंद मनों पान सुधाबिन्दु करि इन्दु पर खेलत फनिन्दँन[7] के छौना द्वै ॥१॥

७७६. शशिनाथ कवि

गाइहौं मंगलचार घने सखि आवत ही तन ताप बुझाइहौं ।
झाइहौं पाँइ गुलाबन सों कमखाब के पाँवड़े पुंज बिछाइहौं ॥
छाइहौं मन्दिर बादले सों ससिनाथ जू फूलन की झरि लाइहौं।
लाइहौं सौतिन के उर साल जबै हँसि लाल को कंठ लगाइहौं ॥१॥

---

१ ब्रह्मा । २ पराई स्त्री । ३ धनुष की डोरी । ४ तरकस । ५ बच्चे । ६ लक्ष्मी । ७ सर्पों के ।

७७७. शशिशेखर कवि

कुंज-निकेत पिया बिन चाहि कै अंग अनंग की आँच-सी आई।
दूती को देत उराहनो ठाढ़ी महा कपटी किन बात चलाई॥
हा हौं जरी हौं जरैं ससिसेखर सम्भु सदासिव राखि सिराई।
चैन नहीं मृगसावकनैनी को पंकजनैनी गई कुम्हिलाई॥ १॥

७७८. सहीराम कवि

बागन है बलि दान लिये द्विज दुर्बल है लकुटी पकरी।
बलि ने बहु आदर-भाव कियो पग तीनि धरा तब माँगी हरी॥
सहीराम कहै भुव नापि लई डग तीनि ही में बसुधा सगरी।
लकरी जुत हाथ बढ़े हरि के तब ज्यों बिन पात बढ़ी लकरी॥ १॥

७७९. सदानन्द कवि

अंग अंग जोती सुठि नासिका बनक ओती सदानन्द को ती तिय तेरे तीर टगोरदार। कनक के कानन तरौना इन्दु आनन में अलकैं झुकी हैं मोतीमालन मरोरदार॥ उन्नत उरोजन पै कैसी लसै उरबँसी तैसी कसी कंचुकी कुसुंभी रंग ओरदार। छोरदार अंबर की ओट दुरे डोरदार करत कजाकी कजरारे नैन कोरदार॥ १॥

७८०. सकल कवि

दाता ते दुँनी में सूम काजै जानियत इभि कायर को जानिये समर माँह सूर ते। पापी ते प्रगट पुन्य जानिये दुखी ते सुखी नि-धनी को जानिये सु धनी धन दूर ते॥ भाखत सकल जानै भूप ते भिखारी चोर साह ते पिछानै औ चतुर चित कूर ते। राति-दिन सूर ते यों कञ्चन कपूर नर जान्यो जात या बिधि सहूर बेसहूर ते॥ १॥
ऐसी मौज कीनी जदुनाथ ने अनाथ लखि लीने हाथ चामर पठाये द्विज भामा के। भाखत सकल काँप्यो स्वर्न को सुमेर औ कुबेर के कुबेर गात काँपे अभिरामा के॥ जरी नग लाल और लरी मुकता

१ भवन। २ ज्योति। ३ एक आभूषण। ४ दुनिया।

प्रवाल चराचर चामीचर चामीकर[1] धामाके । अम्बर[2] लौं बरपै मतङ्ग मदधार देखौ अरुंबर[3] लौं लागे मेघडम्बर सुदामा के ॥ १ ॥

७८१. सामंत कवि

तुरंग बैठि जंग में कुरंग को लगाय कै चल्यो बिहंगराज लौं बिहंग कौन आदरै । बड़े समूह छोर ज्यों धुराउ ओरछोर लौं सुभाय खेलि सेल सों उछारि सेल को धरै ॥ समन्त हाथ जोरि कै अमीर दन्त तोरि कै उखारि मारि भूमि सों गयन्द गेंद-से करै । बचै न सिंह सारदूल सिंह वारपार लौं नौरंगसाहि बीर के सिकार बीच जो परै ॥ १ ॥

७८२. सेन कवि

जब ते गुपाल मधुबन को सिधारे आली मधुबन भयो मधु दावन विपन सों । सेन कहै सारिका सिखण्डी खञ्जरीट सुक मिलि कै कलेस कीनों कालिंदीकदम सों ॥ जामिनीवरन यह जामिनी में जाय जाय बधिक को जुगुति जनावै टेरि तम सों । देह कारी किरच करेजो कियो चाहत है काग भई कोयल कगायो करै हम सों ॥१॥

७८३. स्यामलाल कवि

राजा राव राजे बादसाह जे जहान जाने हुकुम न माने ते हुकुम तर आने हैं । सूर बीर संगन में सुघर प्रसंगन में रीति रस रंगन में अति ही बखाने हैं ॥ स्यामलाल सुकवि नरेस उमराउगिरि तुम से न नृप कोऊ आज के जमाने हैं । हम मरदाने जानि बिरद बखाने पर द्वारे चोबदार कै साहब जनाने हैं ॥ १ ॥

७८४. शोभनाथ कवि

दिसि-बिदिसान ते उमड़ि मढ़ि लीनो नभ छोरि दिये धुरवा जवासे जूह जरिगे । डहडहे भये द्रुम रञ्चक हवा के गुन कुहू-कुहू मोरवा पुकारि मोद भरिगे ॥ रहि गये चातक जहाँ के तहाँ देखत

१ सुवर्ण । २ आकाश । ३ प्रकाश ।

ही सोमनाथ कहूँ कहूँ बूँद हू न करिगे । सोर भयो घोर चहूँ ओर नभमण्डल में आये घन आये घन आय कै उघरिगे ॥ १ ॥

७८५. सन्त कवि (२)

सेर सम सील सम धीरज सुमेर सम सेर सम साहेब जमाल सरसाना था। करन कुबेर कालि कीरति कमाल करि तालेबन्द मरद दरदमन्द दाना था ॥ दरबार दरस परस दरवेसनको तालिब तलब कुल आलम बखाना था । गाहक गुनी के सुखचाहक दुनी के बीचं सन्त कवि दान को खजाना खानखाना था ॥ १ ॥

७८६. सहजराम सनाढ्य, बँधुवावाले (२)

(प्रहलादचरित्र)

रामभजन को कौन फल, विद्या को फल कौन ।
घाटा नफा विचारि कै, विप्र पढ़ैं मैं तौन ॥ १ ॥
बरनत बेद पुरान बुध, सिव विरञ्चि सनकादि ।
ये बाधक हरिभक्ति के, विद्या बित बनितादि ॥ २ ॥
खाय मातु मोदक कटुक, परै वदन विच आइ ।
जठर अग्नि की ज्वाल सों, जीव विकल ह्वै जाइ ॥ ३ ॥

७८७. श्यामशरण कवि

(स्वरोदय भाषा)

मिथुन मीन धन जानि, द्विस्वभाव कन्या-सहित ।
संग सुषुम्ना आनि, परमासिद्धिदायक सदा ॥ १ ॥

७८८. सीतारामदास बनिया, बीरापुरवाले

सेस न पावहिं पार, राम-जन्म उत्सव महा ।
आई करन जुहार, मुदमङ्गल तिहुँ लोक की ॥ १ ॥
हरन पाप-दुख-जाल, मुक्तिदानि सरजू नदी ।
कियो भक्त को काम, सेवक सीताराम तहँ ॥ २ ॥

७८९. शिवप्रसन्न कवि, रामनगर के, शाकद्वीपी ब्राह्मण

धौरहर धौल धूर धाप हू धसै न जामें चहुँघा दुआर के सुगन्ध

सार साला से। मनिदपिसाला मनि भूषन वलित वाला खासे परजंक वासे सुमनन माला से ॥ त्रिजन उसीर नीर मलय समोये है परस सभीर है सरस सीतकाला से। जिन हेत विरचे विरश्चि हैं मसाला ऐसे व्यथित न होत ते निदाघ-जात-ज्वाला से॥१॥

७६०. सुकवि कवि

कञ्चनवरन वाल हरन मुनीन मन चरनसरोज राजै सब सुख-साजी है। भनत सुकवि अंग अंगन अनंग राजै नैन चारु चंचल न पावै पार वाजी है॥ वैठी चित्रसाला में विचित्र चित्र देखत है केहरि कुरंग की करति छवि माजी है। कोकिल कपोत कीर पेखि सुख पायो वाल निरखि जुराफा भई अति इत राजी है॥ १ ॥

७६१. श्यामदास

पद

श्री गोपालजू की आरती करतु हैं।
घण्टा ताल पखावज वाजे पञ्चमुखी वाती वरतु हैं॥
सिव विरश्चि नारद इन्द्रादिक सब मिलिगावत वीन वजतु हैं।
स्यामप्रभू को देखत सव तन मन धन वारिवारि डारतु हैं॥१॥

७६२. श्रीभट्ट

पद

स्यामा स्याम सेज उठि वैठे अरस परस दोउ करत सिंगार।
इन पहिरी वाकी मोतिन-माला उन पहिरो वाको नौसरहार॥
पेंच सँवारे बृषभानुनंदिनी अलक सँवारत नंदकुमार।
हँसि मुसकाय करत दोउ वातैं वदन निहारत वारम्वार॥
लटपटि पाग मरंगजी माला कहि न जात सोभा सुखसार।
श्रीभट के प्रभु जुगल की दूनी मेरे आँगन करत विहार॥ १ ॥

७६३. श्याममनोहर

चली दधि वेंचन किसोरी कुँवरि है गजगामिनी।

१ मसली हुई। २ हाथी की-सी मस्त चाल से चलनेवाली।

नखसिख रूप अनूप सुन्दरी दसन दुति मनु दामिनी ॥
स्यामा प्यारी कुल उजियारी विमल कीरति ऊजरी ।
जोबनवाली सरस सुन्दरी चंद्रवदनी गूजरी ॥ १ ॥
वृन्दावन भीतर स्याममनोहर घेरी ।
हौं तुम्हें जान न देहौं घर को लेहौं दान निवेरी ॥ १ ॥

७६४. सगुणदास

पद

नेही श्रीवल्लभ के ह्वै गाजो ।
चरनाम्बुज गहि मानग्रंथि तजि स्वामी पद ते भाजो ॥
गीता भागवत निगम[1]-से साखी तौ काहे को लाजो ।
गीतगोविन्द बिल्वमङ्गल[2]-सी बाँकी कहि सके अनदाजो ॥
पुरुषोत्तम इनहीं ते पैये गृह दृढ़ मति तुम साजो ।
सगुनदास कहै जुवति-सभा में गिरिधर महल बिराजो ॥ १ ॥

७६५. सबलसिंहचौहान

(भारतभाषा)

हृदय विचारत नख लिखत, कौरव की मति पोच ।
हाथी हरहट मद-गलित, नाहिन सीलसकोच ॥१॥
जुद्ध जुआ बस होत नहिं, भ्राता करहु विचार ।
होत तासु जय तात सुनु , जिहि सहाय करतार ॥२॥

७६६. श्रीलाल कवि भांडेर, जयपुरवाले

देबो जस को मूल है, या ते देबो ठीक ।
पर देबे में जानिए, दुखकवहूँ नहिंनीक ॥ १ ॥
सञ्चय करिबो है भलो, सो आवै वहु काम ।
पाप न सञ्चय कीजिये, जो अपजस को धाम ॥२॥

१ वेद । २ एक वेश्यागामी लंपट, जो पीछे बहुत बड़ा प्रेमी भक्त महात्मा होगया ।

जड़ कबहूँ नहिं काटिये, काहू की मन धारि ।
पाप ऽरु रिन की जर कटी, भलो एक निरधारि ॥ ३ ॥
भलो होत नहिं मारिबो, काहू को जग माहिं ।
भलो मारिबो क्रोध को, ता सम नर-रिपु नाहिं ॥ ४ ॥
बुरो माँगिबो जगत ते, जाते हो अपमान ।
छमा माँगि सो ईस ते, भलो एक करि ज्ञान ॥ ५ ॥

७६७. श्यामलाल कवि, कोड़ाजहानाबादी

पटुका मँगाय मुँह बाँधौं हलवाइन को चासनी न चाटि जाइँ जौलौं सियरायँगी[1] । मृत्तिका[2] मँगाइ कै कुटाइ डारौं चाटन को चूहे अरु चूही कहौ कैसे नियरायँगी[3] ॥ चारिहू दिसान ते बयारिन को बन्द कीजै उड़ने न पावैं जौ लौं तौ लौं ठहरायँगी । माछिन को मारि डारौं चींटिन अँवार फारौं चींटी दई मारी क्या हमारी खाँड़ खायँगी ॥ १ ॥ बीसवीं पुरित हम बाँटे हैं गेंदौरे सुनि बड़े बड़े बैरिन की छाती फटि जायगी । नाइनि सु बारिनि परोसिनि पुरोहितानी छोटे पाय खोटी खरी मोंसों कहि जायगी ॥ सुनु हलवाई चलि आई है हमारे यही डेढ़ टाँक खाँड़ चहै औरौ लागि जायगी । फिरकी से छोटे और दीपक से जोटे जरा कागद से मोटे बनैं बात रहि जायगी ॥ १ ॥

७६८. सीताराम त्रिपाठी पटनावाले

विधि को विवेक सों बनाउ बिवधान करि केसव कलेस नासकर रनधीर है । रुद्ररूप संसृति-संहारक सुरेस आदि तपन तपत सीत सीतकर बीर है ॥ विघ्न को विदारन विनायक के बाँटे परो सीताराम सरन सदासर समीर है । धारिबो धरा को जैसे धीर है धरेसजी को तारिबो तरंगिनी तिहारी तदबीर है ॥ १ ॥

१ ठंढी होंगी । २ मिट्टी । ३ नज़दीक आवेंगी । ४ सृष्टि ।

७९९. सारंग कवि

तंगन समेत काटि विहित मतंगन सों रुधिर सों रंग रनमंडल मों भरिगो। सारँग सुकवि भनै भूपति भवानीसिंह पारथ समान महा-भारथ-सो करिगो॥ मारे देखि मुगुल तुरावखान ताही समै काहू सो न जाना काहू नट-सो उचरिगो। वाजीगर की-सी दगावाजी करि हाथी हाथा हाथी हाथा हाथते सहादति उतरिगो॥१॥

८००. सुदर्शनसिंह, राजा चंदापुर के

पद

विनै करौं वनै नहीं सुवुद्धिहीन भारती[1]।
नहीं प्रसून चंदनादि पूजि कीन आरती॥
कितो कपूत पूत पै कृपा छुटै न मातु की।
तजौ नहीं सुदर्सनै सु मेरि मातु जानकी॥१॥

८०१. हरिदास कवि कायस्थ, पन्नानिवासी (१)

(रसकौमुदी)

सुघर सुहागिनि वट[2] विटप, पूजति भरी उछाहिं।
परति पाँव री प्रेम सों, भरति भाँवरी नाहिं॥१॥
खग मृग गन चित्रित जिते, निरखति तिते सहेत।
पै न स्वयम्वर-चित्र पै, चंदमुखी चित देत॥२॥
चंचल चखनि चितौनि की, जंघ जुगल दुति देख।
कदली वदली सी सजे, कदली वदली वेख॥३॥

चलति न आतुरी न मन्द गति देखियत सूधी भौंह भाल ना विसाल वंक लसिगो। लंक में न पीनता[3] न कुच पीन हरिदास मुख न मलीन न प्रभा प्रकास वसिगो॥ लखति न सूधे औ न करति कटाच्छन को अच्छन द्वै दिन ते प्रमान यह फँसिगो। सिसुताई जोवन में कसिगो पिया को मन मानो विवि चुंबक के बीच लोह गँसिगो॥१॥

१ सरस्वती। २ बर्गद का पेड़। ३ मोटाई।

सोवत जानि कै देवर सासुहि मोद भयो महिला के हियो है।
भूपन डारे उतारि सबै गृह माँझ को दीनो बुझाइ दियो है॥
सोऊ उतारि विचारि कै मैलो-सो चीर सरीर सुधारि लियो है।
यों अधराति अमावस की बनि कुंजन को अभिसार कियो है॥ २॥
पिय प्यारे के प्यार विचारि-विचारि प्रचार करै चतुराइन के।
मन में अति सोच सकोच भरै करै सोच सकोच लुगाइन के॥
हरिदास महाउर देन न देत महा उर नेह सुभाइन के।
परि लेत है वेरहि वेर भटू ठकुराइन पाँइन नाइन के॥ ३॥

लेहै बाँधि जूरो तऊ पानि सों न पूरो निज वारन गरूरो कुण्डली को रूप सैहै री। हरिदास ऐसे ही जो वदन ललौंटी तौ या मोतिन की काँचुरी-सी सोभा सरसै है री॥ जाइ मति गोकुल बिलोकि तोहिं दूरि ही ते कुंजन ते बाँसुरी वजाइ आइ जैहै री। काली जानि आली रसप्याली पछुऐहै कहूँ व्यालीसम वेनी वनमाली लखि पैहै री॥ ४॥

८०२. हरिदास कवि, बाँदानिवासी, नोने कवि के पिता (२)

कमल कला के कंज कानन भिरत चंच्छु कमल कला के कंज कानन भिरत हैं। कहै हरिदास वैन मधुर मुलाम ग्राम मधुर मुलाम ग्राम आरभ थिरत हैं॥ कन्दरप दरप विभूपन घिरत हेम कन्दरप दरप विभूपन घिरत हैं॥ १॥ *

कोमल कंजन की कलिका अलि काहे न चित्त तहाँ तू रमायो।
मंजरी मंजु रसालन की तिनको रस क्यों नहीं तो मन भायो॥
कुंजन औरै अनेक लता हरिदासजू आयो वसन्त सुहायो।
छोड़ि गुलावन को वन तू कटसेरुवाँ पै केहि कारन आयो॥ २॥

१ स्त्री। २ नेत्र। ३ आम। ४ एक पेड़, जिसका फूल पीला होता है, और जिसमें काँटे बहुत होते हैं, पर सुगंध कम।

* मूल में तीन ही चरण थे, चौथे का पता नहीं है। सम्पादक

८०३. हरिदेव बनिया, वृन्दावनवासी
(छंदपयोनिधि पिंगल)

बरन-छंद में गनन की, नहिं गुन-दोषविचार।
मात्रिक छंदन में कियो, गन-गुन-दोष सिहार ॥ १ ॥
ग्रंथ वृत्तरतनावली, तामें यह निरधार।
चिरंजीवजू भट्ट ने, कीन्हो यह निस्तार ॥ २ ॥
आसिरबादी सब्द सुर-बाची सुभ सुखदान।
इनमें गन अरु दग्ध को, फल नहिं कियो बखान ॥३॥
अवासि मानुषी काव्य में, गन-गुन-दोष विचार।
दग्ध बरन हू के फलनि, ताही में निरधार ॥ ४ ॥

८०४. हरिराम कवि
(पिंगल)

सिद्धि मिलै द्वै मित्त मित्त सेवक जय जानहु।
मित्त उदासी मिलत मिलत कछु लच्छन मानहु ॥
मिले मित्र अरु सत्रु बहुत पीड़ा उपजावहिं।
दास मित्र के मिलत काज सिधि को नर पावहिं ॥
है सकल नास द्वै दास जहँ, हानि दास सम के मिले।
हरिराम भनै है हारि सहि दासऽरु अरि जो कहुँ मिले ॥ १ ॥

८०५. हरदयाल कवि

प्यारी के दगन में झमकि दग पीतम के पीतम के नैन दग प्यारी मनरंज हैं। चाउ में सिंगार साज मैनही के सुधासार[1] दूध में पखारि धरे माधुरी के मंज हैं ॥ हरदयाल सुकवि रसाल उपमा विसाल लाल मन लाल है कै मैनसरसंज हैं। कंज बीच खंज हैं कि खंज बीच कंज हैं कि कंज हैं कि खंज हैं कि दोऊ कंज खंज हैं ॥ १ ॥

१ अमृत का सारांश।

८०६. हिरदेश कवि, झाँसीवाले
(शृंगारनवरस)

चंदन चहल चित्र महल हिदेस मोहे रस बतियान सों प्रमोद[1] सखियान में। खासे खस फरस फुहारे फुही फैल फैल फैल भर सीतल समीर छतियान में ॥ गोरे गात सोहैं गरे गजरे चमेलिन के गुहे वर सुघर सहेली अति स्थान में। गोद ते उरोज कर परस गुलाब-जल छिरकत लाड़िली लली की अँखियान में ॥ १ ॥

८०७. हरिनाथ कवि, असनीवाले, नरहरिजू के पुत्र

बाजपेई बाज सम पाँड़े पच्छिराज सम हंस-से त्रिवेदी जौन सोहैं वड़ी गाथ के। कुही सम सुकुल मयूर से तिवारी भारी जुर्रा सम मिसिर नवैया नहीं माथ के ॥ नीलकंठ दीच्छित अवस्थी हैं चकोर चारु चक्रवाक दुवे गुरू सुख सुभ साथ के। एते द्विज जाने रंग-रंग के मैं आने देस-देस में बखाने चिरीखाने हरिनाथ के ॥१॥

छप्पै

हाटक[2] कंज मयंद चन्द दाड़िम[3] गयंद गति।
छदन अरुन ऐंड़ात एक पक्कौ मदंड अति ॥
मिलि सुहागजल कुँधित सरद दरक्यो जँजीरजुत।
तपत छपत कुँस[4] तरुन गात ततकाल रोस हुत ॥
हरिनाथ ओप ग्रीषम सिसिर अमरलोक लाली ढुलत।
यह रूप देखि तन सुन्दरी जहँ ब्रह्म बिष्णु मुनि मन डुलत ॥ २ ॥

८०८. हरिहर कवि

केला कालकूट के तचाई तेज बाड़व के सेस फूँक धमनि प्रचंड ताय चढ़ी है। आई आसमान ते कि भासमान पाई सान प्रलै की बुझाई पानी पैनी धार कढ़ी है ॥ हरिहर हर को त्रिसूल हरि

१ आनंद। २ सुवर्ण। ३ अनार। ४ दुबले।

चक्र पास बैरी वर बधिबे को भली बिधि पढ़ी है। अबदुलवाहिद के नबीखान तेरी तेग बज्र के हथौरा काल कारीगर गढ़ी है॥ १॥

८०९. हरिकेश कवि, जहाँगीराबादी बुंदेलखंडी

हाली[1] ग्वाली[2] बरदिया[3], कटकैया कोतवार।
ये तुम पर दाया करैं, नितप्रति बारम्बार॥ १॥
चन्द्र धरनि रवि ध्रुव उदधि, सेस गनेस महेस।
चिर थिर राजि करौ सदा, छत्रपती जगतेस॥ २॥

मोर को मंजुल माथे किरीट लसै उर गुंज को हार ठगारो।
ठाढ़े रहे कब के हरिकेस खड़े अँगना तुम डीठि न टारो॥
साँची कहौ तुम या छबि सों बलि को हौ बिकाऊ-से रोंके दुआरो।
हैं तौ बिकाऊ जो लेत बनै हँसि बोल तिहारो है मोल हमारो॥ १॥

डहडहे डंकन को सबद निसंक होत वहवही सत्रुन की सेना आइ सर की। हाथिन के झुण्ड मारू राग की उमंग उतै चम्पति को नन्द चढ्यो उमँग समर की॥ कहै हरिकेस काली ताली दै नचत ज्यों-ज्यों लाली परसत छत्रसाल मुख बरकी। फरकि-फरकि उठैं बाहैं अस्त्र बाहिबे[5] को करकि-करकि उठैं करी बखतर की॥ २॥

८१०. हरिवंश मिश्र, बिलग्रामी

को तुम दर्भ[6] जवा तिल आखँत[7] पूरित नीर गुमान भरी हौ।
श्रीबिरसिंह की दान-नदी हम जाति सुरी तुम जाति नरी हौ॥
काहे ते ना नमती हम को हरिवंस भनै का प्रभाव बरी हौ।
पानि-सरोज ते हैं हम जू तुम भिच्छुक[8] के पग ते निकरी हौ॥ १॥
करिये जु कहा बिन देखे तुम्हैं गृह तौ दृगबारिधि सों भरिये।
भरिये दिन एक सकै हरिवंस तऊ निसि जागत ही तरिये॥

१ बलदेव। २ कृष्ण। ३ शिव। ४ भैरव। ५ चलाने को। ६ कुश। ७ अक्षत=चाँवल। ८ वामन।

तरिये यहि लाज-तरंगिनि सों गुरुलोगन को डर जी धरिये।
धरिये नँदलाल दया उर में कवहूँक तौ गौन इतै करिये ॥ २ ॥

८११. हरि कवि

भावै खेल वाको मोहिं और ना सुहावै कछू सुन्दरी छवीली बनी पातरे से अंग है। लागत झकोर पौन कैसी लहरात जात चन्द ज्यों चकोर चाहै दीठि मेरी संग है ॥ गुन सों लगाइ राखी चहौ तहाँ लिये जाउ ऊँचे-ऊँचे अटन पै कीजत सुरंग है। एहो कोऊ कामिनी लगी है चित्त कहो अहो ? कामिनी न होइ या चढ़ावत की चंग है ॥ १ ॥ सारद सुधार ढारै मोती बुद्धि सीप साँचे ढारि सिलपी विधान युक्ति वर भेद्यो है। गुनन[1] सों पोहि तीनो रीति चारो वृत्ति लरी सात को बनाइ हार दोप सबै छेद्यो है ॥ अलंकार दोऊ स्यामा स्याम अंग-अंगन में पहिराइ जुग छन्द अंकुस निवेद्यो है। लच्छना सु व्यंग्य धुनि व्यंजना हू तातपर्ज नवौ रस हरि काव्य रचि दुख खेद्यो है ॥ २ ॥

८१२. हरिवल्लभ कवि

कुण्डलिया

हरिया हरिसों हेत करु, निसि-दिन आठौ जाम।
भवसागर के भँवर में, यहै एक बिसराम ॥
यहै एक बिसराम काम जब जम सों परिहै।
मात पिता सुत वन्धु पीर कोऊ नहिं हरिहै ॥
हरिवल्लभ यह कहत देखु राँहट की घरिया।
निसिदिन आठौ जाम हेत हरि सों करु हरिया ॥

८१३. हरिलाल कवि

माँगत देह दधीचि दई बनि आई भली तिन हू पै बिदाई।

१ गुण और डोरा।

वामन द्वार गये बलि के सब भूमि दई अरु पीठि नपाई ॥
लाल कथा हरिचंदहु की सुनी सर्वस दीन न बात चलाई ।
राखिबो तौ कठिनाई नहीं रस राखि बिदा करिबो कठिनाई ॥ १ ॥

८१४. हठी कवि, ब्रजवासी
(राधाशतक)

बनफरस फैली मनिन मयूषै तैसे जरी को बितान तेज तरनि त . परैं । पाँवड़े बिछौना बिछे मोतिन की कोरवारे चारों श्रोर र ज्यों प्रभा भराभरी परैं ॥ हीरन तखत बैठी राधे महारानी हठी रम्भा रति रूप गिरि धसकि धरा परैं । छूटी मुखचंद चारु किरनैं कतारैं बाँधि छ्वै छ्वै चन्द्रमण्डल पै छवि के छरा परैं ॥१॥
मखमल माखन से इन्दु की मयूषन[1] से नूतन तमालपत्र आभा अभरन हैं । गुल[2] से गुलाल से गुलाब जपा[3] पावकसे[4] जावक[5] प्रवाल[6] लाल सोभा के धरन हैं ॥ उमापति रमापति जमापति आठो जाम सेवत रहत चारि फल के फरन हैं । पंकजबरन रवि-छवि के हरन हठी सुख के करन राधे रावरे चरन हैं ॥ २ ॥

ऋषि सु वेद बसु ससि सहित, निर्मल मधु को पाइ ।
माधो तृतिया भृगु निरखि, रच्यो ग्रंथ सुखदाइ ॥ १ ॥

८१५. हनुमान कवि, बनारसी

दीपक-सो ज्वलित प्रताप रामचन्द्र तेरो जासु छवि छाई अंड अमल उजास की । कवि हनुमान कच्छ चरन फनिंद दंड भाजन महा है मही जगत निवास की ॥ उदधि[7] सनेह बाती सुभग हिरन्य सैल तेज है अखंड मारतंड तम नास की । जारि डा-र्यो आसु सत्रु समर हतासु काज जरत परत सोई कालिमा

१ किरन । २ फूल । ३ दुपहरिया का फूल । ४ अग्नि । ५ महावर । ६ मूँगा । ७ समुद्र

अकास की ॥ १ ॥ पाँप सैलहा के पाकसासन सला के सम हेतु करता के भारहरन धरा के हैं । देत मनसा के सैलजा के जलजा के हाल जाके ध्यान छाके कटै संकट न का के हैं ॥ कंत कमला के लोक पालै बल जाके वेस वासके करैया हनुमान जियरा के हैं । ओज सविता के गुन कलपलता के महा मुकुतपताके पाँय जनकसुता के हैं ॥ २ ॥

८२६. हनुमंत कवि

राजै द्विजराज पद भूषित विभूतिमान मुक्ति देत दीनन को वासवर भायो है । वंदित सुदेवदेव अधिक पुनीत रीत हुतभुक[1]-नेही चार मत उर लायो है ॥ कमलानिवास[2] वास वरनैं अनंत संत भनै हनुमंत तासु सुजस सुहायो है । कोऊ कहै इन्दु सिव सिंधु रवि विष्णुजू को हौं तौ भूप मान परताप-गुन गायो है ॥ १ ॥

धावन[3] भेजु सखी वहि देस बसैं जिहि देस पिया मन भावन ।
भावन भोर या लूक लगी तन बीच लगी जियरा झरसावन ॥
सावन में न भयो हनुमंत दोऊ मिलि झूलि मलारहि गावन ।
गावन मोहिं सुहात नहीं बदरा वदराह लगे जुरि धावन ॥ २ ॥

८२७. होलराय कवि, होलपुर के

छप्पै

माथुर जग उजियार गौड़-गालिव गुन आगर ।
उन्नाये सखसेन नाग मुनि औ भटनागर ॥
ऐठाने आमिष्ठ प्रगट पुहुमी जे जानें ।
बालमीक कलि श्रेष्ठ सदा सूरमा वखाने ॥
कहि राय होल श्रीवासतव दिपहिं राजदरबार बर ।
गो-विप्र हेत विधनै रच्यो ये बारह कायस्थ घर ॥ १ ॥

---

१ अग्नि । २ लक्ष्मी का घर । ३ दूत ।

दिल्ली ते तख्त ह्वै है वख्त ना मुगल कैसो ह्वै है ना नगर कहूँ आगरा नगर ते। गंग ते न गुनी तानसेन ते न तानवन्द मांन ते न राजा औ न दाता वीरवर ते॥ खान खानखाना ते न नर नरहरि हू ते ह्वैहै ना दिवान कोऊ वेडर टोडर ते। नवो खण्ड सात दीप सात हू समुद्र वीच ह्वै है ना जलालुदीन साह अकवर ते॥ २॥

८१८. हजारीलाल त्रिवेदी, अलीगंज

सोरठा—या तन हरियर खेत, तरुनी हरिनी चरि गई।
अब हूँ चेत अचेत, अधचरचरा वचाइ ले॥ १॥

८१९. हितनंद कवि

दारिद-कदन गजवदन रदं[1]न एक सदं[2]न हद न वुधि साधन सुधा के सर। धूमकेतु धीर के धुरंधर धवं[3]ल धाम हेम के भरन सरनाम ना निधनकर॥ लम्वोदर हेमवतीनंद हितनन्द भाल चंद कंद आनँद विवुध वंदनीय वर। सदा सुभदायक सकल गुन लायक सु जै जै गननायक विनायक विघ्नहर॥ १॥

८२०. श्रीहितहरिवंशजी स्वामी

पद

आजु निकुंज मंजु में खेलत नवलकिसोर अरु नवलकिसोरी।
अति अनुपम अनुराग परस्पर अति अभूत भूतल पर जोरी॥
विद्रुम फटिक विविध निर्मित घर नव कर्पूर परांग न थोरी।
कोमल किसलय सैन सुपेसल ता पर स्यामल निविसत गोरी॥
मिथुन हास परिहास परायन पीक कपोल कमल पर जोरी।
गौर स्याम भुज कलह मनोहर नीवी वंधन मोहन डोरी॥
यों उर मुकुर विलोकि अपनपौ विभ्रम विकल मानजुत भोरी।
चिवुं[4]क सुचारु प्रलोइ प्रवोधित प्रिय प्रतिविम्व जनाइ निहोरी॥

१ दाँत। २ घर। ३ उज्ज्वल। ४ धूर। ५ ठोढ़ी।

नेति नेति वचनामृत सुनि सुनि ललितादिक देखत दुरि चोरी।
हितहरिवंस करत कर-धूनन प्रनय कोप माला वलि तोरी॥ १॥

८२१. हरिभानु कवि

(नरेंद्रभूषण)

कैधौं है सिंगार वीच रौद्र रस रेख कैधौं सोहत कसौटी कैधौं कनक सराफ काम। कैधौं तम ऊपर रजोगुन की लीक मृदु कैधौं घन दामिनी लसत महा अभिराम॥ कैधौं स्याम भामिनी को भूखि कै विधाता कीनी न्हाइवे को नीकीं वर रेसम की डोरी दाम। कैधौं प्यारे प्रीतम के वस करिवे को भानु सेंदुर सुवेस माँग सुन्दर सँवारी वाम॥ १॥ संग दल भारो घोर धुरत नगारो कोई और न विचारो कोई तोरावर रावरो। ऐल परी अधिकात फरियारो गैल गैल खैल भैल अति सु मुलुक भयो बावरो॥ वैरिन की वाला यों कहत निज वालम सों वैरिन रच्यो है कंत कीनो कालु रावरो। सूधी मति जानो आन कविन बखानो भानुसिंह रनजोर सुनियत रन रावरो॥ २॥

८२२. हुसेन कवि

कज्जल सी निसि सज्जल[3] से घन तज्जल में चली संग न सथ्थी।
कुंज अँध्यारी सिधारी हुसेन विहारी पै जाति ती सुद्धि मैं न थ्थी॥
किंचक दव्वत सर्प लग्यो पग सर्प घसीटत एक पगैथ्थी।
जोर जँजीर जरो जकरो मनो छूटि चलो मनमथ्थ को हथ्थी॥ १॥

८२३. हेमगोपाल कवि

चंद ते स्याम कलंक ते उज्ज्वल है निसि चंद पै चंद न होई।
वर्षि सुधा सबको सुख देत रहै जो महेस के मस्तक सोई॥

१ नहीं-नहीं। २। छिपकर। ३। जलभरे। ४। एक पैर से थी।

है बिपरीत नहीं बिपरीत सु वेद पुरान कहैं सब कोई।
मास के मध्य में हेमगोपाल बदौं नर ताहि कहै कवि जोई ॥ १ ॥ *

८२४. हेमनाथ कवि

जोर परे जोर जात भार परे भूमि जात झूमि जात जोबन अनंग रंग रस है। कहै हेमनाथ सुख सम्पति बिपति जात जात दुख दारिद समूह सरबस है॥ गढ़ गिरि जात गरुआई औ गरब जात जात सुख-साहिबी समूह सब रस है। बाग कटि जात कुआँ ताल पटि जात नदी नद घटि जात पै न जात जग जस है॥ १ ॥ एक रसना[1] में जाम जपत हौं रामै ता मैं तेरो जस जोरि कामै कबहूँ बिसारि हौं। कहै हेमनाथ नरनाथन के आगे जाय तेरो जस जाहिर जवाहिर पसारि हौं॥ कौन देहै मोल मोहिं केहरी कल्यान-साहि नाम सो नगीना कहि काके कान डारि हौं। साँपिनि सु-नाइ गुन गारुड़ी तिहारो पढ़ि सूम उर बिवर[2] सों बाहर कै डारि हौं॥२॥

८२५. हेम कवि

करि कै सिंगार अली चली पिय पास तेरे रूप को दिमाग काम कैसे धीर धरि है। एरी मृगनैनी चाल चलत मरालन[3] की तेरी छवि देखे ते पिया न ध्यान टरि है॥ ता ते तू बैठि रूप-आगरी सु मन्दिर में तेरे रूप देखे ते अरकरथ[4] अरि है। कहै कवि हेम हियो ढाँपि लेहु अंचल ते पेटी ना दिखाउ कोऊ पेट मारि मरि है॥ १ ॥

८२६. हरिश्चंद्र बाबू बनारसी श्रीगिरिधरदास के पुत्र

(सुंदरीतिलक)

तब तौ बहु भाँति भरोसो दियो अबहीं हम लाय मिलावती हैं।
हरिचंद भरोसे रहीं उनके सखियाँ जे हमारी कहावती हैं॥
अब तेऊ दगा दै बिदा ह्वै गईं उलटे मिलि कै समुझावती हैं।

* यह कबित्त कूट है। १ जीभ। २ बाँबी। ३ हंस। ४ सूर्य का रथ।

पहिले तो लगाय कै आगि सबै जल को अब आपुहि धावती हैं ॥ १ ॥
जानि सुजान मैं प्रीति करी सहि कै जग की बहुभाँति हँसाई।
त्यों हरिचंद जू जो जो कह्यो सो कर्‌यो चुप ह्वै करि कोटि उपाई ॥
सोऊ नहीं निबही उनसों उन तोरत बार कछू न लगाई।
साँची भई कहनावति या अरी ऊँची दुकान की फीकी मिठाई ॥ २ ॥

८२७. हरजीवन कवि

हरजीवन नेह भरी न रहै घर जी मनमोहन के गरजी।
गरजी सुनिकै उनकी मुरली ततकाल हिये में लग्यो सरजी ॥
सरजीवन देह न ऐसी परी सु मनो धन प्रान गये धरजी।
धर जीभ गई लटराय तऊ मुख से निकसै हरजी हरजी ॥ १ ॥

८२८. हरदेव कवि

उड़ि उड़ि जात घनसार घन सोभासार हेरि हेरि हंसन सी करतै अतारै[१] सी। कहि हरदेव हिमगिरि सी गिरा[२] सी गंग की सी सरसाती है रती के तोर तारै सी ॥ कीरति तिहारी रघुनाथराव महादानि पुंडरीक-सेनी[३] सुभ्र सहज सतारै सी। छीरद की है रही छटा सी छिति छोर पर चारौ ओर ह्वै रही कलानिधि कतारै सी ॥ १ ॥

८२९. हरिलाल

केसरि निकाई किसलय कीरताई लिये भाई नाहीं जिनकी धरत अलकत है। दिनकर-सारथी ते देखियत एते सैन अधिक अनार की कली ते अरकत है ॥ लीला सी लसत जहाँ हीरा सी हँसनि राजै नैन निरखत अलकत असकत है। जीते नगलाल हरि-लाल लाल[४] अधरन सुघर प्रवाल[५] से रसाल[६] झलकत है ॥ १ ॥

---

१ बाण। २ सरस्वती। ३ कमल की पंक्ति। ४ अरुण। ५ मूँगा। ६ रसीले।

८३०. हरिजन कवि

मेरे नैन अंजन तिहारे अधरन पर सोभा देखि गुमर बढ़ावैं सबै सखियाँ। मेरे अधरन पै ललाई पीक लाल तैसे रावरे कपोल गोल नोखी लीक लखियाँ ॥ कवि हरिजन मेरे उर गुन-माल तेरे बिन गुन माल रेख सेख देखि भखियाँ। देखौ लै मुकुर दुति कौन की अधिक लाल मेरी लाल चूनरी तिहारी लाल अँखियाँ ॥ १ ॥

८३१. हरिजू कवि

माया के निसान जे निसान अपकीरति[2] के जानत जहान कहूँ कहूँ उसुरन सों। कुंज सी कु ये ही अंग ऐबी गुमराही गुनी देखि अनखाय पगे पाप कुकुरन सों ॥ हरिजू सुकवि कहै बचन अमोलन के जाति कुरवातन बसाति असुरन सों। माँगत इनाम करतार पै पुकारि कहौं परै जनि काम ऐसे सूम ससुरन सों ॥ १ ॥

८३२ हीरामणि कवि

छाये रहे माड़व गवाये रहे गीत रीत न्योतें न्योतहारी सों बरात रही बनि ये। भीषम सकुचि घर भीतर ही बैठि रहे रोप करि लिये जात द्वारका को धनि ये ॥ हीरामनि रुकुम पुकार लगे यह सुनि विफल से बाँधि लिये हनते को हनिये। हरि कर कहत रुकुमिनी सों जादौनाथ अजहूँ तिहारे वीर सूरन में सनि गे ॥ १ ॥ डारि डारि हलधर हल कही बारबार कलप कलप की कलंक कुल दै गयो। हीरामनि कहै जब कोऊ ना लग्यो पुकार पांडुसुत है प्रचण्ड पुण्डरीक कै गयो ॥ तेह ते तमकि यों रुकिमिनी ने कही बात जब जदुनाथ प्रभुजू को दम दैगयो। साँझ बिन सूझे बिन बूझे बिन जूझे बिन अरजुन पकरि सुभद्राजी को लै गयो ॥ २ ॥

८३३. हरीराम प्राचीन

लागे लाल चौकी में विराजैं हरीराम कहै रोमावली दंड है

१ आईना। २ अपयश।

अकाल दिया काम को। कैधौं जलधर एक धारा सों विराजत है कैधौं कवरी की परछाईं झाईं बाम को ॥ कैधौं गजसुण्ड नाभि-कुण्ड जल पान करै कैधौं कामदेव लिखि राख्यो रति-नाम को। कैधौं कुच भूप सीमा[2] बाँटि लीनी आधे-आध कैधौं है पिपीलिका[3] की पाँति चली धाम को ॥ १ ॥

८३४. हिमाचलराम शाकद्वीपी, भटौलीवाले

एक समै प्रभु खेलहिं गेंद गिरो जमुनाजल मध्यहि माहीं।
कूदि पर्‍यो हरि ताही के हेत गयो धसि पैठि पतालहि जाहीं ॥
बाल सखा बहु रोदन कै हिय सोच बड़ो गये मैहरि पाहीं।
कृष्ण तिहारो डुबो जमुना विच ढूँढ़ि थके हम पावत नाहीं ॥१ ॥

८३५. हीरालाल कवि

हिमंकर वैरी और हाथी औ हरिन हरि खंजरीट वैरी तेरो मीन औ मराल री। कदली कपूर फेरि कोकिल की वैरिनि तू दाड़िम बँधूक बिम्ब वैरी हैं सँयार री ॥ चम्पा सम्पा चंचरीक कीर कम्बु हीरालाल जमुना औ सौति वैरी कुन्दन औ व्याल री। एते सबै वैरी तेरे एक हितू स्याम तेरे स्याम हू ते वैर तेरो ह्वैहै कौन हाल री ॥ १ ॥

८३६. हुलास कवि

व्याप्यो न काहि वियैवे को वेदन कौन सुभाज न मंगल पेख्यो।
कौन तिया को सिंगार न भावत कौन सी रैनि जो चंद न लेख्यो ॥
काहे हुलास संजोगिनी के जिय साँची कहौ यह बात बिसेख्यो।
बाँझ को पूत बिना अँखियान कुहूनिसि[5] में ससि[4] पूरन देख्यो ॥१॥

८३७. हरिदास वृन्दावनवासी

पद

जयति राधिकारमण वरचरणपरिचरणरतिवल्लभाश्रीशंसतविह्वलेशे।

१ चोटी। २ हद। ३ चींटी। ४ चंद्रमा। ५ अमावस की रात।

दासजनलौकिकालौकिके सर्वथा केवंचित्तोदयति हृदयदेशे ॥
स्थापयत मानसं सततकृतलालसं सहजसुखमारुचिररूपवेशे ।
भालगततिलकमुद्रादिशोभासहितमस्तकाबद्धसितकृष्णकेशे ॥
सहजहासादियुतवदनपंकजसरसवचनरचनापराजितसुदेशे ।
अखिलसाधनरहितदोपशतसहितमतिदासहरिदासगातनिजवलेशे १॥

गायो न गोपाल मन लाय के निवारि लाज पायो न प्रसाद साधुमण्डलीन जायके । धायो न धमकि वृन्दाविपिन के कुंजन में रह्यो न सरन जाइ विट्ठलेसराय के ॥ नाथजू न देखि छक्यो छनहू छबीली छवि सिंहपौरि पर्यो नाहिं सीसहू नवाय के । कहै हरिदास तोहिं लाज हू न आवै जिय जनम गँवायो न कमायो कछु आय के ॥ १ ॥

८३८. हरिचरणदास कवि
(भाषा वृहत्कविवल्लभ)

आनँद को कन्द वृषभानुजा को मुखचंद लीला ही ते मोहन के मानस को चोरै है । दूजो तैसो रचिवे को चाहत विरंचि नित ससि को वनावै अजौं मुख को न मोरै है ॥ फेरत है सान आसमान पै चढ़ाय फेरि पानिप चढ़ाइवे को वारिधि में वोरै है । राधिका के आनन को जोट न विलोकै विधि टूक-टूक तोरै फेरि टूक-टूक जोरै है ॥ १ ॥

८३९. हरिश्चन्द्र कवि वरसानेवाले
(छन्दस्वरूपिणी पिंगल)

सोरठा—गनपति-पद सिर नाइ, वरनौं छन्दस्वरूपिनी ।
मात्रन वरन गनाइ, नाम रूप प्रतिछन्द को ॥ १ ॥
दोहा—कहुँ हरिचंद्रै कहूँ हरि, कहूँ चन्द्रही नाम ।
ग्रंथ भरे में छन्दप्रति, यहै कियो लिखि काम ॥ २ ॥

सवैया

काल कमाल कराल करालन साल बिसालन चाल चली है।
हाल बिहालन ताल तमाल प्रवाल के वालक लाल लली है॥
लोल बिलोल कलोल अमोल कलाल कपोल कलोल कली है।
बोलन बोल कपोलन डोल गलोलग लोल रलोल गली है॥ ३॥

इति श्रीशिवसिंहसेंगरविरचितो शिवसिंहसरोज-
संग्रहः सम्पूर्णः।

कवियों के जीवनचरित्र

१ अकबर वादशाह, दिल्ली; संवत् १५८४ में उत्पन्न हुए।

इनके हालात में अकबरनामा, आईन-अकबरी, तवकात्-अकबरी, अब्दुलकादिर वदायूनी की तारीख़ इत्यादि बड़ी बड़ी किताबें लिखी गई हैं, जिनसे इस महा प्रतापी वादशाह का जीवनचरित्र साफ़-साफ़ मालूम होजाता है। यहाँ केवल हमको उनकी कविता का वर्णन करना आवश्यक है। हमको इनका कोई ग्रंथ नहीं मिला। दो-चार कवित्त जो मिले, सो हमने लिख दिये हैं। जहाँगीर वादशाह ने अपने जीवनचरित्र की किताब तुज़ुक-जहाँगीरी में लिखा है कि अकबर वादशाह कुछ पढ़े-लिखे न थे, परन्तु मौलाना अब्दुलकादिर की किताब से प्रकट है कि अकबर वादशाह एक रात को आप ही संस्कृत महाभारत का उल्था कराने बैठे थे। सुलतान मुहम्मद थानेसरी और ख़ुद मौलाना वदायूनी और शेख़ फ़ैज़ी[1] ने जहाँ-जहाँ कुछ आशय छोड़दिया था उसका फिर तर्जुमा करने का हुक्म दिया। इनके समय में नरहरि, करन, होल, खानख़ाना, वीरवल, गंग इत्यादि बड़े-बड़े कवि हुए हैं। पाँच ख़ास कवि जो नौकर थे, उनके नाम इस सवैया में हैं—

सवैया

पाइ प्रसिद्धि पुरंदर ब्रह्म सुधारस अंमृत अंमृत वानी।
गोकुल गोप गोपाल गनेस गुनी गुनसागर गंग सु ज्ञानी॥
जोध जगन्न जगे जगदीस जगामग जैत जगत्त है जानी।
कोर अकब्बर सैन कथी इतने मिलिकै कविता जु वखानी॥ १॥

१ शेख़ फ़ैज़ी बहुत बड़ा विद्वान् था। अकबर उसे वहुत मानते थे।

श्रीगोसाईं तुलसीदास इनके दरबार में हाज़िर नहीं हुए। सूरदासजी और उनके पिता बाबा रामदास गानेवालों में नौकर थे, जैसा कि आईन-अकबरी में लिखा है। केशवदासजी उस समय में इनके मंत्री श्रीराजा बीरबल के दरबार में हाज़िर हुए थे, जब इन्द्रजीत राजा उड़छा बुंदेलखण्डी पर प्रवीनराइ पातुर के लिये बादशाही कोप था॥

दोहा—जाको जस है जगत में, जगत सराहै जाहि।
ताको जीवन सफल है, कहत अकव्वर साहि॥ १ सफ़ा॥

२ अजबेश प्राचीन (१), सं० १५७० में उ०।

यह कवि श्रीराजा बीरभानुसिंह, जोधपुर के यहाँ थे, और उसी देश के रहने वाले बंदीजन मालूम होते हैं॥ २ सफ़ा॥

३ अजबेश नवीन भाट (२), सं० १८९२ में उ०।

यह कवि श्रीमहाराजा विश्वनाथसिंह बान्धव-नरेश के यहाँ थे॥ २ सफ़ा॥

४ अयोध्याप्रसाद बाजपेयी सातनपुरवा, ज़िला
रायबरेली, औध छाप है। विद्यमान हैं।

यह कवि संस्कृत और भाषाके महान् पण्डित आजतक विद्यमान हैं। इनकी कविता बहुत सरस और अनोखी है। छन्दानन्द, साहित्य-सुधासागर, राम कवित्तावली इत्यादिग्रन्थ बनाये और बहुधा श्रीअयोध्याजी में बाबा रघुनाथदास महन्त और चन्दापुर में राजा जगमोहन सिंह के यहाँ रहा करते हैं॥ ३ सफ़ा॥

५ अवधेश ब्राह्मण बुंदेलखण्डी, चरखारी, सं० १९०१ में उ०।

यह कवि राजा रतनसिंह बुंदेला चरखारी अधिपति के क़दीम कवि हैं। इनकी कविता सरस है। परन्तु मैंने कोई ग्रन्थ इनका नहीं पाया॥ ४ सफ़ा॥

६ अवधेश ब्राह्मण सूपा के (२), बुंदेलखण्डी, सं० १८६५ में उ०।

यह कवि बहुत सुन्दर कविता करने में चतुर थे। परन्तु कोई ग्रन्थ मैंने इनका नहीं पाया॥ ४ सफ़ा॥

७ अवधबकस, संवत् १६०४ में उ०।

कविता सरस है। गाँव-ठांव मालूम नहीं॥ ४ सफ़ा॥

८ औध कवि, संवत् १८६६ में उ०।

इनके हालात से हम नावाकिफ़ हैं, और भ्रम होता है कि शायद जो कवित्त हमने इनके नाम से लिखा है, वह बाजपेयी अयोध्याप्रसाद का न हो॥ ७ सफ़ा॥

६ अयोध्याप्रसाद शुक्ल, गोला गोकरननाथ, ज़िला खीरी, सं० १६०२ में उ०।

यह कुछ विशेष उत्तम कवि तो नहीं थे, हाँ कविता करते थे, और बहुतेरे ग्रन्थ इनके बनाये मैंने देखे हैं। राजा भूड़ के यहाँ इनका बड़ा मान था॥ ७ सफ़ा॥

१० आनन्दसिंह, नाम दुर्गासिंह, अहवन दिकोलिया, ज़िले सीतापुर। विद्यमान हैं।

सामान्य कवि हैं। अभी कोई ग्रन्थ नहीं बनाया॥ ६ सफ़ा॥

११ अमरेश कवि, सं० १६३५ में उ०।

इनकी कविता बड़ी उत्तम है। कालिदासजू ने अपने हज़ारे में इनकी कविता बहुत सी लिखी है॥ ६ सफ़ा॥

१२ अंबुज कवि, सं० १८७५ में उ०।

इनके नीति-संबंधी कवित्त और नखशिख बहुत सरस हैं॥ ५ सफ़ा॥

१३ आजम कवि, सं० १८६६ में उ०।

यह मुसल्मान कवि कविता के चाहक थे, और कवियों के सत्संग में सुंदर काव्य करते थे। इनका बनाया हुआ नखशिख और षट्ऋतु अच्छा है॥ ५ सफ़ा॥

१४ अहमद कवि, सं० १६७० में उ० ।

इनका मत सूफ़ी अर्थात् वेदांतियों से मिलता-जुलता था। इनके दोहा, सोरठा बहुत ही चुटीले, रसीले हैं ॥ ६ सफ़ा ॥

१५ अनन्य कवि (१), सं० १७६० में उ० ।

वेदांत-संबन्धी तथा नीति, चेतावनी, सामयिक वार्ता में इनकी बहुत कविता है ॥ ६ सफ़ा ॥

१६ आलम कवि (१), सं० १७१२ में उ० ।

पहले सनाढ्य ब्राह्मण थे, पीछे किसी रँगरेजिन के इश्क में मुसल्मान होकर मुअज्जम शाह (शाहज़ादे शाहजहाँ वादशाह) की ख़िदमत में बहुत दिनों तक रहे। कविता बहुत सुंदर है ॥ ९ सफ़ा ॥ (?)

१७ असकंदगिरि, बाँदा, बुंदेलखंडी सं० १९१६ में उ० ।

यह कवि गोसाईं हिम्मतबहादुर के वंश में थे, और कविता के बड़े चाहक, गुणग्राहक थे। नायिका भेद का एक ग्रंथ असकंद-विनोद नाम बहुत अद्भुत रचा है ॥ १० सफ़ा ॥

१८ अनूपदास कवि, सं० १८०१ में उ० ।

शांत-रस में बहुधा इनके कवित्त, दोहा, गीत आदि देखे गये ॥ १० सफ़ा ॥

१९ ओलीराम कवि, सं० १६२१ में उ० ।

कालिदासजी ने इनका काव्य अपने हज़ारे में लिखा है ॥ ११ सफ़ा ॥

२० अभयराम कवि, वृन्दावनी सं० १६०२ में उ० ।

ऐज़न ॥ ११ सफ़ा ॥

२१ अमृत कवि, सं० १६०२ में उ० ।

अकबर बादशाह के यहाँ थे ॥ ११ सफ़ा ॥

२२ आनन्दघन कवि दिल्लीवाले, सं० १७१५ में उ० ॥

इन कवि की कविता सूर्य के समान भासमान है। मैंने कोई

ग्रंथ इनका नहीं देखा। इनके फुटकर कवित्त प्रायः पाँच सौ तक मेरे पुस्तकालय में होंगे ॥ ११ सफ़ा ॥

२३ अभिमन्यु कवि, सं० १६८० में उ०।

इनकी कविता शृंगार-रस में चोखी है ॥ १२ सफ़ा ॥

२४ अनन्त कवि, सं० १६६२ में उ०।

नायिकाभेद का इनका एक ग्रन्थ अनन्तानन्द है ॥ १२ सफ़ा ॥

२५ आदिल कवि, सं० १७६२ में उ०।

फुटकर काव्य है। कोई ग्रन्थ देखा-सुना नहीं ॥ १२ सफ़ा ॥

२६ अलमिन कवि, सं० १६३३ में उ०।

सुन्दरीतिलक में इनके कवित्त हैं ॥ १३ सफ़ा ॥

२७ अनीश कवि, सं० १६११ में उ०।

दिग्विजयभूषण में इनके कवित्त हैं ॥ १३ सफ़ा ॥

२८ अनुनैन कवि, सं० १८६६ में उ०।

इनका नखशिख अच्छा है ॥ १३ सफ़ा ॥

२६ अनाथदास कवि, सं० १७१६ में उ०।

शांतरस-सम्बन्धी काव्य किया है, और विचारमाला नाम ग्रन्थ वनाया है ॥ १४ सफ़ा ॥

३० अक्षरअनन्य कवि, सं० १७१० में उ०।

शान्त-रस का काव्य किया है ॥ १४ सफ़ा ॥

३१ अनन्य कवि (२)

दुर्गाजी का भाषा-अनुवाद किया है ॥ १० सफ़ा ॥

३२ अब्दुलरहिमान दिल्लीवाले, सं० १७३८ में उ०।

यह कवि मोअज्जमशाह के यहाँ थे, और यमकशतक नाम ग्रन्थ अति विचित्र वनाया है ॥ ५ सफ़ा ॥

३३ अमरदास कवि, १७१२ में उ०।

सामान्य काव्य है। कोई ग्रंथ इनका देखा-सुना नहीं ॥ २ सफ़ा ॥

३४ अगर कवि, सं० १६२६ में उ० ।

नीति-सम्बन्धी कुंडलिया, छप्पय, दोहा इत्यादि बहुत बनाये हैं ॥ ८ सफ़ा ॥

३५ अग्रदास गलता, जयपुर-राज्य के निवासी, सं० १५९५ में उ० ।

इनके बहुत पद रागसागरोद्भव-रागकल्पद्रुम में हैं। ये महाराजा कृष्णदास पयअहारी के शिष्य थे, और इन महाराज के नाभादास भक्तमाल-ग्रन्थकर्त्ता शिष्य थे ॥ १८ सफ़ा ॥

३६ अनन्यदास चकेदवा, ज़िले गोंडावासी ब्राह्मण, सं० १२२५ में उ० ।

महाराजा पृथ्वीचन्द दिल्लीदेशाधीश के यहाँ अनन्ययोग नाम ग्रन्थ बनाया है ॥ १४ सफ़ा ॥

३७ आसकरनदास कछवाह राजा भीमसिंह नरवरगढ़-वाले के पुत्र, सं० १६१५ में उ० ।

पद बहुत बनाये हैं, जो कृष्णानन्द व्यासदेव के संगृहीत ग्रंथ में मौजूद हैं ॥ १४ सफ़ा ॥

३८ अमरसिंह हाड़ा जोधपुर के राजा सं० १६२१ में उ० ।

यह महाराज अमरसिंह श्रीहाड़ा-वंशावतंस सूरसिंह के पौत्र हैं, जिन सूरसिंह ने छः लाख रुपए एक दिन में छः कवियों को इनाम में दिए थे, और जिनके पिता गजसिंह ने राजपूताने के कवियों को धनाधीश कर दिया था। राजा अमरसिंह की तारीफ़ में जो बनवारी कवि ने यह कवित्त कहा है कि "हाथ की बड़ाई की बड़ाई जमधर की" सो इसकी बाबत टाडसाहब की किताब टाडराजस्थान से हम कुछ लिखते हैं। प्रकट हो कि राजा अमरसिंह हाड़ा महागुणग्राहक और साहित्य-शास्त्र के बड़े क़दरदान और ख़ुद भी महाकवि थे। इन्हीं महाराजा ने पृथ्वीराजरायसा चन्द्रकवि-कृत को सारे राजपूताने में तलाश कराकर उनहत्तर खण्ड तक जमा किया, जो अब सारे राजपूताने में बड़े-बड़े पुस्तकालयों में

मौजूद है। शाहजहाँ बादशाह के यहाँ अमरसिंह का मनसब तीन-हजारी था। अमरसिंह बहुधा सैर-शिकार में रहा करते थे, इस लिये एक दफ़े शाहजहाँ ने नाराज़ होकर कुछ जुरमाना किया, और सलावतख़ाँ बख़शी उल्मुमालिक को जुरमाना वसूल करने को नियत किया। अमरसिंह महाक्रोधाग्नि से प्रज्वलित हो दरबारमें आए। पहले एक ख़ंजर से सलावतख़ाँ का काम तमाम किया, पीछे शाहजहाँ पर भी तलवार आबदार झाड़ी। तलवार खंभे में लगी। बादशाह तो भाग बचे। अमरसिंह ने पाँच और बड़े सरदार मुग़लों को मारा। आप भी उसी जगह अपने साले अर्जुन गौर के हाथ से मारे गये। विस्तार के भय से मैंने संक्षेप लिखा है॥

३९ आनन्द कवि, सं० १७११ में उ०।

कोकसार और सामुद्रिक दो ग्रन्थ इनके बनाये हैं॥

४० अंबरभाट चौजीतपुर बुंदेलखण्डी, सं० १९१० में उ०।

४१ अनूप कवि, सं० १७९८ में उ०।

४२ आकूब ख़ाँ कवि, सं० १७७५ में उ०।

रसिकप्रिया का तिलक बनाया है॥

४३ अनवर ख़ाँ कवि, सं० १७८० में उ०।

अनवरचन्द्रिका नाम ग्रन्थ सतसई की टीका बनाया है॥

४४ आसिफ़ ख़ाँ कवि, सं०१७३८ में उ०।

४५ आछेलाल भाट कन्नौजवासी, सं० १८८९ में उ०।

४६ अमरजी कवि राजपूताने वाले।

राजपूताने में ये कवीश्वर महानामी हो गजरे हैं। टाडसाहब ने राजस्थान में इनका ज़िक्र किया है॥

४७ अजीतसिंह राठौर उदयपुर के राजा, सं० १७८७ में उ०।

इन महाराज ने राजरूपकाख्यात नाम एक ग्रन्थ बहुत बड़ा

वंशावली का बनवाया है। इस ग्रंथ में वंशावली जयचन्द राठौर महाराजा कन्नौज की तब से प्रारंभ की है, जब नयनपाल ने संवत् ५२६ में कन्नौज को फ़ते करके अजयपाल राजा कन्नौज का वध किया था। तब से लेकर राजा जयचंद तक सब हालात लिख फिर दूसरे खण्ड में राजा यशवंतसिंह के मरण अर्थात् संवत् १७३५ तक के सब हाल लिखे हैं। तीसरे खण्ड में सूर्य-वंश जहाँ से प्रारंभ हुआ वहाँ से यशवंतसिंह के पुत्र अजीतसिंह के बालेपन अर्थात् १७८७ तक का वर्णन किया है॥

१ इच्छाराम अवस्थी पचरुवा इलाक़े हैदरगढ़ के, सं० १८५५ में उ०।

ब्रह्मविलास नाम ग्रन्थ वेदांत में बहुत बड़ा बनाया है। यह बड़े सत्-कवि थे॥ १६ सफ़ा॥

२ ईश्वर कवि, सं० १७३० में उ०।

यह कवि औरंगज़ेब के यहाँ थे। कविता सरस है॥ १५ सफ़ा॥

३ इन्दुकवि, सं० १७७६ में उ०।

यह कवि सामान्य हैं॥ १५ सफ़ा॥

४ ईश्वरीप्रसाद त्रिपाठी पीरनगर ज़िले सीतापुर, विद्यमान हैं।

रामविलास ग्रंथ, वाल्मीकीय रामायण का उल्था, नाना छन्दों में काव्यरीति से किया है॥ १५ सफ़ा॥

५ ईश कवि, सं० १७६६ में उ०।

शृङ्गार और शांत रस की इनकी कविता बहुत ही ललित है॥ १६ सफ़ा॥

६ इंद्रजीत त्रिपाठी वनपुरा अंतरबेदवाले, सं० १७३६ में उ०।

औरंगजेब के नौकर थे॥ १६ सफ़ा॥

७ ईसुफ़ ख़ाँ कवि, सं० १७६१ में उ०।

सतसई और रसिकप्रिया की टीका की है॥

१ उदयसिंह महाराजा मारवार, सं० १५१२ में उ० ।

ख्यात नाम ग्रंथ बनाया, जिसमें अपने, अपने पुत्र गजसिंह और अपने पोते यशवंतसिंह के जीवनचरित्र लिखे हैं ॥

२ उदयनाथ वंदीजन काशीवासी, सं० १७११ में उ० ।

उदयनाथ नाम कविन्द का भी है, जो कालिदास कवि के पुत्र और दूलह कवि बनपुरा-निवासी के पिता थे ॥ १७ सफ़ा ॥

३ उदेश भाट बुंदेलखण्डी, सं० १८१५ में उ० ।

सामयिक कवित्त बहुधा कहे हैं ॥ १७ सफ़ा ॥

४ ऊधोराम कवि, सं० १६१० में उ० ।

इनकी कविता कालिदासजू ने अपने हज़ारे में लिखी है ॥ १७ सफ़ा ॥

५ ऊधो कवि, सं० १८५३ में उ० ।

सामान्य कवि थे ॥ १८ सफ़ा ॥

६ उमेद कवि, सं० १८५३ में उ० ।

इनका नखशिख सुंदर है । मालूम होता है, यह कवि अंतरवेद अथवा शाहजहाँपुर के निकट किसी गाँव के रहने वाले थे ॥ १८सफ़ा॥

७ उमरावसिंह पँवार सैदगाँव, ज़िले सीतापुर । विद्यमान हैं ।

कुछ कविता करते और कविलोगों का सत्संग रखते हैं ॥ १८ सफ़ा ॥

८ उनियारे के राजा कछवाहे, सं० १८८० में उ० ।

भाषाभूषण और बलभद्र के नखशिख का तिलक बहुत विचित्र बनाया है । नाम हमारी किताब से जाता रहा । उनियारा एक रियासत का नाम है, जो जयपुर में है ॥

१ केशवदास सनाढ्य मिश्र (१) बुंदेलखंडी, सं० १६२४ में उ० ।

इनका प्राचीन निवास टेहरी था । राजा मधुकरशाह उड़छावाले के यहाँ आये, और वहाँ इनका बड़ा सम्मान हुआ । राजा इंद्रजीत-सिंह ने २१ गाँव संकल्प कर दिये । तब कुटुंब-सहित उड़छे में रहने-

लगे। भाषाकाव्य का तो इनको माघ, मम्मट, भरत के समान प्रथम आचार्य समझना चाहिये, क्योंकि काव्य के दसो अंग पहले-पहल इन्हीं ने कविप्रिया ग्रंथ में वर्णन किये। पीछे अनेक आचार्यों ने नाना ग्रंथ भाषा में रचे। प्रथम मधुकरशाह के नाम से विज्ञानगीता ग्रंथ बनाया, और कविप्रिया ग्रंथ प्रवीणराय पातुर के लिये रचा। रामचंद्रिका राजा मधुकरशाह के पुत्र इंद्रजीत के नाम से बनाई, और रसिकप्रिया साहित्य और रामअलंकृतमंजरी पिंगल ये दोनो ग्रंथ विद्वज्जनों के उपकारार्थ रचे। जब अकबर बादशाह ने प्रवीणराय पातुर के हाज़िर न होने, उदूलहुक्मी और लड़ाई के कारण राजा इंद्रजीत पर एक करोड़ रुपए का जुरमाना किया, तब केशवदासजी ने छिपकर राजा बीरबल मंत्री से मुलाक़ात की, और बीरबल की प्रशंसा में "दियो करतार दूहूँ कर तारी" यह कवित्त पढ़ा। तब राजा बीरबल ने महाप्रसन्न हो जुरमाना माफ़ कराया। परंतु प्रवीणराय को दरबार में आना पड़ा॥ १८ सफ़ा॥

२ केशवदास (२)।

सामान्य कविता है॥ २१ सफ़ा॥

३ केशवराय बाबू बघेलखण्डी, सं० १७३६ में उ०।

इन्होंने नायिकाभेद का एक ग्रन्थ बहुत सुन्दर बनाया है और इनके कवित्त बलदेव कवि ने अपने संगृहीत ग्रंथ सत्कविगिराविलास में रक्खे हैं॥ २२ सफ़ा॥

४ केशवराम कवि।

इन्होंने भ्रमरगीत नाम ग्रंथ रचा है॥ २२ सफ़ा॥

५ कुमारमणि भट्ट गोकुलनिवासी, सं० १८०३ में उ०।

यह कवि कविता करने में महा चतुर थे। इन्होंने साहित्य में एक ग्रंथ रसिकरसाल नाम का बनाया है, जिसकी खूबी उसके अवलोकन से विदित हो सकती है॥ २२ सफ़ा॥

६ करनेश कवि बन्दीजन असनीवाले, सं० १६११ में उ०।

यह कवि नरहरि कवि के साथ दिल्ली में अकबर शाह की सभा में जाते-आते थे। इन्होंने कर्णाभरण, श्रुतिभूषण, भूपभूषण, ये तीन ग्रंथ बनाये हैं॥ ३४ सफ़ा॥

७ करन भट्ट पन्नानिवासी, सं० १७६४ में उ०।

इन्होंने साहित्यचन्द्रिका नाम ग्रंथ बिहारीसतसई की टीका श्रीबुंदेलवंशावतंस राजा सभासिंह हृदयसाहि पन्नानरेश की आज्ञानुसार बनाया है। पहले यह कवि काव्य पढ़कर एक दिन पन्नानरेश राजा सभासिंह की सभा में गये। राजा ने यह समस्या दी, "वदन कँपायो दाबि रसना दसन सों।" इसीके ऊपर करनजी ने "बड़े-बड़े मोतिन की लसत नथूनी नाक" यह कवित्त पढ़ा। राजा ने बहुत प्रसन्न होकर बहुत दान-सम्मान किया॥ २४ सफ़ा॥

८ कर्ण ब्राह्मण बुंदेलखंडी, सं० १८५७ में उ०।

यह कवि राजा हिन्दूपति पन्नानरेश के यहाँ थे और साहित्यरस, रसकल्लोल, ये दो ग्रन्थ रचे हैं॥ २४ सफ़ा॥

९ करन कवि बंदीजन जोधपुरवाले, सं० १७८७ में उ०।

यह राठौर महाराजों के प्राचीन कवि हैं इन्होंने सूर्यप्रकाश नाम ग्रंथ राजा अभयसिंह राठौर की आज्ञा के अनुसार बनाया है। इस ग्रंथ की श्लोक-संख्या ७५० है। श्रीमहाराजा यशवन्तसिंह से लेकर महाराजा अभयसिंह तक अर्थात् संवत् १७८७ से सरबलन्दखाँ की लड़ाई तक सब समाचार इस ग्रंथ में वर्णन किये हैं। एक दिन राजा अभयसिंह और महाराजा जयसिंह आमेरवाले पुष्कर-तीर्थ पर पूजन-तर्पण इत्यादि करते थे, उसी समय करन कवि गये। दोनों महाराजा बोले—कविजी, कुछ शीघ्र ही कहो। करन कवि ने यह दोहा कहा—जोधपूर आमेर ये, दोनों थाप अथाप। कूरम मारा बैकरा,

कामध्वज मारा बाप ॥ अर्थात् राजा जोधपुर और आमेर गद्दीन-शीनों को गद्दी से उठा सकते हैं। कूरम अर्थात् कछवाह राजा ने अपने पुत्र शिवसिंह को और कामध्वज अर्थात् राजा राठौर ने अपने पिता बखतसिंह का वध किया। टाड साहब राजस्थान में लिखते हैं कि करण कवि राज्यसंबंधी कार्यों में, युद्ध में और कविता में, इन तीनों बातों में महा निपुण था ॥

१० कुमारपाल महाराजा अनहलवाले, सं० १२२० में उ०।

यह महाराज अनहलवाले के राजा थे, और कवीश्वरों का बड़ा मान करते थे। जैसे चंद कवि ने पृथ्वीराज के हालात में पृथ्वीराजरायसा लिखा है, वैसे ही इन महाराज की वंशावली ब्रह्मा से लेकर इन तक एक कवीश्वर ने बनाकर उसका नाम कुमारपाल-चरित्र रक्खा ॥

११ कालिदास त्रिवेदी बनपुरा अंतरबेद के निवासी, सं० १७४९में उ०।

यह कवि अंतरबेद में बड़े नामी-गरामी हुए हैं। प्रथम औरंगज़ेब बादशाह के साथ गोलकुंडा इत्यादि दक्षिण के देशों में बहुत दिन तक रहे। पीछे राजा जोगाजीतसिंह रघुवंशी महाराजा जंबू के यहाँ रहे, और उन्हींके नाम से वधूविनोद नाम का ग्रंथ महाअद्भुत बनाया। एक कालिदासहज़ारा नाम संग्रह ग्रंथ बनाया, जिसमें संवत् १४८० से लेकर अपने समय तक, अर्थात् संवत् १७७५ तक, के कवियों के एक हज़ार कवित्त, २१२ कवियों के, लिखे हैं। मुझको इस ग्रंथ के बनाने में कालिदास के हज़ारे से बड़ी सहायता मिली है। एक ग्रन्थ और जंजीराबंद नाम का महाविचित्र इन्हीं महाराज का मेरे पुस्तकालय में है। इनके पुत्र उदयनाथ कवीन्द्र और पौत्र कवि दूलह बड़े भारी कवि हुए हैं ॥ २८ सफ़ा ॥ (?)

१२ कवीन्द्र (१) उदयनाथ त्रिवेदी वनपुरानिवासी कवि कालिदासजू के पुत्र, सं० १८०४ में उ० ।

यह कवि अपने पिता के समान महान् कवीश्वर हो गुजरे हैं। प्रथम राजा हिम्मतिसिंह बंधलगोत्री अमेठी-महाराज के यहाँ बहुत दिन तक रहे, और कविता में अपना नाम उदयनाथ रखते रहे। जब राजा के नाम से रसचंद्रोदय नाम का ग्रन्थ बनाया, तब राजा ने कवीन्द्र पदवी दी। तब से अपना नाम कवीन्द्र रखते रहे। इस ग्रन्थ के चार नाम हैं, रतिविनोदचंद्रिका १, रतिविनोद-चंद्रोदय २, रसचन्द्रिका ३, रसचंद्रोदय ४। यह ग्रन्थ भाषा-साहित्य में महा अद्भुत है। पीछे कवीन्द्रजी थोड़े दिन राजा गुरुदत्त सिंह अमेठी के यहाँ रहकर फिर भगवंतराय खींची और गजसिंह महाराजा आमेर और राव बुद्ध हाड़ा बूँदीवाले के यहाँ महा मान-सम्मान के साथ काल व्यतीत करते रहे। एक कवीन्द्र त्रिवेदी वेतीगाँव, ज़िले रायबरेली में भी महान् कवि हो गये हैं ॥ ३० सफ़ा ॥ (२)

१३ कवींद्र (२) सखीसुखब्राह्मण, नरवर बुंदेलखण्डनिवासी के पुत्र, सं० १८५४ में उ० ।

इन्होंने रसदीपक नाम ग्रन्थ बनाया है ॥

१४ कवींद्र (३) सारस्वत ब्राह्मण काशीनिवासी, सं० १६२२ में उ० ।

यह कवीन्द्राचार्य महाराज संस्कृत-साहित्य-शास्त्र में अपने समय के भानु थे। शाहजहाँ बादशाह के हुक्म से भाषा-काव्य बनाना प्रारम्भ किया और बादशाही आज्ञा के अनुसार कवीन्द्रकल्पलता नाम ग्रंथ भाषा में रचा, जिसमें बादशाह के पुत्र दाराशिकोह और बेगम साहबा की तारीफ़ में बहुत कवित्त हैं ॥ ३२ सफ़ा ॥

१५ किशोर, युगुलकिशोर बंदीजन दिल्लीवाले, सं० १८०१ में उ० ।

यह कविता में महानिपुण थे, और मोहम्मदशाह बादशाह के

यहाँ थे। इनका ग्रन्थ मैंने कोई नहीं पाया। केवल किशोर-संग्रह नाम का एक इनका संगृहीत ग्रन्थ मेरे पुस्तकालय में है, जिसमें सिवा सत्कवियों के इनका भी काव्य बहुत है॥ २६ सफ़ा॥

१६ कादिर, कादिरबख़्स मुसलमान पिहानीवाले सं० १६३५ में उ०।

कविता में निपुण थे और सैय्यद इब्राहीम पिहानीवाले रसखानि के शिष्य थे॥ २५ सफ़ा॥

१७ कृष्ण कवि (१), सं० १७४० में उ०।

यह कवि औरङ्गज़ेब बादशाह के यहाँ थे॥

१८ कृष्णलाल कवि, सं० १८१४ में उ०।

इनकी कविता शृंगार-रस में उत्तम है॥ ३३ सफ़ा॥

१६ कृष्ण कवि (२) जयपुरवाले, सं० १६७५ में उ०।

बिहारीलाल कवि के शिष्य और महाराजा जयसिंह सवाई के यहाँ नौकर थे। बिहारीसतसई का तिलक कवित्तों में विस्तारपूर्वक वार्तिकसहित बनाया है॥ ३३ सफ़ा॥

२० कृष्ण कवि (३), सं० १८८८ में उ०।

नीति-संबन्धी फुटकर काव्य किया है॥ ३४ सफ़ा॥

२१ कुजलाल कवि बन्दीजन मऊ, रानीपुरा, सं० १६१२ में उ०।

ग्रन्थ कोई नहीं देखने में आया। फुटकर कवित्त देखे-सुने हैं॥ ३४ सफ़ा॥

२२ कुंदन कवि बुंदेलखण्डी, सं० १७५२ में उ०।

नायिकाभेद का इनका ग्रंथ सुंदर है। कालिदासजी ने इनका नाम हज़ारे में लिखा है॥ ३५ सफ़ा॥

२३ कमलेश कवि, सं० १८७० में उ०।

यह कवि महानिपुण कवि हो गये हैं। नायिकाभेद का इनका ग्रंथ महासुन्दर है॥ ३५ सफ़ा॥

२४ कान्ह कवि प्राचीन (१), सं० १८४२ में उ० ।

नायिकाभेद का इनका ग्रंथ है ॥ ३६ सफ़ा ॥

२५ कान्ह कवि, कन्हईलाल (२) कायस्थ राजनगर बुंदेलखंडी, सं० १६१४ में उ० ।

बहुत सुन्दर कविता की है । इनका नखशिख देखने योग्य है ॥ ३६ सफ़ा ॥

२६ कान्ह, कन्हैयावख्श बैस बैसवारे के विद्यमान ।

शांत-रस का इनका काव्य उत्तम है । कवियों का बहुत आदर करते हैं ॥ ३८ सफ़ा ॥

२७ कमलनयन कवि बुंदेलखंडी, सं० १७८४ में उ० ।

इनके शृङ्गार-रस के बहुत कवित्त देखे गये हैं । ग्रंथ कोई नहीं मिला । कविता सरस है ॥ ३७ सफ़ा ॥

२८ कविराज कवि बंदीजन, सं० १८८१ में उ० ।

सामान्य प्रशंसक इधर-उधर घूमनेवाले कवि मालूम होते हैं । सुखदेव मिश्र कंपिलावासी ने भी अपना नाम बहुत जगह कविराज लिखा है, पर यह वह कविराज नहीं हैं ॥ ३८ सफ़ा ॥

२९ कविराय कवि, सं० १८७५ में उ० ।

नीति-सम्बन्धी चोखी कविता की है ॥ ३९ सफ़ा ॥

३० कावराम कवि (१), सं० १८६८ में उ० ।

कोई ग्रन्थ नहीं देखा । स्फुट कवित्त हैं ॥ ३९ सफ़ा ॥

३१ कविराम (२) रामनाथ कायस्थ वि० ।

इनके कवित्त सुंदरीतिलक में हैं, जो बाबू हरिश्चन्द्रजी ने संग्रह बनाया है ॥ ४२ सफ़ा ॥

३२ कविदत्त कवि, सं० १८३६ में उ० ।

इनके कवित्त दिग्विजयभूषण में कवि दत्त के नाम से जुदे

... ... भ्रम है, शायद दत्त कवि और कवि दत्त एक ही न हों ॥ ४२ सफ़ा ॥

३३ काशीनाथ कवि, सं० १७५२ में उ० ।

महाललित काव्य किया है ॥ ३७ सफ़ा ॥

३४ काशीराम कवि, सं० १७१५ में उ० ।

यह कवि निजामतख़ाँ सूबेदार आलमगीरी के साथ थे। कविता इनकी ललित है ॥ ४५ सफ़ा ॥

३५ कामताप्रसाद, सं० १६११ में उ० ।

इनके कवित्त ठाकुरप्रसाद त्रिपाठी ने अपने संग्रह में लिखे हैं। किन्तु मुझे भ्रम है, शायद यह बाबू कामताप्रसाद असो-थरवाले न हों, जो खींची भगवंतरायजू के वंश के सब विद्या में निपुण हैं। इनका नखशिख बहुत अच्छा है ॥ ४६ सफ़ा ॥

३६ कबीर कवि, कबीरदास जोलाहा काशीवासी, सं० १६१०में उ० ।

इनके दो ग्रंथ अर्थात् बीजक और रमैनी मेरे पास हैं। इनके चरित्र तो सब मनुष्यों को विदित हैं। कालिदासजू ने हज़ारे में इनका नाम भी लिखा है, इसलिये मैंने भी लिख दिया ॥ ४७ सफ़ा ॥

३७ किंकरगोविंद बुंदेलखण्डी, सं० १८१० में उ० ।

शांत-रस की इनकी कविता विचित्र है ॥ ४८ सफ़ा ॥

३८ कालीराम कवि बुंदेलखंडी, सं० १८२६ में उ० ।

सुंदर कविता की है ॥ ४८ सफ़ा ॥

३९ कल्याण कवि, सं० १७२६ में उ० ।

इनकी कविता कालिदास ने हज़ारे में लिखी है ॥ ४० सफ़ा ॥

४० कमाल कवि कबीरजू के पुत्र काशीस्थ, सं० १६३२ में उ० ।

ऐज़न ॥ ४० सफ़ा ॥

४१ कलानिधि कवि (१) प्राचीन, सं० १६७२ में उ०।

ऐज़न ४० सफ़ा ॥

४२ कलानिधि कवि, (२), सं० १८०७ में उ०।

इनका नखशिख बहुत सुंदर है ॥ ४४ सफ़ा ॥

४३ कुलपति मिश्र, सं० १७१४ में उ०।

इनकी कविता हज़ारे में है ॥ ४१ सफ़ा ॥

४४ कारवेग फ़क़ीर, सं० १७५६ में उ०।

ऐज़न ॥ ४१ सफ़ा ॥

४५ केहरी कवि, सं० १६१० में उ०।

महाराजा रतनसिंह के यहाँ थे। कविता में महाचतुर थे ॥ ४१ सफ़ा ॥

४६ कृष्णसिंह बिसेन राजा भिनगा, ज़िले बहिराइच, सं० १६०६ में उ०।

यह राजा काव्य में बहुत निपुण थे, और इस रियासत में सदैव कवि-कोविद लोगों का मान होता था। भैया जगतसिंह इसी वंश में बड़े नामी कवि हो गये हैं और शिव कवि इत्यादि इन्हीं के यहाँ रहे हैं। अब भी भैया लोग खुद कवि हैं, और काव्य की चर्चा बहुत है, जैसा बुंदेलखण्ड और बघेलखण्ड के रईस अपना काल काव्यविनोद में व्यतीत करते हैं, वैसे ही इस रियासत के भाईबंद हैं ॥ ४१ सफ़ा ॥

४७ कालिका कवि वंदीजन, काशीवासी वि०।

सुन्दरीतिलक और ठाकुरप्रसाद के संग्रह में इनके कवित्त हैं ॥ ४२ सफ़ा ॥

४८ काशीराज कवि श्रीमान् कुमार बलवानसिंहजू काशीनरेश चेतसिंह महाराज के पुत्र, सं० १८८६ में उ०।

चित्रचंद्रिका नाम भाषासाहित्य का अद्भुत ग्रन्थ रचा है, जो देखने योग्य है ॥ ४३ सफ़ा ॥

४९ कोविद कवि श्रीपंडित उमापति त्रिपाठी अयोध्यानिवासी, सं० १९३० में उ० ।

यह महाराज षट्शास्त्र के वक्ता थे । प्रथम काशी में पढ़कर बहुत दिनों तक दिग्विजय करते रहे, अंत में श्रीअवधपुरी में आये । क्षेत्रसंन्यास लेकर विद्यार्थी लोगों के पढ़ाने, उपदेश देने और काव्य करने में काल व्यतीत करते-करते संवत् १९३१ में कैलाश को पधारे । इनके ग्रन्थ संस्कृत में बहुत हैं, भाषा में हमने केवल दोहावली, रत्नावली इत्यादि दो-चार ग्रन्थ छोटे-छोटे देखे हैं । इन महाराज का बनाया हुआ एक श्लोक हम लिखते हैं, जिससे इनकी विद्या का हाल मालूम होगा ॥

भिल्लीपल्लीविशंपाददुरुगृहिपुरी चंचरीकस्यचंपावल्लीवाभाति कंपा कलितदलवती फुल्लमल्लीमतल्ली ॥ भिल्लीगीष्केत्वेषां सुरवरवनिता तल्लजस्फीतगीतिर्विन्मल्लावल्लभाशं विदधतु शिशवो भारतीभल्लकस्ते ॥ ४३ सफ़ा ॥

५० कृपाराम कवि जयपुरनिवासी, सं० १७७२ में उ० ।

महाराज जयसिंह सवाई के यहाँ ज्योतिषियों में थे, और भाषा में समयबोध नाम एक ग्रंथ ज्योतिष का बनाया है ॥

५१ कृपाराम ब्राह्मण नरैनापुर, ज़िले गोंडा ।

श्रीमद्भागवत द्वादश स्कन्ध का उल्था भाषा में किया है—दोहा-चौपाई सीधी बोली में । महेशदत्त ने इनका नाम काव्यसंग्रह में लिखा है । हमको अधिक मालूम नहीं ॥ ४४ सफ़ा ॥

५२ कर्मच कवि राजपूतानेवाले सं० १७१० में उ० ।

इनकी कविता हमको एक संग्रह-पुस्तक में मिली है, जो संवत् १७१० की लिखी हुई माड़वार देश की है ॥ ४५ सफ़ा ॥

५३ किशोरसूर कवि सं० १७६१ में उ० ।

बहुत कवित्त और छप्पय इनके हैं ॥ ४५ सफ़ा ॥

५४ कुंभनदास व्रजवासी वल्लभाचार्य्य के शिष्य सं० १६०१ में उ० ।

इनके पद कृष्णानन्द व्यासदेवजी ने अपने संगृहीत ग्रंथ रागसागरोद्भव-रागकल्पद्रुम में लिखे हैं । इनकी गिनती अष्ट-छाप में है ॥ ३३ सफ़ा ॥

५५ कृष्णानन्द व्यासदेव व्रजवासी सं० १८०६ में उ० ।

यह महात्मा महाकवीश्वर थे । इन्होंने सूरसागर तथा और बड़े बड़े महात्मा कवीश्वर कृष्णभक्तों के काव्य इकट्ठेकर एक ग्रंथ संगृहीत रागसागरोद्भव-रागकल्पद्रुम के नाम से बनाया है । इसमें सूरजी, तुलसीदास, कृष्णदास, हरीदास, अग्रदास, तानसेन, मीराबाई, हितहरिवंश, विट्ठलस्वामी इत्यादि महात्माओं के सैकड़ों पद लिखे हैं । यह ग्रंथ किसी समय कलकत्ते में छापा गया था, और १००) रु० को मोल आता था । अब नहीं मिलता ॥ ४६ सफ़ा ॥

५६ कल्याणदास कृष्णदास पयअहारी के शिष्य सं० १६०७ में उ० ।

इनके पद रागसागरोद्भव में हैं ॥ ३६ सफ़ा ॥

५७ कालीदीन कवि ।

दुर्गा को भाषा के कवित्तों में महाकविता से उल्था किया है ॥ ४० सफ़ा ॥

५८ कालीचरण वाजपेयी विगहपुर, ज़िले उन्नाव वि० ।

कविता में निपुण हैं । हमने इनका कोई ग्रंथ नहीं देखा

५६ कृष्णदास गोकुलस्थ वल्लभाचार्य्य के शिष्य सं० १६०१ में उ० ।

इनके बहुत पद रागसागरोद्भव में लिखे हैं, और इनकी कविता अत्यंत ललित और मधुर है । यह कवि, सूरदास, परमानन्द और कुम्भनदास, ये चारों वल्लभाचार्य के शिष्य थे । कृष्णदासजी की कविता सूरदास की कविता से मिलती थी । एक दिन सूरजी बोले--आप अपना कोई ऐसा पद सुनाओ, जैसा

हमारे काव्य में न मिले । तब कृष्णदासजी ने चार पद सुनाये। उन सब पदों में सूरजी ने अपने पदों की चोरी साबित की, तब कृष्णदासजी ने कहा--कल हम अनूठे पद सुनावेंगे । ऐसा कह सारी रात इसी सोच में नहीं सोये । प्रातःकाल अपने सिरहाने यह पद लिखा हुआ देख सूरजी के आगे पढ़ा--"आवत बने कान्ह गोपबालक सँग छुरित अलकावली।" सूरजी जान गये कि यह करतूत किसी और ही कौतुकी की है । बोले--अपने बाबा की सहायता की है । इनकी गिनती अष्टछाप में है । अर्थात् ब्रज में आठ बड़े कवि हुए हैं । तुलसीशब्दार्थप्रकाश ग्रंथ में गोपाल-सिंह ने अष्टछाप का ब्योरा इस भाँति लिखा है कि सूरदास, कृष्णदास, परमानन्द, कुम्भनदास, ये चारों वल्लभाचार्य्य के शिष्य, और चतुर्भुज, छीतस्वामी, नन्ददास, गोविन्ददास, ये चारों विट्ठलनाथ वलभाचार्य्य के पुत्र के शिष्य, अष्टछाप के नाम विख्यात हैं। कृष्णदासजी का बनाया हुआ प्रेमरसरास ग्रंथ बहुत सुंदर है ॥ ४९ सफ़ा ॥

९० केशवदास ब्रजबासी कश्मीर के रहनेवाले सं० १६०८ में उ० ।

इनके पद रागसागरोद्भव में बहुत हैं । इन्होंने दिग्विजय की और ब्रज में आकर श्रीकृष्णचैतन्य से शास्त्रार्थ में पराजित हुए ॥ ४९ सफ़ा ॥

९१ केवलराम कवि ब्रजवासी सं० १७९७ में उ० ।

ऐज़न । इनकी कथा भक्तमाल में है ॥ ४२ सफ़ा ॥

९२ कान्हरदास कवि ब्रजवासी, विट्ठलदास चौबे मथुरावासी के पुत्र सं० १६०८ में उ० ।

ऐज़न । इनके यहाँ जब सभा हुई थी, तब उसी सभा में नाभाजी को गोसाईं की पदवी मिली थी ॥ ४५ सफ़ा ॥

६३ केदार कवि वंदीजन सं० १२८० में उ० ।

यह महान् कवीश्वर अलाउद्दीन गोरी के यहाँ थे, और यद्यपि इन की कविता हमारी नज़र से नहीं गुज़री, परन्तु हमने किसी तारीख़ में भी इनका ज़िक्र पढ़ा है ॥

६४ कृपाराम कवि (३) ।

माधव-सुलोचना चम्पू भाषा में बनाया ॥

६५ कृपाराम कवि (४) ।

हिततरंगिणी-श्रृङ्गार दोहा छंद में एक ग्रंथ महाविचित्र काव्य बनाया ॥

६६ कुंजगोपी गौड़ब्राह्मण जयपुर राज्य के वासी ।

ऐज़न ॥

६७ कृपाल कवि ।

ऐज़न ॥

६८ कनक कवि सं० १७४० में उ० ।

ऐज़न ॥

६९ कुम्भकर्ण रानाचित्तौड़ मीराबाई के पति * सं० १४७५ के लगभग उ० ।

यह महाराना चित्तौड़ में संवत् १५०० के लगभग राजगद्दीपर बैठे, और संवत् १५२५ में उदाना में इनके पुत्र ने इनको मार डाला। टाड साहब चित्तौड़ की हिन्दी तारीख़ से इनका जीवनचरित्र विस्तार-पूर्वक लिखकर कहते हैं कि राना कुम्भा महान् कवि थे। नायिका-भेद के ज्ञान में बड़े प्रवीण थे, और गीतगोविन्द का तिलक बहुत विस्तार-पूर्वक बनाया है। प्रकट नहीं होता कि राना के कवि होने के कारण उनकी स्त्री मीराबाई ने काव्यशास्त्र को सीखा, अथवा मीराबाई के कवि होने से राना साहब कवि हो गये। मीराबाई का हाल हम मकार अक्षर में बहुत विस्तार से लिखेंगे ॥

---

* खोज से यह गलत साबित हुआ है। राना कुंभा मीरा के पति नहीं थे। मीरा का और इनका समय एक नहीं है।

७० कल्याणसिंह भट्ट ।

ऐज़न ॥

७१ कामताप्रसाद ब्राह्मण लखपुरा, ज़िला फ़तेपुर, सं० १९११ में उ०।

यह महाराज साहित्य में अद्वितीय हो गये हैं। संस्कृत, प्राकृत, भाषा, फ़ारसी, इन सबमें कविता करते थे। इनके विद्यार्थी सैकड़ों काव्यकला के महान् कवि इस समय तक विद्यमान हैं॥ ४७ सफ़ा॥

७२ कृष्ण कवि, प्राचीन ।

ऐज़न ॥ ४३ सफ़ा ॥

१ खुमान वंदीजन चरखारी बुन्देलखण्डी सं० १८४० में उ०।

बुंदेलखण्ड में आज तक यह बात विदित है कि खुमान जन्म से अन्धे थे। इसी कारण कुछ लिखा-पढ़ा नहीं। दैवयोग से इनके घर में एक महापुरुष संन्यासी आये, और चार महीने तक वास कर चलने लगे। बहुतेरे चरखारी के सज्जन कवि-कोविद-महात्मा थोड़ी दूर जा-जाकर संन्यासी महाराज की आज्ञा से अपने-अपने घरों को लौट आये। खुमान साथ ही चले गये। संन्यासी ने बहुत समझाया, पर जब खुमानजी ने कहा कि हम घर में किस लिये जायँ, हम अंधे अपढ़ निकम्मे घरके काम के नहीं, "धोबी के ऐसे गदहा न घर के न घाट के"; हम आपही के संग रहेंगे, तब संन्यासी यह बात श्रवण कर बहुत प्रसन्न हो खुमान जी की जीभ में सरस्वती का मंत्र लिख बोले—प्रथम हमारे कमण्डलु की प्रशंसा में कवित्त कहो। खुमानजी ने शीघ्र ही २५ कवित्त कमण्डलु के बनाये, और संन्यासी के चरणारविन्दों को दंड-प्रणाम कर घर आकर संस्कृत और भाषा की सुंदर कविता करने लगे। एक बार सेंधिया महाराजा ग्वालियर के दरबार में गये। सेंधिया ने आज्ञा दी कि संस्कृत में रात भर में एक ग्रंथ बनाओ।

खुमानजी ने प्रतिज्ञा करके एक ही रात्रि में ७०० श्लोक दिये। इनकी कविता देखने से इनकी कविता में दैवीशक्ति पाई जाती है। लक्ष्मणशतक और हनुमन्नखशिख, ये दो ग्रंथ इनके बनाये हुए हमारे पुस्तकालय में मौजूद हैं ॥ ५१ सफ़ा ॥

२ खुमान कवि।

एक कांड अमरकोश का भाषा में छंदोबद्ध उल्था किया है ॥

३ खुमानसिंह महाराजा खुमान राउत गुहलौत सिसोदिया चित्तौरगढ़ के प्राचीन राजा सं० ८१२ में उ०।

यह महाराज कविता में अति चतुर और कविलोगों के कल्पवृक्ष थे। संवत् ६०० में इनके नाम से एक कवि ने खुमानरायसा नाम एक ग्रंथ बनाया है, जिसमें इनके वंशवाले प्रतापी महाराजों के और खुद इनके जीवनचरित्र लिखे हैं। टाड साहब ने राजस्थान में इस ग्रंथ का ज़िक्र किया है और लिखा है कि इस ग्रंथ के दो भाग हैं। प्रथम भाग तो खुमानसिंह के समय में बनाया गया, जिसमें पँवार राजों का रामचंद्र से लेकर खुमान तक कुरसानामा है, और दसवीं सदी में जब कि मुसल्मानों ने चित्तौर पर धावा किया और तेरहवीं सदी में जब अलाउद्दीन ग़ोरी से युद्ध हुआ और चित्तौर लूटा गया, दूसरा भाग राना प्रतापसिंह के समय में बनाया गया, जिसमें राना प्रतापसिंह और अकबर बादशाह के युद्ध का वर्णन है ॥

४ ख़ानख़ाना नवाब अब्दुलरहीम ख़ानख़ाना बैरामख़ाँ के पुत्र रहीम और रहिमन छाप है सं० १५८० में उ०।

यह महाविद्वान् अरबी, फ़ारसी, तुरकी इत्यादि यावनी भाषा और संस्कृत तथा ब्रजभाषा के बड़े पण्डित अकबर बादशाह की आँख की पुतली थे। इन्हीं के पिता बैरम की जवाँमर्दी और तदबीर से हुमायूँ को दुबारा दिल्ली का राज्य प्राप्त हुआ। ख़ानख़ानाजी

पंडित कवि मुल्ला शायर ज्योतिषी और सब गुणवान् मनुष्यों के बड़े क़दरदान थे। इनकी सभा रातदिन विद्वज्जनों से भरीपुरी रहती थी। संस्कृत में इनके बनाये श्लोक बहुत कठिन हैं, और भाषा में नवों रसों के कवित्त-दोहे बहुत ही सुंदर हैं। नीति-सम्बन्धी दोहे ऐसे अपूर्व हैं कि जिनके पढ़ने से कभी पढ़नेवाले को तृप्ति नहीं होती। फ़ारसी में इनका दीवान बहुत उम्दा है। वाक़यात बाबरी, अर्थात् बाबर बादशाह ने जो अपना जीवन-चरित्र तुर्की ज़बान में आप ही लिखा है, उसका इन्होंने फ़ारसी ज़बान में तर्जुमा किया है। यह ७२ वर्ष की अवस्था में, सन् १०३६ हिजरी में, सुरलोक को सिधारे ॥

श्लोक ॥ आनीता नटवन्मया तव पुरः श्रीकृष्ण या भूमिका व्योमाकाशखखांबराब्धिवसवस्त्वत्प्रीतयेऽद्यावधि ॥ प्रीतिर्यस्य निरीक्षणे हि भगवन्मत्प्रार्थितं देहि मे नोचेद् ब्रूहि कदापि मानय पुनर्मामीदृशीं भूमिकाम् ॥ १ ॥ शृङ्गार का सोरठा भाषा ॥ पलटि चली मुसक्याय, दुति रहीम उजियाय अति। बाती सी उसकाय, मानौ दीनी दीप की ॥१॥ गई आगि उर लाय, आगि लेन आई जु तिय। लागी नहीं बुझाय, भभकि भभकि बरि बरि उठै ॥ २ ॥ नीति का दोहा ॥ खीरा सिर धरि काटिये, मलिये निमक लगाय। करुये मुख को चाहिये, रहिमन, यही सजाय ॥ १ ॥

एक दिन ख़ानख़ाना ने यह आधा दोहा बनाया—तारायनि ससि रैनि प्रति, सूर होहिं ससि गैन। दूसरा चरण नहीं बना सके। रोज़ रात्रि को यह आधा दोहा पढ़ा करते थे। दिल्ली में एक खत्रानी ने यह हाल सुन आधा चरण बनाकर बहुत इनाम पाया—तदपि अँधेरो है सखी, पीव न देखे नैन ॥ १ ॥ ४६ सफ़ा ॥

५ खूबचन्द कवि माड़वारदेशवासी।

इन्होंने राजा गंभीरसाहि ईडर के रईस के भड़ौवा में एक कवित्त बनाया है। उसके सिवा और कविता इनकी हमने नहीं देखी॥ ५३ सफ़ा॥

६ खान कवि।

इनके कवित्त दिग्विजयभूषण में हैं॥ ५३ सफ़ा॥

७ खानसुलतान कवि।

इनका एक ही कवित्त मिला है। परन्तु उसमें भी भ्रम है॥ ५३ सफ़ा॥

८ खंडन कवि बुंदेलखंडी सं० १८८४ में उ०।

इन्होंने भूषणदाम नाम का एक ग्रन्थ नायिकाभेद संबंधी महा विचित्र रचा है। यह ग्रंथ झाँसी में रामदयाल कवि के, बीजापुर में ठाकुरदास कवि और कुंजविहारी कायस्थ के और दिलीपसिंह बंदीजन के पास है॥ ५२ साफ़॥

९ खेतलकवि।

ऐज़न॥

१० खुसाल पाठक रायबरेली वाले।

ऐज़न॥

११ खेम कवि (१) बुंदेलखंडी।

ऐज़न॥ ५३ सफ़ा॥

१२ खेम कवि (२) ब्रजवासी सं० १६३० में उ०।

रागसागरोद्भव-रागकल्पद्रुम में इनके पद हैं॥ ५४ सफ़ा॥

१३ खड्गसेन कायस्थ ग्वालियरनिवासी सं० १६६० में उ०।

इन्होंने दानलीला, दीपमालिका-चरित्र इत्यादि ग्रंथ बड़े परिश्रम से उत्तम बनाये हैं॥

१ गंग कवि (१), गंगाप्रसाद ब्राह्मण एकनौर ज़िला इटावा अथवा वंदीजन दिल्लीवाले सं० १५९५ में उ०।

गंग कवि को हम सुनते रहे कि दिल्ली के वंदीजन हैं और अकबर बादशाह के यहाँ थे, जैसा किसी कवि ने वंदीजनों की प्रशंसा में यह कवित्त लिखा है—

कवित्त। प्रथम विधाता ते प्रगट भये वंदीजन पुनि पृथु-जज्ञ ते प्रकास सरसात है। मानों सूत सौनकन सुनत पुरान रहै जस को बखाने महा सुख बरसात है॥ चंद चउहान के केदार गोरी साहिज़ू के गंग अकबर के बखाने गुनगात है॥ काग कैसो मास अजनास धन भाटन को लूटि धरै ता को खुराखोज मिटिजात है॥ १॥

परन्तु अब जो हम ने जाँचा तो विदित हुआ कि गंग कवि एकनौर गाँव, ज़िले इटावा के ब्राह्मण थे। जब गंग मर गये और जैनखाँ हाकिम ने एकनौर में कुछ ज़ुल्म किया, तब गंग जी के पुत्र ने जहाँगीर शाह के यहाँ एक कवित्त अर्ज़ी के तौर पर दिया, जिसका अन्तिम अंश था—'जैनखाँ ज़ुनारदार मारे एकनौर के'। ज़ुनारदार फ़ारसी में जनेऊ रखनेवाले का नाम है, लेकिन ख़ास ब्राह्मण ही को ज़ुनारदार कहते हैं। ख़ैर जो हो, गंगजी महाकवि थे। राजा वीरबल ने गंग को 'अमर भ्रमत' इस छप्पै में एक लक्ष रुपए इनाम दिए थे। इसी प्रकार अकबर, जहाँगीर, बीरबल, ख़ानखाना, मानसिंह सवाई इत्यादि सबने गंग को बहुत दान मान दिया है॥ ५४ सफ़ा॥

२ गंगकवि (२), गंगाप्रसाद ब्राह्मण सपौली के ज़िले सीतापुर, सं० १८९० में उ०।

सपौली गाँव इनको कविता करने के कारण माफ़ी में मिला है। इनके पुत्र तीहर नाम कवि विद्यमान हैं। गंगाप्रसाद ने एक ग्रंथ

दूतीविलास बनाया है, उसमें सब जाति की दूतियों का श्लेष से वर्णन है ॥ ५६ सफ़ा ॥

३ गङ्गाधर (१) कवि बुंदेलखंडी ।

महा ललित कविता की है ॥ ५६ सफ़ा ॥

४ गंगाधर (२) कवि ।

उपसतसैया नाम सतसई का तिलक कुंडलिया छंद और दोहों में बनाया है ॥ ६४ सफ़ा ॥

५ गंगापति कवि सं० १७४४ में उ० ।

कविता सरस है ॥ ७६ सफ़ा ॥

६ गंगादयाल दुबे निसगर, ज़िले रायबरेली के विद्यमान हैं ।

संस्कृत के महापंडित और भाषाकाव्य में भी निपुण हैं ॥ ७६ सफ़ा ॥

७ गंगराम कवि बुंदेलखंडी सं० १८६४ में उ० ।

सामान्य कविता है ॥ ७८ सफ़ा ॥

८ गदाधरभट्ट, बाँदावाले, कवि पदमाकरजू के पौत्र सं० १६१२ में उ० ।

इनके प्रपितामह मोहन भट्ट बुंदेलखण्ड में नामी कवि, पन्ना में राजा हिन्दूपति बुंदेला के यहाँ रहे । पीछे राजा जगत्सिंह सवाई के यहाँ रहे । उनके पुत्र पद्माकरजी के मिहीलाल, अंबाप्रसाद, दो पुत्र हुए । मिहीलाल के वंशीधर, गदाधर, चन्द्रधर, लक्ष्मीधर, ये चार पुत्र हुए । अंबाप्रसाद के एक पुत्र विद्याधर नाम उत्पन्न हुआ । यद्यपि ये सब कवि हैं, तथापि सबमें उत्तम कवि गदाधर हैं । यह राजा भवानीसिंह दतियानरेश के पास रहा करते हैं ॥ अलंकारचन्द्रोदय नाम एक ग्रंथ इन्हों ने बनाया है ॥ ५६ सफ़ा ॥

९ गदाधर कवि ।

शांत-रस के कवित्त चोखे हैं ॥

१० गदाधरराम।

इनकी कविता सरस है ॥ ७७ सफ़ा ॥

११ गदाधर दास मिश्र ब्रजवासी, सं० १५८० में उ०।

इनके पद रागसागरोद्भव में हैं। इनका बनाया हुआ यह पद- "सखी हौं स्याम के रंग रँगी" और "बिकाय गई वह सूरति मूरति हाथ बिकी" देख स्वामी जीव गोसाईं, जो उस समय बड़े महात्मा थे, इनसे बहुत प्रसन्न हुए ॥

१२ गिरिधारी ब्राह्मण बैसवारा गाँव सातनपुरवावाले (१) सं० १६०४ में उ०।

इनकी कविता या तो श्रीकृष्णचन्द्र के लीलासम्बन्धी है और या शान्त रस की। यह कवि पढ़े बहुत न थे। परन्तु ईश्वर के अनुग्रह से कविता सुंदर रचते थे ॥ ५७ सफ़ा ॥

१३ गिरिधारी कवि (२)।

स्फुट कवित्त इनके मिलते हैं ॥ ५८ सफ़ा ॥

१४ गिरिधरकवि, बन्दीजन होलपुरवाले (१) सं० १८४४ में उ०।

यह कवि महाराजा टिकैतराय दीवान नवाब आसिफुद्दौला, लखनऊ के यहाँ थे ॥ ५८ सफ़ा ॥

१५ गिरिधर कविराय अंतरवेदवाले सं० १७७० में उ०।

इनकी नीति-सामयिकसम्बन्धी कुण्डलियाएँ विख्यात हैं ॥ ५९ सफ़ा ॥

१६ गिरिधर बनारसी, बाबू गोपालचन्द्र साहूकाले हर्षचंद्र के पुत्र, श्रीबाबू हरिश्चन्द्रजू के पिता सं० १८९६ में उ०।

इनका बनाया हुआ दशावतारकथामृत ग्रंथ बहुत सुन्दर है। और अलंकार में भारतीभूषण नाम भाषाभूषण का टीका बहुत अपूर्व बनाया है। इनके पुत्र बाबू हरिश्चन्द्र बनारस में बहुत प्रसिद्ध और गुणग्राहक थे। इनके सरस्वतीभंडार में बहुत ग्रन्थ थे॥ ६० सफ़ा ॥

१७ गोपाल कवि प्राचीन सं० १७१५ में उ० ।

केहरीकल्याण मित्रजीतसिंह के यहाँ थे ॥ ६१ सफ़ा ॥

१८ गोपाल कवि (१) कायस्थ रीवाँ वासी सं० १९०१ में उ० ।

महाराजा विश्वनाथसिंह बांधवनरेश के यहाँ कामदार थे। गोपालपचीसी ग्रंथ बहुत सुंदर बनाया है ॥ ६६ सफ़ा ॥

१९ गोपाल बंदीजन (२) चरखारी बुंदेलखंड सं० १८८४ में उ० ।

यह कवि महाराजा रतनसिंह बुंदेला चरखारी-भूप के यहाँ थे ॥ ६६ सफ़ा ॥

२० गोपाललाल कवि (३) सं० १८५२ में उ० ।

शांत-रस में इनके कवित्त अच्छे हैं ॥ ६७ सफ़ा ॥

२१ गोपालराय कवि ।

नरेन्द्रलाल शाह और आदिलखाँ की प्रशंसा में कवित्त कहे हैं ॥ ७७ सफ़ा ॥

२२ गोपालशरण राजा सं० १७४८ में उ० ।

महाललित पद और प्रबंधघटना नाम सतसई का टीका बनाया है ॥ ७९ सफ़ा ॥

२३ गोपालदास व्रजवासी सं० १७३६ में उ० ।

इनके पद राग रोद्भव में हैं ॥ ८० सफ़ा ॥

२४ गोपा कवि सं० १५९० में उ० ।

रामभूषण, अलंकारचन्द्रिका, ये दो ग्रंथ बनाये हैं ॥ ६७ सफ़ा ॥

२५ गोकुलनाथ बंदीजन, बनारसी कवि रघुनाथ के पुत्र सं० १८३४ में उ० ।

इनका चेतचन्द्रिका ग्रन्थ कवि लोगों में प्रामाणिक समझा जाता है। और गोविंदसुखदविहार नाम दूसरा ग्रंथ बहुत सुंदर बना है। यह कवि महाराजा चेतसिंह काशीनरेश के प्राचीन कवीश्वर हैं। चेतचन्द्रिका में राजा की वंशावली का विस्तारपूर्वक वर्णन है।

चौरा गाँव जो पंचकोशी के भीतर है, उसमें इनका घर है। महाराजा उदितनारायण की आज्ञा अनुसार अष्टादश पर्व भारत के हरिवंशपर्य्यंत का भाषा में उल्था किया है। गोपीनाथ इनके पुत्र और मणिदेव गोपीनाथ के शिष्य भी भारत के उल्था में शरीक हैं। काशीजी में रघुनाथ कवीश्वर का घराना कविता करने में महा उत्तम और इस भारतवर्ष में सूर्य के समान प्रकाशमान है ॥ ७० सफ़ा ॥

२६ गोपीनाथ बन्दीजन बनारसी गोकुलनाथ के पुत्र सं० १८५०में उ०।

इनकी अवस्था का बहुत सा भाग भारत का उल्था करने में व्यतीत हुआ। शेष काल शृङ्गारादि नव रसों के काव्य में बीता। हमने भारत के सिवा और कोई ग्रंथ नायिकाभेद अथवा अलंकार इत्यादि का इनका बनाया नहीं देखा। शृंगार में स्फुट कवित्त देखे हैं॥ लोग कहते हैं कि, महाराजा उदितनारायण ने भारत की भाषा करने के लिये एक लक्ष रुपये इन्हें दिये थे ॥ ७१ सफ़ा ॥

२७ गोकुलविहारी सं० १६६० में उ०।

इनकी कविता मध्यम है ॥ ७१ सफ़ा ॥

२८ गोपनाथ कवि सं० १६७० में उ०।

इनके बहुत अच्छे कवित्त हैं ॥ ७६ सफ़ा ॥

२९ श्रीगुरुगोविन्दसिंह शोढ़ी खत्री पंजाबी सं० १७२८ में उ०।

यह गुरुसाहब गुरु तेगबहादुर के आनंदपुर पटना शहर में उत्पन्न हुए थे। गुरु तेगबहादुर का औरंगज़ेब ने वध किया था। हिन्दुओं के मंदिर इत्यादि खुदाने के कारण रुष्ट हो कर गुरुगोविंदसिंह ने नैनादेवी के स्थान में महा घोर तप कर वरदान पाकर सिख-मत को स्थापित कर एक ग्रन्थ बनाया, जिसमें इनके सिवा और कवि महात्माओं का काव्य भी है, और जिसको शिष्य लोग ग्रन्थसाहब कहते हैं। इसमें भविष्य-काल का भी वर्णन है। गुरु साहब ने व्रजभाषा

और पंजाबी और फ़ारसी तीनों ज़बानों में महा सुंदर कविता की है ॥ ७२ सफ़ा ॥

२० गोविन्दअटल कवि सं० १६७० में उ० ।

इनके कवित्त हज़ारा में हैं ॥ ७५ सफ़ा ॥

२१ गोविन्दजी कवि सं० १७५७ में उ० ।

ऐज़न् ॥ ७६ सफ़ा ॥

२२. गोविन्ददास ब्रजवासी सं० १६१५ में उ० ।

रागसागरोद्भव में इनकी कविता है । यह कवि नाभाजी के शिष्य थे ॥ ७६ सफ़ा ॥

२३. गोविन्द कवि सं० १७६१ में उ० ।

यह कवीश्वर बड़े नामी हो गये हैं । इनका बनाया हुआ कर्णाभरण ग्रन्थ बहुत कठिन और साहित्य में शिरोमणि है ॥ ७३ सफ़ा ॥

२४ गुरुदीन पाँड़े कवि सं० १८६१ में उ० ।

इन महाराज ने वाक्मनोहरपिंगल बहुत बड़ा ग्रन्थ रचा है, जिसमें पिंगल के सिवा अलंकार, षटऋतु, नखशिख इत्यादि और भी साहित्य के अंग वर्णन किये हैं । यह ग्रन्थ बहुत अपूर्व है और कवि लोगों के पढ़ने योग्य है ॥ ७८ सफ़ा ॥

२५ गुरुदीनराय बन्दीजन पैंतेपुर ज़िले सीतापुर के विद्यमान हैं ।

यह कवि राजा रणजीतसाह जाँगरे, ईसानगर, ज़िले खीरी के यहाँ रहा करते हैं । कविता में निपुण हैं ॥ ७२ सफ़ा ॥

२६ गुरुदत्त कवि प्राचीन (१) सं० १८८७ में उ० ।

यह कवि-राय शिवसिंह सवाई जयसिंह के पुत्र के यहाँ थे ॥ ७४ ॥

२७ गुरुदत्त कवि (२) शुक्ल मकरंदपुर अंतर्वेदवाले सं० १८६४ में उ० ।

यह महाराज बड़े कवि थे । देवकीनंदन, शिवनाथ, गुरुदत्त, ये तीन भाई थे । तीनों महान् कवि थे । इनका बनाया पक्षीविलास ग्रंथ बहुत सुंदर है ॥ ७५ सफ़ा ॥

३८ गुमानजी मिश्र (१) साँडीवाले सं० १८०५ में उ० ।

यह कवीश्वर साहित्य में महानिपुण, संस्कृत में महाप्रवीण, काव्यशास्त्रको मिश्र सर्वसुख कवि से पढ़कर प्रथम दिल्ली में मोहम्मद शाह बादशाह के यहाँ राजा युगलकिशोर भट्ट के पास रहे । पीछे राजा अलीअकबरखाँ मोहम्मदी अधिपति के पास रहे । अलीअकबर बड़े कवि थे । उनके यहाँ निधान, प्रेम इत्यादि बड़े बड़े कवि नौकर थे । निदान गुमानजी ने श्रीहर्षकृत नैषध काव्य को नाना छंदों में प्रति श्लोक भाषा करि ग्रंथ का नाम काव्यकलानिधि रक्खा । पंचनली, जो नैषध में एक कठिन स्थान है, उसको भी सरल कर दिया । इस ग्रंथ के देखने से गुमानजी का पांडित्य विदित होता है । देखो, कैसा श्लोक प्रति उल्था है—तोटक, कवितानि सुमेरुन बाँटि दियो । जलदानन सिंधुन सोकि लियो ॥ दुहुँ ओर बँधी जुलफैं सुभली । नृप मानप और यश की अवली ॥ ६२ सफ़ा ॥

३९ गुमान कवि (२) सं० १७८८ में उ० ।

इन महाराज ने कृष्णचन्द्रिका नाम ग्रंथ बनाया है ॥ ६४ सफ़ा ॥

४० गुलाल कवि सं० १८७५ में उ० ।

यह कविराज कविता में महानिपुण थे । इनके कवित्तों और इनके बनाये शालिहोत्र ग्रन्थ से इनका पांडित्य प्रकट होता है ॥ ६५ सफ़ा ॥

४१ ग्वाल कवि बन्दीजन (१) मथुरानिवासी सं० १८७९ में उ० ।

यह कवि साहित्य में बड़े चतुर हो गये हैं । इनके संग्रहीत दो बहुत बड़े बड़े ग्रन्थ हमारे पास हैं । इनके नखशिख, गोपीपचीसी, यमुनालहरी इत्यादि छोटे छोटे ग्रन्थ और साहित्यदूषण, साहित्य दर्पण, भक्तिभाव, दोहा-शृंगार, शृङ्गार-कवित्त भी बहुत सुन्दर ग्रन्थ हैं ॥ ६७ सफ़ा ॥

४२ ग्वाल प्राचीन (२) सं० १७१५ में उ० ।

इनके कवित्त हजारा में हैं ॥ ७५ सफ़ा ॥

४३ गुनदेव बुंदेलखंडी सं० १८५२ में उ० ।

कवित्त सुन्दर हैं ॥ ६४ सफ़ा ॥

४४ गुणाकर त्रिपाठी काँथा, ज़िला उन्नाव के निवासी विद्यमान हैं ।

संस्कृत और भाषा दोनों में काव्य करते हैं । ज्योतिषशास्त्र तो इनके घर में बहुत काल से प्रसिद्ध चला आता है ॥ ७७ सफ़ा ॥

४५ गजराज उपाध्याय काशीवासी सं० १८७४ में उ० ।

इन महाराज ने वृत्तहार नाम पिङ्गल और रामायण ये दो ग्रन्थ रचे हैं ॥ ७५ सफ़ा ॥

४६ गुलामराम कवि ।

कवित्त सुन्दर बनाये हैं ॥ ७३ सफ़ा ॥

४७ गुलामी कवि ।

ऐजन् ॥ ८२ सफ़ा ॥

४८ गुनसिंधु कवि बुंदेलखंडी, सं० १८८२ में उ० ।

शृङ्गाररस के चोखे कवित्त हैं ॥ ६६ सफ़ा ॥

४९ गोसाईं कवि राजपूतानेवाले सं० १८८२ में उ० ।

नीति सम्बन्धी, सामयिक इनके दोहा बहुत अच्छे हैं ॥ ६६ सफ़ा ॥

५० गणेश कवि बन्दीजन बनारसी विद्यमान हैं ।

ये कवीश्वर महाराजा ईश्वरीनारायणसिंह काशीनरेश के यहाँ कविता में महानिपुण हैं ॥ ६६ सफ़ा ॥

५१ गीध कवि ।

फुटकर छप्पै, दोहा, कवित्त हैं ॥ ७१ सफ़ा ॥

५२ गड्डु कवि राजपूतानेवाले, सं० १७७० में उ० ।

कूट, गूढ़ और सामयिक छप्पै इनके बहुत विख्यात हैं ॥ ७२ सफ़ा ॥

५३ गिरिधारी भाट, मऊ रानीपुरा। बुंदेलखंडी विद्यमान हैं।

५४ गुलाबसिंह पंजाबी, सं० १८४६ में उ०।

कुरुक्षेत्र में क्षेत्रसंन्यास ले रामायण चन्द्रप्रबोध नाटक, मोक्षपंथ, भाँवरसाँवर इत्यादि नाना वेदांत के ग्रन्थ भाषा किये हैं॥

५५ गोवर्द्धन कवि, सं० १६८८ में उ०।

५६ गोधू कवि, सं० १७५५ में उ०।

५७ गणेशजी मिश्र, सं० १६१५ में उ०।

५८ गुलालसिंह, सं० १७८० में उ०।

५९ गजसिंह।

गजसिंहविलास बनाया॥

६० ज्ञानचंद्र यती राजपूतानेवाले, सं० १८७० में उ०।

यह कवि टाड साहब एजंट राजपूताने के गुरु हैं, और इन्हीं की सहायता से राजपूताने के बड़े-बड़े ग्रन्थ, वंशावली और प्रबंध साहब ने उल्था किये॥ (१)

६१ गोविंदराम बन्दीजन राजपूतानेवाले।

हाड़ा लोगों की वंशावली और सब राजों के जीवनचरित्र का एक ग्रन्थ हारावती इतिहास लिखा है, जिसमें राव रतन की प्रशंसा में यह दोहा कहा है—

दोहा—सरवर फूटा जल बहा, अब क्या करो जतन्न।
जाता घर जहँगीर का, राखा राव रतन्न॥ १॥

६२ गोपालसिंह ब्रजवासी।

तुलसीशब्दार्थप्रकाश नाम ग्रंथ बनाया है, जिसमें आठ कवियों को अष्टछाप के नाम से वर्णन कर उनके पद लिखे हैं, अर्थात् सूरदास १, कृष्णदास २, परमानन्द ३, कुंभनदास ४, चतुर्भुज ५, छीतस्वामी ६, नंददास ७, गोविंददास ८॥

६३ गदाधर कवि।

५६ सफ़ा॥

१ घनश्याम शुक्ल असनीवाले, सं० १६३५ में उ० ।

यह कवि कविता में महानिपुण और बांधवनरेश के यहाँ थे । ग्रंथ तो पूरा हमने कोई नहीं पाया, इनके कवित्त २०० तक हमारे पास हैं । कालिदास ने भी इनके कवित्त हजारा में लिखे हैं ॥ ८० सफ़ा ॥ (१)

२ घनआनंद कवि सं० १६१५ में उ० ।

यह कवि कविलोगों में महा उत्तम हो गये हैं ॥ ८२ सफ़ा ॥

३ घासीराम कवि, सं० १६८० में उ० ।

कालिदास जी ने हजारा में इनके कवित्त लिखे हैं ॥ ८२ सफ़ा ॥

४ घनराय कवि, सं० १६६२ में उ० ।

५ घाघ कान्यकुब्ज अंतरवेदवाले, सं० १७५३ में उ० ।

इनके दोहा, छप्पै, लोकोक्ति तथा नीतिसम्बन्धी सामयिक ग्रामीण बोलचाल में विख्यात हैं ॥

दोहा—मुये चाम ते चाम कटावैं, भुइं मा सकरे सोवैं ।
घाघ कहैं ये तीनों भकुवा, उढ़रि जाइ फिरि रोवैं॥१॥

६ घासी भट्ट

१ चंद कवि प्राचीन बन्दीजन (१) संभलनिवासी, सं० १०६८ में उ० ।

यह चंद कवि महाराजा वीसलदेव चौहान रनथंभोरवाले के प्राचीन कवीश्वर की औलाद में थे । संवत् ११२० में राजा पृथ्वीराज चौहान के पास आकर मंत्री और कवीश्वर दोनों पद को प्राप्त हुए । पृथ्वीराजरासा नाम एक ग्रन्थ में एक लक्ष श्लोक भाषा के रचे । इसमें ६९ खण्ड हैं और पुरानी बोली हिन्दुओं की है । इस ग्रंथ में चंद कवि ने संवत् १११० से संवत् ११४९ तक पृथ्वीराज का जीवनचरित्र महाकविता के साथ बहुत छंदों में वर्णन किया है । छप्पै छंद तो मानो इसी कवि के हिस्से में था, जैसे चौपाई छंद श्रीगोसाईं तुलसीदास के

हिस्से में पड़ा था। इस ग्रंथ में क्षत्रियों की वंशावली और अनेक युद्ध, आबू पहाड़ का माहात्म्य, दिल्ली इत्यादि राजधानियों की शोभा और क्षत्रियों के स्वभाव, चालचलन, व्यवहार बहुत विस्तार-पूर्वक वर्णन किये हैं। यह कवि केवल कवीश्वर नहीं थे, वरन् नीतिशास्त्र और चारण के कामकाज में निपुण महा शूरवीर भी थे। संवत् ११४९ में पृथ्वीराज के साथ यह भी मारे गये। इन्हीं की औलाद में शारंगधर कवि थे, जिन्हों ने हमीररासा और हमीरकाव्य भाषा में बनाया है॥ ८३ सफ़ा॥ (१)

२ चंद कवि (२), सं० १७४६ में उ०।

यह कवि सुलतान पठान नव्वाब राजगढ़ भाई वंदन बाबू भूपाल के यहाँ थे। इन्हों ने बिहारीसतसई का तिलक कुंडलिया छंद में सुलतान-पठान के नाम से बनाया है॥ ८५ सफ़ा॥

३ चंद कवि (३)।

सामान्य कवि थे॥ ८६ सफ़ा॥

४ चंद कवि (४)।

शृङ्गाररस में बहुत सुंदर कविता की है। हज़ारा में इनके कवित्त हैं॥ ८६ सफ़ा॥ (२)

५ चिन्तामणि त्रिपाठी टिकमापुर, ज़िले कानपुरवाले, सं० १७२९में उ०।

यह महाराज भाषा-साहित्य के आचार्यों में गिने जाते हैं। अन्तरवेद में प्रसिद्ध है कि इनके पिता दुर्गा पाठ करने नित्य देवीजी के स्थान में जाते थे। वह देवी जी वन की भुइयाँ कहाती हैं, टिकमापुर से एक मील के अन्तर पर हैं। एक दिन महाराजराजेश्वरी भगवती प्रसन्न होकर चारि मुंड दिखाकर बोलीं, ये ही चारों तेरे पुत्र होंगे। निदान ऐसा ही हुआ कि चिन्तामणि, भूषण, मतिराम, जटा-शंकर या नीलकण्ठ, ये चार पुत्र उत्पन्न हुए। इनमें केवल नील-कण्ठ महाराज एक सिद्ध के आशीर्वाद से कवि हुए, शेष तीनों भाई

संस्कृत-काव्य को पढ़कर ऐसे पण्डित हुए कि इनका नाम प्रलय तक बाकी रहेगा। इन्हीं के वंश में शीतल और बिहारीलाल कवि, जिनका उपनाम लाल है, संवत् १९०१ तक विद्यमान थे। निदान चिन्तामणि महाराज बहुत दिन तक नागपुर में सूर्यवंशी भोसला मकरन्द शाह के यहाँ रहे, उन्हीं के नाम से छन्द विचार नाम पिंगल का बहुत भारी ग्रन्थ बनाया। काव्यविवेक, कविकुलकल्पतरु, काव्यप्रकाश, रामायण, ये पाँच ग्रन्थ इनके बनाये हुए हमारे पुस्तकालय में मौजूद हैं। इनकी रामायण कविता और अन्य नाना छन्दों में बहुत अपूर्व है। बाबू रुद्रसाहि सोलंकी और शाहजहाँ बादशाह और जैनदी अहमद ने इनको बहुत दान दिये हैं। इन्होंने अपने ग्रन्थों में कहीं-कहीं अपना नाम मणिलाल कहा है॥ ८७ सफ़ा॥ (१)

६ चिन्तामणि (२)।

ललित काव्य की है॥ ९० सफ़ा॥

७ चूड़ामणि कवि, सं० १८६१ में उ०।

यह कविराज एक अपने ग्रन्थ में गुमानसिंह और अजीतसिंह की बड़ाई करते हैं। ग्रन्थ का नाम मालूम नहीं होता॥ ९० सफ़ा॥

८ चंदनराय कवि वन्दीजन नाहिल, पुवावाँ, ज़िले शाहजहाँपुरवाले, सं० १८३० में उ०।

यह कवि महाविद्वान् बड़े सन्तोषी राजा केसरीसिंह गौर के यहाँ थे। उनके नाम से केसरीप्रकाश ग्रन्थ रचा है। इनके ग्रन्थों की संख्या साफ़ जानी नहीं जाती। जो ग्रन्थ हमने पाये अथवा देखे हैं, उनकी संख्या लिखते हैं। प्रथम शृङ्गारसार ग्रन्थ बहुत भारी काव्य है। दूसरा कल्लोलतरंगिणी, तीसरा काव्याभरण, चौथा चन्दनसतसई, पांचवाँ पथिकबोध। ये सब ग्रन्थ बहुत ही

सुंदर देखने-पढ़ने योग्य हैं । इनके बारह शिष्य थे, और बारहों महान् कवि हुए। सबसे अधिक कवीश्वर मनभावन कवि हैं । चंदन-राय नाहिल छोड़कर किसी राजा बाबू, बादशाह के यहाँ नहीं गये । एक दफ़े किसी बुन्देलखण्डी रईस ने वंशगोपाल कवि का बनाया हुआ कूट कवित्त इनके पास अर्थ लिखने के लिये भेजा, और जब इनके अर्थ लिखे देखे तो बहुत प्रसन्न होकर पालकी सवारी को कुछ द्रव्यसहित भेजी । चंदनराय वहाँ नहीं गये, केवल यह दोहा लिखकर भेज दिया—

दोहा—खरी टूक खर खरथुआ, खारी नोन सँजोग ।
एतो जो घर ही मिलै,चन्दन छप्पन भोग ॥ १ ॥

६१ सफ़ा ॥ (१)

९ चोखे कवि ।

इनकी कविता चोखी है ॥ ८६ सफ़ा ॥

१० चतुरविहारी कवि ब्रजवासी, सं० १६०५ में उ० ।

इनके पद रागसागरोद्भव में बहुत हैं ॥ ८६ सफ़ा ॥

११ चतुरसिंह राना, सं० १७०१ में उ० ।

सीधी बोली में कवित्त हैं ॥ ९४ सफ़ा ॥

१२ चतुर कवि ।

सुंदर कविता है ॥ ९५ सफ़ा ॥

१३ चतुरविहारी (२) ।

ऐजन् ॥ ९५ सफ़ा ॥

१४ चतुर्भुज ।

ऐज़न् ॥ ९५ सफ़ा ॥

१५ चतुर्भुजदास, सं० १६०१ में उ० ।

रागसागरोद्भव में इनके बहुत पद हैं । यह महाराजा करौली के राजा स्वामी विट्ठलनाथजी गोकुलस्थ के शिष्य थे । अष्टछाप में इनका भी नाम है ॥ ९६ सफ़ा ॥

१६ चैन कवि।

८७ सफ़ा ॥

१७ चैनसिंह खत्री लखनऊवाले, सं० १६१० में उ०।

इनका उपनाम हरचरण है । भारतदीपिका, शृंगारसारावली, ये दो ग्रन्थ इन्होंने बनाये हैं ॥ ८७ सफ़ा ॥

१८ चैनराय कवि।

६५ सफ़ा ॥

१६ चण्डीदत्त कवि, सं० १८६८ में उ०।

यह कवि महाराजा मानसिंह के साथ अवध में कुछदिन रहे थे । इनकी कविता सरस है ॥ ६६ सफ़ा ॥

२० चरणदास ब्राह्मण परिडतपुर, ज़िला फ़ैज़ाबाद, सं० १५३७ में उ०।

ज्ञानस्वरोदय ग्रन्थ बनाया ॥ ६४ सफ़ा ॥

२१ चेतनचंद्र कवि, सं० १६१६ में उ०।

राजा कुशलसिंह सेंगरवंशावतंस की आज्ञानुसार अश्वविनोद नाम शालिहोत्र बनाया ॥ ६६ सफ़ा ॥

२२ चिरंजीव ब्राह्मण बैसवारे के, सं० १८७० में उ०।

भारत को भाषा किया है ॥ ६४ सफ़ा ॥

२३ चन्द्सखी व्रजवासी, सं० १६३८ में उ०।

इनके पद रागसागरोद्भव में हैं ॥ ६३ सफ़ा ॥

२४ चोवा कवि, हरिप्रसाद बंदीजन डलमऊवाले विद्यमान हैं।

यह कवि असोथरवाले खींचियों के पुराने कवि हैं । चोवा कवि कविता में निपुण हैं और अब थोड़ेदिन से होलपुर में रहा करते हैं ॥ ६६ सफ़ा ॥

१ छत्रसाल बुन्देला महाराजा पन्ना, बुन्देलखण्ड, सं० १६६० में उ०।

यह महाराज महान् कवि कविलोगों के कल्पवृक्ष, गुणग्राहक, साहित्य के निपट चाहक, शूरशिरोमणि उदारचित्त बड़े नामी हुए हैं । इनके दरबार तक जो कवि-कोविद पहुँचा, मालामाल हो

गया। बहुतेरे कवि नितप्रति के लिये नौकर थे, और सैकड़ों भूमि के चारों ओर से इनका यश सुन हाज़िर होते थे। इनके ज़माने से लेकर आजतक जो जो राजा दीवान बाबू भाई बेटे सभासिंह हृदयसाहि अमानसिंह हिन्दूपति इत्यादि पन्ना में हुए, वे सब कवि-कोविदों के क़दरदान रहे। राजा छत्रसाल ही के दान-सम्मान सुन-सुन किसी ज़माने में बुंदेलखण्ड, बैसवारा, अन्तरवेद इत्यादि में सैकड़ों हज़ारों मनुष्य कवि होगये थे। एक दफ़े उड़छा के बुन्देला राजा ने राजा छत्रसालजी को ठट्ठा के तौर पर यह लिखा कि ओड़छे के राजा अरु दतिया की राई। अपने मुँह छत्रसाल बनत भनावाई। तब छत्रसाल ने सुदामा तन हेरयो तब रंकहू ते राव कीन्हों, यह कवित्त बनाकर उनके पास भेजा। राजा छत्रसाल ने छत्रप्रकाश ग्रन्थ बनवाया है, जिसमें बुन्देलों की उत्पत्ति से लेकर अपने समय तक बुन्देलखण्डी राजों के वृत्तांत हैं। जो युद्ध राजा वीरसिंह देव और अबदुस्समदख़ाँ अबुलफ़ज़ल के दामाद से हुआ है, सो देखने योग्य है। बुन्देला अपने को एक गहरवार की शाखा अर्थात् काशीनरेशके वंश में समझते हैं। महेवा इनकी आदि-राजधानी है॥ ६७ सफ़ा॥

२ छितिपाल राजा माधवसिंह बंधलगोत्री अमेठी, ज़िले सुल्ताँपुर के रईस विद्यमान हैं।

इन महाराज के वंश में सदैव काव्य की चर्चा रही है। राजा हिम्मतसिंह, राजा गुरुदत्तसिंह, राजा उमरावसिंह इत्यादि सब खुद भी कवि थे। उनके यहाँ कवि लोगों में जो शिरोमणि कवि थे, उनका मान रहा, और ऐसा दान मिला कि फिर दूसरी सरकार में जाने की चाह कम रही। राजा हिम्मतसिंह के यहाँ भाषा-

काव्य के महान् पण्डित सुखदेव मिश्र, और गुरुदत्त सिंह के पास उदयनाथ कवीन्द्र, और उमरावसिंह के पास सुवंश शुक्ल जैसे नामी-गिरामी कवि थे, और उनके नाम के बड़े-बड़े साहित्य के ग्रन्थ रचे हैं। राजा माधवसिंह इस अवधप्रदेश में कवि-कोविदों की क़दरदानी में बहुत ही गनीमत हैं। इन महाराज के बनाये हुए मनोजलतिका, देवीचरित्रसरोज, त्रिदीप, अर्थात् भर्तृहरि शतक का भाषा उल्था, ये तीन ग्रन्थ हमारे पास मौजूद हैं। और ग्रंथ हमने नहीं देखे ॥ ९७ सफ़ा ॥

३ छेमकरण कवि ब्राह्मण धनौली, ज़िले बाराबंकी, सं० १८७५ में उ०।

इनके बनाये हुए ग्रन्थ रामरत्नाकर, रामास्पद, गुरुकथा, आह्निक, रामगीतमाला, कृष्णचरितामृत, पदविलास, वृत्तभास्कर, रघुराजघनाक्षरी इत्यादि बहुत सुन्दर हैं। प्रायः ९० वर्ष की अवस्था में, संवत् १९१८ में, देहांत हुआ ॥ १०१ सफ़ा ॥

४ छेमकरन (२) अन्तरवेदवाले।

कवित्त अच्छे हैं ॥ १०० सफ़ा ॥

५ छत्तन कवि।

इनकी कविता बहुत विचित्र है ॥ ९७ सफ़ा ॥

६ छत्रपति कवि।

९७ सफ़ा ॥

७ छेम कवि, सं० १७५५ में उ०।

९९ सफ़ा ॥

८ छबीले कवि ब्रजवासी।

रागसागरोद्भव में इनके पद हैं ॥ १०० सफ़ा ॥

९ छैल कवि, सं० १७५५ में उ०।

हज़ारा में इनके कवित्त हैं ॥ १०० सफ़ा ॥

१० छीत कवि, सं० १७०५ में उ०।

ऐज़न् ॥ १०० सफ़ा ॥

११ छीतस्वामी, सं० १६०१ में उ० ।

इनके पद रागकल्पद्रुम में बहुत हैं। यह महाराज वल्लभाचार्य्य के पुत्र विट्ठलनाथजी के शिष्य थे। इनकी गिनती अष्टछापमें है ॥ १०१ सफ़ा ॥

१२ छेदीराम कवि, सं० १८६४ में उ० ।

कविनेह नाम पिंगल बनाया है। कविता में महानिपुण मालूम होते हैं। यद्यपि यह ग्रंथ हमारे पुस्तकालय में है, तथापि इनके ग्राम का नाम उसमें नहीं पाया गया ॥ १०१ सफ़ा ॥

१३ छत्र कवि, सं० १६२५ में उ० ।

विजयमुक्तावली नाम ग्रंथ अर्थात् भारत की कथा बहुत ही संक्षेप से सूचीपत्र के तौर से नाना छन्दों में वर्णन की है ॥

१४ छेम कवि (२) बंदीजन डलमऊ के, सं० १५८२ में उ० ।

यह कवि हुमायूँ बादशाह के यहाँ थे ॥ १०१ सफ़ा ॥

१ जगतसिंह बिसेन, राजा गोंडा के भाईबन्द, सं० १७६८ में उ० ।

यह कवि राजा गोंडा और भिनगा के भैया थे। देउतहा नाम रियासत के तअल्लुक़ेदार थे । शिव कवि अरसेला बंदीजन इन्हीं के ग्राम देउतहा के वासी थे। उनसे काव्य पढ़कर महा विचित्र कविता की है। छंदशृङ्गार ग्रन्थ पिंगल में, और साहित्यसुधानिधि नाम ग्रन्थ अलंकार में बनाया है। इस अलंकारी ग्रन्थ में ६३६ बरवै हैं। इसके सिवा और भी ग्रन्थ बनाये हैं । पर वे हमारे पुस्तकालय में नहीं हैं ॥ १०२ सफा ॥

२ जुगुलकिशोर भट्ट (२) कैथलवासी, सं० १७६५ में उ० ।

यह महाराज मुहम्मदशाह बादशाह के बड़े मुसाहबों में थे। इन्होंने संवत् १८०३ में अलंकारनिधि नाम एक ग्रंथ अलंकार का अद्वितीय बनाया है, जिसमें ६६ अलंकार उदाहरण-समेत वर्णन किये हैं। उसी ग्रन्थ में ये दो दोहे अपने नाम और सभा के समाचार में कहे हैं—

दोहा ॥ ब्रह्मभट्ट हौं जाति को, निपट अधीन नदान ।
राजा-पद मो को दियो, महमदसाह सुजान ॥ १ ॥
चारि हमारी सभा में, कोविद कवि मति चारु ।
सदा रहत आनँद बढ़े, रस को करत विचारु ॥ २ ॥
मिश्र रुद्रमनि विप्रवर, औ सुखलाल रसाल ।
सतंजीव सु गुमान हैं, सोभित गुनन विसाल ॥ ३ ॥
१०५ सफ़ा ॥

३ जुगुलकिशोर कवि (१) ।

शृङ्गाररस में कवित्त अच्छे हैं ॥ १०५ सफ़ा ॥

४ जुगराज कवि ।

इनका बहुत ही सरस काव्य है ॥ १११ सफ़ा ॥

५ जुगुलप्रसाद चौबे ।

इनकी बनाई हुई दोहावली बहुत सुंदर है ॥ ११७ सफ़ा ॥

६ जुगुल कवि, सं० १७५५ में उ० ।

इनके बनाये हुए पद अति अनूठे महाललित हैं ॥ ११५ सफ़ा ॥

७ जानकीप्रसाद पवाँर जोहबेनकटी, ज़िले रायबरेली । वि० ।

यह कवि ठाकुर भवानीप्रसाद के पुत्र फ़ारसी संस्कृत भाषा इत्यादि विद्याओं में बहुत प्रवीण हैं । इनके बनाये हुए बहुत ग्रन्थ हमारे पास हैं । उर्दू ज़बान में शाहनामा (अर्थात् हिन्दुस्तान की तारीख़), और भाषा में रघुबीरध्यानावली, रामनवरत्न, भगवती विनय, रामनिवासरामायण, रामानंदविहार, नीतिविलास, ये सात ग्रन्थ हैं । चित्रकाव्य और शांतरस के वर्णन में बहुत अच्छे हैं । सहनशीलता उदारता भी बहुत है ॥ १०७ सफ़ा ॥

८ जानकीप्रसाद (२)।

दुशाले की याचना सिंहराज से करने का केवल एक कवित्त हमने पाया है ॥ १०७ सफ़ा ॥

९ जानकीप्रसाद कवि बनारसी (३), सं० १८६० में उ०।

संवत् १८७१ में केशवकृत रामचन्द्रिका ग्रंथ की टीका बनाई है, और युक्तिरामायण नाम ग्रंथ रचा, जिसके ऊपर धनीराम कवि ने तिलक किया है ॥ १०८ सफ़ा ॥

१० जनकेश भाट मऊ, बुंदेलखण्ड, सं० १९१२ में उ०।

यह कवि छत्रपुर में राजा के यहाँ नौकर हैं। इनकी काव्य बहुत मधुर है ॥ १०४ सफ़ा ॥

११ जसवन्तसिंह बघेले, राजातिरवा, ज़िले कन्नौज, सं० १८५५ में उ०।

यह महाराज संस्कृत, भाषा, फ़ारसी आदि में बड़े पण्डित थे। अष्टादशपुराण और नाना ग्रन्थ साहित्य इत्यादि सब शास्त्रों के इकट्ठे किये। शृंगारशिरोमणि ग्रन्थ नायिकाभेद का, भाषाभूषण अलंकार का, और शालिहोत्र, ये तीन ग्रन्थ इनके बनाये हुए बहुत अद्भुत हैं। संवत् १८७१ में स्वर्गवास हुआ ॥ १०९ सफ़ा ॥ (?)

१२ जसवन्त कवि (२), सं० १७९२ में उ०।

इनके कवित्त हजारा में हैं ॥ ११३ सफ़ा ॥

१३ जवाहिर कवि (१) भाट बिलग्रामी, सं० १८४५ में उ०।

जवाहिररत्नाकर नाम ग्रन्थ बहुत सुंदर बनाया है ॥ १०३ सफ़ा ॥

१४ जवाहिर कवि (२) भाट श्रीनगर, बुंदेलखंडी (?)
सं० १९१४ में उ०।

बहुत सुन्दर कविता की है ॥ १०३ सफ़ा ॥

१५ जैनुद्दीन अहमद कवि सं० १७३६ में उ०।

यह कवि लोगों के महामान-दान-दायक और आप भी महान् कवि थे ॥ १०६ सफ़ा ॥

१६ जयदेव कवि (१) कंपिलावासी, सं० १७७८ में उ० ।

यह कवि नवाव फ़ाजिलअलीखाँ के यहाँ थे, और सुखदेव मिश्र कंपिलावाले के शिष्यों में उत्तम थे ।। १०६ सफ़ा ।।

१७ जयदेव कवि (२), सं० १८१५ में उ० ।

कवित्त चोखे हैं ।। १०६ सफ़ा ।।

१८ जैतराम कवि ।

शांतरस के कवित्त अच्छे हैं ।। १०७ सफ़ा ।।

१६ जैत कवि, सं० १६०१ में उ० ।

अकवर वादशाह के यहाँ थे ।। ११५ सफ़ा ।।

२० जयकृष्ण कवि, भवानीदास कवि के पुत्र ।

छंदसार नाम पिंगल-ग्रन्थ वनाया है । सन-संवत्, निवास ग्रन्थ के खंडित होने के कारण नहीं मालूम हुआ ।। १०८ सफ़ा ।।

२१ जय कवि भाट लखनऊवाले, सं० १६०१ में उ० ।

यह कवि वाजिदअली वादशाह लखनऊ के मुजराई थे । वहुत कविता भाषा उर्दू जवान में की है । इनका काव्य नीति सामयिक चेतावनीसंवंधी होने से सवको प्रिय है । मुसलमानों से वहुत दिन तक इनका झगड़ा दीन की वावत होता रहा । अन्त में इन्होंने यह चौवोला वनाया, तव मुसल्मानों से वचे—सुनौ रे तुरकौ करो यकीन । कुरआँ माँझ खुदाय कहि दीन । लुकुम दीन कुँवलुकुमुद्दीन ।। ११४ सफ़ा ।।

२२ जयसिंह कवि ।

शृंगाररस के कवित्त चोखे हैं ।। ११४ सफ़ा ।।

२३ जगन कवि, सं० १६५२ में उ० ।

ऐजन् ।। १०४ सफ़ा ।।

२४ जनार्दन कवि, सं० १७१८ में उ० ।

ऐज़न् ।। १०६ सफ़ा ।।

२५ जनार्दनभट्ट।

वैद्यरत्न नाम ग्रन्थ वैद्यक का बनाया है॥ ११७ सफ़ा॥

२६ जमाल कवि, सं० १६०२ में उ०।

यह कवि गूढ़कूट में बहुत निपुण थे। इनके दोहे बहुत सुन्दर हैं॥ १०६ सफ़ा॥

२७ जीवनाथ भाट नवलगंज, ज़िले उन्नाव के, सं० १८७२ में उ०।

यह कवि महाराजा बालकृष्ण बादशाह के दीवान के घराने के प्राचीन कवि हैं। वसंतपचीसी ग्रन्थ महाअद्भुत बनाया है॥ ११० सफ़ा॥

२८ जीवन कवि (१), सं० १८०३ में उ०।

मोहम्मदअली बादशाह के यहाँ थे। कविता सुन्दर की है॥ १११ सफ़ा॥

२९ जगदेव कवि, सं० १७६२ में उ०।

कविता सरस है॥ ११२ सफ़ा॥

३० जगन्नाथ कवि (१) प्राचीन।

शांत रस के इनके कवित्त अच्छे हैं॥ ११२ सफ़ा॥

३१ जगन्नाथ कवि (२) अवस्थी सुमेरपुर, ज़िला उन्नाव। वि०।

यह महाराज इस समय संस्कृत-साहित्य में अद्वितीय हैं। प्रथम महाराजा मानसिंह अवधनरेश के यहाँ बहुत दिन तक रहे। अब महाराजा शिवदीनसिंह अलवरदेशाधिपति के यहाँ हैं। संस्कृत के बहुत ग्रन्थ हैं। भाषा में कोई ग्रन्थ काव्य का, सिवा स्फुट कवित्त दोहों के, नहीं देखने में आया॥ ११२ सफ़ा॥

३२ जगन्नाथदास।

रागसागरोद्भव में इनके पद हैं॥ ११५ सफ़ा॥

३३ जलालउद्दीन कवि, सं० १६१५ में उ०।

हजारा में इनके कवित्त हैं॥ ११४ सफ़ा॥

३४ जशोदानन्दन कवि, सं० १८२८ में उ० ।

बरवैछंद में बरवै-नायिकाभेद नाम ग्रंथ अति विचित्र बनाया है ॥ ११६ सफ़ा ॥

३५ जगनन्द कवि वृन्दावनवासी, सं० १६५८ में उ० ।

इनके कवित्त हजारा में हैं ॥ ११२ सफ़ा ॥

३६ जोइसी कवि, सं० १६५८ में उ० ।

इनके कवित्त हजारा में हैं ॥ ११३ सफ़ा ॥

३७ जीवन कवि, सं० १६०८ में उ० ।

ऐज़न् ॥ ११३ सफ़ा ॥

३८ जगजीवन कवि, सं० १७०५ में उ० ।

ऐज़न् ॥ ११३ सफ़ा ॥

३९ जदुनाथ कवि, सं० १६८१ में उ० ।

तुलसी के संग्रह में इनके कवित्त हैं ॥ ११४ सफ़ा ॥

४० जगदीश कवि, सं० १५८८ में उ० ।

अकबर बादशाह के यहाँ थे ॥ ११४ सफ़ा ॥

४१ जयसिंह कछवाह महाराजा आमेर, सं० १७७५ में उ० ।

यह महाराज सर्वविद्यानिधान कविकोविदों के कल्पवृक्ष महान् कवि थे । आप ही अपना जीवनचरित्र लिख उस ग्रन्थ का नाम जयसिंहकल्पद्रुम रक्खा है । यह ग्रन्थ अवश्य विद्वानों को दर्शनीय है ॥ ११४ सफ़ा ॥

४२ जयसिंह सिसौदिया, महाराना उदयपुर, सं० १६८१ में उ० ।

यह महाराजा राना राजसिंह के पुत्र महान् कवि और कवि-कोविदों के कल्पवृक्ष थे । एक ग्रन्थ जयदेवविलास नाम अपने वंश के राजों के जीवनचरित्र का बनवाया है ॥

४३ जलील. (सैयद अब्दुलजलील बिलग्रामी) सं० १७३६ में उ० ।

यह कवि औरंगजेब बादशाह के यहाँ बड़े पद पर थे । अरबी-फ़ारसी इत्यादि यावनी भाषाओं में इनका पाण्डित्य इनके

बनाये हुए ग्रंथों से प्रकट होता है। अंत में हरिवंश मिश्र कवि बिलग्रामी से भाषा-काव्य पढ़कर सुन्दर कविता की है॥ ११६ सफ़ा॥

४४ जमालुद्दीन पिहानीवाले, सं० १६२५ में उ०।

अच्छे कवि थे॥

४५ जगनेश कवि।

ऐज़न्॥

४६ जोध कवि, सं० १५६० में उ०।

अकबर बादशाह के यहाँ थे॥

४७ जगन्नाथ।

ऐज़न्॥

४८ जगामग।

ऐज़न्॥

४९ जुगलदास कवि।

पद बनाये हैं॥

५० जगजीवनदास चंदेल कोटवा, ज़िले बाराबंकी, सं० १८४१ में उ०।

यह महाराज बड़े महात्मा सत्यनामी पंथ के चलानेवाले थे। भाषा-काव्य भी किया है और आज तक जलालीदास इत्यादि जो महात्मा इनकी गद्दी पर बैठे हैं, सब काव्य करते हैं। परंतु बहुधा शांतरस की ही इन की कविता है। दूलमदास, देवीदास इत्यादि सब इसी घराने के शिष्य हैं, जिनके पद बहुत सुनने में आते हैं॥

५१ जुल्फकार कवि, सं० १७८२ में उ०।

इन्होंने बिहारीसतसई का तिलक बहुत विचित्र बनाया है॥

५२ जगनिक बंदीजन महोबा, बुंदेलखंड, सं० ११२४ में उ०।

यह कवि चंद कवीश्वर के समय में थे। जैसे चंद का पद पृथ्वीराज चौहान के यहाँ था, वैसे परिमाल महोबेवाले चंदेल

राजा के यहाँ जगनिक का मानदान था। चंद ने रासा में बहुत जगह इनकी प्रशंसा की है ॥

५३ जवरेश बंदीजन, बुंदेलखंडी, वि० ।

१ टोडर कवि, राजा टोडरमल खत्री पंजाबी, सं० १५८० में उ० ।

यह राजा टोडरमल अकबर बादशाह के दीवान-आला थे। इन के हालात से तारीख़-फ़ारसी भरी हुई है। अरबी, फ़ारसी और संस्कृत में महानिपुण थे। श्रीमद्भागवत का संस्कृत से फ़ारसी में उल्था किया है। और भाषा में नीतिसंबंधी बहुत कवित्त कहे हैं। इन महाराज ने दो काम बहुत शुभ हिन्दुस्तानियों के भलाई के लिये किये हैं, एक तो पंजाब देश में खत्रियों के यहाँ रिवाज-तीनसाला-मातम का उठाकर केवल वार्षिक रस्म को नियत किया; दूसरे फ़ारसी हिसाब-किताब को ईरान देश के माफ़िक हिन्दुस्तान में जारी किया। सन् ६६८ हिजरी में शहर लाहौर में देहांत हुआ ॥ ११७ सफ़ा ॥

२ टेर कवि मैनपुरी ज़िले के वासी, सं० १८८८ में उ० ।

इन्होंने सुंदर कविता की है ॥

३ टहकन कवि पंजाबी ।

पांडवों के यज्ञ-इतिहास की कथा संस्कृत से भाषा में की है ॥

१ ठाकुर कवि प्राचीन, सं० १७०० में उ० ।

ठाकुर कवि को किसी ने कहा है कि वह असनी-ग्राम के बंदीजन थे। संवत् १८०० के क़रीब मोहम्मदशाह बादशाह के ज़माने में हुए हैं। और कोई कहता है कि नहीं, ठाकुर कवि कायस्थ बुंदेलखण्ड के वासी हैं। किसी बुंदेलखण्डी कवि का बयान है कि छत्रपुर, बुंदेलखण्ड में बुंदेलालोग हिम्मतबहादुर गोसांई के मारने को इकट्ठा हुए थे। ठाकुर कवि ने यह कवित्त, 'समयो यह बीर बरावने है' लिख भेजा। सब बुंदेला चले गये, और हिम्मत-

वहादुर ने ठाकुर को वहुत रुपए इनाम में दिए। हिम्मतवहादुर संवत् १८०० में थे। कवि कालिदास ने हज़ारा संवत् १७४५ के करीब वनाया है, और उसमें ठाकुर के वहुत कवित्त और ऊपर लिखा हुआ कवित्त भी लिखा है। इससे हम अनुमान करते हैं कि ठाकुर कवि बुंदेलखण्डी अथवा असनीवाले भाट या कायस्थ कुछ हों, पर अवश्य संवत् १७०० में थे। इनका काव्य महा-मधुर लोकोक्ति इत्यादि अलंकारों से भरापुरा सर्व प्रसन्नकारी है। सवैया इनके वहुतही चुटीले हैं। इनके कवित्त तो हमारे पुस्तका-लय में सैकड़ों हैं, पर ग्रन्थ कोई नहीं। न हमने किसी ग्रन्थ का नाम सुना॥ ११७ सफ़ा॥ (१)

२ ठाकुरप्रसाद त्रिपाठी (१) किशुनदासपुर, ज़िले रायबरेली, सं० १८८२ में उ०।

यह महान् पण्डित संस्कृतसाहित्य में महाप्रवीण थे। सारे हिन्दु-स्तान में काव्य ही के हेतु फिरकर ७२ वस्ते पुस्तकें केवल काव्य की इकट्ठा की थीं। अपने हाथ से भी नाना ग्रन्थ लिखे थे। बुंदेलखंड में तो घर-घर कवियों के यहाँ फिरकर एक संग्रह भाषा के कवियों का इकट्ठा किया था। रसचंद्रोदय ग्रन्थ इनका वनाया हुआ है। तत्पश्चात् काशीजी में गणेश और सरदार इत्यादि कवियों से बहुत मेल-जोल रहा। अवधदेश के राजा-महाराजों के यहाँ भी गये। जब इनका संवत् १९२४ में देहान्त हुआ, तो इन के चारों महामूर्ख पुत्रों ने अठारह-अठारह वस्ते बाँट लिये और कौड़ियों के मोल वेच डाले। हम ने भी प्रायः २०० ग्रंथ अंत में मोल लिये थे॥ ११९ सफ़ा॥

३ ठाकुरराम कवि।

इनके कवित्त शांतरस के सुंदर हैं॥ ११९ सफ़ा॥

४ ठाकुरप्रसाद त्रिवेदी (२) अलीगंज, ज़िले खीरी। विद्यमान हैं। सत्कवि हैं ॥ १२० सफ़ा ॥

१ ढाखन कवि।

इनका महाअद्भुत काव्य है ॥ १२० सफ़ा ॥

१ श्रीगोस्वामी तुलसीदासजी (१), सं० १६०१ में उ०।

यह महाराज सरवरिया ब्राह्मण राजापुर, ज़िले प्रयाग के रहने वाले और संवत् १५८३ के लगभग उत्पन्न हुए थे। संवत् १६८० में स्वर्गवास हुआ। इनके जीवनचरित्र की पुस्तक वेणीमाधवदास कवि पसका-ग्रामवासी ने, जो इनके साथ-साथ रहे, बहुत विस्तार-पूर्वक लिखी है। उसके देखने से इन महाराज के सब चरित्र प्रकट होते हैं। इस पुस्तक में ऐसी विस्तृत कथा को हम कहाँतक संक्षेप में वर्णन करें। निदान गोस्वामीजी बड़े महात्मा रामोपासक महायोगी सिद्ध हो गये हैं। इनके बनाये ग्रन्थों की ठीक ठीक संख्या हमको मालूम नहीं हुई। केवल जो ग्रंथ हमने देखे, अथवा हमारे पुस्तकालय में हैं, उनका जिकर किया जाता है। प्रथम ४९ काण्ड रामायण बनाया है, इस तफ़सील से, १ एक चौपाई-रामायण ७ काण्ड, २ कवित्तावली ७ काण्ड, ३ गीतावली ७ काण्ड, ४ छन्दावली ७ काण्ड, ५ बरवै ७ काण्ड, ६ दोहावली ७ काण्ड, ७ कुंडलिया ७ काण्ड। सिवा इन ४९ काण्डों के १ सतसई, २ रामशलाका, ३ संकटमोचन, ४ हनुमत्बाहुक, ५ कृष्णगीतावली, ६ जानकीमङ्गल, ७ पार्वतीमङ्गल, ८ करखाछन्द, ९ रोलाछन्द, १० झूलनाछन्द इत्यादि और भी ग्रन्थ बनाये हैं। अन्त में विनयपत्रिका महाविचित्र मुक्तिरूप प्रज्ञानंदसागर ग्रंथ बनाया है। चौपाई गोस्वामी महाराज की ऐसी किसी कवि ने नहीं बना पाई, और न विनयपत्रिका के समान अद्भुत ग्रन्थ आजतक किसी कवि महात्मा ने रचा। इस

काल में जो रामायण न होती, तो हम ऐसे मूर्खों का बेड़ा पार न लगता। गोसाईंजी श्रीअयोध्या जी, मथुरा-वृन्दावन, कुरुक्षेत्र, प्रयाग, वाराणसी, पुरुषोत्तमपुरी इत्यादि क्षेत्रों में बहुत दिनों तक घूमते रहे हैं। सबसे अधिक श्रीअयोध्या, काशी, प्रयाग और उत्तराखण्ड, वंशीवट ज़िले सीतापुर इत्यादि में रहे हैं। इनके हाथ की लिखी हुई रामायण, जो राजापुर में थी, खंडित होगई है। पर मलिहाबाद में आजतक सम्पूर्ण सातों कांड मौजूद हैं। केवल एक पत्रा नहीं है। विस्तार-भय से अधिक हालात हम नहीं लिख सकते। दो दोहे लिखकर इन महाराज का वृत्तांत समाप्त करते हैं :—

दोहा—कविता कर्ता तीनि हैं, तुलसी, केसव, सूर।
कविता खेती इन लुनी, सीला बिनत मजूर ॥ १ ॥
सूर सूर तुलसी ससी, उडुगन केसवदास।
अब के कबि खद्योतसम, जहँ तहँ करत प्रकास ॥ २ ॥

१२० सफ़ा ॥

२ तुलसी (२) श्रीओझाजी, जोधपुरवाले।

सुन्दरीतिलक में इनके कवित्त हैं। शृङ्गाररस चोखा वर्णन किया है ॥ १२३ सफ़ा ॥

३ तुलसी (३) कवि यदुराय के पुत्र, सं० १७१२ में उ०।

यह कवि कविता में सामान्य कवि हैं। इन्हों ने कविमाला नाम एक संग्रह बनाया है, जिसमें प्राचीन ७५ कवियों के कवित्त लिखे हैं। ये सब कवि संवत् १५०० से लेकर १७०० तक के हैं। इस संग्रह के बनाने में इस ग्रन्थ से हम को बड़ी सहायता मिली है ॥ १२३ सफ़ा ॥

४ तुलसी (४)

इनका काव्य सरस है ॥ १२४ सफ़ा ॥

५ तानसेन कवि ग्वालियरनिवासी, सं० १५८८ में उ० ।

यह कवि मकरन्द पाँड़े गौड़ ब्राह्मण के पुत्र थे । प्रथम श्रीगोसाईं स्वामी हरिदासजी गोकुलस्थ के शिष्य होकर काव्यकला को यथावत् सीख कर पीछे शेख़ मोहम्मद गौस ग्वालियरवासी के पास जाकर संगीतविद्या के लिये प्रार्थना की । शाहसाहब तंत्रविद्या में अद्वितीय थे । मुसल्मानों में इन्हींको इस विद्या का आचार्य्य सब तवारीख़ों में लिखा गया है । शाह साहब ने अपनी जीभ तानसेन की जीभ में लगा दी । उसी समय से तानसेन गानविद्या में महानिपुण होगये । इनकी प्रशंसा आईन-अकबरी में ग्रन्थकर्ता फहीम ने लिखा है कि ऐसा गानेवाला पिछले हज़ारा में कोई नहीं हुआ । निदान तानसेन ने दौलतख़ाँ, शेरख़ाँ बादशाह के पुत्र, पर आशिक़ होकर उनके ऊपर बहुत सी कविता की । दौलत ख़ाँ के मरने पर श्रीबांधवनरेश रामसिंह बघेला के यहाँ गये । फिर वहाँ से अकबर बादशाह ने अपने यहाँ बुला लिया । तानसेन और सूरदासजी से बहुत मित्रता थी । तानसेनजी ने सूरदास की तारीफ़ में यह दोहा बनाया—

दोहा—किधौं सूर को सर लग्यो, किधौं सूर की पीर ।
किधौं सूर को पद लग्यो, तनमन धुनत सरीर ॥ १ ॥

तब सूरदासजी ने यह दोहा कहा—

दोहा—विधना यह जिय जानि कै, सेस न दीन्हे कान ।
धरा मेरु सब डोलते, तानसेन की तान ॥ २ ॥

इनके ग्रन्थ रागमाला इत्यादि महा उत्तम काव्य के ग्रंथ हैं ॥ १२८ सफ़ा ॥

६ तारापति कवि, सं० १७६० में उ० ।

कवित्त नखशिख के सुंदर हैं ॥ १२४ सफ़ा ॥

७ तारा कवि, सं० १८३६ में उ० ।

सुन्दर कविता की है ॥ १२४ सफ़ा ॥

८ तत्त्ववेता कवि, सं० १६८० में उ० ।

हज़ारा में इनके कवित्त हैं ॥ १२५ ॥

९ तेगपाणि कवि, सं० १७०८ में उ० ।

ऐज़न् ॥ १२५ सफ़ा ॥

१० ताज कवि, सं० १६५२ में उ० ।

ऐज़न् ॥ १२६ सफ़ा ॥ (१)

११ तालिबशाह, सं० १७६८ में उ० ।

कवित्त अच्छे हैं ॥ १२६ सफ़ा ॥

१२ तीर्थराज ब्राह्मण वैसवारे के, सं० १८०० में उ० ।

यह महाराज महान् कवीश्वर वैसवंशावतंस राजा अचलसिंह वैस रनजीतपुरवावाले के यहाँ थे, और उन्हीं की आज्ञानुसरा संवत् १८०७ में समरसार भाषा किया ॥ १२८ सफ़ा ॥

१३ तीखी कवि ।

ऐज़न् ॥ १२८ सफ़ा ॥

१४ तेही कवि ।

ऐज़न् ॥ १२८ सफ़ा ॥

१५ तोख कवि, सं० १७०५ में उ० ।

यह महाराज भाषाकाव्य के आचार्यों में हैं । ग्रन्थ इनका कोई हमको नहीं मिला । पर इनके कवित्तों से हमारा कुतुबख़ाना भरा हुआ है । कालिदास तथा तुलसीजी ने भी इनकी कविता अपने ग्रंथों में बहुत सी लिखी है ॥ १२५ सफ़ा ॥

१६ तोखनिधि ब्राह्मण कंपिलानगरवासी, सं० १७९८ में उ० ।

इनके बनाये हुए तीन ग्रंथ हैं—सुधानिधि १, व्यंग्यशतक २, नखशिख ३, ये तीनों ग्रंथ विचित्र हैं ॥ १२७ सफ़ा ॥

१ राजा दलसिंह कवि, बुंदेलखंडी, सं० १७८१ में उ०।

केवल प्रेमपयोनिधि नाम ग्रंथ राधामाधव के परस्पर नाना लीलाविहार के वर्णन में बनाया है ॥ १३२ सफ़ा ॥

२ दलपतिराय-वंशीधर श्रीमाल ब्राह्मण अमदाबादवासी, सं० १८८५ में उ०।

भाषाभूषण का तिलक दोनों ने मिलकर बहुत विचित्र रचना करके बनाया है ॥ १३६ सफ़ा ॥

३ दयाराम कवि (१)।

अनेकार्थमाला ग्रंथ बनाया है ॥ १३८ सफ़ा ॥

४ दयाराम कवि त्रिपाठी, सं० १७६६ में उ०।

शांतरस के कवित्त चोखे हैं ॥ १३९ सफ़ा ॥

५ दयानिधि कवि (२)।

१३९ सफ़ा ॥

६ दयानिधि ब्राह्मण पटनानिवासी (३)।

१४० सफ़ा ॥

७ दयानिधि कवि बैसवारे के, सं० १८११ में उ०।

राजा अचलसिंह बैस की आज्ञानुसार शालिहोत्र ग्रंथ बनाया ॥ १३९ सफ़ा ॥

८ दयानाथ दुबे, सं० १८८९ में उ०।

आनंदरस नाम ग्रंथ नायिकाभेद का बनाया है ॥ १४९ सफ़ा ॥

९ दयादेव कवि।

१३१ सफ़ा ॥

१० दत्त प्राचीन, देवदत्त ब्राह्मण कुसमड़ा ज़िले कन्नौज, सं०१८७० में उ०।

इन महाराज ने सुंदर कविता की है ॥

११ दत्त देवदत्त ब्राह्मण साढ़ ज़िले कानपुर, सं० १८२६ में उ०।

यह कवि पद्माकर के समय में महाराज खुमानसिंह बुंदेला चरखारी के यहाँ थे। उन दिनों पद्माकर, ग्वाल, दत्त, इन तीनों कवियों की बड़ी छेड़छाड़ रहती थी। धारा बाँधि छूटत

फुहारा मेघमाला से, इस कवित्त पर राजा सुखमानसिंह ने दत्त जी को बहुत दान दिया था ॥ १४७ सफ़ा ॥

१२ दास, भिखारीदास कायस्थ अरवल, बुंदेलखंडी, सं० १७८० में उ०।

यह महान् कवि भाषासाहित्य के आचार्य गिने जाते हैं । छन्दोर्णव नाम पिंगल, रससारांश, काव्यनिर्णय, शृङ्गारनिर्णय, बागबहार, ये पाँच ग्रन्थ इनके बनाये हुए अति उत्तम काव्य हैं ॥ १३२ सफ़ा ॥ (१)

१३ दास (२) बेनीमाधवदास, पसका, ज़िले गोंडा, सं० १६५५ में उ० ।

यह महात्मा गोस्वामी तुलसीदासजी के शिष्य उन्हीं के साथ रहते रहे हैं, और गोसाईंजी के जीवनचरित्र की एक पुस्तक गोसाईंचरित्र नाम बनाई है । संवत् १६९९ में देहान्त हुआ ॥ १३१ सफ़ा ॥

१४ दान कवि ।

शृंगार की सरस कविता है ॥ १३८ सफ़ा ॥

१५ दामोदरदास ब्रजवासी, सं० १६०० में उ० ।

इनके पद रागसागरोद्भव में हैं ॥ १५० सफ़ा ॥

१६ दामोदर कवि (२) ।

१३१ सफ़ा ॥

१७ द्विजदेव, महाराजा मानसिंह शाकद्वीपी अवधनरेश, सं० १९३० में उ० ।

यह महाराज संस्कृत, भाषा, फ़ारसी, अँगरेज़ी इत्यादि विद्याओं में महानिपुण थे । प्रथम संवत् १९०७ के क़रीब इनको भाषाकाव्य करने की बहुत रुचि थी । इसीकारण शृंगारलतिका नाम एक ग्रंथ बहुत सुन्दर टीका सहित बनाया । इनके यहाँ ठाकुरप्रसाद, जगन्नाथ, बलदेवसिंह इत्यादि महान् कवि थे । अन्त में इन दिनों अब कानून-अँगरेज़ी का शौक हुआ था । संवत् १९३० में

देहान्त हुआ, और इस देश के रईसों के भाग फूट गये ॥ १३४ सफ़ा ॥

१८ द्विज कवि, पण्डित मन्नालाल बनारसी विद्यमान हैं।

इनके कवित्त सुंदरीतिलक में हैं ॥ १३५ सफ़ा ॥

१६ द्विजनन्द कवि ।

१४५ सफ़ा ॥

२० द्विजचन्द कवि, सं० १७५५ में उ० ।

१५४ सफ़ा ॥

२१ दिलदार कवि, सं० १६५० में उ० ।

हजारा में इनका काव्य है ॥ १३१ सफ़ा ॥

२२ द्विजराम कवि ।

१४० सफ़ा ॥

२३ दिलाराम कवि ।

१३८ सफ़ा ॥

२४ दिनेश कवि ।

इनका नखशिख बहुत ही विचित्र है ॥ १३८ सफ़ा ॥

२५ दीनदयालगिरि बनारसी, सं० १६१२ में उ० ।

यह कवि संस्कृत के महान् पण्डित थे । भाषा-साहित्य में अन्योक्तिकल्पद्रुम नाम ग्रन्थ बहुत ही सुन्दर बनाया है । अनुराग-बाग और बागबहार, ये दो ग्रन्थ भी इनके बहुत विचित्र हैं ॥ १४० सफ़ा ॥

२६ दीनानाथ कवि बुंदेलखंडी, सं० १६११ में उ० ।

कवित्त अच्छे हैं ॥ १३२ सफ़ा ॥

२७ दुर्गा कवि, सं० १८६० में उ० ।

१३६ सफ़ा ॥

२८ दूलह त्रिवेदी बनपुरावाले कविंदजी के पुत्र सं० १८०३ में उ० ।

इनका बनाया हुआ कविकुलकण्ठाभरण नाम ग्रन्थ भाषा-साहित्य में बहुत प्रामाणिक है ॥ १४४ सफ़ा ॥ (१)